श्रीमद् भगवद्

गीता

क़ुरआन

के प्रकाश में

जो मनुष्य इस (ईश्वर के आदेशों व नियमों पर आधारित) धर्म के बारे में किये गए संवाद में सोच-विचार करेगा और धीरे-धीरे इस को समझेगा, वह ज्ञान के द्वारा ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करेगा और मैं (ईश्वर) इसकी सारी आशाओं को पूरी करूँगा, इस तरह का यह मेरा निर्णय है।

(भगवद् गीता अध्याय १८, श्लोक नं.७०)

इस जीवन और मृत्यु के बाद के जीवन में सफल होने के लिए इस दिव्य ग्रंथ को जीवन में एक बार अवश्य पढ़ें।

भगवद्‌गीता

कुरआन के प्रकाश में

इस पुस्तक के उर्दू संस्करण को सन
२०१६ में
**महाराष्ट्र राज्य उर्दु साहित्य
अकादमी**
की ओर से
डॉ. साजिद सिद्दीक़ी
को
मा.ना.श्री विनोद तावडे
(मा. मंत्री. अल्पसंख्याक, महाराष्ट्र राज्य)
के हाथों
साहित्यिक पुरस्कार दिया गया है।

सत्यमेव जयते

महाराष्ट्र शासन
अल्पसंख्याक विकास विभाग
महाराष्ट्र राज्य उर्दू साहित्य अकादमी
مہاراشٹر اسٹیٹ اُردو ساہتیہ اکادمی
محکمہ اقلیتی ترقیات، حکومت مہاراشٹر

سند

ڈاکٹر ساجد صدیقی، مالیگاؤں
کو ۲۰۱۶ء میں مطبوعہ کتابوں میں منتخب کتاب
بھگوت گیتا قرآن کی روشنی میں
کے لیے ایوارڈ سے نوازا جاتا ہے۔

प्रमाणपत्र

डॉ. साजिद सिद्दीकी, मालेगांव
यांच्या भगवत गिता कुराण की रोशनी में, या पुस्तकाची
सन २०१६ करिता "निवडक पुस्तक" म्हणून
पारितोषिकासाठी निवड करण्यात
आलेली आहे.

मा.ना.श्री. दिलिप कांबळे
(मा.राज्यमंत्री, अल्पसंख्याक विकास, महाराष्ट्र राज्य)

मा.ना.श्री. विनोद तावडे
(मा.मंत्री, अल्पसंख्याक विकास, महाराष्ट्र राज्य)

मा.श्री. श्याम तागडे
(प्रधान सचिव, अल्पसंख्याक विकास विभाग, महाराष्ट्र राज्य)

श्रीमद् भगवद्

गीता

कुरआन के प्रकाश में

संस्कृत से उर्दू अनुवाद डा. साजिद सिद्दीकी

उर्दू से हिन्दी अनुवाद अॅड. निलेश चंद्रभुषण ओझा
B.E. (Electronics & Telecommunication),
L.L.B
All India President of Indian Bar Association (IBA)
Chairman of the Maharashtra chapter of Transparency International India (TII)
(Author of "How to get justice against wrong judgments and police atrocities")
ISBN :- 978-93-83833-12-2

क्यू. एस. खान
B.E. (Mech)
Author of many books.
Read and download from www.qskhan.com

No Copyright

इस पुस्तक की कॉपी-राइट पब्लिशर्स के पास है। किन्तु इस बात कि अनुमति है कि इस पुस्तक को बेचने के लिए या मुफ्त बांटने हेतू कोई भी इसे प्रकाशित कर सकता है और यदि इस पुस्तक कि मूल शिक्षा में परिवर्तन न किया जाए तो इस पुस्तक की किसी भी भाषा में अनुवाद की भी अनुमति है। हम इसके बदले में कोई रॉयल्टी नही मांगते हैं। अच्छी प्रिंट के लिए आप हमसे इस पुस्तक की सॉफ्ट कॉपी ले सकते है।

Name of book :- Bhagwat Gita Quran Ki Raushni Mein

Translation by :- Adv. Nilesh Chandra Bhushan Ojha
Q. S. Khan

ISBN NO. :- ISBN 978-81-951129-0-6

Edition :- First (June 2021)

Price :- ₹ **400/-**

Published By :- Gita Publication
Premises Number 21,
Bachan Singh Compound,
Off. L.B.S. Road, Sonapur,
Bhandup (W), Mumbai-400078. (India)

Website :- www.gitaquran.com / www.qskhan.com

E-mail :- qsk1961@gmail.com

Tel :- +91-22-25965930

प्रस्तावना

डॉ.साजिद सिद्दीकी साहब ने सात वर्ष तक कड़ी मेहनत करके भगवद् गीता का उर्दू में अनुवाद किया था। जिसकी विद्वानों ने बड़ी प्रशंसा की। महाराष्ट्र सरकार ने भी इस अनुवाद की प्रशंसा की और उन्हें पुरस्कार से सम्मानित किया।

पवित्र कुरआन में लिखा है कि,

हे मुहम्मद (स.)! हमने तुम्हारी ओर उसी तरह अवतरित ज्ञान भेजा है जिस तरह नूह (मनु) और उनके बाद के पैगम्बरों की ओर अवतरित ज्ञान भेजा था, और हमने इब्राहीम और इस्माईल और इसहाक और याकूब और उनकी सन्तान (यूसुफ) और ईसा और अय्यूब और यूनुस और हारुन और सुलेमान की ओर भेजी। और हमने दाऊद को जबूर (अवतरित ग्रंथ) प्रदान किया। (सूरे अन निसा, ४, आयत-१६३)

अर्थात ईश्वर ने सभी पैगम्बरों को एक समान आदेश के साथ धरती पर भेजा था। इसलिए हम ऐसा भी कह सकते हैं कि जितने अवतरित ग्रंथ हैं उन सब में एक समान ईश्वर के आदेश हैं।

भगवद् गीता में आदेश ईश्वर के है और शब्द महाऋषी वेद व्यास जी के हैं। जब हमने डॉ. साजिद साहब के अनुवाद को पढ़ा तो ईश्वर के वही आदेश हमें भगवद् गीता में मिले जैसे आदेश पवित्र कुरआन में हैं। यह आदेश और ज्ञान मनुष्य के अपने जीवन में और समाज में सुख शांती के लिए अति महत्त्वपूर्ण हैं। इस कारण हम डॉ.साजिद साहब के उर्दू अनुवाद को हिन्दी में अनुवाद करके आपके सामने प्रस्तुत कर रहे हैं। हमें आशा है कि इस प्रयत्न से समाज में एक दूसरे के लिए सद्भाव और प्रेम का वातावरण वितरित होगा।

डा. साजिद साहब को जो पुरस्कार मिले और विद्वानों ने जो प्रशंसा की उसे भी हम इस पुस्तक में प्रकाशित कर रहे हैं।

डा. साजीद साहब के अनुवाद के साथ हमने निम्नलिखित तीन और अनुवादों से भी सहायता ली है;

१) श्रीमद भगवदगीता (साधक संजीवनी) (अनुवाद-स्वामी रामसुखदासजी)
२) Bhagwad Gita, The song of God, (Translated by-Swami Mukundananda.)
३) Gita aur Quran- (Translated by-Pandit Sunder Lal.)

इस पुस्तक में नोट भी हमने लिखे है।

हो सकता है हमसे किसी श्लोक को समझने और अनुवाद करने में गलती हुई हो। अगर आपको लगे की हमसे भूल हुई है तो अवश्य हमें बता दें, अगले एडीशन में हम उसे सुधार देंगे।

हम ईश्वर से प्रार्थना करते हैं कि ईश्वर हम सबको उसके आदेश को सही तरीके से समझने कि बुद्धी दे और उस पर चलाने की शक्ती और सामर्थ्य दे।

आपका भाई
अ‍ॅड. निलेश चंद्रभुषण ओझा
क्यू.एस.खान

प्रस्तावना

डॉ. रेखा व्यास जी ने यह प्रस्तावना डॉ. साजिद सिद्दीकी साहब जी के भगवद् गिता के अनुवाद के लिए लिखी थी। आप की जानकारी के लिए हम उसे यहाँ कॉपी कर रहे है।

-डॉ. रेखा व्यास

(चारों वेदों की अनुवादक एवं अठारह प्रकाशित पुस्तकों की लेखिका)

आमुख-अद्‌भुत मिसाल और मशाल

''मेरे परिचित अक्सर मुझे कहते हैं हमारी तरह आप भी परिचितों के काम किया कीजिये इससे अच्छा रहता है।'' मैं उनसे कहती हूँ मैं जिनका काम करती हूँ वो परिचित ही हो जाते हैं, काम के माध्यम से हुआ परिचय बेहद पुख्ता, आत्मीय और ठोस होता है। डॉ. साजिद जी से भी परिचय बहुत विशाल कार्य के माध्यम से हुआ और इतना पुख्ता हो गया कि लगता ही नहीं कि यह मेरे वेदों के अनुवाद की प्रशंसा में आये उनके फोन की प्रतिक्रिया का सुपरिणाम है और नया परिचय है।

कर्म प्रधान विश्वरचि राखा

कर्म सृष्टि का मूल है और गीता का मूल यही कर्म है। साजिद जी ने इसी कर्म ग्रन्थ गीता यानी श्रीमद्‌भगवदगीता का अनुवाद करके इसमें कर्मठता का एक और नया अध्याय जोड़ दिया है। इतने ग्रन्थों में से यदि इन्होंने इस ग्रन्थ का चयन किया है तो निश्चित ही इनके मन मस्तिष्क पर उसके दर्शन की छाप होगी ही।

डॉ. श्री. साजिद ने बहुत सरल, आम बोल चाल और आत्मिय में यह अनुवाद किया है। यह इस अनुवाद का सबसे सशक्त तथा प्राणवान पक्ष है। उर्दू का पुट इसे लाखों लोगों तक संचारी बनाएगा। डॉ. साजिद गीता के मर्म तक पहुँचे हैं, यह भी अनुवाद की ताकत है, केवल शब्दानुवाद हो तो वो बात नहीं बनती।

यह अनुवाद महज अनुवाद या तर्जुमा भर नहीं है, किसी ग्रन्थ का भाषान्तरण भर नहीं है। अपितु संस्कृतियों का संगम, राष्ट्रीय एकता की मिसाल है जो हमारी सबसे बड़ी आवश्यकता है। आज भारत पुन: विश्वगुरु और ताकत बन जाए यदि यह पारस्परिक वैमनस्य और खण्डन की भावना खत्म हो जाए।

दुर्भाग्य से हमने महान ग्रन्थों को धर्म के हवाले से देखने की आदत पाल रखी है, जबकि यह आचार शास्त्र हैं इन्हें कोई भी अपना सकता है। ये सबके हैं सब इनके हैं। डॉ साजिद के अनुवाद से समाज के काफी भ्रम टूटेंगे। गीता के बारे में कम जानने वाले इसे युद्ध ग्रंथ समझने की भूल कर लेते हैं, जब कि यह कर्तव्य की ओर केन्द्रित करने वाला ग्रन्थ है। स्व-पर का भेद मिटाने, देह और आत्मा का अन्तर बताने वाला ग्रन्थ है। आज के भटकते, भूलते भोगवाद की ओर उन्मुख होते समाज के लिए डॉ. साजिद का अनुवाद ''अद्‌भुत मिसाल और मशाल'' है।

-डॉ. रेखा व्यास

(दिल्ली)

प्रस्तावना

प्रो. हेमंत दत्तात्रेय खैरनार जी ने यह प्रस्तावना डॉ. साजिद सिद्दीकी साहब जी के भगवद् गीता के अनुवाद के लिए लिखा था। आप की जानकारी के लिए हम उसे यहाँ कॉपी कर रहे है।

प्रो. हेमंत दत्तात्रेय खैरनार

एम.ए. संस्कृत तिलक महाराष्ट्र विश्वविद्यालय,
बी.एड. संस्कृत-अंग्रेजी कवि कुलगुरु कालिदास विश्वविद्यालय रामटेक, नागपुर.
एम.एड. संस्कृत मुंबई विश्वविद्यालय
वेद विषय के लिए विश्वविद्यालय में प्रथम क्रमांक (गोल्ड मेडल) प्राप्त करने वाले.

'श्रीमद्‌भगवदगीता' मानव संस्कृति का एक अनमोल उपहार है। गीता केवल एक धार्मिक ग्रंथ ही नहीं बल्कि यह मानव जीवन को सही मार्ग दिखाने वाला पवित्र ग्रंथ भी है। मानव जीवन की सारी समस्याओं का हल इस किताब में मौजूद है। श्री पांडुरंगशास्त्री आठवले जो स्वाध्याय संस्था के विश्वस्थापक हैं, वह कहते हैं कि,

"Geeta is not only Bibles of Hindusim,
but geeta is a Bible of Humanity."

''गीता केवल हिंदुत्व की बाईबल नहीं है बल्कि गीता सारी मानव जाति की बाईबल है।''

जीवन के प्रयास में मनुष्य किस प्रकार का बर्ताव करे यह बतलाते हुए मानव जीवन के श्रेष्ठ उद्देश्यों को गीता दर्शाता है। पुरुषोत्तम योग, भवितयोग, स्थितप्रज्ञदर्शन, कर्म, मीमांसा, इन विषयों पर विस्तार से बहस पवित्र ग्रंथ गीता में है। यानी मानव जीवन के उत्तम विकास के मार्ग को दर्शाता है।

आदरणीय डॉ. साजिद सिद्दीकी साहब ने गीता का अध्ययन करके मुसलमानों के पवित्र ग्रंथ क़ुरआन शरीफ के धार्मिक दृष्टिकोण को एक दूसरे के समान करने का जो प्रयास किया है, उसकी प्रशंसा को शब्दों में बयान करना बहुत कठिन है।

ईश्वर एक ही है और हम सब उसी एक ईश्वर की संतान हैं। इस भावना को दर्शाने के लिए आदरणीय साजिद सिद्दीकी साहब द्वारा लिखे संस्कृत भाग को जांचने का सौभाग्य मुझे मिला, मैं अपने आप को धन्य समझता हूँ।

श्री. डॉ. साजिद सिद्दीकी साहब की किताब का अध्ययन करने के बाद हिन्दू व मुस्लिम समाज में एकता का वातावरण निर्माण करने में जरुर मदद मिलेगी। ईश्वर उनके इस प्रयास को सफल करे, यही मेरी शुभकामनाएँ हैं।

-प्रो. हेमंत दत्तात्रेय खैरनार
(संस्कार संस्कृत क्लासेस, मालेगाँव कैम्प)

अनुक्रमणिका

प्रस्तावना..००
धार्मिक ग्रंथो के ज्ञान का महत्त्व..२०

अध्याय- १..२२
अर्जुन विषाद योग
योद्धाओं का वर्णन (१.१)
अर्जुन ने सेना का निरीक्षण किया (१.२१)
अर्जुन कि निराशा (१.२८)
अर्जुन का युद्ध न करने का कारण (१.४०)

अध्याय- २..३७
सांख्य योग
श्री कृष्ण जी का अर्जुन को दिलासा देना। (२.१)
अर्जुन का अपने विचार व्यक्त करना। (२.४)
श्री कृष्ण जी के उपदेश (२.११)
ईश्वर का परिचय (२.१७)
अवतरित ज्ञान (२.१८)
(Spirit) रुह का वर्णन (२.१९)
क्षत्रिय के कर्तव्य (२.३१)
कर्मबन्धन (अनिवार्य कर्तव्य) (२.३९)
जो एक ईश्वर को नहीं मानते उनके व्यवहार (२.४२)
मानवजाति के लिए ईश्वर के निर्देश (२.४५)
सदैव निस्वार्थ कर्म करो (२.४९)
ईश्वर में दृढ श्रद्धा के लक्षण (२.५५)
इच्छाओं को वश में रखने के उपाय (२.६०)
मनुष्य के विनाश का आरम्भ कैसे होता हैं (२.६२)
इच्छाओं को वश में रखने का महत्त्व (२.६४)

अध्याय- ३..६८
कर्मयोग

कर्म योग का परिचय (३.१)

धर्म में कर्म और श्रद्धा दोनों का महत्त्व है (३.४)
अनिवार्य कर्म करने की पद्धती (३.६)
अनिवार्य कर्म करने से उन्नती मिलती है (३.१०)
अनिवार्य कर्म करने से सुख शान्ती मिलती है (३.१६)
कर्मों का उद्देश जनकल्याण होना चाहिए (३.२०)
सत्कर्मों के लिए प्रेरणा (३.२२)
अज्ञानियों को सत्कर्म के लिए कैसे प्रेरित करें (३.२५)
ईश्वर के आदेश का सारांश (३.३१)
कर्तव्य को पूरा करने के मार्ग की बाधाएं (३.३३)
अपने स्वभाव को समझिए और धार्मिक कर्तव्य को पूरा करें (३.३५)
अपने कर्तव्य को पूरा न करने के कारण (३.३७)
काम भावना को कैसे वश में करे? (३.४०)

अध्याय-४..८८
ज्ञान कर्म संन्यास योग

प्राचिन काल के दिव्य ज्ञान पाने वाले महापुरुष (४.१)
ईश्वर द्वारा मानवजाति के मार्गदर्शन की पद्धति (४.६)
दिव्य ज्ञान का लाभ (४.९)
दिव्य ज्ञान को न मानने के कारण (४.१२)
दिव्य ज्ञान का महत्त्व (४.१३)
कर्म के विषय में महत्त्वपूर्ण ज्ञान (४.१६)
महत्त्वपूर्ण दिव्य ज्ञान (४.२१)
अनेक प्रकार के ईश्वर के प्रार्थना की पद्धति (४.२५)
ईश्वर की प्रार्थना न करने के नुकसान (४.३१)
ज्ञान और प्रार्थना मुक्ती के रास्ते हैं (४.३२)
दिव्य ज्ञान का महत्त्व (४.३३)
ईश्वर की प्रार्थना न करने वालों का अन्त कैसे होगा? (४.४०)
दिव्य ज्ञान संक्षेप में (४.४१)

अध्याय-५..१०८
कर्म सन्यास योग

कर्म योग श्रेष्ठ है (५.२)
कर्म योग योग का महत्त्व (५.६)
ईश्वर कर्मों का हिसाब लेगा (५.१५)
भगवद् गीता का महत्त्व (५.१६)
दिव्य ज्ञान का महत्त्व (५.१८)

सुख शान्ति कैसे प्राप्त करें? (५.२०)
स्वर्ग कैसे प्राप्त करें? (५.२४)

अध्याय-६..१२३
आत्म संयम योग

सच्चा सन्यासी कौन? (६.१)
मन और आत्मा को वश में करने का महत्त्व (६.५)
ध्यान योग की पद्धती (६.१०)
ध्यान योग के लिए योग्यता (६.१६)
दुःख दूर करने के उपाय (६.१७)
ध्यान योग के लाभ (६.१८)
कर्मयोगियों और सन्यास योगीयों के लिए महत्त्वपूर्ण आदेश (६.२३)
ध्यान योग से विचारों में सुधार का वर्णन (६.३०)
ध्यान योग करने की कठिनाईयाँ (६.३३)
विफल योगी का परिणाम (६.३७)
योगी का उँचा स्थान (६.४६)

अध्याय-७..१४३
ज्ञान विज्ञान योग

ईश्वर और अन्य लोक के विषय में ज्ञान का महत्त्व (७.२)
सृष्टी की रचना के पदार्थ (७.४)
ईश्वर की सबसे महत्त्वपूर्ण रचना अन्य लोक है (७.५)
ईश्वर का परिचय (७.७)
ईश्वर को न पहचानने के कारण (७.१२)
सतो, रजो और तमो गुण मनुष्य की परीक्षा के लिए है। (७.१४)
ईश्वर में कौन श्रद्धा रखता है? (७.१६)
देवताओं को पूजने के कारण (७.२०)
बुद्धिहीन व्यक्तीयों की गलती (७.२४)
जीवन में चिन्ताओं का कारण (७.२७)
ईश्वर में श्रद्धा का महत्त्व (७.२८)

अध्याय-८..१५९
अक्षर ब्रह्म योग

ईश्वर का परिचय (८.१)
स्वर्ग में प्रवेश के योग्य कैसे बनें (८.५)
मृत्यू के समय ईश्वर को याद करने का महत्त्व (८.१०)

स्वर्ग कैसे प्राप्त करें? (८.१२)
हर दिन मृत्यु कैसे होती है? (८.१८)
अन्य लोक का वर्णन (८.२०)
ईश्वर को पहचानीए (८.२२)
स्वर्ग और नरक में प्रवेश की प्रक्रीया (८.२३)

अध्याय- ९ .... १७५
राज विद्या योग

इस दिव्य ग्रंथ में अवतरित ज्ञान है। (९.१)
अधर्म व्यक्तीयों का भविष्य (९.३)
ईश्वर के महानता का वर्णन (९.४)
प्रलय के दिन फिर से जीवित किए जाने का वर्णन (९.७)
मूर्खो की गलतफहमी (९.११)
अज्ञानियों का भविष्य (९.१२)
ईश्वर में श्रद्धा रखने वालो के गुण (९.१३)
मानवजाति का वर्गीकरण (९.१५)
दूसरों की प्रार्थना करने वालों की गलतफहमी को ईश्वर ने इस प्रकार दूर किया (९.१६)
कम पुण्य कर्म करने वालो का भाग्य (९.२०)
ईश्वर की शरण (९.२२)
देवताओं की पूजा के कारण (९.२३)
अनिवार्य कर्म कैसे पूरे करें? (९.२७)
ईश्वर के लिए सभी मनुष्य एक समान है (९.२९)
ईश्वर में श्रद्धा रखने वालो का पतन नहीं होगा (९.३०)
सारे मनुष्य स्वर्ग प्राप्त कर सकते (९.३२)
संसार की वास्तविकता (९.३३)

अध्याय- १० .... १९२
ईश्वर का परिचय (१०.१)
ईश्वर में श्रद्धा का महत्त्व (१०.३)
प्राणियों में प्रजनन की क्षमता ईश्वर की महानता का प्रमाण है। (१०.४-५)
ईश्वर में श्रद्धा वालों का व्यवहार (१०.८)
बुद्धि यौगम् (१०.१०)
अर्जुन द्वारा ईश्वर की प्रशंसा (१०.१२)
अर्जुन की ईश्वर से विनंती (१०.१६)
ईश्वर की दिव्य रचनाएँ ईश्वर की महानता दर्शाती है। (१०.२०)

अध्याय-११..२०९
विश्वरुप दर्शन योग

ईश्वर की दिव्य रचनाऐं देखने के लिए अर्जुन की विनंती (११.१)
ईश्वर ने अपनी दिव्य रचनाएं अर्जुन को दिखाई (११.५)
ईश्वर ने अर्जुन को दिव्य दृष्टी प्रदान किया (११.८)
ईश्वर का तेज (११.१२)
अर्जुन ने ईश्वर की प्रशंसा की (११.१३)
शाश्वत धर्म (सनातन धर्म) (११.१८)
ईश्वर की महानता का वर्णन (११.१९)
यमराज का अर्जुन के सामने आना (११.२३)
यमराज के भयानक रुप का वर्णन (११.२५)
यमराज ने अपना परिचय दिया (११.३२)
अर्जुन का खेद व्यक्त करना (११.४१-४२)
अर्जुन की दिव्य रचनाओं को फिर से देखने की विनंती (११.४५)
ईश्वर का इन्कार (११.४७)
महत्त्वपूर्ण उपदेश (११.५४)

अध्याय-१२..२३५
भक्ती योग

मूर्ती पूजा का निषेध (१२.१)
ईश्वर में श्रद्धा वाले स्वर्ग कैसे प्राप्त करते है? (१२.३)
निराकार ईश्वर पर ध्यान केन्द्रित न हो तो क्या करें? (१२.५)
अध्याय का सारांश (१२.२०)

अध्याय-१३..२४४
क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग

ईश्वर और उसकी महान रचना मनुष्य को इसके भाव के साथ समझने का प्रयास (१३.१)
मनुष्य में बुद्धी और भावना ईश्वर की महानता का प्रतीक है (१३.३)
धार्मिक ज्ञान ही तत्त्वज्ञान है (१३.१०)
ईश्वर के वह विशेष गुण जो किसी और में नही हो सकते (१३.११)
भाग्य क्या है? (१३.१८)
भाग्य, ईश्वर और ईश्वर के शासन को पहचानीए (१३.२१)
इस संसार की किस दृष्टी से देखना चाहिए (१३.२६)
प्राणियों में जिवन का स्त्रोत ईश्वर है (१३.३०)
वह ज्ञान और श्रद्धा जिसके कारण स्वर्ग प्राप्त होता है (१३.३३)

अध्याय- १४... २६२
गुण त्रय विभाग योग

धार्मिक ज्ञान का महत्त्व (१४.१)
प्राणियों के उत्पन्न होने का वर्णन (१४.३)
सत्व गुण की विशेषताएं (१४.६)
रजो गुण की विशेषताएं (१४.७)
तमो गुण की विशेषताएं (१४.८)
मनुष्य पर गुणों का प्रभाव (१४.९)
सत्व गुण प्रबल होने के चिन्ह (१४.११)
रजो गुण प्रबल होने के चिन्ह (१०.१२)
तमो गुण प्रबल होने के चिन्ह (१४.१३)
सत्व गुण प्रबल होने का महत्त्व (१४.१४)
रजो और तमो गुण नरक में ले जाएगा (१४.१५)
कर्मों पर गुणों का प्रभाव (१४.१६)
सोच-विचार पर गुणों का प्रभाव (१४.१७)
नरक में तिनों गुण वाले किस प्रकार रखें जाएंगे (१४.१८)
तिनों गुणों से उपर उठने का महत्त्व (१४.२०)
अतीत स्वभाव वाले व्यक्ती की विशेषताएं (१४.२१)
अध्याय का सार (१४.२७)

अध्याय- १५... २७६
पुरुषोत्तम योग

बरगद के पेड़ के समान अद्भूत है यह संसार (१५.१)
अन्य लोक के शोध का महत्त्व (१५.४)
स्वर्ग का वर्णन (१५.५)
प्राणियों के जिवन का रहस्य (१५.२)
प्रलय के समय जिवीत होने का वर्णन (१५.८)
ईश्वर को पहचानने और उसी की प्रार्थना का आदेश (१५.१२)
ईश्वर को पहचानना ही तत्त्वज्ञान हैं (१५.१९)

अध्याय- १६... २८७
दैवासूर संपद विभाग योग

ईश्वर के प्रकोप से उत्पन्न होने वाले गुण (१६.१)
आसुर गुण से उत्पन्न होने वाले गुण (१६.४)

काम:, क्रोध: और लोभ भी विनाशक गुण (या भावनाऐं) है (१६.२१)
ईश्वर का महत्त्वपूर्ण आदेश (१६.२४)

अध्याय- १७..२९८
श्रद्धात्रय विभाग योग

ईश्वर में श्रद्धा जन्म से मनुष्य के स्वभाव में है (१७.२)
मनुष्य की श्रद्धा कैसे बदलती है (१७.३)
तिनों गुण वाले किस की उपासना करते है (१७.४)
अवतरित ग्रन्थों को न मानने वाले असुरी गुण के हैं। (१७.५)
अपने प्रिय भोजन से अपने गुणो को पहचानये (१७.७)
गुणों के अनुसार पुण्य करने की पद्धती में अन्तर (१७.११)
शरीर के तप का वर्णन (१७.१४)
बातचित के तप का वर्णन (१७.१५)
सोच विचार के तप का वर्णन (१७.१६)
गुणों के अनुसार तप करने की पद्धति में अन्तर (१७.१७)
गुणों के अनुसार दान देने की पद्धति में अन्तर (१७.२०)
ईश्वर के तिन नाम ॐ, तत और सत का वर्णन (१७.२३)
ईश्वर में श्रद्धा रखने का महत्त्व (१७.२८)

अध्याय- १८..३१३
मोक्ष सन्यास योग
सन्यास और त्याग में अन्तर (१८.२)
यज्ञ, दान, तप कभी नहीं छोड़ना चाहिए (१८.३)
सत्व, रजो और तमो गुण वालो के त्याग करने की पद्धति (१८.४)
सच्चा त्यागी स्वर्ग प्राप्त करेंगे (१८.१०)
अपने कर्म को परखने का प्रमाण (१८.१३)
किन भावनाओं के प्रभाव से कर्म करने पर पाप नही होते (१८.१७)
तिन गुणों के अनुसार ज्ञान के प्रभावीत होने का वर्णन (१८.२०)
तिन गुणों के अनुसार सत्कर्म के प्रभावित होने का वर्णन (१८.२३)
तिन गुणों के अनुसार मनुष्य के स्वभाव के बदलने का वर्णन (१८.२६)
तिन गुणों के अनुसार सोच-समझ के बदलने का वर्णन (१८.३०)
तिन गुणों के अनुसार लोगों के संकल्प के बदलने का वर्णन (१८.३३)
तिन प्रकार के सुखशांती का वर्णन (१८.३६)
ईश्वर ने मनुष्य में जन्म से जो व्यवसायीक गुण रखे है उसी के अनुसार व्यक्ती को व्यवसाय अपनाना चाहिए (१८.४१)

ईश्वर को पहचानने के लिए अनिवार्य गुण और कर्म (१८.५१)
मनुष्य बिना किसी की सहायता के स्वयम ईश्वर तक पहुंच सकता है। (१८.५५)
सफलता में ईश्वर के कृपादृष्टी का महत्त्व (१८.५६)
अर्जुन और सारी मानवजाति को ईश्वर का आदेश (१८.५७)
ईश्वर के परीक्षा लेने की पद्धति (१८.६१)
अर्जुन और सारे मानवजाति के लिए सुनहरे उपदेश (१८.६५)
ज्ञान का प्रचार कैसे करे (१८.६७)
ज्ञान के प्रचारक का महत्त्व (१८.६८)
अर्जुन का युद्ध के लिए मान जाना (१८.७३)
संजय का विचार और आभार व्यक्त करना (१८.७४)

नोटस

N-1 ईश्वर का परिचय..३४६
N-1.1 ईश्वर कितना महान है?..३४६
N-1.2 जन्म और मृत्यु ईश्वर के लिए क्यों नहीं?...३४७
N-1.3 ईश्वर को हर चीज़ का ज्ञान कैसे है?...३४९
N-1.4 ईश्वर ब्रह्माण्ड को कैसे चलाता है?...३५१
N-1.5 ईश्वर के बारे में विचारधाराऐं...३५३
N-1.6 ईश्वर कितने है?..३५४
N-1.7 आकाशवाणी क्या है?..३५६
N-1.8 ईश्वर के गुण क्या है?...३५७
N-1.9 ईश्वर की प्रार्थना कैसे करे?..३५८
N-2 रुह और आत्मा का परिचय..३६०
N-2.2 आत्मा का परिचय..३६४
N-3 बुद्धी योगम का परिचय...३७२
N-4 अन्य लोक क्या है...३७५
N-5 कर्मफल कि आशा क्यों नहीं करना चाहिए?..३७८
N-6 धार्मिक ग्रंथों में संगम का क्या अर्थ है?...३८०
N-7 योग का क्या अर्थ है?..३८१
N-8 काम भावना क्या है?...३८२
N-9 श्लोक नं. २.१७, २.१२ और ४.५ का स्पष्टीकरण......................................३८३
N-10 भगवान शब्द का अर्थ...३८७
N-11 श्लोक नं. ४.४१ का अर्थ..३८८
N-12 भाग्य क्या है?...३८९
N-13 यज्ञ क्या है?...३९१
N-14 शंकरजी और हजरत आदम (अ.) में समानताएं..३९२
N-15 प्रलय की वास्तविकता...३९४
N-16 श्लोक नं. १५.७ की व्याख्या..३९६
N-17. शैतान कौन?...३९८
N-18. पुर्नजन्म की वास्तविकता..४०१

विषय के अनुसार अनुक्रमणिका

विषय	सम्बन्धित श्लोक
अहिंसा	5.11, 10.4, 10.5, 13.8, 16.2, 17.14, 18.25, 18.27.
ईश्वर एक है	2.41, 6.31, 7.17, 9.15, 13.5, 14.27
ईश्वर के नाम	17.23.
ईश्वर का परिचय	2.17, 8.9, 8.22, 9.4, 9.5, 9.6, 9.16, 9.19, 10.2, 10.3, 10.8, 10.21, 10.31, 10.37, 10.41, 10.42, 11.3, 14.3, 14.4, 14.27, 15.12, 15.13, 15.14, 15.15, 15.17, 15.18, 15.19.
ईश्वर की प्रशंसा	11.18, 11.22, 11.37, 11.40.
ईश्वर के गुण	5.29, 7.7, 7.24, 7.25, 7.26, 8.3, 9.4, 9.6, 10.2, 11.12, 13.13, 13.14, 13.15, 13.16, 13.17, 13.18, 13.19, 13.23, 13.32, 13.33, 14.3, 14.4, 15.12, 15.13, 15.14, 15.15, 15.16, 15.17.
ईश्वर के आदेश	2.45, 3.19, 3.30, 3.41, 3.43, 6.47, 18.57, 18.62, 18.65, 18.66.
अनिवार्य धार्मिक कर्तव्य	2.39, 3.1, 3.4, 3.5, 5.6, 5.7, 5.8, 5.9, 5.10, 5.11, 5.12, 5.13, 5.14, 6.1 18.5

विषय	सम्बन्धित श्लोक
ईश्वर की कृपा का महत्त्व	2.59, 7.14, 9.34, 10.10, 10.11, 18.52, 18.56, 18.66,
ईश्वर की सुरक्षा का वचन	9.22.
ईश्वर के तेज अंश का वर्णन	10.40, 10.41, 11.47, 15.7.
मनुष्य के गुण जो ईश्वर की महानता दर्शाते है	13.6, 13.7, 13.8, 13.9, 13.10, 13.11.
ईश्वर में जन्म से श्रद्धा का गुण	17.2, 17.3.
मूर्ती पूजा के मनाई के श्लोक	12.1, 12.2,
मूर्ती पूजा के कारण	2.41, 4.12, 7.20, 9.23.
मूर्ती पूजा करने वालों का भविष्य	7.23, 9.24, 12.2.
प्रलय का वर्णन	3.24, 7.6, 9.7, 8.22.
प्रलय के दिन फिर से जीवित होने का वर्णन	9.8, 15.8, 15.9, 15.10 15.11.
प्रलय के दिन कर्मों के हिसाब देने का वर्णन	5.15.
अन्य लोक (मृत्यू के बाद जीवन) का वर्णन	2.22, 4.40, 4.31, 6.38, 6.40, 7.5, 7.6, 8.20.
मोक्ष का वर्णन	4.32, 5.27, 5.28, 13.35, 16.5, 17.25, 18.66.
रुह का वर्णन	2.19, 2.20, 2.21, 2.22, 2.23, 2.24, 2.25, 2.26, 2.27, 2.28, 2.29, 2.30.
आत्मा का वर्णन	6.5, 6.6, 8.3, 15.7, 15.16, 15.17, 15.18.

विषय	सम्बन्धित श्लोक
जीवन में परीक्षा का वर्णन	7.14, 7.25, 14.5, 18.61.
स्वर्ग का वर्णन	8.16, 8.23, 8.26, 9.20, 15.5, 15.6.
स्वर्ग के लिए योग्यता	2.15, 2.37, 2.71, 2.72, 4.24, 4.39, 5.25, 5.26, 5.29, 6.28, 6.45, 7.29, 8.10, 8.13, 8.15, 9.20, 9.31, 9.32, 9.33, 11.15, 12.4, 13.29, 13.35, 14.14, 14.20, 15.5, 16.22, 18.49, 18.54, 18.55, 18.68, 18.71.
नरक का वर्णन	1.41, 1.43, 2.40, 4.40, 6.40, 9.21, 9.24. 16.16, 16.20.
देवता	3.11, 3.12, 7.20, 7.21, 7.22, 7.23, 9.20.
स्वर्ग में रहने वाले प्राणीयों का वर्णन	11.5, 11.24.
धार्मिक ज्ञान का महत्त्व	2.40, 4.1, 4.2, 4.3, 4.4, 4.5, 4.6, 4.7, 4.8, 4.9, 4.10, 4.11, 4.41, 4.33, 5.16, 5.17, 7.2, 9.2, 13.12, 14.1, 14.2, 15.20, 16.23, 16.24, 18.18, 18.19, 18.20.
भाग्य	13.20, 13.21, 13.22, 13.23, 13.24, 18.59.
प्रार्थना	4.26, 4.32, 6.10, 6.11, 6.12, 6.13, 6.14, 6.15, 6.16, 6.17, 6.18, 6.19, 6.20, 6.21, 6.22, 6.23, 8.5, 8.6, 8.7, 8.8, 8.9, 8.10, 12.12.

विषय	सम्बन्धित श्लोक
पथभ्रष्ट होने के कारण	3.16, 3.34, 3.37, 7.20, 7.21, 7.22, 7.27, 9.23.
संगम (शिर्क) के कारण	4.12, 7.20, 9.11, 9.12, 9.23, 12.2.
संगम की मनाई (निषिद्ध)	2.45, 3.20, 3.25, 5.25, 6.31, 6.32, 11.55, 12.4, 12.13, 13.5.
संगम करनेवालों के लिए स्पष्टीकरण	9.16, 9.17, 9.18, 9.19.
नरक से कौन बचेगा?	2.40, 4.32, 5.28, 6.40, 18.66.
दिव्य मार्गदर्शन	10.10, 10.11.
तप का वर्णन	17.14, 17.15, 17.16, 17.17, 17.18. 17.19.
दान का वर्णन	17.20, 17.21, 17.22.
त्याग का वर्णन	18.1, 18.18.
सुख शांती का मार्ग	2.71, 3.15, 4.30, 5.21, 5.29, 6.17, 6.23, 9.22, 10.9, 12.7.
मनुष्य के तिन प्रकार के स्वभाव	8.3, 14.5, 14.6, 14.6, 14.7, 14.8, 14.9, 14.10, 14.11, 14.12, 14.13, 14.14, 14.15, 14.16, 14.17, 14.18, 14.19, 14.20, 18.40.
मनुष्य की मानसिकता	18.29, 18.30, 18.31, 18.32.
दृढ निश्चय का वर्णन	18.33, 18.34, 18.35.
सज्जन/भले व्यक्ती के गुण	2.55, 2.58, 5.7, 5.11, 6.1, 6.8, 9.13, 9.14, 9.20, 9.30, 12.13, 12.14, 12.15, 12.16, 12.17, 12.18, 12.19, 12.20, 14.22, 14.23, 14.24, 14.25, 14.26, 16.1, 16.2, 16.3. 18.53.

विषय	सम्बन्धित श्लोक
दुर्जनों के गुण	2.43, 3.27, 16.4, 16.5, 16.5, 16.6, 16.7, 16.8, 16.9, 16.10, 16.11, 16.12, 16.13, 16.14, 16.15, 16.16, 16.17, 16.18, 16.19, 16.20, 16.21, 16.22, 16.23, 17.1, 17.2, 17.3, 17.4, 17.5, 17.6.
आत्म-संयम	2.60, 2.61, 6.3, 6.24, 6.28, 6.35, 6.36.
स्वार्थरहित कर्म का वर्णन	6.2, 12.11, 12.12, 14.15, 18.12.
सत्कर्मों का वर्णन	18.13, 18.28.
अपेक्षित सत्कर्मों का वर्णन	18.51, 18.55.
समाज सेवा	2.45, 3.20, 3.25, 5.25, 6.31, 6.32, 11.55, 12.4, 12.13, 13.5, 18.54.
सामाजिक समानता	5.18, 5.19, 9.29, 9.30, 9.31, 9.32, 9.33, 11.55, 12.4, 12.13, 18.54.
धर्म ज्ञान के प्रचार का महत्त्व	18.67, 18.68, 18.69, 18.70, 18.71.
वर्णाश्रम धर्म	18.41, 18.42, 18.43, 18.44, 18.45, 18.46, 18.47, 18.48, 18.49, 18.50.
योगेश्वर श्री कृष्ण	11.9, 18.75, 18.28.
श्री कृष्ण महापुरुष	7.19, 10.14, 10.37, 11.13, 11.37, 11.50, 18.74.
महापुरुषों के नाम	4.1, 4.8, 10.6, 11.15.
धर्मनिरपेक्षता	9.28.

धार्मिक ग्रंथों के ज्ञान का महत्त्व

धार्मिक ग्रंथों के आदेशों पर चलने का महत्त्व हम निम्नलिखित भगवद् गीता के बारह श्लोक से समझ सकते हैं।

1) यः शास्त्र-विधिम् उत्सृज्य वर्तते काम-कारतः।
न सः सिद्धिम् अवाप्नोति न सुखम् न पराम् गतिम् ।।१६.२३।।

जो (व्यक्ति) (केवल) अपनी इच्छाओं को पूरा करने का काम करता है। धार्मिक नियमों को छोड़ देता है, वह न प्रार्थनाओं में परिपूर्णता (Perfection) प्राप्त कर पाता है (और) न (जीवन में) सुख (पाता है) (और) न सबसे श्रेष्ठ जीवन का लक्ष्य (अर्थात) स्वर्ग प्राप्त कर पाता है।

2) एवम् प्रवर्तितम् चक्रम् न अनुवर्तयति इह यः।
अघ-आयुः इन्द्रिय-आरामः मोघम् पार्थ सः जीवति।।३.१६।।

इस प्रकार, हे अर्जुन! जो व्यक्ति, इस संसार में वेदों के निश्चित किए हुए नियमों के अनुसार अपने जीवन के दिन रात को सुनिश्चित नहीं करता; उसका जीवन पापों से भर जाता है। (कारण कि) वह इस उद्देश से जीवित रहता है कि अपने इन्द्रियों से आनंद लेने में डुबा रहे।

3) अ-शास्त्र विहितम् घोरम् तप्यन्ते ये तपः जनाः।
दम्भ अहकार संयुक्ताः काम राग बल अन्विताः।।१७:५।।

पाखंड, कपट, अहंकार, अपनी इच्छापूर्ति में व्यस्त, क्रोध और सत्ता से प्रभावित होकर वह जो शास्त्रों को न मानते हुए जीवन व्यतीत करता है। वह तपस्वी (ईश्वर की प्रार्थना करने वाले) लोगों को घोर यातनाएं देते हैं।

अर्थात जो लोग धार्मिक नहीं होते हैं वह अन्य धार्मिक लोगों के लिए भी दु:ख और संकट का कारण होते हैं।

4) एतत योनीनि भूतानि सर्वाणि इति उपधारय।
अहम् कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयः तथा।।१७.६।।

नि:संदेह, अनेक प्रकार के प्राणियों के शरीर (का निर्माण करके), उन्हें स्थित रखने वाले और शरीर के अंदर (हृदय में) स्थित न दिखाई देने वाले (ईश्वर को यह लोग हृदय से) निकाल देना चाहते है। इन लोगों को निश्चय ही असूर समझो।

5) अनेक चित्त विभ्रान्ताः मोह जाल समावृताः।
प्रसक्ताः काम-भोगेषु पतन्ति नरके अशुचौ।।१६.१६।।

अनेक चिंताओं (और) उलझनों (और) भ्रम (के) जाल में फंसे हुए, मन की इच्छाओं को पूरा करने के आदि (addicted), (मरने के बाद) गंदे नर्क (में) उतर जाते हैं।

(जो न धार्मिक ग्रंथों को मानते हैं और न ईश्वर के आदेश का पालन करते हैं अन्त में वे नरक में ही गिरते हैं।)

<u>धार्मिक ज्ञान प्राप्त होने के फायदे :-</u>

6) तस्मात् शास्त्रम् प्रमाणम् ते कार्य अकार्य व्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्र विधान उक्तम् कर्म कर्तुम् इह अर्हसि।।१६.२४।।

इस कारण तुम्हारे कर्तव्य क्या हैं? और क्या कार्य आपको नहीं करना है; इसका निर्णय करने के लिए धार्मिक ज्ञान ही तुम्हारा प्रमाण होना चाहिए। (इस कारण) शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करो,

धर्म के नियमों को समझो, ईश्वर के आदेशों को जानो, (और) इस संसार में (इन्हीं के) अनुसार अपने कर्तव्य को पूरा करो।

7) अपि चेत् असि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पाप-कृत-त मः।
सर्वम् ज्ञान-प्लवेन एवं वृजिनम् सन्तरिष्यसि।।४.३६।।

अगर सारे पापियों में तुम सबसे बड़े पाप के कार्य करने वाले हो, तो भी निःसंदेह इस (धार्मिक) ज्ञान की नौका के द्वारा, पापों के समुद्र को बिना बाधा के पार कर लोगे।

8) यथा एधांसि समिद्धः अग्निः भस्म-सात् कुरुतेअर्जुन।
ज्ञान-अग्निः सर्व-कर्माणि भस्मसात् कुरुतेतथा।।४.३७।।

हे अर्जुन! जिस प्रकार जलती हुई आग, इंधन (की लकड़ी को) भस्म कर देती है। वैसे ही इस दिव्य ज्ञान का प्रकाश सम्पूर्ण (पाप) कर्मों को भस्म कर देती है।

9) न हि ज्ञानेन सदृशम् पवित्रम् इह विद्यते।
तत् स्वयम् योग संसिद्धः कालेन आत्मनि विन्दति।।४.३८।।

निःसंदेह इस दिव्य ज्ञान के जैसा इस संसार में (और) (कोई साधन) नहीं है (जो पापों से) पवित्र करे। इस (दिव्य ज्ञान के द्वारा) (व्यक्ति) स्वयम् ईश्वर से जुड़ जाता हैं। और समय के बीतने के साथ वह अपने अन्दर संपूर्ण (शान्ती) पाता है।

10) श्रद्धा-वान् लभतेज्ञानम् तत-परः संयत इन्द्रियः।
ज्ञानम् लब्ध्वा पराम् शान्तिम् अचिरेण अधिगच्छति ।।४.३९।।

जिसकी ईश्वर में दृढ श्रद्धा है और जिसने अपने इन्द्रियों को वश में कर लिया है। (वही) इस दिव्य ज्ञान को प्राप्त करता है। इस दिव्य ज्ञान (के अनुसार प्रार्थना करके) (वह) उस महान ईश्वर (का आशीर्वाद) भी पा लेता हैं (फिर) विलंब न करते हुए वह महान (ईश्वर का) शांत स्थान (स्वर्ग) भी प्राप्त कर लेता है।

11) श्रेयान् द्रव्य-मयात् यज्ञात् ज्ञान-यज्ञः परन्तप।
सर्वम् कर्म अखिलम् पार्थ ज्ञानेपरिसमाप्ते।।४:३३।।

हे अर्जुन! दिव्य ज्ञान (के प्रकाश में) ईश्वर की प्रार्थना करना (यह) श्रेष्ठ है सांसारिक वस्तुओं के दान द्वारा (ईश्वर की प्रार्थना करने से)। हे अर्जुन! सारे कर्मों के सिद्धि (perfection) का आधार दिव्य ज्ञान की पुरी जानकारी पर है।

12) ज्ञानेन तु तत् अज्ञानम् येषाम् नाशितम् आत्मनः।
तेषाम् आदित्य-वत् ज्ञानम् प्रकाशयति तत् परम् ।।५.१६।।

निःसंदेह वह (सारे) मनुष्य जिनके ज्ञान को अज्ञानता ने नष्ट कर दिया है। यह सच्चा ज्ञान उन सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को उन पर सूर्य के समान प्रकाशित कर देता है।

- इस पवित्र ग्रंथ को पढ़ीए, याद रखीए और इसका पालन कीजिए। यह हम सबको स्वर्ग के मार्ग पर ले जाएगा।

******

अध्याय नं. १

अर्जुन विषाद योग

धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेता युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाश्चैव किमकुर्वत संजय ॥1॥

दृष्ट्वा तु पाण्डवानीकं व्यूढं दुर्योधनस्तदा।
आचार्यमुपसंगम्य राजा वचनमब्रवीत् ॥2॥

पश्यैतां पाण्डुपुत्राणामाचार्य महतीं चमूम्।
व्यूढां द्रुपदपुत्रेण तव शिष्येण धीमता ॥3॥

अत्र शूरा महेष्वासा भीमार्जुनसमा युधि।
युयुधानो विराटश्च द्रुपदश्च महारथः ॥4॥

धृष्टकेतुश्चेकितानः काशिराजश्च वीर्यवान्।
पुरुजित्कुन्तिभोजश्च शैब्यश्च नरपुङ्गवः ॥5॥

युधामन्युश्च विक्रान्त उत्तमौजाश्च वीर्यवान्।
सौभद्रो द्रौपदेयाश्च सर्व एव महारथाः ॥6॥

अस्माकं तु विशिष्टा ये तान्निबोध द्विजोत्तम।
नायका मम सैन्यस्य सञ्ज्ञार्थं तान्ब्रवीमि ते ॥7॥

भवान्भीष्मश्च कर्णश्च कृपश्च समितिञ्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णश्च सौमदत्तिस्तथैव च ॥8॥

अन्ये च बहवः शूरा मदर्थे त्यक्तजीविताः।
नानाशस्त्रप्रहरणाः सर्वे युद्धविशारदाः ॥9॥

अपर्याप्तं तदस्माकं बलं भीष्माभिरक्षितम्।
पर्याप्तं त्विदमेतेषां बलं भीमाभिरक्षितम् ॥10॥

अयनेषु च सर्वेषु यथाभागमवस्थिताः।
भीष्ममेवाभिरक्षन्तु भवन्तः सर्व एव हि ॥11॥

तस्य सञ्जनयन्हर्षं कुरुवृद्धः पितामहः।
सिंहनादं विनद्योच्चैः शंख दध्मो प्रतापवान् ॥12॥

ततः शंखाश्च भेर्यश्च पणवानकगोमुखाः।
सहसैवाभ्यहन्यन्त स शब्दस्तुमुलोऽभवत् ॥13॥

ततः श्वेतैर्हयैर्युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः पाण्डवश्चैव दिव्यौ शंखौ प्रदध्मतुः ॥14॥

पाञ्चजन्यं हृषीकेशो देवदत्तं धनञ्जयः।
पौण्ड्रं दध्मौ महाशंख भीमकर्मा वृकोदरः ॥15॥

अनन्तविजयं राजा कुन्तीपुत्रो युधिष्ठिरः।
नकुलः सहदेवश्च सुघोषमणिपुष्पकौ ॥16॥

काश्यश्च परमेष्वासः शिखण्डी च महारथः।
धृष्टद्युम्नो विराटश्च सात्यकिश्चापराजितः ॥17॥

द्रुपदो द्रौपदेयाश्च सर्वशः पृथिवीपते।
सौभद्रश्च महाबाहुः शंखान्दध्मुः पृथक्पृथक् ॥18॥

स घोषो धार्तराष्ट्राणां हृदयानि व्यदारयत्।
नभश्च पृथिवीं चैव तुमुलो व्यनुनादयन् ॥19॥

अथ व्यवस्थितान्दृष्ट्वा धार्तराष्ट्रान् कपिध्वजः।
प्रवृत्ते शस्त्रसम्पाते धनुरुद्यम्य पाण्डवः ॥20॥

हृषीकेशं तदा वाक्यमिदमाह महीपते।
सेनयोरुभयोर्मध्ये रथं स्थापय मेऽच्युत ॥21॥

यावदेतान्निरीक्षेऽहं योद्धुकामानवस्थितान्।
कैर्मया सह योद्धव्यमस्मिन् रणसमुद्यमे ॥22॥

योत्स्यमानानवेक्षेऽहं य एतेऽत्र समागताः।
धार्तराष्ट्रस्य दुर्बुद्धेर्युद्धे प्रियचिकीर्षवः ॥23॥

एवमुक्तो हृषीकेशो गुडाकेशेन भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये स्थापयित्वा रथोत्तमम् ॥24॥

भीष्मद्रोणप्रमुखतः सर्वेषां च महीक्षिताम्।
उवाच पार्थ पश्यैतान् समवेतान् कुरूनिति ॥25॥

तत्रापश्यत्स्थितान् पार्थः पितृनथ पितामहान्।
आचार्यान्मातुलान्भ्रातृन्पुत्रान्पौत्रान्सखींस्तथा ॥26॥

श्वशुरान् सुहृदश्चैव सेनयोरुभयोरपि।
तान्समीक्ष्य स कौन्तेयः सर्वान् बन्धूनवस्थितान् ॥27॥

कृपया परयाविष्टो विषीदन्निदमब्रवीत्।
दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ॥28॥

सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति।
वेपथुश्च शरीरे में रोमहर्षश्च जायते ॥29॥

गाण्डीवं स्रंसते हस्तात्वक्चैव परिदह्यते।
न च शक्नोम्यवस्थातुं भ्रमतीव च मे मनः ॥30॥

निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।
न च श्रेयोऽनुपश्यामि हत्वा स्वजनमाहवे ॥31॥

न काङ्क्षे विजयं कृष्ण न च राज्यं सुखानि च।
किं नो राज्येन गोविंद किं भोगैर्जीवितेन वा ॥32॥

येषामर्थे काङक्षितं नो राज्यं भोगाः सुखानि च।
त इमेऽवस्थिता युद्धे प्राणांस्त्यक्त्वा धनानि च ॥33॥

आचार्याः पितरः पुत्रास्तथैव च पितामहाः।
मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः संबंधिनस्तथा ॥34॥

एतान्न हन्तुमिच्छामि घ्नतोऽपि मधुसूदन।
अपि त्रैलोक्यराज्यस्य हेतोः किं नु महीकृते ॥35॥

निहत्य धार्तराष्ट्रान्न का प्रीतिः स्याज्जनार्दन।
पापमेवाश्रयेदस्मान् हत्वैतानाततायिनः ॥36॥

तस्मान्नार्हा वयं हन्तुं धार्तराष्ट्रान्स्वबान्धवान्।
स्वजनं हि कथं हत्वा सुखिनः स्याम माधव ॥37॥

यद्यप्येते न पश्यन्ति लोभोपहतचेतसः।
कुलक्षयकृतं दोषं मित्रद्रोहे च पातकम् ॥38॥

कथं न ज्ञेयमस्माभिः पापादस्मान्निवर्तितुम्।
कुलक्षयकृतं दोषं प्रपश्यद्भिर्जनार्दन ॥39॥

कुलक्षये प्रणश्यन्ति कुलधर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलं कृत्स्नमधर्मोऽभिभवत्युत ॥40॥

अधर्माभिभवात्कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुलस्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्णसंकरः ॥41॥

संकरो नरकायैव कुलघ्नानां कुलस्य च।
पतन्ति पितरो ह्येषां लुप्तपिण्डोदकक्रियाः ॥42॥

दोषैरेतैः कुलघ्नानां वर्णसंकरकारकैः।
उत्साद्यन्ते जातिधर्माः कुलधर्माश्च शाश्वताः ॥43॥

उत्सन्नकुलधर्माणां मनुष्याणां जनार्दन।
नरकेऽनियतं वासो भवतीत्यनुशुश्रुम ॥44॥

अहो बत महत्पापं कर्तुं व्यवसिता वयम्।
यद्राज्यसुखलोभेन हन्तुं स्वजनमुद्यताः ॥45॥

यदि मामप्रतीकारमशस्त्रं शस्त्रपाणयः।
धार्तराष्ट्रा रणे हन्युस्तन्मे क्षेमतरं भवेत् ॥46॥

एवमुक्त्वार्जुनः सङ्ख्ये रथोपस्थ उपाविशत्।
विसृज्य सशरं चापं शोकसंविग्नमानसः ॥47॥

अध्याय नं. १

अर्जुन विषाद योग

अध्याय का परिचय

अर्जुन और उसके भाईयों के साथ अन्याय हुआ था। इस कारण अर्जुन के पास युद्ध के अतिरिक्त और कोई उपाय न था। रणभूमि में जब अर्जुन (पाण्डव) और दुर्योधन (कौरवों) की सेनाएं आमने-सामने हुई तो अर्जुन ने श्री कृष्ण से दोनों सेनााओं के बीच (मध्य) खड़े होकर दोनों सेनाओं को देखने की इच्छा प्रकट कि। अर्जुन के कहने पर श्री कृष्ण ने अर्जुन के रथ को दोनों सेनाओं के बीच खड़ा कर दिया।

जब अर्जुन ने दोनों सेनाओं को देखा तो दोनों तरफ अपना ही परिवार और सम्बंधी नज़र आऐ।

अर्जुन शासक परिवार से थे। उनका ऐसा मानना था कि शासक और समाज के आदरणीय परिवार की जीवन शैली को ही समाज अपनाता है। (भगवद् गीता के अध्याय ३ श्लोक नं. २१ का भी यही अर्थ है)। यदि उनका शासक परिवार आपसी युद्ध के कारण नष्ट हो जाता है, तो उच्च नैतिक मूल्य या कुलधर्म जिसका उनके कारण समाज में परंपरा है, वह भी नष्ट हो जाएगा और सम्पूर्ण समाज के परिवारों पर अधर्म छा जाएगा। अधर्म के बढ़ने से स्त्रियां दूषित होंगी और वर्णसंकट (दोगले) बच्चे जन्म लेंगे। और इन सब का कारण वह लोग होंगे, जिन्होंने परिवार को आपस में लड़ाकर नष्ट कर दिया। इस कारण शासक परिवार को विनाश से बचाने के लिए अर्जुन ने बीच रणभूमी में युद्ध से इन्कार कर दिया।

धृतराष्ट्र उस समय का अंधा राजा था। दुर्योधन उनका बड़ा पुत्र और अधर्म का प्रतिक था। उसके सौ भाई थे। धृतराष्ट्र के मंत्री संजय में यह विशेषता थी की वह राज-महल में बैठे-बैठे रणभूमी को देख सकते थे। इस प्रकार संजय आँखों देखा हाल अंधे धृतराष्ट्र को बताते रहते।

यह युद्ध अधर्म के विरुद्ध सत्य की स्थापना का युद्ध था। इस कारण श्री कृष्ण जी, जो कि योगेश्वर भी हैं, उन्होंने रणभूमी में ही अर्जुन के शंकाओं को दूर किया और सत्य धर्म क्या है, और मनुष्य के अनिवार्य कर्म क्या हैं, इसका उपदेश दिया।

यह दिव्य पुस्तक भगवद् गीता श्री कृष्ण के द्वारा अर्जुन को दिए गए ईश्वर के आदेश और उपदेशों की संग्रह है। जिसे महाऋषी वेद व्यास जी ने अपने शब्दों में लिखकर मानवजाति को दिया है। जो उपदेश अर्जुन के लिए द्वापरयुग में जितने महत्त्वपूर्ण थे, वह उपदेश सदैव मानवजाति के लिए हर युग में महत्त्वपूर्ण रहे हैं। इस कारण सत्य को जानने के लिए इस दिव्य पुस्तक को अवश्य पढ़िए और याद रखिए।

अध्याय

योद्धाओं का वर्णन

१.१

धृतराष्ट्र उवाच,
धर्मक्षेत्रे कुरुक्षेत्रे समवेताः युयुत्सवः।
मामकाः पाण्डवाः च एवं किम् अकुर्वत संजय।।१।।

धृतराष्ट्र ने कहा, "हे संजय धर्म भूमि कुरुक्षेत्र में निःसंदेह युद्ध की इच्छा से इकट्ठे होकर मेरे और पाण्डु के पुत्रों ने क्या किया?"

(धृतराष्ट्र उवाच) धृतराष्ट्र ने कहा, (संजय) हे संजय! (धर्मक्षेत्र) धर्म-भूमि (कुरुक्षेत्रे) कुरुक्षेत्र में (एवं) निःसंदेह (युयुत्सव) युद्ध की इच्छा से (समवेत) इकट्ठे होकर (मामका) मेरे (च) और (पाण्डवा) पाण्डू के पुत्रों ने (किम) क्या (अकुर्वत) किया?

१.२

संजय उवाच, दृष्टवा तु पाण्डवानीकम् व्यूढम् दुर्योधन तदा।
आचार्यम् उपसंङ्गम्य राजा वचनम् अब्रवीत् ।।२।।

संजय ने कहा, "हे राजे इस समय पाण्डव सेना को पंक्तियों में खड़ी देखकर दुर्योधन अपने गुरु द्रोणाचार्य के पास गए और कुछ बातें कही।"

नोट= व्यूह का अर्थ है, युद्ध के समय की जाने वाली सेना की स्थापना। (नालन्दा विशाल शब्द सागर पेज नं. १३१४)

(संजय उवाच) संजय ने कहा, (राजा) हे राजे (धृतराष्ट्र) (तदा) इस समय (पाण्डवानीकम्) पाण्डव सेना को (व्यूढूम्) पंक्तियों में खड़ी (दृष्टवा) देखकर (दुर्योधनः) दुर्योधन (आचार्यम्) अपने गुरु द्रोणाचर्य (उपसंङ्गम्य) के पास गए (तु) और (वचनम्) कुछ बातें (अब्रवीत) कही।

१.३

पश्य एताम् पाण्डु-पुत्राणाम् आचार्य महतीम् चमूम्।
व्यूढाम् द्रुपम-पुत्रेण तव शिष्येण धीमता।।३।।

(दुर्योधन ने कहा) "हे आचार्य! आपके बुद्धिमान शिष्य, द्रुपद के पुत्र द्वारा मोर्चा पर खड़ी की हुई पाण्डव के पुत्रों की महान इस सेना को देखिये।"

नोट- द्रुपद के पुत्र नाम धृष्टधुम्न (Dhristadyumna) था।

(आचार्य) (दुर्योधन ने कहा) हे आचार्य (तव) आपके (धीमता) बुद्धिमान (शिष्येण) शिष्य (द्रुपद-पुत्रेण) द्रुपद के पुत्र द्वारा (व्युढाम) मोर्चा पर खड़ी की हुई। (पाण्डु-पुत्राणाम्) पाण्डव के पुत्रों की (महतीम्) महान (एतम्) इस (चमूम्) सेना को (पश्य) देखिये।

नोटः- अध्याय के आरंम्भ में हमने 'योद्धाओं का वर्णन' ऐसा शीर्षक लिखा है। यह हमने अध्याय को अच्छी तरह समझने के लिए लिखा है। मूल ग्रंथ में ऐसे उपशीर्षक नहीं हैं।

१.४

अत्र शूराः महेष्वासाः भीमार्जुन समाः युधि।
युयुधानः विराटः च द्रुपदः च महारथः ।।४।।

यहाँ पाण्डवों की सेना में युयुधान, राजा विराट जैसे शूरवीर और द्रुपद जैसे महारथी, बड़े बाणों और धनुषों वाले भीम और अर्जुन के समान है।

यहाँ पाण्डवों की सेना (में) (युयुधान) युयुधान (विराट) राजा विराट (शूरा) जैसे शूरवीर (च) और (द्रुपद) द्रुपद जैसे (महारथ) महारथी (महा-इषु-आसा) बड़े बाणों और धनुषो वाले (भीमार्जुनसमा) भीम और अर्जुन के (समाः) समान है।

१.५

धृष्टकेतु चेकितानः काशिराजः च वीर्यवान् ।
पुरुजित् कुन्तिभोजः च शैब्य च नरपङ्गवः।।५।।

(उनकी सेना में) धृष्टकेतु, चेकितान, तथा वीर्यवान पराक्रमी काशिराज, और कुन्तिभोज, तथा मनुष्यों में श्रेष्ठ शैब्य (भी हैं)

(धृष्टकेतु) (उनकी सेना में) धृष्टकेतु (चेकितान) चेकितान (च) तथा (वीर्यवान) पराक्रमी (काशिराज) काशिराज (च) और (कुन्तिभोजः) कुन्तिभोज (च) तथा (नरपुडवे) मनुष्यों मे श्रेष्ठ (शैब्य) (भी हैं)

१.६

युधामन्युः च विकान्तः उत्तमौजाः च वीर्यवान् ।
सौभद्रः द्रौपदेयाः च सर्वे एव महारथाः ।।६।।

पराक्रमी युधामन्यु और पराक्रमी उत्तमौजा (भी है), सुभद्रा के पुत्र (अभिमन्यु) और द्रोपदी के पाँचो पुत्र (भी हैं) सब निःसन्देह महारथी हैं।

(विक्रान्त) पराक्रमी, (युधामन्यु) युधामन्यु (च) और (वीर्यवान) पराक्रमी (उत्तमौजा) उत्तमौजा (भी है), (सौभद्रः) सुभद्रा के पुत्र (अभिमन्यु) (च) और (द्रोपदेयाः) द्रोपदी के पाँचो पुत्र (भी हैं) (सर्वे) सब (एव) निःसन्देह (महारथा) महारथी हैं।

१.७

अस्माकम् तु विशिष्टाः ये तान् निबोध द्विजोत्तम।
नायकाः मम सैन्यस्य संज्ञार्थम् तान् बवीमि ते।।७।।

हे ब्राह्मणों में सब से श्रेष्ठ (द्रोणाचार्य) हमारे पक्ष में भी जो मुख्य (पराक्रमी है) उन पर (भी आप) ध्यान दीजिये। आपकी जानकारी के लिए मेरी सेना के (जो) नायक हैं उनको (मैं) कहता हूँ।

(द्विजोत्तम) हे ब्राह्मणों में सबसे श्रेष्ठ (द्रोणाचार्य)! (अस्माकम्) हमारे पक्ष में (तु) भी (ये) जो (विशिष्टा) मुख्य (पराक्रमी है) (तान्) उन पर (भी आप) (निबोध) ध्यान दीजिये (ते) आपकी (संज्ञा अर्थभ) जानकारी के लिए (मम) मेरी (सैन्यस्य) सेना के (जो) (नायकाः) नायक हैं (तान्) उनको (मैं) (ब्रवीमि) कहता हूँ।

१.८

भवान् भीष्मः च कर्णः कृपः च समितिज्जयः।
अश्वत्थामा विकर्णः च सौमदत्ति तथा एव च ।।८।।

(भीष्म) भीष्म पितामह (कर्ण) कर्ण (च) और (कृप) कृपाचार्य (च) और (अश्वत्थामा) अश्वत्थामा (च) और (सौमदत्ति) सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा (च) और

भीष्म पितामह, कर्ण, और कृपाचार्य, और अश्वत्थामा, और सोमदत्त का पुत्र भूरिश्रवा, और निःसन्देह आप भी सदैव विजयी रहने वालों में है।

(एव) निःसन्देह (भवान) आप (तथा) भी (समितिज्जय) सदैव विजयी रहने वालों में है।

१.९

अन्ये च बहवः शूराः मत् अर्थे त्यक्त जीविता।
नाना शस्त्र पहरणाः सर्वे युद्ध-विशारदाः ।।९।।

इनके अतिरिक्त बहुत से शूरवीर मेरे लिए अपना जीवन त्यागने के लिए अनेक प्रकार के अस्त्र के साथ हैं। (और) सभी युद्ध कला में अत्यन्त कुशल और निपुण है।

(अन्ये) इनके अतिरिक्त (बहवः) बहुत से (शुराः) शूरवीर (मत्) मेरे (अर्थे) लिए (जीवितः) अपना जीवन (त्यत्क) त्यागने के लिए (नाना) अनेक प्रकार के (शस्त्र) अस्त्र के साथ हैं। (सर्वे) (और) सभी (युद्ध) युद्ध कला में (विशारदा) अत्यन्त कुशल हैं।

१.१०

अपर्याप्तम् तत् अस्माकम् बलम् भीष्म अभिरक्षितम्
पर्याप्तम् तु इदम् एतेषाम् बलम् भीम अभिरक्षितम् ।।१०।।

हमारी इस सेना की शक्ति भीष्म पितामह के कमान में असीमित है। परन्तु उन (पाण्डवों की) उस (सेना की) शक्ति भीम की कमान में सीमित है।

(अस्माकम्) हमारी (इदम्) इस सेना (बलम) की शक्ति भीष्म पितामह के (अभिरक्षितम्) संरक्षता में असीमित है। (तु) परन्तु (ऐतेषाम) इन (पाण्डवों की) (तत्) उस (बलम) (सेना की) शक्ति (भीम) भीम की (अभिरक्षितम्) संरक्षता में (अभिरक्षितम्) सीमित है।

१.११

अयनेषु च सर्वेषु यथा-भागम् अवस्थिताः।
भीष्मम् एव अभिरक्षन्तु भवन्तः सर्वे एव हि।।११।।

(दुर्योधन ने अपनी सेना के महारथियों से कहा) और निःसंदेह हर एक को मोर्चा में जिस प्रकार अलग-अलग भागों में स्थित किया है। उन सभी को अपनी-अपनी टुकड़ियों में रहते हुए; जैसे अपनी रक्षा करते हैं वैसे अवश्य ही भीष्म पितामह की रक्षा करना चाहिए।

(दुर्योधन ने अपनी सेना के महारथियों से कहा) (च) और (एव) निःसंदेह (सर्वेषु) हर एक को (अथनेषु) मोर्चा में (यथा) जिस प्रकार (भागम) अलग-अलग भागों में (अवस्थिता) स्थित किया है। (सर्वे) उन सभी को (भक्त) अपनी-अपनी टुकड़ियों में रहते हुए जैसे अपनी रक्षा करते हैं; वैसे (एव ही) अवश्य ही (भीष्यम) भीष्म पितामह (अभिरक्षन्तु) की भी रक्षा करना चाहिए।

१.१२

तस्य सज्जनयन् हर्षम् कुरु-वृद्धः पितामहः।
सिंह-नादम् विनद्य उच्चैः शख्डम् दध्मौ प्रताप-वान् ।।१२।।

(तस्य) उस दुर्योधन के (हर्षम) हृदय में हर्ष (सज्जनयन) उत्पन्न करने के लिए (कुरुवृद्धः) कौरवों में वृद्ध (प्रतापवान) प्रभावशाली (पितामहः) भीष्म

उस दुर्योधन के हृदय में हर्ष उत्पन्न करने के लिए कौरवों में वृद्ध प्रभावशाली भीष्म पितामह ने सिंह के समान गरजकर जोर से शंख बजाया।

पितामह ने (सिहनादम) सिंह के समान (विनद्य) गरजकर (उच्चै) जोर से (शख्डम्) शंख (दध्मौ) बजाया।

१.१३

ततः शख्डाः भैर्यः च पणव-आनक गोमुखाः।
सहसा एव अभ्यहन्यन्त सः शब्दः तुमुलः अभवत्
।।१३।।

उसके बाद शंख और बड़े-बड़े ढोल मृदंग और बाजे इत्यादि। अचानक एक साथ बजने लगे। इनकी जो आवाज थी वह निःसन्देह बहुत ही भयंकर थी।

(तत) उसके बाद (शंख) शंख (च) और (भेर्यः) बड़े-बड़े ढोल (पणव-आनक) मृदंग (च) और (गोमुखा) बाजे इत्यादि अचानक (अभ्यहन्यन्त) एक साथ बनने लगे (शब्दाः) इनकी जो आवाज थी (सः) वह (एव) निःसन्देह (तुमुल) बहुत ही भयंकर (अमवत्) थी।

१.१४

ततः श्वेतैः हयैः युक्ते महति स्यन्दने स्थितौ।
माधवः पाडवः च एव दिव्यौ शख्डौ प्रदध्मतुः
।।१४।।

उसके बाद सफेद घोड़ों से युक्त महान रथ पर बैठे हुए श्री कृष्ण और पाण्डु पुत्र अर्जुन ने भी दिव्य शंखों को जोर से बजाया।

(तत्) उसके बाद (श्वेतै) सफेद (हयै) घोड़ों से (युत्के) युक्त (महति) महान (स्यन्दने) रथ पर (स्थितौ) बैठे हुए (माधव) श्री कृष्ण (च) और (पाण्डव) पाण्डु पुत्र अर्जुन ने (एव) भी (दिव्यौ) दिव्य (शख्डौ) शंखों को (प्रदध्मतु) जोर से बजाया।

१.१५

पाञ्चजन्म् हृषीकेशः देवदत्तम् धनंजय।
पौण्ड्रम् दध्मौ महा-शङ्खम् भीम-कर्मा वृक-उदरः ।।१५।।

श्री कृष्ण ने पांचजन्य (नामक शंख बजाया) धनंजय अर्जुन ने देवदत्त (नामक शंख बजाया) (और) सबसे बड़ा पौण्डू नामक बडा शंख बहुत अधीक भोजन करने वाले (और बहुत) काम करने वाले भीम ने बजाया।

(हृषीकेश) श्री कृष्ण ने (पाध्यजन्यम) पांचजन्य (नामक शंख बनाया) (धनंजय) अर्जुन ने (देवदत्तम) देवदत्त (नामक शंख बजाया) (महा) (और) सबसे बड़ा (पौण्ड्रम) पौण्डू नामक (शंड्खम्) शंख (वृक उदरः) बहुत अधीक भोजन करने वाले (भीम-कर्मा) (और बहुत) काम करने वाले भीम (हदमो) ने बजाया।

१.१६

अनन्त-विजयम् राजा कुन्ती-पुत्रः युधिष्ठरः।
नकुलः सहदेवः च सुघोष-मणिपुष्पकौ।।१६।।

हे राजा (धृतराष्ट्र)! कुन्ती पुत्र युधिष्ठिर ने अनन्त विजय (नामक शंख बजाया तथा) नकुल और सहदेव ने सुघोष (तथा) मणिपुष्पक (नामक शंख बजाये)।

(राजा) हे राजा (धृतराष्ट्र) (कुन्ती पुत्र) कुन्ती पुत्र (युधिष्ठिर) युधिष्ठिर ने (अनन्त विजयम्) अनन्त विजय (नामक शंख बजाया तथा) (नकुल) नकुल (च) और (सहदेव) सहदेव ने सुघोष (सुघोष) (तथा) (मणिपुष्पकौ) मणिपुष्पक (नामक शंख बजाये)।

१.१७

काश्यः च परम-ईषु-आसः शिखण्डी च महाःरथः।
धृष्टद्युम्नः विराटः च सात्यकिः च अपराजितः ।।१७।।

श्रेष्ठ धनुषवाले काशिराज और महारथी शिखण्डी तथा धृष्टधुम्न और राजा विराट और अजेय सात्यकि।

(परम इषु आस) श्रेष्ठ धनुषवाले (काश्य) काशिराज (च) और (महारथ) महारथी (शिखण्डी) शिखण्डी (च) तथा (धृष्टधुम्न) धृष्टधुम्न (च) और (विराट) राजा विराट (च) और (अपराजित) अजेय (सात्यकि) सात्यकि।

१.१८

द्रुपदः द्रोपदेयाः च सर्वशः पृथिवी-पते।
सौभद्रः च महा-बाहुः शडान् दध्मुः पृथक-पृथक ।।१८।।

राजा द्रुपद और द्रौपदी के पाँचो पुत्र और शक्तिशाली भुजाओं वाले सुभद्रापुत्र अभिमन्यु सब ओर से हे राजन धृतराष्ट्र अलग-अलग शंख बजाए गए।

(द्रुपद) राजा द्रुपद (च) और (द्रोदेया) द्रौपदी के पाँचे पुत्र (च) और (महाबाहु) शक्तिशाली भुजाओं वाले (सौभद्र) समुद्रापुत्र अभिमन्यु (सर्वेश) सब ओर से (पृथिवी-पते) हे राजन! धृतराष्ट्र (पृथक-पृथक) अलग-अलग (शडान्) शंख (दध्मुः) बजाए गए।

१.१९

सः घोषः धार्तराष्ट्राणाम् हृदयानि व्यदारयत्।
नभः च पृथिवीम् च एव तुमुलः व्यनुनादयन् ।।१६।।

निःसंदेह उन शंखो की भयंकर ध्वनी ने आकाश और पृथ्वी को हिला दिया, और धृतराष्ट्र के पुत्रों के हृदय को चीर दिया।

(एव) निःसंदेह (स) उन शंखो की (तुमुल) भयंकर (घोषः) ध्वनी ने (नभ) आकाश (च) और (पृथिवीम्) पृथ्वी को (व्यनुनादयन्) हिला दिया (च) और (धातिराष्ट्रणाम्) धृतराष्ट्र के पुत्रों के (हृदयानि) हृदय को चीर दिया।

१.२०

अथ व्यवस्थितान् दृष्टवा धार्तराष्ट्रान् कपिध्वजः
प्रवृत्ते शस्त्र-सम्पाते धनुः अद्यम्य पाण्डवः।
हृषीकेशम् तदा वाक्यम इदम् आह मही-पते।।२०।।

हे राजन! फिर धृतराष्ट्र के पुत्रों को देखते हुए। वह रथ जिसके ध्वज पर हनुमान का चिन्ह था। (उस रथ पर) बैठे हुए पाण्डु पुत्र अर्जुन ने अपना गाण्डीव धनुष उठा लिया और शस्त्र चलाने के लिए आगे बढ़ते हुए, श्री कृष्ण से उस समय यह शब्द कहे।

(महीपते) हे राजन (अथ) फिर (धार्तराष्ट्रान) धृतराष्ट्र के पुत्रों को (दृष्टवा) देखते हुए। (कपिध्वज) रथ जिसके ध्वज पर हनुमान का चिन्ह था। (व्यवस्थिता) (उस रथ पर) बैठे हुए (पाण्डव) पाण्डु पुत्र अर्जुन ने (धनु) अपना गाण्डीव धनुष (अधम्य) उठा लिया और (शस्त्र) शस्त्र (सम्पाते) चलाने के लिए (प्रकृते) आगे बढ़ते हुए (हृषीकेशम्) श्री कृष्ण से (तदा) उस समय (इदम) यह (वाक्यम्) शब्द (आह) कहे।

अर्जुन ने सेना का निरीक्षण किया

१.२१-२२

अर्जुन उवाच, सेनयोः उभयोः मध्ये रथम् स्थापय मे उच्युत।
यावत एतान् निरीक्षे अहम् योद्धु-कामान् अवस्थितान् ।।२१।।
कैःमया सह योद्धव्यम। अस्मिन। रण समुध्यमे ।।२२।।

अर्जुन ने कहा, हे अच्युत (श्री कृष्ण) मेरे रथ को आप दोनों सेनाओं के मध्य में खड़ा कीजिये, यहाँ तक कि मैं युद्ध की इच्छा से खड़े हुए उन लोगों को देख लूँ (और जान लूँ कि) मुझे इस युद्ध में किन लोगों के साथ युद्ध करते हुए मुकाबला करना है।

अर्जुन ने कहा, हे अच्युत (श्री कृष्ण) (मे) मेरे (रथम) रथ को आप (उभयो) दोनों (सेनयोः) सेनाओं के (मध्य) मध्य में (स्थापय) खड़ा कीजिये (यावत्) यहाँ तक कि (अहम) मैं (योद्ध) युद्ध की (कामान्) इच्छा से (अवस्थितान्) खडे हुए (एतान) उन लोगों को (निरी) देख लूँ (गया) (और जान लूँ कि) मुझे (अस्मिन) इस (रण) युद्ध में (कै) किन (सह) लोगों के साथ (योद्धव्यम्) युद्ध करते हुए (समधम) मुकाबला करना है।

१.२३

योत्स्यमानान् अवेक्षे अहम् ये एते अत्र समागताः।
धार्तराष्टस्य दुर्बुद्धेः युद्धे प्रिय चिकीर्षवः ।।२३।।

दृष्टबुद्धि वाले धृतराष्ट्र के पुत्र (दुर्योधन) की प्रसन्नता चाहने के लिए युद्ध में जो यहाँ युद्ध करने के लिए आये हुए हैं, मैं उन्हें देखना चाहता हूँ।

(दुर्बुद्ध) दृष्टबुद्धि वाले (धार्तराष्टास्य) धृतराष्ट्र के पुत्र (दुर्योधन) की (प्रिय) प्रसन्नता (चिकीर्षव) चाहने के लिए (युद्ध) युद्ध में (ये) जो (अत्र) यहाँ (योत्स्यमानान्) युद्ध करने के लिए (समागता) आये हुए हैं, (अमृम) मैं (एते) उन्हें (अवेक्षे) देखना चाहता हूँ।

१.२४

अर्जुन उवाच, एवम् उक्तः हृषीकेशः गुडाकेशन भारत।
सेनयोः उभयोः मध्ये स्थापयित्वा रथ-उत्तमम् ।।२४।।

संजय ने कहा,
हे भरतवंशी राजन् (धृतराष्ट्र)! इस प्रकार अर्जुन के कहने पर श्री कृष्ण (ने) दोनों सेनाओं (के) मध्य भाग (में) (श्रेष्ठ रथ को) खड़ा करके।

संजय ने कहा,
(भारत) हे भरतवंशी राजन् (धृतराष्ट्र) (एवम्) इस प्रकार (गुडाकेशन) अर्जुन के (उक्त) कहने पर (हृषीकेशः) श्री कृष्ण (ने) (उभयोः) दोनों (सेनयोः) सेनाओं (के) (मध्ये) मध्य भाग (में) (रथ उतमम्) श्रेष्ठ रथ को (स्थापयित्वा) खड़ा करके।

१.२५

भीष्म द्रोण प्रमुखतः सर्वेषाम् च महीक्षिताम् ।
उवाच पार्थ पश्य एतान् समवेतान् कुरुन् इति ।।२५।।

भीष्म पितामह द्रोणाचार्य और सम्पूर्ण राजाओं के सामने (श्री कृष्ण ने) इस प्रकार कहा; हे पार्थ! यहाँ इकठ्ठे हुए इन कुरुवंशियों को देखो।

(भीष्म) भीष्म पितामह (द्रोण) द्रोणाचार्य (च) और (सर्वेषाम) सम्पूर्ण (महीक्षिताम्) राजाओं के (प्रमुखतः) सामने (इति) (श्री कृष्ण ने) इस प्रकार (उवाच) कहा (पार्थ) हे पार्थ (समवेतान) यहाँ इकठ्ठे हुए (एतान) इन (कुरुन) कुरुवंशियों को (पश्य) देखो।

१.२६

तत्र अपश्यत् स्थितान् पार्थः पितृन अथ पितामहान्।
आचार्यान् मातुलान् भ्रातृन् पौत्रान् सखीन् तथा।
श्वशुरान् सुहृदः च एव सेनयोः उभयोः अपि।।२६।।

उसके बाद अर्जुन (ने) उन दोनों ही सेनाओं में उपस्थित पिताओं को, पितामहों को आचायों को, मामाओं को, भाईयों को, पुत्रों को पौत्रों को तथा मित्रों को, ससुरों को और शुभचिंतको को भी देखा।

(अथ) उसके बाद (पार्थ) अर्जुन (ने) (तत्र) उन (उभयो) दोनों (एव) ही (सेनयो) सेनाओं में (स्थितान) उपस्थित (पितृन) पिताओं को (पितामहान) पितामहों को (आचार्यान) आचार्यों को (मातृलान्) माताओं को (भ्रातृन) भाईयों को (पुत्राण) पुत्रों को (पौत्रान) पौत्रों को (तथा) तथा (सखीन्) मित्रों को (श्वशुरान्) ससुरों को (च) और (सुहृद) शुभचिंतको को (अपि) भी (अपश्यत्) देखा।

१.२७

तान समीक्ष्य सः कौन्तेयः सर्वान् बन्धून् अवस्थितान्
कृपया परया आविष्टः विषीदन् इदम् अब्रवीत् ।।२७।।

अर्जुन ने उन सभी बान्धवों कों (युद्ध स्थल पर आमने-सामने) खड़ा देखा तो (उसका हृदय) दया से भर आया (और) वह दुखी होकर ऐसे बोले।

(कौन्तेयः) अर्जुन ने (तानः) उन (सर्वान) सभी (बन्धून) बान्धवों कों (अवस्थितान्) (युद्ध स्थल पर आमने-सामने) खड़ा (समीक्ष्य) देखा तो (परया) (उसका हृदय) (कृपया) दया से (आविष्ट) भर आया (सः) (और) वह (विषीदन्) दुखी होकर (इदम) ऐसे (अब्रवीत्) बोले।

अर्जुन कि निराशा

१.२८

अर्जुन उवाच,
दृष्टवा इमम् स्वजनम् कृष्ण युयुत्सुम् समुपस्थितम्।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखम् च परिशुष्यति ।।२८।।

युद्ध की इच्छा से अपने सामने इस कुटुम्ब समुदाय को देखकर, हे श्री कृष्ण! मेरा शरीर कांप रहा है और मुख सुख रहा है।

(युयत्सुम) युद्ध की इच्छा से (समुपस्थितम्) अपने सामने (इमम्) इस (स्वजनम्) कुटुम्ब समुदाय को (दुष्टवा) देखकर (कृष्ण) हे श्री कृष्ण (मम्) मेरा (गात्राणि) शरीर (सीदन्ति) कांप रहा है (च) और (मुखम्) मुख (परिशुष्याति) सुख रहा है।

१.२९

वेपथुः च शरीरे मे रोम-हर्षः च जायते।
गाण्डीवम् स्रंसते हस्तात् त्वक च एवं परिदह्यते ।।२९।।

(मे) मेरे (शरीरे) शरीर में (वेपथुः) कँपकँपी (आ रही है) (च) और (रोमहर्षः) रोंगटे खड़े (जायते) हो रहे हैं

मेरे शरीर में कँपकँपी (आ रही है) और रोंगटे खड़े हो रहे हैं। और हाथ से गाण्डीव धनुष छुट रही है और त्वचा भी जल रही है।

(च) और (हस्तात्) हाथ से (गाण्डिवम्) गाण्डीव धनुष (स्रंसते) छुट रही है (च) और (त्वक्) त्वचा (एव) भी (परिदह्यते) जल रही है।

१.३०

न च शक्नोमि अवस्थातुम् भ्रमति इव च मे मनः।
निमित्तानि च पश्यामि विपरीतानि केशव।।३०।।

मेरा मन भ्रमित हो रहा है और इस प्रकार खड़े रहना (मेरे लिए) सम्भव नहीं है।

(मे) मेरा (मनः) मन (भ्रमति च) भ्रमित हो रहा है (च) और (एव) इस प्रकार (अवस्थातुम्) खड़े रहना (शक्नोमि) (मेरे लिए) सम्भव (न) नहीं है।

१.३१

न च श्रेयः अनुपश्यामि हत्वा स्वजनम् आहवे।
न काङ्क्षे विजयम् कृष्ण न च राज्यम् सुखानि च ।।३१।।

हे कृष्ण! मैं लक्षणों को (भी) विपरीत देख रहा हूँ। और हे कृष्ण!, युद्ध में अपने कुटुँब समुदायों को मार कर (मुझे कोई) लाभ भी नहीं दिखाई दे रहा है।

(केशव) हे कृष्ण (मैं) (निमित्तानि) लक्षणों (शकुनों/परिणाम) को (च) भी (विपरीतानि) विपरीत (पश्चामि) देख रहा हूँ (च) और (आहव) युद्ध में (स्वजनम्) स्वजनों को (हत्वा) मार कर (श्रेय) श्रेय (लाभ भी) (न) नहीं (अनुपश्यमि) दिखाई दे रहा है।

१.३२

किम् नः राज्येन गोविन्द किम् भोगैः जीवितेन वा।
येषाम् अर्थे काङ्क्षितम् नः राज्यम् भोगाः सुखानि च।।३२।।

हे कृष्ण! हम लोगों को (स्वजनों के बिना) जीने से (भी) क्या लाभ? भोगों से (आनंद का क्या लाभ?) राज्य से क्या (लाभ?) हे कृष्ण! (इस कारण) न (तो) (मैं) विजय चाहता हूँ और न राज्य (चाहता हूँ), और न सुखों को (ही चाहता हूँ)

(गोविन्द) हे कृष्ण (नः) हम लोगों का (जीवितेन) (स्वजनों के बिना) जीने से (भी) (किम्) क्या लाभ? (भोगैः) भोगों से (आनंद का क्या लाभ?) (राज्येन) राज्य से (किम) क्या (लाभ?) (कृष्ण) हे कृष्ण (न) (इस कारण) न (वो) (विजयम) विजय (काङ्ष्टे) चाहता हूँ (न) न (राज्यम्) राज्य (चाहता हूँ) (च) और (न) न (सुखानि) सुखों को (ही चाहता हूँ)

१.३३

ते इमे अवस्थिताः युद्धे प्राणाम् त्यक्त्वा धनानि च।
आचार्याः पितरः पुत्राः तथा एव च पितामहाः ।।३३।।

(येषाम) जिनके (अर्थे) लिए (नः) हम (राज्यम्) राज्य (भोगा) भोग (च) और (सुखानि) सुख-शांती की (काडक्षितम्) इच्छा करते हैं (ते) वे (ही) (इमे) ये सब (अपने संबंधी) (प्राणण) प्राण (च) और (धनानि) धन

जिनके लिए हम राज्य भोग और सुख-शांती की इच्छा करते हैं, वे (ही) ये सब (अपने सम्बंधी) प्राण और धन को त्यागने युद्ध में खड़े हैं।

को (त्यकत्वा) त्यागने (युद्धे) युद्ध में (अवस्थिताः) खड़े हैं।

१.३४/ १.३५

मातुलाः श्वशुराः पौत्राः श्यालाः सम्बन्धिनः तथा।
एतान् न हन्तुम् इच्छामि घ्नतः अपि मधुसूदन ।।३४।।
अपि त्रै-लोक्य राजस्य हेतोः किम् नु मही-कृते।

(फिर भी) अगर आचार्य, पिता, पुत्र और उसी प्रकार पितामह, मामा, ससुर, पौत्र, साले तथा (अन्य) सम्बंधी भी मुझ पर प्रहार करते हैं (तो भी) इनको (मैं) मारना नहीं चाहता हूँ। हे कृष्ण! तीनों लोकों (का राज्य) मिले तो भी (मैं इनको मारना नहीं चाहता), फिर पृथ्वी के लिये (मैं इनको) (मारुँ ही) क्यों?

(तथा) अगर (आचार्य) आचार्य (पितर) पिता (पुत्रा) पुत्र (च) और (एव) उसी प्रकार (पितामहाः) पितामह (मातुला) मामा (श्वशुरा) ससुर (पौत्रा) पौत्र (श्याला) साले (तथा) तथा (सम्बन्धिन) (अन्य) सम्बधी (अपि) भी (घ्नत) मुझ पर प्रहार कर हैं (तो भी) (एतान्) इनको (मैं) (हन्तुम) मारना (न) नहीं (इच्छामि) चाहता हूँ (मधुसुदन) हे कृष्ण (त्रै-लोक्य) तीनों लोकों (का राज्य) (हेतो) मिले (अपि) तो भी (मैं इनको मारना नहीं चाहता) (नु) फिर (महीकृते) पृथ्वी के लिये तो (मैं इनको) (किम्) (मारुँ ही) क्यों?

१.३६

निहत्य धार्तराष्टान् नः का प्रीतिः स्यात् जनार्दन।
पापम् एव आश्रयेत् अस्मान् हत्वा एतान् आततायिनः ।।३६।।

इन सम्बंधियों को मारने से हमें पाप ही मिलेगा। हे कृष्ण! (इस कारण) धृतराष्ट्र के पुत्रों को मार कर हम लोगों को क्या प्रसन्नता होगी?

(एतान) इन (आततायिन) सम्बंधियों को (हत्वा) मारने से (अस्मान) हमें (पापम्) पाप (एव) ही (आश्रयते) मिलेगा। (जनार्दन) हे कृष्ण (धार्तराष्ट्रान) (इस कारण) धृतराष्ट्र के पुत्रों को (निहत्य) मार कर (नः) हम लोगों को (का) क्या (प्रीतिः) प्रसन्नता (स्यात) होगी?

१.३७

तस्मात् न अर्हाः वयम् हन्तुम् धातुराष्ट्रान् स-बान्धवान् ।
स्वजनम् हि कथम् हत्वा सुखिनः स्याम माधव ।।३७।।

हे कृष्ण! अपने स्वजनों को मार कर (हम) कैसे सुखी होंगे? इसलिये अपने बान्धव (और) धृतराष्ट्र के पुत्रों को मारना हमारे लिए उचित नहीं हैं।

(माधव) हे कृष्ण! (स्वजनम्) अपने स्वजनों को (हत्वा) मारकर (हम) (कथम्) कैसे (सुखिन) सुखी (स्थाम) होंगे (तस्मात) इसलिये (स्वबान्धवान्) अपने बान्धव (और) (धार्तराष्ट्रान) धृतराष्ट्र के पुत्रों को (हन्तुम) मारना (वयम) हमारे लिए (अर्हा) उचित (न) नहीं है।

१.३८

यदि अपि एते न पश्यन्ति लोभ उपहत चेतसः।
कुल-क्षय कृतम् दोषम् मित्र-द्रोहे च पातकम् ।।३८।।

अगर उन लोगों को कुल का विनाश करने और मित्रों की हत्या करने जैसा पाप करने में भी कोई दोष नहीं दिखाई दे रहा है। (तो इसका कारण है कि), लोभ ने (इनके) विवेक (सत्य के समझने की क्षमता को) नष्ट कर दिया है।

(यदि) अगर (ऐते) इन लोगों को (कुल) कुल का विनाश करने (च) और (मित्र) मित्रों की (द्रोह) हत्या करने (पातकम्) जैसा पाप (कृतम्) करने में (अपि) भी (दोषम) कोई दोष (न) नहीं (पर्श्यान्त) दिखाई दे रहा है। (लोभ) (तो इसका कारण है कि) लोभ ने (चेतस) (इनके) विवेक (सत्य के समझने की क्षमता को) (उपहत) नष्ट कर दिया है।

१.३९

कथम् न ज्ञेयम् अस्माभिः पापात् अस्मात् निवर्तितुम्
कुल-क्षय कृतम् दोषम् प्रपश्यद्भिः जनार्दन ।।३९।।

हे जनार्दन! (कृष्ण) उन (लोगों के) दोष (चूक को) हम ठीक-ठीक जान गए। (हम उसे) पाप (भी) समझते (हैं तो) कुल (के) विनाश को रोकने के लिए हमारे द्वारा क्यों ना प्रयास किया जाए।

(जनार्दन) हे जनार्दन! (कृष्ण) (अस्मात) उन (लोगों के) (दोषम) दोष (चूक को) (प्रपश्यद्भि) हम ठीक-ठीक जान गए (पापात्) (हम उसे) पाप (ज्ञेयम्) (भी) समझते (हैं तो) (कुल) कुल (के) (क्षय) विनाश को (निवर्तितुम) रोकने के लिए (अस्माभिः) हमारे द्वारा (कथम्) क्यों (न) ना (कृतम्) प्रयास किया जाए।

अर्जुन का युद्ध न करने का कारण

१.४०

कुल-क्षये प्रणश्यन्ति कुल-धर्माः सनातनाः।
धर्मे नष्टे कुलम् कृत्स्नम् अधर्मः अभिभवति उत ।।४०।।

कहा जाता है कि (सत्ताधारी) कुल के विनाश से सदा से चला आया कुलधर्म नष्ट हो जाता है और धर्म के नाश होने पर बचे हुए सम्पूर्ण समाज के कुलों पर अधर्म छा जाता है।

(उत) कहा जाता है कि (कुल) (सत्ताधारी) कुल के (क्षय) विनाश से (सनातना) सदा से चला आया (कुलधर्म) कुलधर्म (प्राणश्यन्ति) नष्ट हो जाता है। (धर्म) और धर्म के (नष्टे) नाश होने पर बचे हुए (कृत्सनम्) सम्पूर्ण समाज के (कुलम्) कुलों पर (अधर्म) अधर्म (अभिभवति) छा जाता है।

१.४१

अधर्म अभिभावत् कृष्ण प्रदुष्यन्ति कुल-स्त्रियः।
स्त्रीषु दुष्टासु वार्ष्णेय जायते वर्ण-सङकर।।४१।।

हे कृष्ण! अधर्म के अधिक बढ़ जाने से कुल की

(कृष्ण) हे कृष्ण! (अधर्म) अधर्म के (अभिभयात) अधिक बढ़ जाने से (कुल) कुल की (स्त्रि) स्त्रियाँ (प्रदुष्यन्ति) दूषित हो जाती हैं। (वार्ष्णेय) हे कृष्ण (स्त्रीषु) स्त्रियों के (दुष्टासु) दूषित होने पर

स्त्रियाँ दूषित हो जाती हैं। हे कृष्ण! स्त्रियों के दूषित होने पर वर्ण संकर (दोगले) पैदा हो जाते हैं।

(वर्ण-सड़कर) वर्ण संकर (दोगले) (जायते) पैदा हो जाते हैं।

१.४२

सङ्करः नरकाय एव कुलघ्नानाम् कुलस्य च।
पतन्ति पितरः हि एषाम् लुप्त पिण्ड उदक क्रियाः।।४२।।

इन दोगलों से ही सागर (और) धरती के प्रकृति पर विनाश फैल जाता है और कुल को घोर अन्धकार में डालने वाले कुल के पूर्वज निःसन्देह नरक में गिराऐ जाते हैं।

(एषाम) इन (सकडर) दोगलों से (हि) ही (उदक) सागर (और) (पिण्ड) धरती (कृपा) के प्रकृति पर (लुप्त) विनाश फैल जाता है (च) और (कुल) कुल को (घ्याम्) घोर अन्धकार में डालने वाले (कुलस्य) कुल के (पितर) पूर्वज (एव) निःसन्देह (नरकाय) नरक में (पतन्ति) गिराएं जाते हैं।

१.४३

दोषै एतैः कुलघ्नानाम् वर्ण-सङ्करः कारकैः।
उत्साद्यन्ते जाति-धर्माः कुल-धर्माः च शाश्वताः।।४३।।

कुल का विनाश करने वाले (और) दोगले वंश को जन्म देने वाले इन दोषों से सदा से चले आये कुल धर्म और जातिधर्म नष्ट हो जाते हैं।

(कुलघ्नानाम) कुल का विनाश करने वाले (और) (वर्ण-संकड् कारकै) दोगले वंश को जन्म देने वाले (एतें) इन (दाषै) दोषों से (शाश्रवात) सदा से चले आये (कुल-धर्मा) कुल धर्म (च) और (जाति-धर्म) जातिधर्म (उत्साधन्ते) नष्ट हो जाते हैं।

१.४४

उत्सन्न कुल-धर्माणाम् मनुष्यानाम् जनार्दन।
नरके अनियतम् वासः भवति इति अनुशुश्रुम ।।४४।।

हे जनार्दन! जिन मनुष्यों के कुलधर्म नष्ट हो जाते हैं, (उन मनुष्यों का) ठिकाना सदा के लिए नरक में होता है, ऐसा (मैंने) ज्ञानियों से सुना।

(जनार्दन) हे जनार्दन! (मनुष्याषाम्) जिन मनुष्यों के (धर्माणाम्) कुलधर्म (उत्सन्न) नष्ट हो जाते हैं। (वास) (उन मनुष्यों का) ठिकाना (अनियतम्) सदा के लिए (नरके) नरक में (भवति) होता है (इति) ऐसा (मैंने) (अनुशुश्रुम्) ज्ञानियों से सुना।

नोट १.४१ : पवित्र कुरआन में ईश्वर कहता है की, थल और जल में बिगाड़ (दंगे/उपद्रव Disturbance) फैल गया स्वयं लोगो ही के हाथों की कमाए हुए पापों के कारण। (ईश्वर ने इसे रोका नहीं) ताकि वह उन (पापियों को) उनकी कुछ करतूतों का मज़ा चखाए। कदाचित वे (पापों से) बाज़ आ जाएँ। (पवित्र कुरआन, सूरह-३०, आ-४१)

१.४५

अहोबत महत् पापम् कर्तुम् व्यवसिताः वयम् ।
यत् राज्य-सुख-लोभेन हन्तुम् स्वजनम् उद्यताः ।।४५।।

आह! बड़े खेद की बात है कि राज्य से मिलने वाले सुख के लोभ में अपने स्वजनों को मारने के लिए हम लोग तैयार हो गये, जो कि हमने बहुत बड़ा पाप करने का निश्चय किया है।

(अहो) आह! (बत) बड़े खेद की बात है, कि (राज्य) राज्य से (सुख) मिलने वाले सुख के (लोभेन) लोभ में (स्वजनम) अपने स्वजनों को (हन्तुम) मारने के लिए (उधता) हम लोग तैयार हो गये (यत) जो कि (वयम्) हमने (महत्) बहुत बड़ा (पापम्) पाप (कर्तुम) करने का (व्यवसिताः) निश्चय किया है।

१.४६

यदि माम् अप्रतीकारम् अशस्त्राम् शस्त्र-पाणयः।
धार्तराष्ट्राः रणे हन्युः तत् मे क्षेम-तरम् भवेत् ।।४६।।

अगर हाथों में शस्त्र लिए हुए, धृतराष्ट्र के पुत्र युद्ध भूमि में सामना न करने वाले और बिना शस्त्र के मुझे मार भी दें (तो) वह मेरे लिये ज्यादा अच्छा होगा।

(यदि) अगर (शस्त्रपाणय) हाथों में शस्त्र लिए हुए, (धार्तराष्ट्रा) धृतराष्ट्र के पुत्र (रणे) युद्ध भूमी में (अप्रतीकारम्) सामना न करने वाले (अशस्त्रम्) और बिना शस्त्र के (माम्) मुझे (हन्यु) मार भी दें (तो) (तत्) वह (में) मेरे लिये (क्षेमतरम्) ज्यादा अच्छा (भवेत्) होगा।

१.४७

संजय उवाच,
एवम् उक्त्वा अर्जुनः संख्ये रथ उपस्थे उपाविशत ।
विसृज्य स-शरम् चापम शोक संविग्न मानसः ।।४७।।

ऐसा कह कर उदास मन वाले अर्जुन बाण के साथ धनुष को त्याग करके युद्धभुमि में रथ के पिछे बैठ गए।

(एवम्) ऐसा (उकत्वा) कह कर (शोकसंविग्न मानसा) उदास मन वाले (अर्जुन) अर्जुन (सशरम) बाण के साथ (चापम) धनुष को (विसृज्य) त्याग करके (सडाक्ये) युद्धभुमि में (त्यापस्ये) रथ के पीछे (उपविशत) बैठ गए।

अध्याय नं. २

सांख्ययोग

संजय उवाच
तं तथा कृपयाविष्टमश्रुपूर्णाकुलेक्षणम्।
विषीदन्तमिदं वाक्यमुवाच मधुसूदनः ॥1॥

श्रीभगवानुवाच
कुतस्त्वा कश्मलमिदं विषमे समुपस्थितम्।
अनार्यजुष्टमस्वर्ग्यमकीर्तिकरमर्जुन॥2॥

क्लैब्यं मा स्म गमः पार्थ नैतत्त्वय्युपपद्यते।
क्षुद्रं हृदयदौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप ॥3॥

अर्जुन उवाच
कथं भीष्ममहं सङ्ख्ये द्रोणं च मधुसूदन।
इषुभिः प्रतियोत्स्यामि पूजार्हावरिसूदन ॥4॥

गुरूनहत्वा हि महानुभावा-ञ्छ्रेयो भोक्तुं भैक्ष्यमपीह लोके।
हत्वार्थकामांस्तु गुरूनिहैव भुंजीय भोगान् रुधिरप्रदिग्धान्॥5॥

न चैतद्विद्मः कतरन्नो गरीयो-यद्वा जयेम यदि वा नो जयेयुः।
यानेव हत्वा न जिजीविषाम-स्तेऽवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्ट्राः ॥6॥

कार्पण्यदोषोपहतस्वभावः पृच्छामि त्वां धर्मसम्मूढचेताः।
यच्छ्रेयः स्यान्निश्चितं ब्रूहि तन्मे शिष्यस्तेऽहं शाधि मां त्वां प्रपन्नम्॥7॥

न हि प्रपश्यामि ममापनुद्या-द्यच्छोकमुच्छोषणमिन्द्रियाणाम्।
अवाप्य भूमावसपत्रमृद्धं-राज्यं सुराणामपि चाधिपत्यम्॥8॥

संजय उवाच
एवमुक्त्वा हृषीकेशं गुडाकेशः परन्तप।
न योत्स्य इतिगोविन्दमुक्त्वा तूष्णीं बभूव ह ॥9॥

तमुवाच हृषीकेशः प्रहसन्निव भारत।
सेनयोरुभयोर्मध्ये विषीदंतमिदं वचः ॥10॥

श्री भगवानुवाच
अशोच्यानन्वशोचस्त्वं प्रज्ञावादांश्च भाषसे।
गतासूनगतासूंश्च नानुशोचन्ति पण्डिताः ॥11॥

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्॥12॥

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति ॥13॥

मात्रास्पर्शास्तु कौन्तेय शीतोष्णसुखदुःखदाः।
आगमापायिनोऽनित्यास्तांस्तितिक्षस्व भारत ॥14॥

यं हि न व्यथयन्त्येते पुरुषं पुरुषर्षभ।
समदुःखसुखं धीरं सोऽमृतत्वाय कल्पते ॥15॥

नासतो विद्यते भावो नाभावो विद्यते सतः।
उभयोरपि दृष्टोऽन्तस्त्वनयोस्तत्वदर्शिभिः ॥16॥

अविनाशि तु तद्विद्धि येन सर्वमिदं ततम्।
विनाशमव्ययस्यास्य न कश्चित्कर्तुमर्हति ॥17॥

अन्तवन्त इमे देहा नित्यस्योक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनोऽप्रमेयस्य तस्माद्युध्यस्व भारत ॥18॥

य एनं वेत्ति हन्तारं यश्चैनं मन्यते हतम्।
उभौ तौ न विजानीतो नायं हन्ति न हन्यते ॥19॥

न जायते म्रियते वा कदाचि- न्नायं भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजो नित्यः शाश्वतोऽयं पुराणो-न हन्यते हन्यमाने शरीरे ॥20॥

वेदाविनाशिनं नित्यं य एनमजमव्ययम्।
कथं स पुरुषः पार्थ कं घातयति हन्ति कम् ॥21॥

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-न्यन्यानि संयाति नवानि देही ॥2.22॥

नैनं छिन्दन्ति शस्त्राणि नैनं दहति पावकः।
न चैनं क्लेदयन्त्यापो न शोषयति मारुतः ॥2.23॥

अच्छेद्योऽयमदाह्योऽयमक्लेद्योऽशोष्य एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुरचलोऽयं सनातनः ॥2.24॥

अव्यक्तोऽयमचिन्त्योऽयमविकार्योऽयमुच्यते।
तस्मादेवं विदित्वैनं नानुशोचितुमर्हसि॥2.25॥

अथ चैनं नित्यजातं नित्यं वा मन्यसे मृतम्।
तथापि त्वं महाबाहो नैवं शोचितुमर्हसि ॥2.26॥

जातस्त हि ध्रुवो मृत्युर्ध्रुवं जन्म मृतस्य च।
तस्मादपरिहार्येऽर्थे न त्वं शोचितुमर्हसि ॥2.27॥

अव्यक्तादीनि भूतानि व्यक्तमध्यानि भारत।
अव्यक्तनिधनान्येव तत्र का परिदेवना ॥2.28॥

आश्चर्यवत्पश्यति कश्चिदेन-माश्चर्यवद्वदति तथैव चान्यः।
आश्चर्यवच्चैनमन्यः श्रृणोति श्रुत्वाप्येनं वेद न चैव कश्चित् ॥2.29॥

देही नित्यमवध्योऽयं देहे सर्वस्य भारत।
तस्मात्सर्वाणि भूतानि न त्वं शोचितुमर्हसि ॥2.30॥

स्वधर्ममपि चावेक्ष्य न विकम्पितुमर्हसि।
धर्म्याद्धि युद्धाच्छ्रेयोऽन्यत्क्षत्रियस्य न विद्यते ॥31॥

यदृच्छया चोपपन्नां स्वर्गद्वारमपावृतम्।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्ते युद्धमीदृशम् ॥32॥

अथ चेत्त्वमिमं धर्म्यं सङ्ग्रामं न करिष्यसि।
ततः स्वधर्मं कीर्तिं च हित्वा पापमवाप्स्यसि ॥33॥

अकीर्तिं चापि भूतानि कथयिष्यन्ति तेऽव्ययाम्।
सम्भावितस्य चाकीर्ति-र्मरणादतिरिच्यते ॥34॥

भयाद्रणादुपरतं मंस्यन्ते त्वां महारथाः।
येषां च त्वं बहुमतो भूत्वा यास्यसि लाघवम् ॥35॥

अवाच्यवादांश्च बहून् वदिष्यन्ति तवाहिताः।
निन्दन्तस्तव सामर्थ्यं ततो दुःखतरं नु किम् ॥36॥

हतो वा प्राप्स्यसि स्वर्गं जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मादुत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः ॥37॥

सुखदुःखे समे कृत्वा लाभालाभौ जयाजयौ।
ततो युद्धाय युज्यस्व नैवं पापमवाप्स्यसि ॥38॥

एषा तेऽभिहिता साङ्ख्ये बुद्धिर्योगे त्विमां शृणु।
बुद्ध्या युक्तो यया पार्थ कर्मबन्धं प्रहास्यसि ॥39॥

यनेहाभिक्रमनाशोऽस्ति प्रत्यवातो न विद्यते।
स्वल्पमप्यस्य धर्मस्य त्रायते महतो भयात् ॥40॥

व्यवसायात्मिका बुद्धिरेकेह कुरुनन्दन।
बहुशाका ह्यनन्ताश्च बुद्धयोऽव्यवसायिनाम् ॥41॥

यामिमां पुष्पितां वाचं प्रवदन्त्यविपश्चितः।
वेदवादरताः पार्थ नान्यदस्तीति वादिनः ॥42॥

कामात्मानः स्वर्गपरा जन्मकर्मफलप्रदाम्।
क्रियाविश्लेषबहुलां भोगैश्वर्यगतिं प्रति ॥43॥

भोगैश्वर्यप्रसक्तानां तयापहृतचेतसाम्।
व्यवसायात्मिका बुद्धिः समाधौ न विधीयते ॥44॥

त्रैगुण्यविषया वेदा निस्त्रैगुण्यो भवार्जुन।
निर्द्वन्द्वो नित्यसत्वस्थो निर्योगक्षेम आत्मवान् ॥45॥

यावानर्थ उदपाने सर्वतः सम्प्लुतोदके।
तावान्सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य विजानतः ॥46॥

कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन।
मा कर्मफलहेतुर्भुर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि ॥47॥

योगस्थः कुरु कर्माणि संग त्यक्त्वा धनंजय।
सिद्धयसिद्धयोः समो भूत्वा समत्वं योग उच्यते
॥48॥

दूरेण ह्यवरं कर्म बुद्धियोगाद्धनंजय।
बुद्धौ शरणमन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ॥49॥

बुद्धियुक्तो जहातीह उभे सुकृतदुष्कृते।
तस्माद्योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ॥50॥

कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः।
जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम् ॥51॥

यदा ते मोहकलिलं बुद्धिर्व्यतितरिष्यति।
तदा गन्तासि निर्वेदं श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च ॥52॥

श्रुतिविप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधावचला बुद्धिस्तदा योगमवाप्स्यसि ॥53॥

अर्जुन उवाच
स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधिस्थस्य केशव।
स्थितधीः किं प्रभाषेत किमासीत व्रजेत किम् ॥54॥

श्रीभगवानुवाच
प्रजहाति यदा कामान् सर्वान्पार्थ मनोगतान्।
आत्मयेवात्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञस्तदोच्यते ॥55॥

दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥56॥

यः सर्वत्रानभिस्नेहस्तत्तत्प्राप्य शुभाशुभम्।
नाभिनंदति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥57॥

यदा संहरते चायं कूर्मोऽङ्गनीव सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥58॥

विषया विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः।
रसवर्जं रसोऽप्यस्य परं दृष्टवा निवर्तते ॥59॥

यततो ह्यपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः।
इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभं मनः ॥60॥

तानि सर्वाणि संयम्य युक्त आसीत मत्परः।
वशे हि यस्येन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥61॥

ध्यायतो विषयान्पुंसः संगस्तेषूपजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधोऽभिजायते ॥62॥

क्रोधाद्भवति सम्मोहः सम्मोहात्स्मृतिविभ्रमः।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति ॥63॥

रागद्वेषवियुक्तैस्तु विषयानिन्द्रियैश्चरन्।
आत्मवश्यैर्विधेयात्मा प्रसादमधिगच्छति ॥64॥

प्रसादे सर्वदुःखानां हानिरस्योपजायते।
प्रसन्नचेतसो ह्याशु बुद्धिः पर्यवतिष्ठते ॥65॥

नास्ति बुद्धिरयुक्तस्य न चायुक्तस्य भावना।
न चाभावयतः शान्तिरशान्तस्य कुतः सुखम् ॥66॥

इन्द्रियाणां हि चरतां यन्मनोऽनुविधीयते।
तदस्य हरति प्रज्ञां वायुर्नावमिवाम्भसि ॥67॥

तस्माद्यस्य महाबाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेभ्यस्तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ॥68॥

या निशा सर्वभूतानां तस्यां जागर्ति संयमी।
यस्यां जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतो मुनेः ॥69॥

आपूर्यमाणमचलप्रतिष्ठं-समुद्रमापः प्रविशन्ति यद्वत्
तद्वत्कामा यं प्रविशन्ति सर्वे स शान्तिमाप्नोति न
कामकामी ॥70॥

विहाय कामान्यः सर्वान्पुमांश्चरति निःस्पृहः।
निर्ममो निरहंकारः स शान्तिमधिगच्छति ॥71॥

एषा ब्राह्मी स्थितिः पार्थ नैनां प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वास्यामन्तकालेऽपि ब्रह्मनिर्वाणमृच्छति ॥72॥

अध्याय का परिचय

● इस अध्याय में सांख्या योग और बुद्धि योग का परिचय है। धार्मिक ग्रन्थों में सांख्य का शाब्दिक अर्थ है विश्लेषण। तो इस योग में धार्मिक तथ्यों का विश्लेषण किया जाता है। बुद्धि योग का साधारण अर्थ है, धर्म में क्या सही है उसे समझना।

● अर्जुन को इस बात का शोक था कि उसका सारा परिवार इस युद्ध में मारा जा सकता है, तो ईश्वर ने उसे शरीर और रुह के बारे में श्लोक नं. २.१३ से २.३० तक विस्तार से बताया कि शरीर के अंदर जो रुह है वह अविनाशी है। इस कारण किसी के मरने का शोक न करो। यह शरीर और रुह के सम्बन्ध का विश्लेषण सांख्य ज्ञान से है।

● श्लोक नं. २.३८ के बाद ईश्वर ने बुद्धियोग का वर्णन किया। इसमें मुख्य ज्ञान यह है कि मनुष्य को ईश्वर के आदेशानुसार ईश्वर में श्रद्धा रखते हुए, अपने अनिवार्य कर्तव्य (कर्मबन्धन) को पूरा करना चाहिए। बुद्धि योग का वर्णन श्लोक नं. २.३८ से २.५९ तक है।

● अन्त में ईश्वर ने कर्मबन्धन को पूरा न करने का कारण बताया है और वह है अपनी इच्छाओं के अनुसार अपना जीवन व्यतीत करने की चाह।

अध्याय का सारांश

● श्लोक नं. २.१ से २.९ तक अर्जुन के युद्ध न करने की इच्छा का वर्णन है।

● श्लोक नं. २.१० से श्लोक नं. २.१७ में श्री कृष्ण जी, जो कुछ पूरी भागवद गीता में लिखा है उसी को संक्षिप्त में अर्जुन को समझाते हैं, ताकि उसका शोक दूर हो जाए।

● श्लोक नं. २.१८ के बाद से अधिकतर भगवद गीता ईश्वरवाणी है, जो ईश्वर ने श्री कृष्ण के माध्यम से अर्जुन और सारे मानवजाति से कहा है। ईश्वर वाणी को महर्षि वेद व्यास जी ने अपने शब्दों में ७०० श्लोकों में भगवद् गीता लिखी है।

● श्लोक नं. २.१८ से २.३० तक (Spirit) रुह का वर्णन है। आत्मा, प्राण के बारे में अधिक जानकारी के लिए नोट नं. N-२ पढ़िये।

● श्लोक नं. २.३४ से २.६० तक कर्म-बंधन का वर्णन है।

● श्लोक नं. २.६० से २.७२ में कर्मबंधन न पूरा करने के कारणों का वर्णन है।

अध्याय

श्री कृष्ण जी का अर्जुन को दिलासा देना।

२ः१

संजय उवाच
तम् तथा कृपया आविष्टम् अश्रु-पूर्णा-आकुल ईक्षणम्।
विषीदन्तम् इदम् वाक्यम् उवाच मधुसूदनः।।१।।

संजय ने कहा, जब (श्री कृष्ण ने) दया (कृपा) से भरे हुए, दुःखी (अर्जुन को) (और उसकी) आँखो को पूरी तरह आँसुओ से भरी हुई (देखा), तब श्री कृष्ण (ने) (अर्जुन से) यह शब्द कहे।

(संजय उवाच) संजय ने कहा, (तम) जब (श्री कृष्ण ने) (कृपया) कृपा (दया) से (आविष्टम्) भरे हुए (विषीदन्तम्) दुःखी (अर्जुन को) (ईक्षणम्) (और उसकी) आँखो को (पूर्ण) पूरी तरह (अश्रु) आँसुओ से (आकुल) भरी हुई (देखा) (तब) तब (मधुसूदन) श्री कृष्ण (ने) (इदम्) (अर्जुन से) यह (वाक्य) शब्द (उवाच) कहे।

२ः२

श्रीभगवान् उवाच
कुतः त्वा कश्मलम् इदम् विषमे समुपस्थितम्।
अनार्य जुष्टम् अस्वर्ग्यम् अकीर्ति करम् अर्जुन ।।२।।

इस कठीन समय में तुम्हारे (मन में) यह कायरतापूर्वक (निश्चय) कहाँ से आया? हे अर्जुन! अज्ञानतापूर्वक कदम (कर्म) स्वर्ग की तरफ नहीं ले जाते, (बल्कि) अपमानकारक होते हैं।

(श्रीभगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (विषमे) इस कठीन समय में (त्वा) तुम्हारे (मन में) (इदम) यह (कश्मलम्) कायरतापूर्वक (निश्चय) (कुत) कहाँ से (समुपस्थितम्) आया? (अर्जुन) हे अर्जुन (अनार्य) अज्ञानतापूर्वक (जुष्टम्) कदम (कर्म) (अस्वर्ग्यम) स्वर्ग की तरफ नहीं ले जाते (बल्कि) (अकीर्ति करम्) अपमानकारक होते हैं।

२ः३

क्लैब्यम् मा स्म गमः पार्थ न एतत् त्वयि उपपद्यते।
क्षुद्रम् हृदय दौर्बल्यम् त्यक्त्वा उत्तिष्ठ परम्-तप।।३।।

हे अर्जुन, कायरता को मत अपनाओ। यह बहुत बुरी बात है। तुम्हें शोभा नहीं देती है। हे अर्जुन! हृदय की (इस) दुर्बलता को छोड़कर (युद्ध के लिए) खड़े हो जाओ।

(पार्थ) हे अर्जुन (क्लैब्यम्) कायरता को (मा स्म) मत (गमः) अपनाओ (एतत) यह (क्षुद्रम) बहुत बुरी बात है (त्वा) तुम्हें (अपपद्यते) शोभा (न) नहीं देती है। (परन्तप) हे अर्जुन (हृदय) हृदय की (दौर्बल्यम) (इस) दुर्बलता को (त्यक्त्वा) छोड़कर (उत्तिष्ठ) (युद्ध के लिए) खड़े हो जाओ।

अर्जुन का अपने विचार व्यक्त करना।

२:४

अर्जुन उवाच,
कथम् भीष्मम् अहम् सङ्ख्ये द्रोणम् च मधुसूदन।
इषुभिः प्रतियोत्सामि पूजा-अर्हा अरि-सूदन ।।४।।

अर्जुन ने कहा, हे मधुसूदन (कृष्ण)! युद्ध में मैं किस प्रकार भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य पर बाणों से उलट कर वार करुंगा। हे अरि-सुदन (कृष्ण)! यह लोग मेरे लिए आदरणीय हैं।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा, (मधुसूदन) हे मधुसूदन (संख्ये) युद्ध में (अहम) मैं (कयम) किस प्रकार (भीष्मम्) भीष्म पितामह (द्रोण) द्रोणाचार्य पर (इषुभि) बाणों से (प्रतियोत्स्यमि) उलट कर वार करुंगा (अरि-सूदन्) हे अरि-सुदन (कृष्ण) (पूजा) यह लोग मेरे लिए आदरणीय (अर्हा) हैं।

२:५

गुरुन् अहत्वा हि महा-अनुभावान् श्रेयः भोक्तुम् भैक्ष्यम् अपि इहलोके।
हत्वा अर्थ कामान् तु गुरुन् इह एव भुञ्जीय भोगान् रुधिर प्रदिग्धान् ।।५।।

निःसंदेह, इस संसार में इन महान अनुभावि गुरुजनों की हत्या न करके यह अच्छा है कि मैं भिक्षा मांग कर अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करुँ। जीवन के आनंद कामना की चाह में मैं इन गुरुजनों की हत्या भी कर दूं, परंतु आनंद लेने की वस्तुओं से आनंद लेने के लिए निःसंदेह यह संसार मुझे रक्त से लतपत (सना) हुआ मिलेगा।

(हि) निःसंदेह (इस) इस संसार में (महाअनुभावान) इन महान अनुभाव (गुरुन) गुरुजनों की (अहत्वा) हत्या न करके (श्रेय) यह अच्छा है कि (भैक्ष्यम्) मैं भिक्षा मांग कर (भोक्तुम) अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति करुं (अर्थ) जीवन के आनंद कामना की चाह में, (गुरुन्) मैं इन गुरुजनों की (हत्वा) हत्या (अपी) भी कर दूं (तो) परंतु (भोगान्) आनंद लेने की वस्तुओं से (भुञ्जीय) आनंद लेने के लिए (एव) निःसंदेह (इह) यह संसार मुझे (रुधिर) रक्त से (प्रदिग्धान्) लतपत (सना) हुआ मिलेगा।

२:६

न च एतत् विद्मः कतरत् नः गरीयः यत् वा जयेम यदि वा नः जयेयुः।
यान् एव हत्वा न जिजीविषामः ते अवस्थिताः प्रमुखे धार्तराष्टः ।।६।।

(हम तो) यह भी नहीं जानते जो हमारे (लिए) उचित है। या तो हम विजयी होंगे, या (वह) हम पर विजय प्राप्त करेंगे। परन्तु वह सब धृतराष्ट्र के पुत्र जो अभी हमारे सामने खड़े हैं, इनको मारकर हम कभी नहीं जीना चाहेंगे।

(एतत) (हम तो) यह (च) भी (न) नहीं (विद्मः) जानते (कतरत) जो (नः) हमारे (लिए) (गरीयः) उचित है। (यत् वा) या तो (जयेम) हम विजयी होंगे (वा) या (वह) (नः) हम पर (जयेम) विजय प्राप्त करेंगे। (यदि) परन्तु (ते) वह सब (धार्तराष्ट्र) धृतराष्ट्र के पुत्र; (प्रमुखे) जो अभी हमारे सामने (अवस्थिताः) खड़े हैं। (यान) इनको (हत्वा) मारकर हम (न) कभी नहीं (जिजीविषामः) जीना चाहेंगे।

२:७

कार्पण्य दोष उपहत स्वभावः पृच्छामि त्वाम् धर्म सम्मूढ चेताः
यत् श्रेयः स्यात् निश्चितम् ब्रुहि तत् मे शिष्यः ते अहम् शाधि माम् त्वाम् प्रपन्नम् ।।७।।

मेरे अपने स्वभाव में दयालुता है, जिसके कारण मैं गलती करता हूँ। इस कारण तुमसे सत्य धर्म को जानने के लिए मेरा हृदय व्याकुल है। अब तुमसे ईश्वर के वह आदेश पुछता हूँ जो मेरे लिए श्रेष्ठ हैं। निश्चित होकर मुझसे (वह उपदेश) कहो। मुझे केवल तुम्हारा ही सहारा है और मैं तुम्हारा शिष्य भी हूँ। इस कारण मेरा मार्गदर्शन करो।

(स्व) मेरे अपने (भावः) स्वभाव में (कार्पण्य) दयालुता है (दोष) (जिसके कारण मैं) गलती (उपहत) करता हूँ (त्वाम) (इस कारण) तुमसे (धर्म) सत्य-धर्म को (चेताः) (जानने के लिए मेरा) हृदय (सम्मूढ) व्याकुल है। (तत) (अब तुमसे ईश्वर के) वह (आदेश) (पृच्छामि) पुछता हूँ (यत) जो (श्रेय) (मेरे लिए) श्रेष्ठ (स्यात) है (निश्चितम्) निश्चित होकर (मे) मुझसे (वह उपदेश) (ब्रुहि) कहो, (माम) मुझे (त्वाम) (केवल) तुम्हारा (प्रपन्नम) सहारा है (अहम) (और) मैं (ते) तुम्हारा (शिष्यः) शिष्य भी हूँ। (शाधि) इस कारण मेरा मार्गदर्शन करो।

२:८

न हि प्रपश्यामि मम अपनुद्यात् यत् शोकम् उच्छोषणम् इन्द्रियाणाम्।
अवाप्य भूमौ असपत्नम् ऋद्धम् राज्यम् सुराणाम् अपि च आधिपत्यम् ।।२-८।।

अगर (मुझे) इस धरती पर शत्रुरहित, दुःख और कष्टरहित, देवताओं से पूर्ण, और सर्वश्रेष्ठ राज्य भी मिल जाए, तो भी निःसंदेह मुझे नहीं दिखाई देता है कि यह मेरे दुःख को हल्का करेगा।

(अपि) यदि (मुझे) (भूमी) इस धरती पर (असपत्नम्) शत्रुरहित (ऋद्धम) दुःख और कष्टरहित (सुराणाम्) देवताओं से पूर्ण (च) और (आधिपत्यम) सर्वश्रेष्ठ (राज्यम्) राज्य भी (अवाप्य) मिल जाए, (हि) (तो भी) निःसंदेह (मम) मुझे (न) नहीं (प्रपश्यामि) दिखाई देता है कि यह (शोकम्) मेरे दुःख को (उच्छोषणाम) हल्का करेगा।

२:९

संजय उवाच,
एवम् उक्त्वा हृषीकेशम् गुडाकेशः परन्तपः।
न योत्स्ये इति गोविन्दम् उक्त्वा तूष्णीम् बभूव ह ।।९।।

संजय ने कहा, अर्जुन ने श्री कृष्ण जी से इस प्रकार कहा, हे कृष्ण! सत्य यह है कि मैं युद्ध नहीं करुँगा। इस प्रकार कह कर अर्जुन चुप हो गए।

(संजय उवाच) संजय ने कहा, (परन्तप) अर्जुन ने (हृषीकेशम्) श्री कृष्ण जी से (एवम्) इस प्रकार (उक्त्वा) कहा (गोविन्दम) हे कृष्ण! (ह) सत्य यह है कि (न योत्सये) मैं युद्ध (न) नहीं करुँगा। (इति) इस प्रकार (उक्त्वा) कह कर (गुडाकेशः) अर्जुन (तुष्णीम्) चुप (बभूव) हो गए।

२:१०

संजय उवाच तमुवाच हृषीकेशः प्रहसनः इव भारत।
सेनयोः उभयोः मध्ये विषीदन्तम् इदम् वचः ।।१०।।

संजय ने कहा, हे भारत (धृतराष्ट)!, श्री कृष्ण ने दोनों सेनाओं के बीच में उस उदास अर्जुन से मुस्कुराकर इस प्रकार यह बातें कही।

(संजय उवाच) संजय ने कहा, (भारत) हे भारत (धृतराष्ट्र)! (हृषीकेशः) श्री कृष्ण ने (उभयोः) दोनों (सेनयोः) सेनाओ के (मध्ये) बीच में (तम्) उस (विषीदन्तम्) उदास अर्जुन से (प्रहसनः) मुस्कुराकर (इव) इस प्रकार (इदम्) यह (उवाच) बातें कही।

श्री कृष्ण जी के उपदेश-

२.११

श्री भगवान उवाच,
अशोच्यान् अन्वशोचः त्वम् प्रज्ञावादान् च भाषसे।
गत असून अगत असून च न अनुशोचन्ति पण्डिताः।।११।।

श्री कृष्ण जी ने कहा, हे अर्जुन!, तुम ज्ञानी की तरह से भी बात करते हो और (उनके लिए) शोक करते हो (जिनके लिए) शोक नहीं करना चाहिए। ज्ञानी उनके लिए शोक नहीं करते, जिनके प्राण चले गये और (उनके लिए भी नहीं जिनके) प्राण नहीं गये।

(श्री भगवान उवाच) श्री कृष्ण जी ने कहा (त्वम्) (हे अर्जुन) तुम (प्रज्ञावादान्) ज्ञानी की तरह से भी बात करते हो (च) और (अन्वशोच) (उनके लिए) शोक करते हो (अशोच्यान्) (जिनके लिए) शोक नहीं करना चाहिए (पण्डिताः) ज्ञानी पण्डित (अनुशोचन्ति) उनके लिए शोक (न) नहीं करते (असून्) जिनके प्राण (गत) चले गये (च) और (उनके लिए भी नहीं जिनके) (असून्) प्राण (अगत) नहीं गये।

२.१२

न तु एव अहम् जातु न आसम् न त्वम् न इमे जन-अधिपाः।
न च एव न भविष्यामः सर्वे वयम् अतः परम् ।।१२।।

(कोई ऐसा) काल न था, जब मैं (धर्म का उपदेश देने वाला) न रहा हूँ। और ऐसा कोई काल न था जब तुम (जैसे धर्म स्थापना करने वाले) न रहे हो। और कोई ऐसा काल न था, जब मानवजाति पर

(जातु) (कोई ऐसा) काल (न) न (था जब) (अहम्) मैं (धर्म का उपदेश देने वाला) (न) न (आसम्) रहा हूँ (न) (और ऐसा कोई काल) न (था) (त्वम्) (जब) तुम (जैसे धर्म स्थापना करने वाले न रहे हों) (न) (और कोई ऐसा काल) न (था जब) (जन अधिपाः) (मानवजाति पर अत्याचार करने वाले यह) राजा लोग (न थे) (अतःपरम्) और इसके आगे

नोट २.१२ : इस श्लोक का अर्थ है की ईश्वर के दिव्य ज्ञान का प्रचार करने वाले ज्ञानी। सत्य की स्थापना के लिए संघर्ष करने वाले पवित्र व्यक्ति। और मानवजाति पर अत्याचार करने वाले दृष्ट सत्ताधारी, सदैव समाज में रहेंगे, और यह सत्य और असत्य का महाभारत जैसा युद्ध हर युग में लड़ा जाएगा।

अत्याचार करने वाले यह राजा लोग ना थे। और इसके आगे भविष्य काल में भी ऐसा कोई युग ना होगा जब हम सब न रहेंगे।

(भविष्यामः) भविष्य काल में भी (सर्वे वयम्) (ऐसा कोई युग न होगा जब) हम सब (न रहेंगे।)

२.१३

देहिनः अस्मिन् यथा देहे कौमारम् यौवनम् जरा।
तथा देह-अन्तर प्राप्तिः धीरः तत्र न मुह्यति ।।१३।।

देहधारी इस मनुष्य को जैसे बालकपन में, जवानी में और बुढ़ापे में एक अलग शरीर मिलता है। ऐसे ही देह के अन्दर जो रुह है, उसे भी मृत्यु के बाद (स्वर्ग लोक में) एक नया शरीर प्राप्त होता हैं। इसलिए ज्ञानी लोग (मृत्यु के विषय में) भ्रम में नहीं रहते।

(देहिन्) देहधारी (अस्मिन्) इस मनुष्य को (यथा) जैसे (कौमारम्) बालकपन में (यौवनम्) जवानी में (जरा) और बुढ़ापे में (देहे) एक अलग शरीर मिलता है; (तथा) ऐसे ही (देह अन्तर) देह के अन्दर जो रुह है, उसे भी (प्राप्तिः) मृत्यु के बाद (स्वर्ग लोक में) एक नया शरीर प्राप्त होता है। (तत्र) इसलिए (धीरः) ज्ञानी लोग (मृत्यु के विषय में) (मुह्यति) भ्रम में (न) नहीं रहते।

२.१४

मात्रा-स्पर्शाः तु कौन्तेय शीत उष्ण सुख दुःख दाः
आगम अपायिनः अनित्याः तान् तितिक्षस्व भारत ।।१४।।

हे अर्जुन, जैसे जाड़े और गरमी के मौसम आते जाते रहते हैं। सुख-दुःख (भी जीवन में ऐसे ही आते जाते रहते हैं।) परंतु यह आपको कितने कष्ट में डालते हैं, यह केवल इस बात पर निर्भर करता है कि आप उन्हें कैसा अनुभव करते हो। हे अर्जुन!, उनको (ऐसे ही सहन करो जैसे तुम मौसम के बदलने को सहन करते हो।)

(कौन्तेय) हे अर्जुन (शीत उष्ण) जैसे जाड़े और गरमी के मौसम (अपायिनः) आते जाते रहते हैं। (सुख-दुःख) सुख-दुःख (भी जीवन में ऐसे ही आते जाते रहते हैं।) (तु) परंतु (दाः) यह आपको कितने कष्ट में डालते हैं यह (मात्रा स्पर्शाः) केवल इस बात पर निर्भर करता है कि आप उन्हें कैसा महसूस करते हो? (भारत) हे अर्जुन (तान्) उनको (ऐसे ही सहन करो; जैसे तुम मौसम के बदलने को सहन करते हो।)

नोट नं. २.१३ : अथर्ववेद में एक श्लोक इस प्रकार है,

अनस्था: पूता: पवनेन शुद्धा: शुचय: शुचिमपि यन्ति लोकम्।
नैषां शिश्नं प्र दहति जातवेदा: स्वर्गेलोके बहु स्त्रैणमेषाम्।। (अथर्ववेद कांड-४, सुक्त-३४, मंत्र-२)

पवित्र करने वालों के द्वारा पवित्र होकर ऐसे शरीर के साथ जिसमें हड्डियाँ नही होंगी, वह प्रकाशित होकर स्वर्ग लोक में पहुँचते हैं। उनके शरीर को अग्नि नहीं जलाती है। स्वर्ग लोक में उनके लिए बहुत आनंद है।

यह मंत्र सिद्ध करता है कि रुह को मृत्यू के बाद नया शरीर मिलेगा।

२.१५

यम् हि न व्यथयन्ति एते पुरुषम् पुरुष-ऋषभ।
सम दुःख सुखम् धीरम् सः अमृतत्वाय कल्पते।।१५।।

हे पुरुषों में सबसे श्रेष्ठ अर्जुन, जो व्यक्ति परेशान नहीं होता और दुःख-सुख में एक समान रहता है। ऐसा ही व्यक्ति योग्य है स्वर्ग का, जहाँ मृत्यु नहीं।

(पुरुष-ऋषभ) हे पुरुषों में सबसे श्रेष्ठ अर्जुन (पुरुषम्) जो व्यक्ती (व्यथयन्ति) परेशान (न) नहीं होता और (दुःख) दुःख (सुखम्) सुख में (सम) एक समान रहता है। (सः) ऐसा ही व्यक्ति (कल्पते) योग्य है (अमृतत्वाय) स्वर्ग का जहाँ मृत्यु नहीं।

२.१६

न असतः विद्यते भावः न अभावः विद्यते सतः।
उभयोः अपि दृष्टः अन्तः तु अनयोः तत्त्व दर्शिभिः।।१६।।

(यह संसार और मनुष्य का शरीर यह अस्थायी हैं) किन्तु हम इन्हें देख सकते है। (ईश्वर और मृत्यु के बाद का जीवन) सत्य है, किन्तु हम उन्हें नहीं देख सकते हैं। परंतु यह दोनों एक समान नहीं हैं। नि:संदेह इनके बारे में सत्य, तथ्य और महत्त्व (Concluding position) एक ज्ञानी (तत्वदर्शी) ही देख सकता है।

(असतः) (यह संसार और मनुष्य का शरीर) यह अस्थायी हैं। (भावः विद्यते) किन्तु हम इन्हें देख सकते है। (सतः) (ईश्वर और मृत्यू के बाद का जीवन) सत्य है। (अभावः विद्यते) किन्तु हम उन्हें नहीं देख सकते हैं। (तु) परंतु (उभयो) यह दोनों (न) एक समान नहीं है। (अपि) नि:संदेह (अनयोः) इनके बारे में (तत्व) सत्य और तथ्य (अन्तः) और महत्त्व (दर्शिभि) एक ज्ञानी (तत्वदर्शी) (दृष्ट) ही देख सकता है।

ईश्वर का परिचय

२.१७

अविनाशि तु तत् विद्धि येन सर्वम् इदम् ततम।
विनाशम् अव्ययस्य अस्य न कश्चित् कर्तुम् अर्हति।।१७।।

(हे अर्जुन) नि:संदेह, तुम्हें जानना चाहिए कि

(तु) (हे अर्जुन) नि:संदेह (विद्धि) तुम्हे जानना चाहिए कि (तत्) वह ईश्वर (अविनाशी) अविनाशी है। (येन) जिसके कारण (सर्वम्)

नोट २.१७ ईश्वर ने कहा, और ईश्वर के साथ किसी दूसरे उपास्य को न पुकारो। उसके सिवा दुसरा कोई उपास्य नहीं। हर चीज़ नष्ट होने वाली है, सिवाय उसके अस्तित्व के। निर्णय का अधिकार उसी को प्राप्त है, और तुम उसी की ओर लौटाए जाओगे। (पवित्र कुरआन सूरे अल कसस नं. २८, आयत नं.८८)

नोट नं. २.१५: पवित्र कुरआन के सूरे नं. १०३ इस प्रकार है। "ज़माने की क़सम। इन्सान वास्तव में घाटे में है। सिवाय उन लोगों के जो ईमान लाए और अच्छे कर्म करते रहे और एक दूसरे को सत्य के मार्ग का उपदेश देते रहे और संयम बरतने का (सब्र करने का) आदेश देते रहे।" (पवित्र कुरआन सूरे अल असर नं. १०३, आयत नं.१-३)

वह ईश्वर अविनाशी है। जिसके कारण इस सारे विश्व का अस्तित्व है। उस ईश्वर का विनाश कोई नहीं कर सकता है।

इस सारे विश्व का (ततम्) अस्तित्व हैं। (अस्य) उस ईश्वर का (विनाशम) विनाश (न कश्चित) कोई नहीं (कर्तुम अर्हति) कर सकता है।

अवतरित ज्ञान

२.१८

अन्त-वन्त इमे देहाः नित्यस्य उक्ताः शरीरिणः।
अनाशिनः अप्रमेयस्य तस्मात् युध्यस्व भारत।।१८।।

ईश्वर ने कहा, शरीर (रखने वाले मानवजाति के) शरीर का अन्त होगा। किन्तु इसमें अविनाशी रुह है जिसका अनुमान नही लगाया जा सकता। जो सदैव एक जैसी रहती है। इस कारण, हे अर्जुन युद्ध करो।

(रुह और आत्मा एक नहीं है। इनके अंतर को समझने के लिए नोट नं. २ पढ़िए।)

(उक्ताः) ईश्वर ने कहा *(शरीरिणः)* शरीर (रखने वाले मानवजाति के) *(देहाः)* शरीर का *(अन्त-वन्त)* अन्त होगा (इमे) किन्तु इसमें *(अनाशिनः)* अविनाशी रुह है *(अप्रमेयस्य)* जिसका अनुमान नही लगाया जा सकता। *(नित्यस्य)* जो सदैव एक जैसी रहती है। *(तस्मात्)* इस कारण *(भारत)* हे अर्जुन *(युद्धस्व)* युद्ध करो।

(Spirit) रुह का वर्णन

२.१९

यः एनम् वेत्ति हन्तारम् यः च एनम् मन्यते हतम् ।
उबौ तौ न विजानीतः न अयम् हन्ति न हन्यते।।१९।।

जो मनुष्य इस (अविनाशी रुह) को मारने वाली मानता है। और जो मनुष्य इस (रुह को) मरने

(य) जो मनुष्य (एवम्) इस (अविनाशी रुह) को (हन्तारम्) मारने वाली (वेत्ति) मानता है (च) और (य) जो मनुष्य (एनम्) इस (रुह को) (हतम्) मरने वाली मानता है (उभौ) यह दोनों

नोट २.१७: भगवद् गीता का श्लोक नं. १७.२३ इस प्रकार हैं। ''(सामाजिक जीवन के) आरंभ में ब्राह्मणों को (ईश्वर ने) निर्देश दिया कि (ईश्वर के) तीन नामों से (जो कि) ॐ, सत, तत (है), (ईश्वर को) याद किया करो। इसी तरह इन (नामों से ब्राह्मण) यज्ञ और वेदों की शिक्षा का प्रबंध किया करते थे।'' (भगवद् गीता १७.२३)

अर्थात ईश्वर ने मनुष्य को अपने तीन नाम बताए थे। ॐ, तत, सत। इस श्लोक नं. २.१७ में तत नाम का वर्णन है। श्लोक नं. २.१८ से २.३० तक रुह का वर्णन है। श्लोक नं. २.१७ से ईश्वर की वाणी है जो श्री कृष्ण जी ने अपने मुख से अर्जुन से कहे।

इस श्लोक के बाद अधिकतर ईश्वर की वाणी है। इसलिए जहाँ भी श्री भगवान उवाच लिखा होगा, हम उसका अनुवाद 'ईश्वर ने कहा' ऐसा करेंगे। इस श्लोक नं. २.१७ को और श्री कृष्ण जी के व्यक्तित्व को समझने के लिए नोट नं. N-9 का अध्ययन करें।

वाली मानता है, यह दोनों कुछ नहीं जानते। यह रुह न किसी का वध करती है। (और) न मरती है।

(न विजानीतः) कुछ नहीं जानते। (एनम्) यह रुह (न) न (हन्ति) किसी का वध करती है। (न) (और) न (हन्यते) मरती है।

२.२०

न जायते म्रियते वा कदाचित् न अयम् भूत्वा भविता वा न भूयः ।
अजः नित्यः शाश्वतः अयम् पुराणः न हन्यते हन्यमाने शरीरे ।।२०।।

यह (रुह) न जन्म लेती है और न मरती है और किसी भी समय न इसका अस्तित्व था न इसका अस्तित्व है और न इसका अस्तित्व होगा। यह (रुह) सब से प्राचीन है। यह शरीर के मृत्यु के साथ नहीं मरती।

(अयम्) यह (रुह) (न) न (जायते) जन्म लेती है (वा) और (न) न (म्रियते) मरती है (वा) और किसी भी समय (न) न (भूत्वा) इसका अस्तित्व था (भविता) न इसका अस्तित्व है। (न भूयः) न इसका अस्तित्व होगा। (अयम्) यह (रुह) (पुराण) सबसे प्राचीन है। (शरीरे) यह शरीर के (हन्यमाने) मृत्यु के साथ (न हन्यते) नहीं मरती।

२.२१

वेद अविनाशिनम् नित्यम् यः एनम् अजम् अव्ययम् ।
कथम् सः पुरुषः पार्थ कम् घातयति हन्ति कम् ।।२१।।

जो मनुष्य जानता है कि यह (रुह) अविनाशि है, अनन्त है, अजन्मी है, अमर है, वह पुरुष कैसे किसी को मार सकता है। (या कैसे) किसी का वध करवा सकता है।

(यः) जो मनुष्य (वेद) जानता है कि (एनम्) यह (रुह) (अविनाशिनम्) अविनाशि है (नित्यम्) अनन्त है (अजम्) अजन्मी है (अव्ययम्) अमर है (सः) वह (पुरुषः) पुरुष (कयम्) कैसे (कम्) किसी को (हन्ति) मार सकता है। (कम्) (या कैसे) किसी का (घातयति) वध करवा सकता है।

२.२२

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृहणति नरः अपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि अन्यानि संयाति नवानि देही ।।२२।।

जैसे मनुष्य पुराने कपड़े त्याग देता है और दुसरे नये कपड़े धारण करता है। वैसे ही (यह रुह)

(यथा) जैसे मनुष्य (जीर्णानि) पुराने (वांसांसि) कपड़े (विहाय) त्याग देता है (अपराणि) और दुसरे (नवानि) नये कपड़े (गृहणति) धारण करता है। (तथा) वैसे ही (यह रुह) (जीर्णानि) पुराना (शरीराणि)

नोट २.१९ : पवित्र कुरआन में ईश्वर ने फरिश्तों से कहा कि, ''जब मैं अपनी रुह में से आदम में रुह को फूँकू (और जब आदम जीवित हो जाएँ), तो तुम आदम को सजदा करना।'' (सूरे नं. १५, आयत नं. २९)
अर्थात यह रुह ही है जिसके कारण मनुष्य जीवित है। और इसी कारण इसमें विवेक है। रुह, आत्मा, और प्राण के बारे में अधिक जानकारी के लिए नोट नं. N-2 पढ़िए।

पुराना शरीर त्याग कर नया शरीर दूसरे लोक में धारण करती है।

नोटः- मृत्यु के बाद के जीवन को समझने के लिए नोट नं N-4 पढ़िए जो अन्य लोक से सम्बधित है।

शरीर (विहाय) त्याग कर (नवानि) नया (देही) शरीर (अन्यानि) दूसरे लोक में (संयाति) धारण करती है।

२.२३

न एनम् छिन्दन्ति शस्त्राणि न एनम् दहति पावकः।
न च एनम् क्लेदयन्ति आपः न शोषयति मारुतः ।।२३।।

इस रुह के न शस्त्र से टुकड़े किये जा सकते हैं। न इस रुह को अग्नि जला सकती है, और न इस (रुह) को पानी गीला कर सकती है। और न (इस रुह को) वायु सुखा सकती है।

(एनम्) इस (रुह) का (न) न (शस्त्राणि) हथियार से (छिन्दन्ति) टुकड़े किये जा सकते हैं। (न) न (एनम) इस रुह को (पावकः) अग्नि (दहति) जला सकती है (च) और (न) न (एनम्) इस (रुह) को (आपः) पानी (क्लेदयन्ति) गीला कर सकती है। (न) और न (इस रुह को) (मारुतः) वायु (शोषयति) सुखा सकती है।

२.२४

अच्छेद्यः अयम् अदाह्यः अयम् अक्लेद्यः अशोष्यः एव च।
नित्यः सर्वगतः स्थाणुः अचलः अयम् सनातनः ।।२४।।

यह रुह टूटने वाली नहीं है। जलने वाली नहीं है। यह रुह भीगने वाली नहीं है। इस (रुह) को सुखाया नहीं जा सकता और निःसंदेह यह रुह अनन्त, न बदली जाने वाली, ब्रह्माण्ड में हर जगह रह सकने वाली और दृढ है। (अर्थात समय से पहले शरीर का साथ नहीं छोड़ती।)

(अयम) यह (रुह) (अच्छेद्य) टूटने वाली नहीं है। (अदाह्यः) जलने वाली नहीं है। (अयम्) यह (रुह) (अक्लेद्य) भीगने वाली नहीं है। (अशोष्य) इस (रुह) को सुखाया नहीं जा सकता (च) और (एव) निःसंदेह (अयम्) यह (रुह) (नित्य) अनन्त (स्थाणुः) न बदली जाने वाली (सर्वगतः) ब्रह्माण्ड में हर जगह रह सकने वाली (अचलः) दृढ़ है। (अर्थात समय से पहले शरीर का साथ नहीं छोड़ती।)

२.२५

अव्यक्तः अयम् अचिन्त्यः अयम् अविकार्यः अयम् उच्यते।
तस्मात् एवम् विदित्वा एनम् न अनुशोचितुम अर्हसि ।।२५।।

ईश्वर ने कहा, यह (रुह) न दिखाई देने वाली है और यह (रुह) न समझ में आने वाली है। यह (रुह) न बदलने वाली है। इसलिए इस (रुह) को जानने के बाद तुम्हें अवश्य चिंता नहीं करनी चाहिए।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा (अयम) यह (रुह) (अव्यक्तः) अदृश्य न दिखाई देने वाली (अयम) यह (रुह) (अचिन्त्यः) न समझ में आने वाली (अयम) यह (रुह) (अविकार्य) न बदलने वाली है (तस्मात्) इसलिए (अयम) इस (रुह) को (विदित्वा) जानने के बाद (अर्हसि) तुम्हें अवश्य (अनुशोचितुम) चिंता नहीं करनी चाहिए।

२.२६

अथ च एनम् नित्यजातम् नित्यम् वा मन्यसे मृतम् ।
तथा अपि त्वम् महाबाहो एराम न शोचितुम् अर्हसि ।।२६।।

फिर भी यदि तुम सोचते हो कि यह (रुह) हमेशा जन्म लेने वाली हैं या हमेशा मरने वाली है। तब भी हे अर्जुन इस जन्म और मृत्यु के विषय में तुम्हें इतनी चिन्ता नहीं करनी चाहिए।

(अथ) फिर भी (त्वम्) (अगर) तुम (मन्यसे) सोचते हो की (एनम्) यह (रुह) (नित्यम) जातम् हमेशा जन्म लेने वाली हैं (वा) या (नित्यम मृतम्) हमेशा मरने वाली है। (अवश्य तथा) तब भी (महाबाहो) हे अर्जुन (एवम्) इस जन्म और मृत्यु के विषय में (अर्हसि) तुम्हें इतनी (शोचितुम) चिन्ता (न) नहीं करनी चाहिए।

२.२७

जातस्य हि ध्रुवः मुत्युः ध्रवम् जन्म मृतस्य च।
तस्मात् अपरिहार्ये अर्थे न त्वम् शोचितुम् अर्हसि ।।२७।।

नि:संदेह! जिसने जन्म लिया वह अवश्य मृत्यु पाएगा। इस लिए यह भी अटल है कि हम जन्म और मृत्यु की घटना से बच नहीं सकते। इसलिए हे अर्जुन! तुम्हें इस विषय में इतनी चिंतित नहीं होना चाहिए।

(हि) नि:संदेह (जायस्य) जिसने जन्म लिया (ध्रवः) वह अवश्य (मृतस्य) मृत्यु पाएगा (तस्मात्) इसलिए (ध्रवम्) यह भी अटल है कि (जन्म मृतस्थ) हम जन्म और मरन (अपरिहार्य) की घटना से बच नहीं सकता। (त्वम) इसलिए हे अर्जुन तुम्हें इस विषय में (शोचितुम) इतनी चिंतीत (न) नहीं (अर्हसि) होना चाहिए।

२.२८

अव्यक्त-आदीनि भूतानि व्यक्त मध्यानि भारत।
अव्यक्त निधनानि एव तत्र का परिदेवना ।।२८।।

हे अर्जुन! सभी प्राणी जन्म से पहले प्रकट नहीं थे। बीच में जन्म के बाद दिखाई देते हैं और फिर मृत्यु के बाद दिखाई नहीं देंगे। तो (अगर वह) (मृत्यु पाकर अप्रकट हो गए, इसमें) शोक की क्या बात है।

(भारत) हे अर्जुन! (भुतानि) सभी प्राणी (अदिती) जन्म से पहले (अव्यक्त) प्रकट नहीं थे (मध्यानि) बीच में जन्म के बाद (व्यक्त) दिखाई देते हैं। (एव) और फिर (निधनानि) मृत्यु के बाद (अव्यक्त) दिखाई नहीं देंगे। (तत्र) तो (यदि वह) (परिदेवता) (मृत्यु पाकर अप्रकट हो गए इसमें) शोक की (का) क्या बात है।

नोट नं. २.२७: ईश्वर ने पैदा किया मृत्यु और जीवन को, ताकि तुम्हारी परीक्षा करे कि तुममें कर्म की दृष्टि से कौन सबसे अच्छा है? वह प्रभुत्वशाली, बड़ा क्षमाशील है।

(पवित्र कुरआन-सूरे अल-मुल्क (६७) आयत (२)-अनुवाद-मुहम्मद फारुख खाँ)

२.२९

आश्चर्यवत् पश्यति कश्चित् एनम् आश्चर्यवत् वदति तथा एव च अन्यः।
आश्चर्यवत् च एनम् अन्यः शृणोति शृत्वा अपि एनम् वेद न च एव कश्चित् ।।२९।।

कोई इस (रुह) को आश्चर्य की तरह देखता है। और वैसे ही दुसरे लोग इसका आश्चर्य की तरह वर्णन करते हैं। तथा अन्य लोग इस (रुह) को आश्चर्य की तरह सुनते हैं और सच तो यह है कि कुछ लोग इस (रुह) के बारे में सुनकर भी कुछ नहीं समझ पाते हैं।

(कश्चित) कोई (एनम्) इस (रुह) को (आश्चर्यवत्) आश्चर्य की तरह (पश्यति) देखता है। (च) और (तथा) वैसे (एव) ही अन्य दुसरे लोग इसका (आश्चर्यवत्) आश्चर्य की तरह (वदति) वर्णन करते हैं। (च) तथा (अन्यः) अन्य लोग (एनम्) इस (रुह) को (आश्चर्यवत्) आश्चर्य की तरह (श्रुणोति) सुनते हैं। (च) और (एव) सच तो यह है की कुछ लोग (एनम्) इस (रुह) के बारे में (श्रुत्वा) सुनकर (अपि) भी (कश्चित) कुछ (न) नहीं (वेद) समझ पाते हैं।

२.३०

देही नित्यम् अवध्यः अयम् देहेसर्वस्य भारत।
तस्मात् सर्वाणि भूतानि न त्वम् शोचितुम् अर्हसि ।।३०।।

हे अर्जुन! यह (रुह) जो सब मनुष्यों के शरीर में है यह अमर है। और इसकी हत्या नहीं की जा सकती। इसलिए तुम्हें सब प्राणियों के मृत्यु पर भी इतना शोक नहीं करना चाहिए।

(भारत) हे अर्जुन (अथम्) यह (रुह) (देहेसर्वस्य) जो सब मनुष्यों के (देही) शरीर में है (नित्यम्) यह अमर है। (अवध्य) और इसकी हत्या नहीं की जा सकती। (त्वम) इसलिए तुम्हें (सर्वणि) सब (भूतानि) प्राणियों के मृत्यु पर भी (शोचितुम) इतना शोक (न) नहीं (अर्हसि) करना चाहिए।

क्षत्रिय के कर्तव्य-

२.३१

स्व-धर्मम् अपि च अवेक्ष्य न विकम्पितुम् अर्हसि।
धर्म्यात् हि युद्धात श्रेयः अन्यत् क्षत्रियस्य न विद्यते ।।३१।।

निःसंदेह तुम्हारे अपने ऊपर जो धार्मिक कर्तव्य है उनके बारे में विचार करने के अतिरिक्त तुम्हें और कुछ विचार नहीं करना चाहिए क्योंकि एक क्षत्रिय के लिए धर्म की स्थापना के लिए युद्ध करने से श्रेष्ठ और कुछ नहीं है।

(अपि) निःसंदेह (स्व) तुम्हारे अपने ऊपर (धर्मम्) जो धार्मिक कर्तव्य है (अवेक्ष्य) उनके बारे में विचार करने के अतिरिक्त न (विकम्पितुम) तुम्हे और कुछ विचार नही करना चाहिए। (हि) क्योंकि (क्षत्रियस्य) एक क्षत्रिय के लिए (धर्म्यात) धर्म की स्थापना के लिए (युद्धात) युद्ध करने से (श्रेयः) श्रेष्ठ (अन्यत्) और कुछ नहीं है।

नोट २.३०: और जो लोग ईश्वर के मार्ग में मारे जाएँ उन्हें मूर्दा न कहो, बल्कि वे जीवित हैं, परन्तु तुम्हें एहसास नहीं होता (तुम्हें इसका ज्ञान नहीं)। (पवित्र कुरआन, सूरे-अल बकरह (२) आयत (१५४) अनुवाद-मुहम्मद फारुक खाँ)

२.३२

यदृच्छया च उपपन्नम् स्वर्ग द्वारम् अपावृतम् ।
सुखिनः क्षत्रियाः पार्थ लभन्तेयुद्धम् ईदृशम् ।।३२।।

हे अर्जुन! अपने आप इस प्रकार युद्ध का अवसर क्षत्रिय को मिलना बड़े सुख की बात है और यह अवसर स्वर्ग का खुला हुआ द्वार है।

(पार्थ) हे अर्जुन (यदृच्छया) अपने आप (ईदृशम) इस प्रकार (युद्धम्) युद्ध का (उपपन्नम्) अवसर (क्षत्रियाः) क्षत्रिय को मिलना (सुखिनः) बड़े सुख (खुशी) की बात है। (च) और यह अवसर (स्वर्ग) स्वर्ग का (अपावृतम्) खुला हुआ (द्वारम्) द्वार है।

२.३३

अथ चेत् त्वम् इमम् धर्म्यम् सङ्ग्रामम न करिष्यसि।
ततः स्व-धर्मम् कीर्तिम् च हित्वा पापम् अवाप्स्यसि ।।३३।।

अपने धार्मिक कर्तव्य के अनुसार यदि तुम धर्म की स्थापना हेतु यह युद्ध नहीं करोगे तो तुम अपना यश (सम्मान) को भी खो दोगे और तुम्हें पाप भी मिलेगा।

(स्व-धर्मम्) अपने धर्म कर्तव्य के अनुसार (चेत) यदि (त्वम्) तुम (धर्म्यम) धर्म की स्थापना का यह (सङ्ग्रामम्) युद्ध (न) नहीं (करिष्यसि) करोगे (ततः) तो तुम (कीर्तिम्) अपने यश (सम्मान) को भी (हित्वा) खो दोगे। (च) और (पापम्) तुम्हें पाप भी (अवाप्स्यसि) मिलेगा।

२.३४

अकीर्तिम् च अपि भूतानि कथयिष्यन्ति ते अव्ययाम् ।
सम्भावितस्य च अकीर्तिः मरणात् अतिरिच्यते ।।३४।।

और निःसंदेह सब लोग तुम्हारे इस अपमानजनक कर्म की चर्चा करेंगे, और अपमानित होना मृत्यु से बढ़कर दुःखदायी है।

(च) और (अपि) निःसंदेह (भुतानि) सब लोग (ते) तुम्हारे इस (अकीर्तिम्) अपमानजनक कर्म की (सम्भावितस्य) चर्चा करेंगे (च) और (अकीर्तिः) अपमानित होना (मरणात्) मृत्यु से (अतिरिच्यते) बढ़कर दुःखदायी है।

२.३५

भयात रणात् उपरतम् मस्यन्ते त्वाम् महारथाः।
येषाम् च त्वम् बहुमतः भूत्वा यास्यसि लाघवम् ।।३५।।

बड़े-बड़े योद्धा जिनके लिए तुम बहुत आदरणीय हो, समझेंगे कि तुमने रणभूमि से ड़र के कारण पलायन किए, इस तरह तुम अपमानित हो जाओगे।

(महारथा) बड़े बड़े योद्धा (येषाम्) जिनके लिए (त्वाम्) तुम (बहुमतः) बहुत आदरणीय हो (मस्यन्ते) समझेंगे (त्वम्) (कि) तुमने (रणात्) रणभूमि से (भयात) ड़र के कारण (उपरतम्) पलायन किया (लाघवम्) (इस तरह तुम) अपमानित (भुत्वा) हो (यास्यसि) जाओगे।

२.३६

अवाच्यवादान् च बहून् वदिष्यन्ति तव अहिताः।
निन्दन्तः तव सामर्थ्यम् ततः दुःख-तरम् नु किम्
।।३६।।

तुम्हारे शत्रु तुम्हारी योग्यता की निन्दा करते हुए बहुत से न कहने योग्य शब्द भी कहेंगे। उससे बढ़कर और दुःख की बात क्या होगी?

(तव) तुम्हारे (अहिताः) शत्रु (तव) तुम्हारी (सामर्थ्यम्) योग्यता की (निन्दन्तः) निन्दा करते हुए (बहून्) बहुत से (अवाच्यवादान्) न कहने योग्य शब्द (च) भी (वदिष्यन्ति) कहेंगे (ततः) उससे (दुःख-तरम्) बढ़कर और दुःख की बात (नु किम्) क्या होगी?

२.३७

हतः वा प्राप्स्यसि स्वर्गम् जित्वा वा भोक्ष्यसे महीम्।
तस्मात् उत्तिष्ठ कौन्तेय युद्धाय कृतनिश्चयः
।।३७।।

हे अर्जुन! यदि (युद्ध में तुम) मारे जाओगे (तो) तुम्हें स्वर्ग मिलेगा। और अगर युद्ध में तुम विजयी होते हो तो पृथ्वी का राज्य और आनंद मिलेगा। इसलिए निश्चय करके युद्ध के लिए खड़े हो जाओ।

(कौन्तेय) हे अर्जुन (वा) यदि (युद्ध में तुम) (हतः) मारे जाओगे, (तो) (स्वर्गम्) तुम्हें स्वर्ग (प्राप्स्यसि) मिलेगा। (वा) और यदि युद्ध में तुम (जित्वा) विजयी होते हो, तो (महीम्) पृथ्वी का राज्य (भोक्ष्यसे) और आनंद मिलेगा (तस्मात्) इसलिए (कृतनिश्चयः) निश्चय करके (युद्धाय) युद्ध के लिए (उत्तिष्ठ) खड़े हो जाओ।

२.३८

सुख दुःखे समे कृत्वा लाभा-लाभौ जय-अजयौ।
ततः युद्धाय युज्यस्व न एवम् पापम् अवाप्स्यसि
।।३८।।

(हे अर्जुन यह तुम्हारे लिए) अनिवार्य (है कि तुम) सुख-दुःख, लाभ और हानि, हार-जीत में एक समान रहो (धीरज रखो)। युद्ध ऐसे करो जैसे करना चाहिए (अर्थात केवल धर्म की स्थापना के लिए)। इस तरह करने से तुम्हें पाप नहीं मिलेगा।

(कृत्वा) (हे अर्जुन यह तुम्हारे लिए) अनिवार्य (है की तुम) (सुख) सुख (दुःखे) दुःख (लाभा-लाभौ) लाभ और हानि (जय-अजयौ) हार-जीत में (समे) एक समान रहो (धीरज रखो) (युद्धस्व) युद्ध ऐसे करो जैसे करना चाहिए (अर्थात केवल धर्म की स्थापना के लिए) (एवम्) इस तरह करने से तुम्हें (पापम्) पाप (न) नहीं (अवाप्स्यसि) मिलेगा।

कर्मबन्धन (अनिवार्य कर्तव्य)-

२.३९

एषा ते अभिहता साङ्ख्ये बुद्धिः योगेतु इमाम् शृणु।
बुद्ध्या युक्तः यया पार्थ कर्म-बन्धम् प्रहास्यसि
।।३९।।

(पार्थ) हे अर्जुन! (ते) मैंने तुम्हे (एषा) यह सब (साङ्ख्ये) वेदों के ज्ञान से (अभिहिता) समझाया (बुद्धिः) जो तुम्हारे सोच विचार को

हे अर्जुन! मैंने तुम्हें यह सब वेदों के ज्ञान से समझाया जो तुम्हारे सोचविचार को ईश्वर से जोड़ देता है। लेकिन अब इस (उपदेश को) ध्यान से सुनो क्योंकि इससे तुम अपने कर्तव्य को पूरा करने में प्रगती करोगे।

नोट: प्रहास का अर्थ पंडीत इश्वरचंद ने विकास लिखा है। (पेज नं. ६१६)

(योगे) ईश्वर से जोड़ देता है। (तु) लेकिन अब (इमाम्) इस (उपदेश को) (बुद्धया युक्तः) ध्यान से (शुणु) सुनो (यथा) क्योंकि इससे तुम (कर्मबन्धम्) अपने कर्तव्य को पूरा करने में (प्रहास्यसि) प्रगती करोगे।

२.४०

न इह अभिक्रम नाशः अस्ति प्रत्यवायः न विद्यते।
सु-अल्पम् अपि अस्य धर्मस्य त्रायते महतः भयात् ।।४०।।

इस धर्म के ज्ञान के साथ जो कोई कर्म करता है, तो ना उसका नाश होता है, न वह नरक में गिरता है। नि:संदेह, धर्म में थोड़ा सा काम जो धर्म ज्ञान के साथ किया जाता है, वह नरक में जाने के बड़े भय से मुक्त कर देता है।

(इह) इस धर्म के ज्ञान के साथ (अभिक्रम) जो कोई कर्म करता है तो (न) ना (नाशःअस्ति) उसका नाश होता है (प्रत्यवायः) (न विद्यते) न वह नरक में गिरता है। (अपि) नि:संदेह, (धर्मस्य) धर्म में (सु-अल्पम्) थोड़ा सा काम (अस्य) जो धर्म ज्ञान के साथ किया जाता है। (महतः) वह नरक में जाने के बड़े (भयात्) भय से (त्रायते) मुक्त कर देता है।

२.४१

व्यवसाय-आत्मिका बुद्धिः एका इह कुरुनन्दन।
बहुशाखाः हि अनन्ताः च बुद्धयः अव्यवसायिनाम् ।।४१।।

हे अर्जुन! इस धरती पर जिन मनुष्यों के सोच विचार या समझ दृढ़, स्थिर, स्पष्ट होते हैं। वह एक (ईश्वर में विश्वास रखते हैं) और नि:संदेह, जिनके सोच-विचार या समझ दृढ या स्पष्ट या स्थिर नहीं है, वह अनंत (वस्तु या शक्ति की प्रार्थना करते हैं) और अलग-अलग मार्ग पर चलते हैं।

(कुरुनन्दन) हे अर्जुन! इस धरती पर (आत्मिका) जिन मनुष्यों के (बुद्धि) सोचविचार या समझ (व्यवसाय) दृढ़ स्थिर स्पष्ट होते हैं। (एका) वह एक (ईश्वर में विश्वास रखते हैं) (च) और (हि) नि:संदेह (बुद्धयः) जिनके सोचवीर या समझ (अव्यवसायिनाम्) दृढ या स्पष्ट या स्थिर नहीं हैं। (अनन्ताः) वह अनंत (वस्तु या शक्ति की प्रार्थना करते हैं) (बहुशाखाः) और अलग-अलग मार्ग पर चलते हैं।

जो एक ईश्वर को नहीं मानते उनके व्यवहारः-

२.४२

याम् इमाम् पुष्पिताम् वाचम् प्रवदन्ति अविपश्चितः।
वेद-वाद-रताः पार्थ न अन्यत् अस्ति इति वादिनः ।।४२।।

हे अर्जुन! यह सब अज्ञानी और दिखावा करने

(पार्थ) हे अर्जुन (याम्) यह (इमाम) सब (अविपश्चितः) अज्ञानी और (पुष्पिताम्) दिखावा करने वाले लोग (वाचम प्रवदन्ति) केवल बातें करते हैं। (वेद वाद) और वेदों के उपदेश की आलोचना करने में (रताः) व्यस्त

वाले लोग केवल बातें करते हैं। और वेदो के उपदेश की आलोचना करने में व्यस्त रहते हैं। इनका लक्ष्य इसके अतिरिक्त और कुछ नहीं होता (अज्ञानी पुरुषों के लक्ष्य के बारे में निम्नलिखित श्लोक है।)

रहते हैं। (वादिनः) इनका लक्ष्य (अन्यत्) इसके अतिरिक्त (न) और कुछ नहीं होता (अज्ञानी पुरुषों के लक्ष्य के बारे में निम्नलिखित श्लोक है)

२.४३

काम-आत्मानः स्वर्गपराः जन्म-कर्म-फल-प्रदाम्
क्रिया-विशेष बहुलाम् भोग ऐश्वर्य गतिम् प्रति ।।४३।।

मन को आनन्द देने वाले कर्म में व्यस्त रहना। (सत्कर्म न करने के बावजूद) मृत्यु के बाद स्वर्ग में आराम वाले जीवन की आशा करना। केवल वह कर्म करना जो इस जीवन में अच्छा फल दे और मृत्यु के बाद अच्छा जीवन दे। केवल वही कर्म करना जो ईश्वर को प्रसन्न करने से अधिक हमारे अपने मन को प्रसन्न करता है। आनंद, सत्ता, असीम धन, और समृद्धि के लिए सदा प्रयास करते रहना।

(काम-आत्मान) मन को आनन्द देने वाले कर्म में व्यस्त रहना। (स्वर्गपराः) (सत्कर्म न करने के बावजूद) मृत्यु के बाद स्वर्ग में आराम वाले जीवन की आशा करना। (जन्म-कर्म-फल-प्रदाम्) केवल वह कर्म करना जो इस जीवन में अच्छा फल दे और मृत्यु के बाद अच्छा जीवन दे। (क्रिया-विशेष) केवल वही कर्म करना जो ईश्वर को प्रसन्न करने से अधिक हमारे, अपने मन को प्रसन्न करता है। (भोग) आनंद (बहुलाम्) सत्ता (ऐश्वर्य) असीम धन और समृद्धि (प्रति) के लिए सदा (गतिम्) प्रयास करते रहना।

२.४४

भोग ऐश्वर्य प्रसक्तानाम् तया अपहृत-चेतसाम् ।
व्यवसाय आत्मिकाः बुद्धिः समाधौ न विधीयते।।४४।।

जो आनंद और असीम धन और समृद्धी के लिए निरंतर प्रयास करते रहते हैं। इस प्रकार से विचार और प्रयास के कारण उनके विचार और बुद्धि उलझ जाती है। (इस कारण उनके पास ऐसे कोई कर्म) नहीं होते जो ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए दृढ संकल्प के साथ मन और बुद्धि से किया हो।

(भोग) जो आनंद और (ऐश्वर्य) असीम धन और समृद्धी के लिए (प्रसक्तानाम्) निंरतर प्रयास करते रहते हैं। (तया) इस प्रकार के विचार और प्रयास के कारण (चेतसाम) उनके विचार और बुद्धि (अपहृत) उलझ जाती हैं। (न) (इस कारण उनके पास ऐसे कोई कर्म नहीं होते जो) (समाधौ) जो ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए (व्यवसाय-आत्मिका-बुद्धि) दृढ संकल्प के साथ मन और बुद्धि से किया हो।

नोट २.४४:- जो व्यक्ति शीघ्र प्राप्त होने वाले (सांसारिक सुख) को चाहता है, उसको हम उसमें से दे देते हैं, जितना हम जिसे देना चाहें। फिर हमने उसके लिए नरक को तैयार कर रखा है। जिसमें वह धिक्कारा हुआ तथा ठुकराया हुआ प्रवेश करेगा। (पवित्र कुरआन-सूरे बनी इस्राईल (१७) आयत (१८)-अनुवाद अब्दुर रहमान चाऊस)

मानवजाति के लिए ईश्वर के निर्देश

२.४५

त्रै-गुण्य विषयाः वेदाः निस्त्रै-त्रै-गुण्य भव अर्जुन।
निर्द्वन्द्वः नित्य-सत्त्व-स्थः निर्योग-क्षेमः आत्मवान्
।।४५।।

पवित्र वेदों में तीन गुण (सात्विक, तमस, रजस) का वर्णन है। हे अर्जुन, इन तींनों गुणों को छोड़ दो। सुख-दुःख से परेशान होना छोड़ दो। ईश्वर के आदेश का हमेशा दृढ़ता से पालन करो। केवल अपने सुख शांती और उन्नती के ही कार्य में मत लगे रहो। जनकल्याण के लिए भी प्रयास करो और केवल ईश्वर पर निर्भर रहने वाला बनो।

नोट: इस श्लोक को समझने के लिए अध्याय नं. १४ का परिचय पढ़िये। जिसमें अतीत गुण का वर्णन है।

(वेदाः) पवित्र वेदों में (त्रै) तीन (गुण्य) गुण (सात्विक, तमस, रजस) (विषयाः) का वर्णन है (अर्जुन) हे अर्जुन (निस्त्रै-गुण्य-भव) इन तींनों गुणों को छोड़ दो (निर्द्वन्द्वः) सुख-दुःख से परेशान होना छोड़ दो। (सत्त्व) ईश्वर के आदेश का (नित्य) हमेशा (स्थः) दृढ़ता से पालन करो। (क्षेमः) केवल अपने सुख शांती और उन्नती के ही कार्य में (निर्योग) मत लगे रहो जनकल्याण के लिए भी प्रयास करो (आत्मवानः) और केवल ईश्वर पर निर्भर रहने वाला बनो।

२.४६

यावान् अर्थः उद-पानेसर्वतः सम्प्लुत-उदके।
तावान् सर्वेषु वेदेषु ब्राह्मणस्य
विजानतः।।४६।।

जिस प्रकार एक बड़े जलाशय (तालाब से) (मनुष्य की) सारी आवश्यकताएं पूरी हो जाती हैं। (किन्तु) छोटे तालाब से नहीं होती। इसी प्रकार जिसकी संपूर्ण श्रद्धा वेदों के उपदेशानुसार एक ईश्वर में होते हैं। (उसकी भी) सारी (आवश्यकताएं एक ईश्वर से पूरी हो जाती हैं।)

(यावान) जिस प्रकार एक (सम्पत्लुत उदके) बड़े जलाशय (तालाब से) (सर्वतः) (मनुष्य की) सारी (अर्थः) आवश्यकताएं पुरी हो जाती है। (उदपाने) (किन्तु) छोटे तालाब से नही होती। (तावान्) इसी प्रकार (विजानतः) जिसकी संपूर्ण श्रद्धा (वेदेषु) वेदों के उपदेशानुसार (ब्राह्मणस्य) एक ईश्वर में होते हैं। (सर्वेषु) (उसकी भी) सारी (आवश्यकताएं एक ईश्वर से पूरी हो जाती हैं।)

नोट २.४५: श्लोक नं. १४.२० से १४.२६ में अतीत गुणों का वर्णन है। जिस को अपनाने का प्रयास करना चाहिए।

नोट २.४६ ईश्वर पवित्र कुरआन में कहता है की, जो ईश्वर के प्रति सचेत (एवं उत्तरदायी) बनेगा, ईश्वर उसके लिए (सब कठिनाईयों से निकलने का) मार्ग निकालेगा। (जो व्यक्ति ईश्वर के प्रति सचेत एवं उत्तरदायी बना रहेगा) ईश्वर उसे वहाँ से जीविका देगा, जहाँ से उसने कल्पना भी न की हो। और जो व्यक्ति ईश्वर पर भरोसा करेगा, तो ईश्वर उसके लिए पर्याप्त है (काफी है)। निःस्संदेह ईश्वर अपना काम पूरा करके रहता है। ईश्वर ने हर चीज़ के लिए एक पैमाना (भाग्य, सिमा) निर्धारित कर रखा है। (पवित्र कुरआन-सूरे अल तलाक-(६५) आयत-२-३)

२.४७

कर्मणि एव अधिकारः मा फलेषु कदाचन।
मा कर्म-फल हेतुः भूः मा ते सज्ञ्अस्तु अकर्मणि ।।४७।।

नि:संदेह अपने कर्तव्य के पालन करने का अधिकार तुम्हे है। (किन्तु कार्य के) परिणाम (पर तुम्हारा) कोई (नियंत्रण नहीं है)। न तुम (अपने) कर्मों के परिणाम का अपने आप को कारण या करने वाला समझो। और ना तुम ऐसे विचारधारा को अपनाओ जिसमें अपने कर्तव्य को पूरा नहीं किया जाता।

(एरां) नि:संदेह (कर्मणि) अपने कर्तव्य के पालन करने का अधिकार तुम्हे है (फलेषु) (किन्तु कार्य के) परिणाम (पर तुम्हारा) (कदाचन) कोई (नियंत्रण नहीं है) (मा) न तुम (कर्मफल) (अपने) कर्मों के परिणाम (का)। (हेतुः भू) अपने आपको कारण या करने वाला समझो। (मा) और ना (ते) तुम (संगम अस्तु) ऐसे विचारधारा को अपनाओ जिसमें (अकर्माणि) अपने कर्तव्य को पूरा नहीं किया जाता।

२.४८

योगस्थः कुरु कर्माणि सङ्‌ म् त्यक्त्वा धनजय।
सिद्धि-असिद्धयोः समः भूत्वा समत्वम् योगः उच्यते ।।४८।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन संगम छोड़ दो। अपने कर्तव्य का पालन करो। ईश्वर के संपर्क में रहो। सफलता और विफलता में धैर्य के साथ एक समान रहो। ऐसा करना धैर्य (कर्म) द्वारा ईश्वर की प्रार्थना है।

नोट: संगम को समझने के लिए नोट नं. N-६ पढिए। साधारण शब्द में इस का अर्थ है कि एक ईश्वर की प्रार्थना के साथ किसी और की भी प्रार्थना करना।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा (धनंजय) हे अर्जुन (सङ्गम) संगम (त्यक्त्वा) छोड़ दो (कर्माणि) अपने कर्तव्य का पालन करो (योगस्थ) ईश्वर के संपर्क में रहो। (सिद्धि) सफलता और (असिद्धयोः) विफलता में (समः) धैर्य से एक समान (भूत्वा) रहो। (समत्वम्-योगः) ऐसा करना धैर्य (कर्म) द्वारा ईश्वर की प्रार्थना है।

नोट २.४७ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, क्या इंसान वह पा लेता है जो वह चाहे (अर्थात क्या इंसान जो चाहे वही सत्य होता है) वर्तमान दुनिया (इस धरती लोक) और परिणाम की दुनिया का (अन्य लोक) का मालिक तो ईश्वर ही है। (सूरे अन नज्म (५३) आयत २४/२५) अर्थात इस जीवन में और मृत्यु के बाद जो कुछ मिलेगा वह ईश्वर के इच्छा अनुसार ही मिलेगा।

नोट २.४७: ईश्वर पवित्र कुरआन में कहता है की, पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा मनुष्य को केवल इच्छा करने की और प्रयास करने की क्षमता है। (परिणाम पर मनुष्य का कोई नियंत्रण नही है) परिणाम ईश्वर के इच्छा अनुसार ही होंगे। (मस्नद इब्ने हम्बल)

सदैव निस्वार्थ कर्म करो

२.४९

दूरेण हि अवरम् कर्म बुद्धियोगात् धनञ्जय।
बुद्धौ शरणम् अन्विच्छ कृपणाः फलहेतवः ।।४९।।

हे अर्जुन दिव्य ज्ञान जो तुम्हे ईश्वर से मिला है (उसके आधार) पर बुरे कर्मो से दूर रहो। अपनी समझ और सोचविचार को ईश्वर के शरण में देने का प्रयास करो। जो फल मिलने की लालच में सब कर्म करत हैं वह कंजुस हैं।

(धनंजय) हे अर्जुन (बुद्धे योगात्) दिव्य ज्ञान जो तुम्हे ईश्वर से मिला है (उसके आधार) पर (अवरम्) बुरे (कर्म) कर्मो से (दूरेण) दूर रहो। (बुद्धे) अपनी समझ और सोचविचार को (शरणम्) ईश्वर के शरण में देने का (अन्विच्छ) प्रयास करो (फलहेतवः) जो फल मिलने की लालच में सब कर्म करते हैं वह (कृपणा) कंजुस हैं।

२.५०

बुद्धियुक्तः जहाति इह उभेसूकृत-दुष्कृते ।
तस्मात् योगाय युज्यस्व योगः कर्मसु कौशलम् ।।५०।।

वह जिनका ईश्वर पर पक्का विश्वास है (वह केवल ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्म करते हैं।) और पुण्य और पाप दोनों विचार से मुक्त हो जाते हैं। इस कारण इस पृथ्वी लोक में ही अपनी श्रद्धा को ईश्वर से जोड़े रखने में लग जाओ। (वह कार्य जो) ईश्वर से जोड़ दे, वही कर्मो को करने की सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है।

नोटः योग का शब्द कोश में ३८ अर्थ बताए गए है। उसमें एक है ईश्वर से जुड़ना और दुसरा है दूत। पढ़ीए नोट नं. N-७

(बुद्धियुक्तः) वह जिनका ईश्वर पर पक्का विश्वास है (वह केवल ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्म करते हैं।) (सुकृतदुष्कृते) और पुण्य और पाप (उबे) दोनों विचार से (जहाति) मुक्त हो जाते हैं। (तस्मात्) इस कारण (इह) इस पृथ्वी लोक में ही (योगाय) अपनी श्रद्धा को ईश्वर से जोड़े रखने में (युज्यस्व) लग जाओ (योगः) (वह कार्य जो) ईश्वर से जोड़ दे। (कर्मसु) वही कर्मो को करने की (कौशलम्) सर्वश्रेष्ठ प्रणाली है।

२.५१

कर्मजम् बुद्धियुक्ताः हि फलम् त्यक्त्वा मनीषिणः।
जन्मबन्ध विनिर्मुक्ताः पदम् गच्छन्ति अनामयम् ।।५१।।

पवित्र धार्मिक व्यक्ति जिसका ईश्वर में दृढ़ विश्वास होता है, वह उसके कर्म से उत्पन्न होने वाले लाभ को त्याग देता है। निसंदेह वह नरक में बार-बार जन्म लेने के बन्धन से मुक्त हो जाता है। और स्वर्ग को पाता है। जहाँ कष्ट पीड़ा नहीं।

(मनीषिण) पवित्र धार्मिक व्यक्ति (बुद्धियुक्ताः) जिसका ईश्वर में दृढ़ विश्वास होता है वह (कर्मजम्) उसके कर्म से उत्पन्न होने वाले (फलम् फल) लाभ को (त्यक्त्वा) त्याग देता है। (हि) निसंदेह वह (जन्मबन्ध) नरक में बार-बार जन्म लेने के बन्धन से (विनिर्मुक्ताः) मुक्त हो जाता है। (पदम) और स्वर्ग (गच्छन्ति) को पाता है। (अनामयम्) जहाँ कष्ट (दुर्गति) पीड़ा नहीं।

२.५२

यदा मोह कलिलम् बुद्धिः व्यतितरिष्यति।
तदा गन्ता असि निर्वेदम् श्रोतव्यस्य श्रुतस्य च।।५२।।

हे अर्जुन, जब (तुम्हारी) बुद्धि (धन और शक्ति प्राप्त करने के) मोह के दलदल से बाहर आ जाए, तब तुम धन और शक्ति की प्राप्ती के विषय में जो कुछ सुना, और जो कुछ सुनोगे उससे तुम प्रभावित नहीं हो जाओगे।

(यदा) (हे अर्जुन) जब (बुद्धिः) (तुम्हारी) बुद्धि समझ (मोह) (धन और शक्ति प्राप्त करने के) मोह के (कलिलम्) दलदल से (व्यतितरिष्यति) बाहर आ जाए (तदा) तब तुम (श्रोतव्यस्य) धन और शक्ति की प्राप्ती के विषय में जो कुछ सुना। (च श्रतुस्य) और जो कुछ सुनोगे (निर्वेदम्) उससे तुम प्रभावित नहीं (गन्ता असि) हो जाओगे।

२.५३

श्रुति विप्रतिपन्ना ते यदा स्थास्यति निश्चला।
समाधौ अचला बुद्धिः योगम् अवाप्स्यसि।।५३।।

जब तुम लोगों की (मोह माया की) बातों से प्रभावित न होने लगो, (तब तुम्हारी) बुद्धि उस अवस्था को प्राप्त होगी जो स्थिर, दृढ-संकल्प और ईश्वर की याद से जुड़ी, (और) (ईश्वर की प्रार्थना और उसकी कृपा से) संतुष्ट रहती है।

(यदा) जब (ते) तुम (श्रुति) लोगों की (मोह माया की) बातों से (विप्रतिपन्ना) प्रभावित न होने लगो (बुद्धिः) (तब तुम्हारी) बुद्धि (अवाप्यस्यसि) उस अवस्था को प्राप्त होगी। (निश्चला) स्थिर (अचला) दृढ-संकल्प (कृत निश्चय) (योगम्) ईश्वर की याद से जुडी (और) (समाधौ) (ईश्वर की प्रार्थना और उसकी कृपा से) संतुष्ट (स्थास्यति) रहती है।

२.५४

अर्जुन उवाच
स्थितप्रज्ञस्य का भाषा समाधि-स्थस्य केशव।
स्थितधीः किम् प्रभाषेत किम् आसीत् व्रजेत किम्।।५४।।

अर्जुन ने कहा, हे कृष्ण जिसका हृदय ईश्वर की श्रद्धा पर स्थित हो। जो एक ईश्वर में एकाग्र हो। (ऐसे) स्थिर बुद्धिवाले मनुष्य के क्या लक्षण होते है? वह कैसे बोलता है। कैसे रहता है। कैसे चलता है (अर्थात कैसे व्यवहार करता है?)

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (केशव) हे कृष्ण (स्थित प्रज्ञस्य) जिसका हृदय ईश्वर की श्रद्धा पर स्थित हो। (समाधि स्थस्य) जो एक ईश्वर में एकाग्र हो। (स्थितधीः) (ऐसे) स्थिर बुद्धिवाले मनुष्य (का भाषा) के क्या लक्षण होते है? (किम् प्रभाषेत) वह कैसे बोलता है? (किम् आसीत) कैसे रहता है? (किम् व्रजते) कैसे चलता है (अर्थात कैसे व्यवहार करता है?)

नोट नं. २.५१ नरक में जब मनुष्य का शरीर दंड के कारण, जल कर या कट कर यातना के योग्य नहीं रहेगा तो ईश्वर उसे फिर से नया शरीर देगा ताकि दंड के अनुसार यातनाऐं निरन्तर दी जाती रहें।
अर्थात मनुष्य बार-बार जन्म लेने के लिए बाध्य रहेगा। इस सम्बन्ध में पवित्र कुरआन में निम्नलिखित आयात है।
जिन लोगों ने हमारी आयतों का इन्कार किया, उन्हें हम जल्द ही आग में झोकेंगे। जब भी उनकी खालें जल जाएँगी। तो हम उन्हें दुसरी खालों में बदल दिया करेंगे ताकि वे यातना का मज़ा चखते ही रहें। नि:स्संदेह ईश्वर प्रभुत्वशाली, तत्त्वदर्शी है। (सूरे अन-निसा (४), आयत नं. ५६ अनुवाद मो. फारुक खाँ)

ईश्वर में दृढ श्रद्धा के लक्षण

२.५५

श्री भगवान उवाच, प्रजहाति यदा कामान् सर्वान् पार्थ मनोगतान् ।
आत्मनि एवं आत्मना तुष्टः स्थितप्रज्ञः तदा उच्यते।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! जब मनुष्य अपनी इच्छा से उन सब कामनाओं को छोड़ देता है जो उसके मन में आते हैं और अपने आपमें ही संतुष्ट रहता है। तब ऐसे मनुष्य को (ईश्वर की श्रद्धा पर) स्थिर बुद्धिवाला कहा जाता है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (पार्थ) हे अर्जुन (यदा) जब मनुष्य (आत्मनि) अपनी इच्छा से (सर्वान) उन सब (कामान्) कामनाओं को (प्रजहाति) छोड़ देता है (मनः गतान्) जो उसके मन में आते हैं (आत्मना) और अपने आपमें (एवं) ही (तुष्ट) संतुष्ट रहता है। (तदा) तब ऐसे मनुष्य को (स्थितप्रज्ञ) (ईश्वर की श्रद्धा पर) स्थिर बुद्धिवाला (उच्यते) कहा जाता है।

२.५६

दुःखेषु अनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः।
वीत राग भय क्रोधः स्थितधीः मुनिः उच्यते।।५६।।

दु:खों में जिसका मन आशा नही खोता, (और) सुख में और अधिक की चाह नहीं करता। (और जो) लालच, (ईश्वर के अतिरिक्त किसी और के) भय से (और जो बिनाकारण) क्रोध से मुक्त हो गया हो। ऐसे मननशील मनुष्य को ईश्वर की श्रद्धा पर स्थिर बुद्धि वाला कहा जाएगा।

(दुःखेषु) दु:खों में (अनुद्विग्रमनाः) जिसका मन आशा नहीं खोता (सुखेषु) (और) सुख में (विगतस्पृहः) और अधिक की चाह नहीं करता। (राग) (और जो) लालच (भय) (ईश्वर के अतिरिक्त किसी और के) भय से (क्रोधः) (और जो बिनाकारण) क्रोध से (वीत) मुक्त हो गया हो। (मुनिः) ऐसे मननशील मनुष्य को (स्थितधीः) ईश्वर की श्रद्धा पर स्थिर बुद्धि वाला (उच्यते) कहा जाएगा।

२.५७

यः सर्वत्र अनभिस्नेहः तत् तत् प्राप्य शुभ अशुभम् ।
न अभिनन्दति न द्वेष्टि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।५७।।

जो हर प्रकार के परिस्थितियों में अप्रभावित रहता है। जैसे जब (उसके साथ) (कुछ) अच्छा हो तो न बहुत खुश होता है और जब दु:ख मिले तो न उन परिस्थितियों से नफरत करता है। (तब) समझो की उसकी बुद्धि (ईश्वर की श्रद्धा में) स्थिर है।

(यः) जो (सर्वत्र) हर प्रकार के परिस्थितियों में (अनभिस्नेहः) अप्रभावित रहता है (तत्) जैसे जब (उसके साथ) (शुभ) (कुछ) अच्छा हो तो (न अभिनन्दति) न बहुत खुश होता है (तत्) और जब (अशुभक) दु:ख (प्राप) मिले तो (न द्वेष्टि) न उन परिस्थितियों से नफरत करता है। (तस्य) (तब) समझो की उसकी (प्रज्ञा) बुद्धि (प्रतिष्ठिता) (ईश्वर की श्रद्धा में) स्थिर है।

२.५८

यदा संहरते च अयम् कूर्मः अङ्गानि इव सर्वशः। इन्द्रियाणि इन्द्रिय-अर्थेभ्यः तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।५८।।

जिस प्रकार कछुआ अपने अंगो को सब ओर से समेट लेता है। इसी प्रकार जो मनुष्य सब इच्छाओं को इच्छा वाली वस्तुओं से हटा लेता है), तब उसकी बुद्धि (ईश्वर की श्रद्धा) में स्थिर हो जाती है।

(यदा) जिस प्रकार (कूर्मः) कछुआ (अयम्) अपने (अङ्गानि) अंगो को (सर्वशः) सब ओर से (संहरते) समेट लेता है (च इव) इसी प्रकार जो मनुष्य (इन्द्रियाणि) सब इच्छाओं को (इन्द्रिय अर्थेभ्य) इच्छा वाली वस्तुओं से (हटा लेता है) (तस्य) तब उसकी (प्रज्ञा) बुद्धि (प्रतिष्ठिता) (ईश्वर की श्रद्धा) में स्थिर हो जाती है।

२.५९

विषयाः विनिवर्तन्ते निराहारस्य देहिनः। रस-वर्जम् रसः अपि अस्य परम् दृष्ट्वा निवर्तते।।५९।।

(मन को) नियंत्रित करके, आनंद और भोग वाले वस्तूओं से दूर रहने का अभ्यास करके मनुष्य आनंद लेने की इच्छा को रोक सकता है। किन्तु मन में जो आनंद वाली वस्तुओं का आनंद बसा है, उसका ईश्वर की कृपा दृष्टी से ही अन्त होता है।

(निराहारस्य) (मन को) नियंत्रित करके और (विषयाः) आनंद और भोग वाले वस्तूंओं से (विर्निवर्तन्ते) दूर रहने का अभ्यास (प्रयास) करके (देहिनः) मनुष्य (रस) आनंद लेने की इच्छा को (वर्जम) रोक सकता है। (अपि) किन्तु (रसः) मन में जो आनंद वाली वस्तुओं का आनंद बसा है। (अस्य) उसका (परम्) ईश्वर की (दृष्टवा) कृपा दृष्टी से ही (निवर्तते) अन्त होता है।

इच्छाओं को वश में रखने के उपाय-

२.६०

यततः हि अपि कौन्तेय पुरुषस्य विपश्चितः। इन्द्रियाणि प्रमाथीनि हरन्ति प्रसभम् मनः ।।६०।।

निःसंदेह! (ईश्वर की कृपा दृष्टि इस कारण भी अनिवार्य है क्योंकि) हे अर्जुन! इच्छाए (आनंद लेने की मन की चाह) इतनी बलवान है कि वह दृढ संकल्प वाले मनुष्य के (मन को) भी बलपूर्वक पराजित कर देती है, जो इसे बलपूर्वक वश में करने का प्रयत्न करता है।

(हि) निःसंदेह! (ईश्वर की कृपा दृष्टि इस कारण भी अनिवार्य है क्योंकि) (कौन्तेय) हे अर्जुन, (इन्द्रियाणि) इच्छाए (आनंद लेने की मन की चाह) (प्रसभम्) इतनी बलवान है कि वह (विपच्चित) दृढ संकल्प वाले (पुरुषस्य) मनुष्य के (अपि) (मन को) भी (हरन्ति) बलपूर्वक पराजित कर देती है (प्रसभम्) जो इसे बलपूर्वक वश में करने का (यतत) प्रयत्न करता है।

२.६१

तानि सर्वाणि संयम्य युक्तः आसीत् मत-परः।
बशे हि यस्य इन्द्रियाणि तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता।।६१।।

इन सब बलवान इच्छाओं को वश में करके अपने मन को मुझ सबसे महान ईश्वर में लगाए रखो। नि:संदेह जिसकी इच्छाऐं वश में होंगी, उसी की ईश्वर में श्रद्धा स्थिर होंगी।

(तानि) इन (सर्वाणि) सब (बलवान इच्छाओं को) (वशे) वश में करके (मत) अपने मन को (मत) मुझ (परः) सबसे महान ईश्वर में (युक्त) लगाए (आसीत) रखो (हि) (कियं की) नि:संदेह (यस्य) जिसकी (इन्द्रियाणि) इच्छाऐं (संयम्य) वश में होगी (तेसय) उसी की (प्रज्ञा) ईश्वर में श्रद्धा (प्रतिष्ठिता) स्थिर होंगी।

मनुष्य के विनाश का आरम्भ कैसे होता हैं-

२.६२

ध्यायतः विषयान् पुंसः सङ्ग तेषु उपजायते।
सङ्गात् सज्जायते कामः कामात् क्रोधः अभिजायते।।६२।।

इन्द्रियों को अच्छी लगने वाली वस्तुओं के विषय में विचार करने से मनुष्य के हृदय में उनके लिए लगाव जन्म लेता है। इस प्रकार आनंद लेने के लगाव से आनंद करने की इच्छा जन्म लेती है। और जब इच्छाएँ पूरी नहीं होती हैं, तब मन में क्रोध या निराशा जन्म लेती है।

(विषयान्) इन्द्रियों को अच्छी लगने वाली वस्तुओं के (ध्यायतः) विषय में (निनत्तर) विचार करने से (पुसः) मनुष्य के हृदय में (तेषु) उनके लिए (संडग) लगाव (उपजायते) जन्म लेता है। (सडगात) इस प्रकार आनंद लेने के लगाव से (काम) आनंद करने की इच्छा (सज्जाते) जन्म लेती है। (कामात) और जब इच्छाएँ पूरी नहीं होती हैं, तब मन में (क्रोधः अभिजायते) क्रोध या निराशा जन्म लेती है।

२.६३

क्रोधात भवति सम्मोहः सम्मोहात् स्मृति विभ्रमः
स्मृति-भ्रंशात् बुद्धि-नाशः बुद्धि-नाशात् प्रणश्यति।।६३।।

क्रोध से मन मोहित हो जाता है (मन वश में नहीं रहता)। मन के सम्मोहित होने से सोच समझ उलझ जाती है। सोच समझ के उलझने से बुद्धि का नाश होता है। बुद्धि के नाश होने से मनुष्य बर्बाद हो जाता है।

(क्रोधात्) क्रोध से (सम्मोहः) मन मोहित (भवति) हो जाता है (मन वश में नहीं रहता) (सम्मोहात्) मन के सम्मोहित होने से (स्मृति) सोच समझ (विभ्रम) उलझ जाती है। (स्मृति-भ्रंशात) सोच समझ के उलझने से (बुद्धि नाश) बुद्धि का नाश होता है। (बुद्धि-नाशत्) बुद्धि के नाश होने से मनुष्य (प्रणश्यति) बर्बाद हो जाता है।

इच्छाओं को वश में रखने का महत्त्व-

२.६४

राग द्वेष विमुक्तैः तु विषयान् इन्द्रियैः चरन्।
आत्म-वश्यैः विधेय-आत्मा प्रसादम् अधिगच्छति।।६४।।

(राग) (जो) क्रोध लालच और (द्वेष) घृणा से (विमुक्तैः) मुक्त है (आत्म-वश्यैः) और अपने आपको नियंत्रण में रखकर (इन्दियैः) मन चाही

जो क्रोध, लालच, और घृणा से मुक्त है, और अपने आपको नियंत्रण में रखकर मन चाही वस्तुओं का उपयोग करता है। ऐसा पवित्र पुरुष ईश्वर की कृपा को पा लेता है।

(विषयान्) वस्तुओं का (चरन्) उपयोग करता है। (विधेय आत्मा) ऐसा पवित्र पुरुष (प्रासादम्) ईश्वर की कृपा को (अधिगच्छति) पा लेता है।

२.६५

प्रसादे सर्व दुःखानाम् हानिः अस्य उपजायते।
प्रसन्न-चेतसः हि आशु बुद्धिः परि अवतिष्ठते ।।६५।।

ईश्वर की कृपा पाने वाला मनुष्य, सब प्रकार के दुःख और हानि होने पर भी उसका मन शांत रहता है। निःसंदेह ऐसे पुरुष की बुद्धि बहुत जल्द ही ईश्वर की श्रद्धा पर स्थिर हो जाएगी।

(प्रसादे) ईश्वर की कृपा पाने वाला मनुष्य (सर्व) सब प्रकार के (दुःखानाम्) दुःख और (हानिः) हानि होने पर भी (अस्य) उसका (चेतसः) मन (प्रसन्न) शांत (उपजायते) रहता है। (हि) निःसंदेह (बुद्धिः) ऐसे पुरुष की बुद्धि (आशु) बहुत जल्द ही (परि अवतिष्ठते) ईश्वर की श्रद्धा पर स्थिर हो जाएगी।

२.६६

न अस्ति बुद्धिः अयुक्तस्य न च अयुक्तस्य भावना।
न च अभावयतः शान्तिः अशान्तस्य कुतः सुखम् ।।६६।।

अगर ईश्वर में श्रद्धा नहीं है तो सत बुद्धि नहीं होगी। (अगर ईश्वर में) श्रद्धा नहीं है तो संयम नहीं होगा। संयम नही (होगा तो) शान्ति नहीं होगी। (जब) शांन्ति नहीं होगी (तो जीवन में) सुख कहाँ (से होगा।)

(अयुक्तस्य) अगर ईश्वर में श्रद्धा नहीं है तो (बुद्धिः) सत-बुद्धी (न) नहीं (अस्ति) होगी (अयुक्तस्य) (अगर ईश्वर में) श्रद्धा नही है तो (भावना) संयम (न) नहीं होगा। (अभावयतः) संयम नही (होगा तो) (शान्तिः) शान्ति (न) नही होगी (अशान्तस्य) (जब) शांन्ति नहीं होगी (सुखम्) (तो जीवन में) सुख (कुतः) कहाँ (से होगा।)

२.६७

इन्द्रियाणाम् हि चरताम् यत् मनः अनुविधीयते।
तत् अस्य हरति प्रज्ञाम् वायुः नावम् इव अम्भसि ।।६७।।

जिस प्रकार तेज़ हवा नाव को पानी में (बहा ले जाती है। निःसंदेह (इसी प्रकार) जिस (किसी एक) इच्छा में भी बेकाबू मन लग जाए, वही (एक इच्छा) उसकी बुद्धि को बहा ले जाती है, (और) भटका देती है।

(इ व) जिस प्रकार (वायुः) तेज़ हवा (नावम्) नाव को (अम्भसि) पानी में (बहा ले जाती है) (हि) निःसंदेह (इसी प्रकार) (यत्) जिस (किसी एक) (इन्द्रियाणाम्) इच्छा में भी (अनुविधीयते) बेकाबू (मन) मन लग जाए (तत) वही (एक इच्छा) (अस्य) उसकी (प्रज्ञाम्) बुद्धि को (हरति) बहा ले जाती है (चरताम्) (और) भटका देती है।

२.६८

तस्मात् यस्य महा-बाहो निगृहीतानि सर्वशः।
इन्द्रियाणि इन्द्रिय-अर्थेभ्यः तस्य प्रज्ञा प्रतिष्ठिता ।।६८।।

इसलिए हे अर्जुन जिसने सारी इच्छाओं को, इच्छा वाली वस्तुओं से रोक लिया और वश में कर लिया। उसकी बुद्धि ईश्वर की श्रद्धा में स्थिर हो जाती है।

(तस्मात्) इसलिए (महाबाहो) हे अर्जुन (याथ) जिसने (सर्वशः) सारी (इन्द्रियाणि) इच्छाओं को (इन्द्रिय-अर्थेभ्यः) इच्छा वाली वस्तुओं से (निगृहीताणि) रोक लिया और वश में कर लिया। (तस्य) उसकी (प्रज्ञा) बुद्धि (प्रतिष्ठिता) ईश्वर की श्रद्धा में स्थिर हो जाती है।

२.६९

यानिशा सर्व भूतानाम् तस्याम् जागर्ति संयमी।
पस्याम् जाग्रति भूतानि सा निशा पश्यतः मुनेः ।।६९।।

जो सम्पूर्ण प्राणियों के लिए रात का समय है। वह समय इच्छाओं को वश में रखने वालों के लिए जागने का समय है (ईश्वर की प्रार्थना के लिए।) और जिस (समय) सम्पूर्ण प्राणी जागते है। वह (समय) महापुरुषों की दृष्टि में रात है।

(या) जो (सर्व) सम्पूर्ण (भूतानाम्) प्राणियों के लिए (निशा) रात का समय है (तस्याम्) वह समय (संयमी) इच्छाओं को वश में रखने वालों के लिए (जार्गर्ति) जागने का समय है। (ईश्वर की प्रार्थना के लिए।) (यस्याम्) और जिस (समय) (भुतानि) सम्पूर्ण प्राणी (जाग्रति) जागते हैं। (सा) वह (समय) (मुने) महापुरुषों की (पश्यतः) दृष्टि में (निशा) रात है।

२.७०

आपूर्यमाणम् अचल-प्रतिष्ठिम् समुद्रम् आपः प्रविशन्ति यद्वत्।
तद्वत् कामाः यम् प्रविशन्ति सर्वेसः शान्तिम् आप्नोति न काम-कामी ।।७०।।

जिस प्रकार नदियों का पानी चारों ओर से समुद्र में गिरता (किन्तु) (समुद्र) शान्त रहता है। इसी प्रकार वह सज्जन (जिसने अपनी इच्छाओं को

(यद्वत्) जिस प्रकार (आप) नदियों का पानी (आपुर्यमाणाम्) चारों ओर से (समुद्रम्) समुद्र में (प्रविशन्ति) गिरता (किन्तु) (अचल प्रतिष्ठिम) (समुद्र) शान्त रहता है। (तद्वत्) इसी प्रकार (सः) वह सज्जन (जिसने अपनी इच्छाओं को वश में किया है।) (यम्) उसके (मन में) (सर्वे) सर्व प्रकार की (कामा) इच्छाएं

नोट नं. २.६९: ईश्वर ने पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) को पवित्र कुरआन में यह आदेश दिए थे। ''(हे मुहम्मद) रात को तहज्जुद (नमाज) पढ़ो, यह नफ्ल (अतिरिक्त नमाज़) है, तुम्हारे लिए। उम्मीद है कि तुम्हारा रब तुम्हें मकामे महमूद (प्रशंसित-स्थल) पर खड़ा करे। (महान पदवी देगा)'' (पवित्र कुरआन-सूरे बनी इस्राईल १७, आयत-७९)

सनातन धर्म में सूर्योदय से १ घंटा ३६ मिनट पहले के समय को ब्रह्म मुहुर्त कहते है। यह ईश्वर की प्रार्थना का सबसे उचित और शुभ समय है। इस समय को योगी जागते है और ईश्वर की प्रार्थना करते है।

वश में किया हैं।) उसके (मन में) सर्व प्रकार की इच्छाएं प्रवेश करती हैं। (किन्तु) वह शान्त रहता है। अपनी इच्छाओं को पूरा करने में लगा व्यक्ति (शान्ती कभी) नहीं प्राप्त कर सकता है।

(प्रविशीन्त) प्रवेश करती हैं। (शान्तिम्) (किन्तु) वह शान्त रहता है। (काम-कामी) अपनी इच्छाओं को पूरा करने में लगा व्यक्ति (न) (शान्ती कभी) नहीं (आप्नोति) प्राप्त कर सकता है।

२.७१

विहाय कामान यः सर्वान पमान चरति निःस्पृहः।
निर्ममः निरहड्ारः सः शान्तिम् अधिगच्छति ।।७१।।

जिस व्यक्ति ने सब प्रकार के आनंद करने के इच्छाओं को त्याग दिया हो। वह सज्जन जो आनंद भोगने की तीव्र इच्छा और वासना के बिना, अहंकार के बिना जीवन व्यतीत करता हो। वही व्यक्ति शांति प्राप्त करेगा।

(यः) जिस व्यक्ति ने (सर्वान्) सर्व प्रकार के (कामान्) आनंद करने के इच्छाओं को (विहाय) त्याग दिया हो। (पमान्) वह सज्जन जो (निःस्पृहः) आनंद भोगने की तीव्र इच्छा (निर्ममः) वासना की बिना (निरहड्ारः) अहंकार के बिना (चरति) जीवन व्यतीत करता हो। (सः) वही व्यक्ति (शान्तिम्) शांति (अधिगच्छति) प्राप्त करेगा।

नोटः ''निर्मम'' का अर्थ है जिसको कोई वासना न हो। निष्काम। निर्माही जिसे ममता या मोह न हो। (पेज नं. ७१९, नालंदा विशाल शब्दकोश.)

२.७२

एषा ब्राह्मो स्थितो पार्थ एवम् प्राप्य विमुह्यति।
स्थित्वा अस्याम् अन्तकाले अपि ब्रह्म-निर्वाणम् ऋच्छति ।।७२।।

हे अर्जुन, यही ईश्वर की श्रद्धा को हृदय में (दृढ़ता से) स्थित (करने का मार्ग है।) इस (दृढ़ श्रद्धा को) प्राप्त करके कोई मोहित नहीं होता, सत्य मार्ग नहीं भूलता। जो इस स्थिती में मृत्यु

(पार्थ) हे अर्जुन (एषा) यही (ब्राह्मौ) ईश्वर की श्रद्धा को हृदय में (स्थितो) (दृढ़ता से) स्थित (करने का मार्ग है।) (एवम्) इस (दृढ़ श्रद्धा को) (प्राप्य) प्राप्त करके (विमुह्यति) कोई मोहित नहीं होता, सत्य मार्ग नहीं भूलता (अस्याम्) जो इस स्थिती में (अन्तकाले) मृत्यु तक (स्थित्वा) जमा रहता है। (अपि) निःसंदेह (ब्रह्म) वह ईश्वर

नोट २.७०: पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, यदि मनुष्य को धन से भरा दो वन (जंगल) मिल जाए तो भी वह तिसरे वन की इच्छा करेगा। उसकी इच्छा का पेट केवल कबर की मिट्टी ही भर सकती है। (बुखारी-६४३६)

नोट नं. २.७१:- ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''और जो व्यक्ति अच्छे कर्म करने के लिए परिश्रम (संघर्ष) करेगा वह अपने ही लिए परिश्रम करेगा। निःसंदेह! ईश्वर सारे संसार से अपेक्षारहित है। और जो लोग ईमान लाए (एक ईश्वर में श्रद्धा को अपनाया) और अनुकूल कर्म किये, हम उनकी बुराईयों (पापों को) को उनसे दूर कर देंगे और उन्हें अच्छे कर्मों का बदला देंगे। (पवित्र कुरआन, सूरे अल अनकबूत, २९, आयत-६-७)

तक जमा रहता है, नि:संदेह वह ईश्वर के शान्ती के धाम (स्वर्ग) प्राप्त कर लेता है।

के (निर्वाणम्) शान्ती के धाम (स्वर्ग) (ऋच्छति) प्राप्त कर लेता है।

नोटः नालंदा विशाल शब्दकोश में 'निर्वाण' का अर्थ है, बुझा हुआ दीपक, अग्नि, आदि २. अस्त, डुबा हुआ ३. शांत ४. मृत/मरा हुआ ५. निश्चल ६. शून्यता को प्राप्त ७. बिना बाण के (शान्ति, मोक्ष)

नोट नं. २.७२:- पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, "जहाँ तक हो सके ईश्वर का ड़र रखो, और (उसका आदेश) सुनो, और मानो, और खर्च करो (दान दो) कि तुम्हारा भला हो। और जो अपने मन के लोभ और कंजूसी से बचाता रहे तो ऐसे ही लोग सफलता प्राप्त करने वाले हैं। (पवित्र कुरआन-सूरे अत तगाबुन-६४, आयत-१६)

(अध्याय नं. ३)

कर्मयोग

अर्जुन उवाच
ज्यायसी चेत्कर्मणस्ते मता बुद्धिर्जनार्दन ।
तत्किं कर्मणि घोरे मां नियोजयसि केशव ॥1॥

व्यामिश्रेणेव वाक्येन बुद्धिं मोहयसीव मे ।
तदेकं वद निश्चित्य येन श्रेयोऽहमाप्नुयाम् ॥2॥

श्रीभगवानुवाच
लोकेऽस्मिन्द्विविधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मयानघ ।
ज्ञानयोगेन साङ्ख्यानां कर्मयोगेन योगिनाम् ॥3॥

न कर्मणामनारंभान्नैष्कर्म्यं पुरुषोऽश्नुते ।
न च सन्न्यसनादेव सिद्धिं समधिगच्छति ॥4॥

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत् ।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः ॥5॥

कर्मेन्द्रियाणि संयम्य य आस्ते मनसा स्मरन् ।
इन्द्रियार्थान्विमूढात्मा मिथ्याचारः स उच्यते ॥6॥

यस्त्विन्द्रियाणि मनसा नियम्यारभतेऽर्जुन ।
कर्मेन्द्रियैः कर्मयोगमसक्तः स विशिष्यते ॥7॥

नियतं कुरु कर्म त्वं कर्म ज्यायो ह्यकर्मणः।
शरीरयात्रापि च ते न प्रसिद्ध्येदकर्मणः ॥8॥

यज्ञार्थात्कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबंधनः ।
तदर्थं कर्म कौन्तेय मुक्तसंगः समाचर ॥9॥

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्टा पुरोवाचप्रजापतिः ।
अनेन प्रसविष्यध्वमेष वोऽस्त्विष्टकामधुक् ॥10॥

देवान्भावयतानेन ते देवा भावयन्तु वः ।
परस्परं भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ ॥11॥

इष्टान्भोगान्हि वो देवा दास्यन्ते यज्ञभाविताः ।
तैर्दत्तानप्रदायैभ्यो यो भुंक्ते स्तेन एव सः ॥12॥

यज्ञशिष्टाशिनः सन्तो मुच्यन्ते सर्वकिल्बिषैः ।
भुञ्जते ते त्वघं पापा ये पचन्त्यात्मकारणात् ॥13॥

अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्नसम्भवः ।
यज्ञाद्भवति पर्जन्यो यज्ञः कर्मसमुद्भवः ॥14॥

कर्म ब्रह्मोद्भवं विद्धि ब्रह्माक्षरसमुद्भवम् ।
तस्मात्सर्वगतं ब्रह्म नित्यं यज्ञे प्रतिष्ठितम् ॥15॥

एवं प्रवर्तितं चक्रं नानुवर्तयतीह यः ।
अघायुरिन्द्रियारामो मोघं पार्थ स जीवति ॥16॥

यस्त्वात्मरतिरेव स्यादात्मतृप्तश्च मानवः ।
आत्मन्येव च सन्तुष्टस्तस्य कार्यं न विद्यते ॥17॥
संजय उवाच:
नैव तस्य कृतेनार्थो नाकृतेनेह कश्चन ।
न चास्य सर्वभूतेषु कश्चिदर्थव्यपाश्रयः ॥18॥

तस्मादसक्तः सततं कार्यं कर्म समाचर ।
असक्तो ह्याचरन्कर्म परमाप्नोति पुरुषः ॥19॥

कर्मणैव हि संसिद्धिमास्थिता जनकादयः ।
लोकसंग्रहमेवापि सम्पश्यन्कर्तुमर्हसि ॥20॥

यद्यदाचरति श्रेष्ठस्तत्तदेवेतरो जनः ।
स यत्प्रमाणं कुरुते लोकस्तदनुवर्तते ॥21॥

न मे पार्थास्ति कर्तव्यं त्रिषु लोकेषु किंचन ।
नानवाप्तमवाप्तव्यं वर्त एव च कर्मणि ॥22॥

यदि ह्यहं न वर्तेयं जातु कर्मण्यतन्द्रितः ।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ॥23॥

यदि उत्सीदेयुरिमे लोका न कुर्यां कर्म चेदहम् ।
संकरस्य च कर्ता स्यामुपहन्यामिमाः प्रजाः ॥24॥

सक्ताः कर्मण्यविद्वांसो यथा कुर्वन्ति भारत ।
कुर्याद्विद्वांस्तथासक्तश्चिकीर्षुर्लोकसंग्रहम् ॥25॥

न बुद्धिभेदं जनयेदज्ञानां कर्मसङ्गिनाम् ।
जोषयेत्सर्वकर्माणि विद्वान्युक्तः समाचरन् ॥26॥

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहंकारविमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते ॥27॥

तत्त्ववित्तु महाबाहो गुणकर्मविभागयोः ।
गुणा गुणेषु वर्तन्त इति मत्वा न सज्जते ॥28॥

प्रकृतेर्गुणसम्मूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु ।
तानकृत्स्नविदो मन्दान्कृत्स्नविन्न विचालयेत् ॥29॥

मयि सर्वाणि कर्माणि सन्नयस्याध्यात्मचेतसा ।
निराशीर्निर्ममो भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः ॥30॥

ये मे मतमिदं नित्यमनुतिष्ठन्ति मानवाः ।
श्रद्धावन्तोऽनसूयन्तो मुच्यन्ते तेऽति कर्मभिः ॥31॥

ये त्वेतदभ्यसूयन्तो नानुतिष्ठन्ति मे मतम् ।
सर्वज्ञानविमूढांस्तान्विद्धि नष्टानचेतसः ॥32॥

सदृशं चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेर्ज्ञानवानपि ।
प्रकृतिं यान्ति भूतानि निग्रहः किं करिष्यति ॥33॥

इन्द्रियस्येन्द्रियस्यार्थे रागद्वेषौ व्यवस्थितौ ।
तयोर्न वशमागच्छेत्तौ ह्यस्य परिपन्थिनौ ॥34॥

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात् ।
स्वधर्मे निधनं श्रेयः परधर्मो भयावहः ॥35॥

अर्जुन उवाच
अथ केन प्रयुक्तोऽयं पापं चरति पुरुषः ।
अनिच्छन्नपि वार्ष्णेय बलादिव नियोजितः ॥36॥

श्रीभगवानुवाच
काम एष क्रोध एष रजोगुणसमुद्भवः ।
महाशनो महापाप्मा विद्ध्येनमिह वैरिणम् ॥37॥

धूमेनाव्रियते वह्निर्यथादर्शो मलेन च।
यथोल्बेनावृतो गर्भस्तथा तेनेदमावृतम् ॥38॥

आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा ।
कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च ॥39॥

इन्द्रियाणि मनो बुद्धिरस्याधिष्ठानमुच्यते ।
एतैर्विमोहयत्येष ज्ञानमावृत्य देहिनम् ॥40॥

तस्मात्त्वमिन्द्रियाण्यादौ नियम्य भरतर्षभ ।
पाप्मानं प्रजहि ह्येनं ज्ञानविज्ञाननाशनम् ॥41॥

इन्द्रियाणि पराण्याहुरिन्द्रियेभ्यः परं मनः ।
मनसस्तु परा बुद्धिर्यो बुद्धेः परतस्तु सः ॥42॥

एवं बुद्धेः परं बुद्ध्वा संस्तभ्यात्मानमात्मना ।
जहि शत्रुं महाबाहो कामरूपं दुरासदम् ॥43॥

अध्याय का परिचय

● अध्याय नं. २ में ईश्वर ने कहा था, कि मनुष्य के शरीर में जो रुह है वह अमर है। इस कारण मृत्यु से मनुष्य का अन्त नहीं होता।

उसके बाद ईश्वर ने कहा कि मनुष्य अपनी इच्छा के अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए स्वतंत्र नहीं है। उसके जो अनिवार्य कर्तव्य हैं। वह उसे करने ही हैं, अर्थात पूर्ण करने हैं।

उसके बाद ईश्वर ने कहा कि अपने अनिवार्य कर्तव्य को भली-भांति पूरा करने के लिए ईश्वर में श्रद्धा आवश्यक है।

अन्त में, ईश्वर ने कहा कि अपनी इच्छाओं के अनुसार जीवन व्यतीत करने की अभिलाषा ही कर्तव्य के पालन के मार्ग की सबसे बड़ी रुकावट है।

अध्याय नं. २ में ईश्वर में श्रद्धा का विस्तार से वर्णन किया जा चुका है। इस अध्याय में अनिवार्य कर्मों का विस्तार से वर्णन है।

अध्याय का सारांश

● श्लोक नं. ३.१ में अर्जुन श्री कृष्ण जी से प्रश्न करते हैं, जब ईश्वर में श्रद्धा, धर्म में सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, तो श्रद्धा तो मुझ में है। अब आप मुझे इस युद्ध करने के लिए क्यों कह रहे हो?

● श्लोक नं. ३.३ में ईश्वर ने कहा की, धर्म में श्रद्धा और अपने अनिवार्य कर्तव्य का पालन करना दोनों महत्त्वपूर्ण हैं।

● श्लोक नं. ३.४ में ईश्वर ने कहा कि संसार से सन्यास लेने से कर्तव्य पूरे नहीं होते। (कर्तव्य को पूरा करना अधिक महत्त्वपूर्ण है)

● श्लोक नं. ३.५-३.८ में ईश्वर ने कहा कि तीन प्रकार के गुण मनुष्य के साथ लगे हैं (सत्व गुण, रजो गुण, तमो गुण)। किन्तु जो मनुष्य ईश्वर के आदेश अनुसार कर्म करता है, वही श्रेष्ठ है।

● श्लोक नं. ३.९ में ईश्वर ने कहा कि पवित्र वेदों को पढ़ो, जिसमें अनिवार्य कर्तव्य का वर्णन है। ईश्वर की प्रार्थना करो, और उसकी शरण चाहो। इसके बिना अनिवार्य कर्तव्य का पूरा करना कठिन है।

● श्लोक नं. ३.१० में है कि ईश्वर ने पहले मनुष्य को निर्माण करने के बाद जब धरती पर भेजा, तो उन्हें भी अपना अनिवार्य कर्मों को पूरा करने के लिए कहा, जो उन्होंने किया और संसार में समृद्ध रहे।

● श्लोक नं. ३.११-३.१२ में है कि जब मनुष्य अपने अनिवार्य कर्मों को पूरा करता है, तो देवता (फरिश्ते) उन्हें सभी प्रकार की जीवन सामग्री देते हैं। यह सामग्री भी मनुष्य को बांट कर खाना चाहिए।

● श्लोक नं. ३.१३-३.१५ में लिखा है कि जब मनुष्य अपने कर्म अच्छी तरह करता है तो ईश्वर उसे समृद्ध बना देता है।

● श्लोक नं.३.१७-३.१८ में लिखा है की ईश्वर के स्मरण (याद) से ही मन को शान्ती मिलती है।

● श्लोक नं. ३.१९-३.२० में लिखा है कि जनकल्याण को मन में रखते हुए वेदों के उपदेशों का पालन करना चाहिए।

● श्लोक नं. ३.२२-३.२४, में ईश्वर ने कहा की मुझको काम करने की आवश्यकता

नहीं है। किन्तु नि:स्वार्थ में कर्मों में लगा हूँ। इसी प्रकार मनुष्य को भी नि:स्वार्थ अपने कर्म करने में लगे रहना चाहिए।

- श्लोक नं. ३.२५-३.३२ में लिखा है कि कैसे अज्ञानी मूर्ख सत्कर्म करते हैं। और कैसे उन्हें सही कर्म करने के लिए मार्गदर्शन करना चाहिए?
- श्लोक नं. ३.३४ में अनिवार्य कर्तव्य को पूरा न कर पाने का कारण बताया गया है। और वह कारण है, मनुष्य का अपनी इच्छा अनुसार अपना जीवन व्यतीत करने की चाह।
- श्लोक नं. ३.३५ में लिखा है कि यदी किसी और व्यक्ति का जीवन आपको बहुत पसन्द हो तब भी अपने कर्तव्य के अनुसार ही जीवन व्यतीत करना चाहिए।
- श्लोक नं. ३.३७ से ३.४२ में ईश्वर ने कहा कि काम भावना जो कि अनिवार्य कर्मों को पूरा न करने का मुख्य कारण है, यह काम भावना इतनी प्रबल है कि मनुष्य के मन और बुद्धि को ढाँप लेती है।
- श्लोक नं. ३.४३ में ईश्वर ने कहा कि ईश्वर में दृढ़ श्रद्धा से ही काम और अन्य इच्छाओं को वश में किया जा सकता है जो अनिवार्य कर्मों को पूरा करने के मार्ग में सबसे बड़ी बाधा है।

अध्याय

कर्म योग का परिचय

३.१

अर्जुन उवाच,
ज्यायसी चेत् कर्मणः ते मता बुद्धिः जनार्दन।
तत् किम् कर्मणि घोरेमाम् नियोजयसि केशव ।।१।।

अर्जुन ने कहा, हे कृष्ण! आपके आदेश अनुसार यदि ईश्वर में श्रद्धा सत्कर्म से अधिक महत्त्वपूर्ण है, तो क्यों (तुम) मुझे (इस) घोर कर्म (अर्थात युद्ध के लिए) प्रेरित कर रहे हो।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (जनार्दन) हे कृष्ण (ते) आपके (मता) आदेश अनुसार (चेत्) अगर (बुद्धिः) ईश्वर में श्रद्धा (कर्मणः) सत्कर्म (ज्यायसी) से अधिक महत्त्वपूर्ण है। (तत्) तो (किम्) क्यों (तुम) (माम्) मुझे (घोरे) (इस) घोर (कर्मणि) कर्म (अर्थात युद्ध के लिए) (नियोजयसि) प्रेरित कर रहे हो।

३.२

व्यामिश्रेण इव वाक्येन बुद्धिम् मोहयसि इव मे।
तत् एकम् वद निश्चित्य येन श्रेयः अहम् आप्नुयाम् ।।२।।

एक से अधिक अर्थ के वाक्यों से मेरी बुद्धि उलझ गई है। इसलिए (कृपया) निश्चय करके एक अर्थ वाले वाक्य या उपदेश कहो, जिससे मैं सबसे श्रेष्ठ ज्ञान पा सकूँ।

(व्यामिश्रेण इव) एक से अधिक अर्थ के (वाक्येन) वाक्यों से (मे) मेरी (बुद्धिम्) बुद्धि (मोहयसि) उलझ गई है। (तत) इसलिए (निश्चित्य) निश्चय करके (एकम्) एक अर्थ वाले (वद) वाक्य या उपदेश कहो (येन) जिससे (अहम्) मैं (श्रेयः) सबसे श्रेष्ठ ज्ञान (आप्नुयाम्) पा सकूँ।

३.३

(श्री भगवान उवाच)
लोके अस्मिन् द्वि-विधा निष्ठा पुरा प्रोक्ता मया अनघ।
ज्ञान-योगेन सांङ्ख्यानाम् कर्म-योगेन योगिनाम् ।।३।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! इस संसार में धर्म और ईश्वर के प्रति जो आदरपूर्ण भाव (या श्रद्धा) है, उसके दो भाग हैं, जो मेरे द्वारा पहले ही (श्लोक नं. २:३९ में) कहा जा चुका है। उनमें से एक है ज्ञान योग, अर्थात वैदिक ज्ञान के अनुसार ईश्वर में श्रद्धा रखना, और ईश्वर की प्रार्थना करना। (जिसका ज्ञान) वेदों के ज्ञानियों द्वारा मिलता है। (और उनमें से दूसरा है) कर्म योग, अर्थात धार्मिक अनिवार्य कर्म करना, (जिसका ज्ञान) कर्म योगियों से मिलता है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (अनघ) हे अर्जुन (अस्मिन्) इस (लोके) संसार में (निष्ठा) धर्म और ईश्वर के प्रति जो आदरपूर्ण भाव (या श्रद्धा) है (द्वि-विधा) उसके दो भाग हैं, जो (मया) मेरे द्वारा (पुरा) पहले ही (श्लोक नं. २:३९ में) (प्रोक्ता) कहा जा चुका है। (ज्ञान-योगेन) (उनमें से एक है) ज्ञान योग अर्थात वैदिक ज्ञान के अनुसार ईश्वर में श्रद्धा रखना और ईश्वर की प्रार्थना करना। (सांख्यानाम्) (जिस का ज्ञान) वेदों के ज्ञानियों द्वारा मिलता है। (कर्म-योगेन) (और उनमें से दूसरा है) कर्म योग, अर्थात धार्मिक अनिवार्य कर्म करना। (योगिनाम्) (जिसका ज्ञान) कर्म योगियों से मिलता है।

धर्म में कर्म और श्रद्धा दोनों का महत्त्व है।

३.४

न कर्मणाम् अनारम्भात् नैष्कर्म्यम् पुरुषः अश्नुते।
न च संन्यसनात् एवं सिद्धिम् समधिगच्छति ।।४।।

न धार्मिक, अनिवार्य कर्मों को नकारने से मनुष्य को छुटकारा मिलता है। और न तो केवल सामाजिक जीवन से संन्यास लेने से; आध्यात्मिक साधना में ही सफलता मिलेगी। (अर्थात कर्म योग्य को करना ही होगा।)

(न) न तो (कर्मनाम्) धार्मिक अनिवार्य कर्मों को (अनारम्भात्) न करने से (पुरुषः) मनुष्य को (नैष्कर्म्यम्) छुटकारा (अश्नुते) मिलता है (च) और (न) न (एव) केवल (सन्न्यसनात्) सामाजिक जीवन से संन्यास लेने से (सिद्धिम्) आध्यात्मिक साधना में ही सफलता (समधिगच्छति) मिलेगी।

३.५

न हि कश्चित् क्षणम् अपि जातु तिष्ठति अकर्म-कृत् ।
कार्यते हि अवशः कर्म सर्वः प्रकृति-जैः गुणैः।।५।।

कोई (भी मनुष्य) किसी भी अवस्था में एक क्षण के लिए भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता है।

(कश्चित) कोई (भी मनुष्य) (जातु) किसी भी अवस्था में (क्षणम्) एक क्षण के लिए (अपि) भी (अकर्मकृत) कर्म किए बिना (न) नहीं। (तिष्ठते) रह सकता है। (हि) क्योंकि (प्रकृति) ईश्वर ने प्राकृतिक रुप से उसमें (गुणैः) जो गुण (जै) उत्पन्न किये है। (अवशः) उससे बाध्य

क्योकि ईश्वर ने प्राकृतिक रुप से उसमें जो गुण उत्पन्न किये हैं उस से बाध्य होकर वह सब कर्म करता रहता है।

होकर वह सब (कर्म) कर्म (कार्यते) करता रहता है।

अनिवार्य कर्म करने की पद्धती

३.६

कर्म-इन्द्रियाणि संयम्य यः आस्तेमनसा स्मरन् ।
इन्द्रिय-अर्थान् विमूढ आत्मा मिथ्या-आचारः सः उच्वते।।६।।

जो व्यक्ति अपने आनंद अनुभव करने वाले अंगो को वश में रखता है किन्तु मन में आनंद लेने वाले वस्तुओं (के बारे में) सोचता रहता है। ऐसा व्यक्ति मूर्ख है और उस व्यक्ति को ढोंगी/पाखंडी कहा जाएगा।

(यः) जो व्यक्ती (कर्म-इन्द्रियाणि) अपने आनंद अनुभव करने वाले अंगो को (संयग्य) वश में (अस्ति) रखता है (मनसा) किन्तु मन में (इन्द्रिय अर्थान्) आनंद लेने वाले वस्तुओं (स्मरण) (के बारे में) सोचता रहता है। (आत्मा) ऐसा व्यक्ति (विमुढ) मूर्ख है। (सः) और उस व्यक्ती को (मिथ्या आचारः) ढोंगी/पाखंडी (उच्यते) कहा जाएगा।

३.७

यः तु इन्द्रियाणि मनसा नियम्य आरभते अर्जुन।
कर्म-इन्द्रियैः कर्म-योगम् असक्ताः सः विशिष्यते।।७।।

किंतु हे अर्जुन जो व्यक्ति मन से अपनी इच्छाओं को वश में रखता है। और आनंद लेने वाले कर्मो को करता है। बिना उसमें मगन (लीन) हुए। (और) ईश्वर के आदेश अनुसार करता है, तो वह (व्यक्ति) श्रेष्ठ है।

(तु) किंतु (अर्जुन) हे अर्जुन (यः) जो व्यक्ति (मनसा) मन से (इंद्रियाणि) अपनी इच्छाओं को (नियम्य) वश में रखता है। (कर्म-इन्द्रिय) और आनंद लेने वाले कर्मो को (आरभते) करता है। (असक्तः) बिना उसमें मगन (लीन) हुए (और) (कर्म-योगम्) ईश्वर के आदेश अनुसार करता है (सः) तो वह (व्यक्ति) (विशेष्यते) श्रेष्ठ है।

३.८

नियतम् कुरु कर्म त्वम् कर्म ज्यायः हि अकर्मणः।
शरीर यात्रा अपि च ते न प्रसिद्ध्येत् अकर्मण।।८।।

(त्वम्) हे अर्जुन! तुम (नियतम्) ईश्वर के आदेश अनुसार (कुरु-कर्म) कर्मो को करो। (हि) निःसंदेह (कर्म) कर्मो का करना (ज्याय)

नोट ३.७ : इस श्लोक को निम्नलिखित उदाहरण से समझते हैं।

एक व्यक्ति पराई स्त्री को वासना से नहीं देखता, और केवल अपनी पत्नी से सम्भोग का आनंद लेता है; जैसा ईश्वर का आदेश है। और दुसरा व्यक्ति संन्यास लेता है, किंन्तू पराई स्त्रियों को देखकर ललचाता रहता है। तो पहला व्यक्ति श्रेष्ठ है।

हे अर्जुन! तुम ईश्वर के आदेश अनुसार कर्मों को करो। नि:संदेह कर्मों का करना अच्छा है, कर्मों को न करने से। तथा कर्म न करने से तुम्हारी जन्म से मृत्यु तक की जीवन की यात्रा भी सफल न होगी।

अच्छा है। (अकर्मण) कर्मों को न करने से (च) तथा (अकर्मण) कर्म न करने से (ते) तुम्हारी (शरीर यात्रा) जन्म से मृत्यु तक की जीवन की यात्रा (अपि) भी (न प्रसिद्धयेत्) सफल न होगी।

३.९

यज्ञ-अर्थात् कर्मणः अन्यत्र लोकः अयम् कर्म-बन्धनः।
तत् अर्थम् कर्म कौन्तेय मुक्तसङ्गः समाचर।।९।।

हे अर्जुन! (वेदों में) लिखे आदेश (को जानो)। उस ईश्वर के लिए **संगम** से मुक्त होकर कर्म करो। तुम्हारे कर्म ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए हो अन्यथा इस संसार (में) कर्मों से बंधे रहोगे। (अनिवार्य कर्तव्य पूरे नहीं होंगे)

(कौन्तेय) हे अर्जुन (समाचार) (वेदों में) लिखे आदेश (को जानो) (तत) उस ईश्वर (अर्थम) के लिए (मुक्तसङ्गः) **संगम** से मुक्त होकर (कर्म) कर्म करो (कर्मण) तुम्हारे कर्म (यज्ञ) ईश्वर को प्रसन्न करने (अर्थात) के लिए हो (अन्यत्र) अन्यथा (अथम्) इस (लोक) संसार (में) (कर्म बन्धन) कर्मों से बंधे रहोगे। (अनिवार्य कर्तव्य पुरे नहीं होंगे)

अनिवार्य कर्म करने से उन्नती मिलती है।

३.१०

सहयज्ञाः प्रजाः सृष्ट्वा पुरा उवाच प्रजापतिः।
अनेन प्रसविष्यध्वम् एषः वः अस्तु इष्ट काम-धुक् ।।१०।।

सृष्टी के रचना के काल में (आदिकाल में) ईश्वर ने मनुष्य (की रचना) ईश्वर की प्रार्थना के लिए की।

(पूरा) सृष्टी के रचना के काल में (आदिकाल में) (प्रजापति) ईश्वर ने (प्रजा) मनुष्य (की रचना) (सह यज्ञाः) ईश्वर की प्रार्थना के लिए की (उवाच) (और मनुष्य को) कहा (अनेन) उस ईश्वर की प्रार्थना से तुम्हारी (प्रसविष्यध्वम्)

नोट ३.९: संगम : 'संगम' के नालन्दा विशाल शब्द कोश में चार अर्थ है। (पेज नं. १३७३)

१) सम्मेलन २) वह स्थान जहाँ दो नदियाँ मिलती हैं। ३) साथ, सोहबत ४) दो या अधिक वस्तुओं का एक साथ मिलना।

जब ग्रंथों में प्रार्थना के सम्बंध में इस शब्द का उपयोग होता है तो इसका अर्थ है ईश्वर की प्रार्थना के साथ किसी और की भी पूजा करना। इससे भगवद् गीता में १९ बार मना किया गया है। अधिक जानकारी के लिए नोट नं. N-6 पढ़िए।

नोट ३.९: पवित्र कुरआन में ईश्वर ने पैगम्बर मोहम्मद साहब (स.) से कहा, (हे पैगम्बर ऐसा कहो की) ''यदि मैं अपने ईश्वर की आज्ञा न मानूं तो मुझे एक बड़े दिन (प्रलय के दिन) की यातना का भय है। कहो, मैं तो ईश्वर की प्रार्थना करता हूँ, उसी के लिए धर्म को शुद्ध करते हुए।'' (पवित्र कुरआन, सूरे अज जुमर-३९, आयत-१३-१४)

(और मनुष्य को) कहा, ''ईश्वर की प्रार्थना से तुम्हारी समृद्धि (उन्नती) बढ़ेगी, ईश्वर की प्रार्थना से तुम लोग को आवश्यक सामग्री प्राप्त होगी।''

समृद्धि (उन्नती) बढ़ेगी (एषः) उस ईश्वर की प्रार्थना से (वः) तुम लोग को (इष्ट-काम-धुक्) आवश्यक सामग्री प्राप्त (अहतु) होगी।
(यज्ञ का अर्थ नोट नं. N-१३ में देखे।)

३.११

देवान् भावयता अनेन ते देवाः भावयन्तु वः
परस्परम् भावयन्तः श्रेयः परम् अवाप्स्यथ
।।११।।

(उस ईश्वर की प्रार्थना के आदेश) अनुसार वे देवता भी ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। तुम (मनुष्य भी) देवताओं के समान (ईश्वर की)

(अनेन) (उस ईश्वर की प्रार्थना के आदेश) अनुसार (ते) वे (देवान्) देवता भी (भावयत) ईश्वर की प्रार्थना करते हैं (वः) तुम (मनुष्य भी) (देवाः) देवताओं के समान (भावयन्तु) (ईश्वर की) प्रार्थना करो (परस्परम) देवताओं और मनुष्य की संयुक्त प्रार्थना से (परम्) महान ईश्वर

नोट ३.१०: ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''और यदि ये 'तौरात' और 'इंजील' को और जो कुछ इनके ईश्वर की ओर से इन पर अवतरित किया गया है, कायम रखते (अनुसरण करते), तो इन्हें खाने को मिलता ऊपर से भी और पाँव के नीचे से भी। इनमें एक समुदाय सीधे रास्ते पर चलने वाला है परन्तु इनमें बहुत से ऐसे हैं कि जो कुछ करते हैं, वह बहुत बुरा है।'' (पवित्र कुरआन, सूरे अल माइदह-५, आयत-६६)

(तौरात यहुदी समुदाय की अवतरित ग्रंथ है, और इंजील इसाई समुदाय की। इस आयत का अर्थ है कि जो भी अवतरित ग्रंथो का पालन करेगा अत्यंत सुखी रहेगा।)

नोट ३.१०: ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''मैंने तो जिन्नों और मनुष्यों को केवल इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी स्तुति (बन्दगी) करें।'' (पवित्र कुरआन, सूरे अज़ जारीयात-५१, आयत-५६)

नोट ३.११: पवित्र कुरआन मे लिखा है, ''जानदार जो आकाशों में है और जो धरती पर है सब ईश्वर को सज्दा करते हैं, और फरिश्ते भी, और वे (फरिश्ते) अपने आपको बड़ा नहीं समझते। अपने ईश्वर से जो उनके ऊपर है ड़रते रहते है, और उन्हें जो आदेश दिया जाता है करते हैं।'' (सूरे अन नहल (१६) आयत (४९/५०))

- मानवजाति के लिए ईश्वर के आदेश निम्नलिखित हैं।

''अपने ईश्वर को प्रात:काल और संध्या के समय याद किया करो, अपने मन में गिड़गिड़ाते और ड़रते हुए, और धीमी आवाज़ के साथ। और उन लोगों में से न हो जाओं जो अचेतावस्था (गफलत) में पड़े हुए है।''
(सूरे-अल आराफ (७) आयत २०५)

- (जैसे भगवान शब्द ईश्वर, पुण्य और आदरणीय व्यक्ति और देवताओं के लिए उपयोग होता है। इसी प्रकार देवता शब्द भी देवताओं और फरिश्तों दोनों के लिए उपयोग होता है।) भगवान शब्द को समझने के लिए नोट नं. N-१० पढ़िए।

नोट ३.११: नालंदा विशाल शब्द सागर कोश (पेज नं. ६१४) में देवता के दो अर्थ है। १) स्वर्ग में रहने वाले वे अमर प्राणी जो पूज्य माने जाते है। २) सूर (फरिश्ते)

प्रार्थना करो। देवताओं और मनुष्य की संयुक्त प्रार्थना से महान ईश्वर की शरण प्राप्त करो।

की (श्रेयः) शरण (अवाप्स्यथ) प्राप्त करो।

नोट- (परस्पर) का अर्थ है एक दुसरे के साथ (नालंदा विशाल शब्द सागर पेज नं. ७९१.)

३.१२

इष्टान् भोगान् हि वः देवाः दास्यन्ते यज्ञ-भाविताः।
तैः दत्तान् अप्रदाय एभ्यः यः भुङक्ते स्तेनः एव सः ।।१२।।

ईश्वर की प्रार्थना करते रहने से देवता तुम्हें निःसंदेह जीवित रहने के लिए जो वस्तु चाहिए (वह) देते रहेंगे। (किन्तु) उन देवताओं द्वारा दी हुई सामग्री को जो दूसरों को दिये बिना सेवा में लाएगा निःसंदेह वह चोर है।

(यज्ञ भाविताः) ईश्वर की प्रार्थना करते रहने से (देवा) देवता (वः) तुम्हें (हि) निःसंदेह (भोगान्) जीवित रहने के लिए जो वस्तु (इष्ठान) चाहिए (वह) (दास्यन्ते) देते रहेंगे। (तै) (किन्तु) उन देवताओं द्वारा (दत्तान) दी हुई सामग्री को (यो) जो (एभ्य) दूसरों को (अप्रदाय) दिये बिना सेवा में लाएगा (एव) निःसंदेह (सः) वह (स्तेन) चोर है।

३.१३

यज्ञ-शिष्ट अशिनः सन्तः मुच्यन्ते सर्व किल्बिषै।
भुञ्जते ते तु अघम् पापाः ये पचन्ति आत्म-कारणात् ।।१३।।

संत, महापुरुष कर्तव्यपालन (के लिए और जीवित रहने के लिए) भोजन खाते है। (और) सर्व प्रकार के पापों से मुक्त रहते हैं। किन्तु जो (भोजन) बनाते हैं मात्र अपने आनंद के लिए, वह पापी लोग पाप करते हैं।

(सन्तः) संत, महापुरुष (यज्ञ) कर्तव्यपालन (के लिए और जिवित रहने के लिए) (शिष्ट) भोजन (अशिनः) खाते हैं। (सर्व) (और) सर्व प्रकार के (किल्बिषै) पापों से (मुच्यन्ते) मुक्त रहते हैं। (तु) किन्तु (ये) जो (पचन्ति) (भोजन) बनाते हैं (आत्म कारणात) केवल अपने (भुञ्जते) आनंद के लिए (ते) वह (पापाः) पापी लोग (अघम्) पाप करते हैं।

३.१४

अन्नात भवन्ति भूतानि पर्जन्यात् अन्न सम्भवः।
यज्ञात् भवति पर्जन्यः यज्ञः कर्म समुद्भवः ।।१४।।

सम्पूर्ण प्राणियों के शरीर अन्न से उत्पन्न होते हैं (जीवित रहते हैं)। अन्न की उत्पति वर्षा से होती

(भूतानि) सम्पूर्ण प्राणियों के शरीर (अन्नात्) अन्न से (भवन्ति) उत्पन्न होते हैं (जीवित रहते हैं (अन्न) अन्न (सम्भवः) उत्पति (पर्जन्यान) वर्षा से होती है। (पर्जन्य) वर्षा (भवति) होती है। (यज्ञात) ईश्वर की आज्ञा और कृपा से

नोट ३.१२:- पवित्र कुरआन में लिखा है कि फरिश्तें ईश्वर के आदेश अनुसार काम करते हैं, इस विषय में यह आयत है। ''फिर फरिश्ते (ईश्वरीय आदेशों के अनुसार) संसार के कार्यों (कामों) का प्रबंध करते है।'' (पवित्र कुरआन ७९.५)

है, वर्षा होती है ईश्वर की आज्ञा और कृपा से। (और ईश्वर की आज्ञा और कृपा मनुष्य के) कर्म (के अनुसार) होते है।

(कर्म) (और ईश्वर की आज्ञा और कृपा मनुष्य के) कर्म (समुद्भवः) (के अनुसार) होते हैं।

(सम्भव: का अर्थ उत्पति है, यह अर्थ याद रखें। श्लोक नं. ४.८ में इसका उपयोग होगा।)

३.१५

कर्म ब्रह्म उद्भवम् विद्धि ब्रह्म अक्षर समुद्भवम्।
तस्मात् सर्वगतम् ब्रह्म नित्यम् यज्ञे प्रतिष्ठितम्
।।१५।।

(यह सत्य तुम्हें) जानना चाहिए कि सत्कर्म वेदों से उत्पन्न होते हैं। निराकार ईश्वर (से) वेद अस्तित्व में आए हैं। इस कारण (तुम्हें जानना चाहिए की ईश्वर की कृपादृष्टी) हर स्थान पर उपस्थित रहने वाला ईश्वर और उसकी कृपा वहीं होती है जहाँ हमेशा कर्तव्य का पालन होता है, (या ईश्वर की प्रार्थना होती है, या वेदों में लिखे आदेश माने जाते है)।

(विद्धि) (यह सत्य तुम्हें) जानना चाहिए कि *(कर्म)* सत्कर्म *(ब्रह्म)* वेदों से *(उद्भवम)* उत्पन्न होते हैं। *(अक्षर)* निराकार ईश्वर (से) *(समुदभवम)* वेद अस्तित्व में आए हैं *(तस्मात)* इस कारण (तुम्हें जानना चाहिए कि ईश्वर की कृपादृष्टी) *(सर्वगतम्)* हर स्थान पर उपस्थित रहने वाला ईश्वर और उसकी कृपा *(प्रतिष्ठितम्)* वहीं होती है। *(नित्यम यज्ञ)* जहाँ हमेशा कर्तव्य का पालन होता है (या ईश्वर की प्रार्थना होती है या वेदों में लिखे आदेश माने जाते है)।

(यज्ञ का अर्थ कर्तव्य पालन लिखा है। देखीए नोट नं. N-१३)

अनिवार्य कर्म करने से सुख शान्ती मिलती है।

३.१६

एवम् प्रवर्तितम् चक्रम् न अनुवर्तयति इह यः।
अघ-आयुः इन्द्रिय-आरामः मोघम् पार्थ सः जीवति।।१६।।

इस प्रकार, हे अर्जुन, जो व्यक्ति इस संसार में वेदों के निश्चित किए हुए नियमों के अनुसार अपने जीवन के दिन रात को सुनिश्चित नहीं करता, उसका जीवन पापों से भर जाता है। (कारण के) वह इस उद्देश्य से जीवित रहता है कि अपने इन्द्रियो से आनंद लेने में डूबा रहे।

(एवम्) इस प्रकार (पार्थ) हे अर्जुन (यः) जो व्यक्ति (इह) इस संसार में (प्रवर्तितम्) वेदों के निश्चित किए हुए नियमां के अनुसार (चक्रम्) अपने जीवन के दिन रात को (अनुवर्तयति) सुनिश्चित नही करता (अघ-आयु) उसका जीवन पापों से भर जाता है। (सः) (कारण के) वह (जीवति) इस उद्देश से जिवित रहता है की (इन्द्रिय आराम) अपने इन्द्रियो से आनंद लेने में (मोहम) डूबा रहे।

नोट ३.१५:- (हजरत नूह / विवस्वत मनु ने कहा) अपने ईश्वर में क्षमा की प्रार्थना करो। निश्चय ही वह बड़ा क्षमाशील है। वह बादल भेजेगा तुम पर खुब बरसने वाला। और वह माल और बेटों से तुम्हें बढ़ोतरी प्रदान करेगा, और तुम्हारे लिए बाग पैदा करेगा और तुम्हारे लिए नहरें प्रवाहित करेगा। (पवित्र कुरआन, सुरे नूह-७१, आयत-१०-१२)

३.१७

यः तु आत्म-रतिः एव स्यात् आत्म-तुप्तः च मानवः।
आत्मनि एव च सन्तुष्टः तस्य कार्यम् न विद्यते।।१७।।

निःसंदेह वह जो ईश्वर की स्मरण (याद) में डूबा रहता, वह व्यक्ति ईश्वर कि तरफ से शान्ति पाता है। और (वह व्यक्ति) अपने अंदर शान्ति और सन्तुष्टी का अनुभव करता है और उसे (और अधिक शान्ति और सन्तुष्ट रहने के लिए और) कोई काम नहीं करने पड़ते।

(तु) निःसंदेह (यः) वह जो (आत्मरति) ईश्वर की स्मरण (याद) में डूबा (स्यात्) रहता (मानवः) वह व्यक्ति (आत्म-तुप्तः) ईश्वर कि तरफ से शान्ति पाता है (च) और (आत्मनि) (वह व्यक्ति) अपने अंदर (सन्तुष्टः)शान्ति और सन्तुष्टी का अनुभव करता है। (च) और (तस्य) उसे और (अधिक शान्ति और सन्तुष्ट रहने के लिए) (कार्यम्) और कोई काम (न विद्यते) नहीं करने पड़ते।

३.१८

न एव तस्य कृतेन अर्थः न अकृतेन इह कश्चन।
न च अस्य सर्वभूतेषु कश्चित् अर्थ व्यपाश्रयः ।।१८।।

संसार में (इस प्रकार के सभी संन्तुष्ट और शांत व्यक्तियों को) निःसंदेह, न अवश्यकता है कुछ (विशिष्ट) कर्म करने की, और न (कोई) ऐसी (अवश्यकता) है कि कुछ विशिष्ट कर्मों से बचा जाए। और ऐसे (सज्जन व्यक्ति को) न तो कोई अवश्यकता है संसार के सभी प्राणियों के शरण लेने की।

(अर्थात ईश्वर की तरफ से मिली शांति के कारण वह अपने आप ही शांत और प्रसन्न रहता है।)

(इह) संसार में (इस प्रकार के सभी संन्तुष्ट और शांत व्यक्तियों को) (एवं) निःसंदेह (न) न (अर्थः) आवश्यकता है (कृतेन) कुछ (विशिष्ट) कर्म करने की (च) और (न) न (तस्य) (कोई) ऐसी (अवश्यकता) है (अकृतेन) कुछ विशिष्ट कर्मों से बचा जाए (च) और (अस्य) ऐसे (सज्जन व्यक्ति को) (न) ना तो (कश्रिता) कोई (अर्थ) आवश्यकता है (सर्व भुतेषु) संसार के सभी प्राणियों के (व्यपाश्रयः) शरण लेने की।

३.१९

तस्मात् असक्तः सततम् कार्यम् कर्म समाचर।
असक्तः हि आचरन् कर्म परम् आप्नोति पुरुषः ।।१९।।

इसलिए निरन्तर निःस्वार्थ होकर सत्कर्म को अपना कर्तव्य समझ कर वेदों के आदेश अनुसार

(तस्मात्) इसलिए (सततम्) निरन्तर (असक्तः) निःस्वार्थ होकर (कर्म) सत्कर्म को (कार्यम) अपना कर्तव्य समझ कर (समाचर) वेदों के आदेश अनुसार (करते रहो) (हि) निःसंदेह (असक्तः) निःस्वार्थ (कर्म) कर्म

नोट ३.१७ : पवित्र कुरआन में लिखा है कि, ''ऐसे ही लोग हैं वे जो इमान लाए और जिनके दिलों को ईश्वर की याद से सन्तोष होता है। सुन लो, ईश्वर की याद से दिलों को सन्तोष होता है।'' (सूरे अर रअद-(१३) आयत-२८)

(करते रहो)। निःसंदेह निःस्वार्थ कर्म करता हुआ व्यक्ती ही ईश्वर की कृपा को पाता है।

(आचरन्) करता हुआ (पुरुषः) व्यक्ती ही (परम्) ईश्वर की कृपा को (आप्नोति) पाता है।

कर्मों का उद्देश जनकल्याण होना चाहिए।

३.२०

कर्मणा एव हि संसिद्धिम् आस्थिताः जनक-आदयः।
लोक-सङ्ग्रहम् एव अपि सम्पश्यन् कर्तुम अर्हसि ।।२०।।

निःसंदेह, जनक और अनेक महापुरुषों ने भी सत्कर्मों को पूरी तरह से ईश्वर में दृढ श्रद्धा के साथ किया था। तुम्हें भी सत्कर्मों को जन कल्याण के उद्देश्य के साथ करना चाहिए।

(हि) निःसंदेह (जनकादयः) जनक और अनेक महापुरुषों ने (एव) भी (कर्मणा) सत्कर्मों को (सद्दिम) पूरी तरह से (आस्थिता) ईश्वर में दृढ श्रद्धा के साथ किया था। (एव अपि) तुम्हें भी (कर्तुम) सत्कर्मों को (लोकसङ्ग्रहम) जन कल्याण (सम्पश्यन्) के उद्देश के साथ (अर्हसि) करना चाहिए।

३.२१

यत् यत् आचरति श्रेष्ठः तत् तत् एव इतरः जनः।
सः यत् प्रमाणम् कुरुते लोकः तत् अनवर्तते।।२१।।

समाज के श्रेष्ठ लोग (धनी, बुद्धिजीवी) जो आचरण करते हैं। समाज के दुसरे लोग भी वही (आचरण अपनाते हैं)। वह (समाज के श्रेष्ठ लोग) आचरण के; जो प्रमाण निर्धारित करते हैं। वही (आचरण के प्रमाण) सारे लोग भी अपनाते हैं।

(श्रेष्ठ) समाज के श्रेष्ठ लोग (धनी, बुद्धीजिवी) (यत् यत्) जो (आचरित) आचरण करते हैं। (इतर जनः) समाज के दुसरे लोग (एवं) भी (तत् तत्) वही (आचरण अपनाते हैं।) (सः) वह (समाज के श्रेष्ठ लोग) (यत् प्रमाणम्) आचरण के जो प्रमाण (कुरुते) निर्धारीत करते हैं। (तत्) वही (आचरण के प्रमाण) (लोकः) सारे लोग (अनुवर्तते) अपनाते हैं।

सत्कर्मों के लिए प्रेरणा

३.२२

न मे पार्थ अस्ति कर्तव्यम् त्रिषु लोकेषु किश्चन
न अवाप्तम् अवाप्तव्यम् वर्ते एव च कर्मणि।।२२।।

हे अर्जुन तीनों लोकों में मुझ पर कोइ भी

(पार्थ) हे अर्जुन (त्रिषु) तिनों (लोकेषु) लोकों (में) (मे) मुझ पर (किश्चन) कोई भी (कर्तव्यम्) अनिवार्य कर्म (न) नहीं (अस्ति) है (न अनवाप्तम्) न प्राप्त करने योग्य (वस्तु)

नोट ३.१९: पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, ''संसार के सभी प्राणी ईश्वर के परिवार के समान है। ईश्वर उस व्यक्ती से प्रेम करता है जो उसके परिवार की सेवा करता है। (मिश्कात अल मसाबी-३:१३९२)

अनिवार्य कर्म नहीं है। न प्राप्त करने योग्य (वस्तु) मुझे अप्राप्त है। (अर्थात मेरे पास सब कुछ है।) फिर भी (मैं प्राणियों के सुरक्षा और पालन पोषण) के काम में लगा हूँ।

(अवाप्तव्यम्) (मुझे) अप्राप्त है। (अर्थात मेरे पास सब कुछ है।) (एव च) फिर भी (कर्मणि) (मैं प्राणियों के सुरक्षा और पालन पोषण) के काम में (वर्ते) लगा हूँ।

३.२३

यदि हि अहम् न वर्तेयम् जातु कर्मणि अतन्द्रितः।
मम वर्त्म अनुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः ।।२३।।

हे अर्जुन! अगर मैं बह्मांड के प्रबंध (सुरक्षा का काम) सावधान होकर न करुँ तो नि:संदेह सब मनुष्य मेरे मार्ग पर चल पड़े।

(अर्थात ब्रह्मांड नष्ट हो जाए और सब मनुष्य मृत्यु पाकर मेरे पास आ जाए)

(पार्थ) हे अर्जुन! (यदि) अगर (अहम) मैं (कर्मणि) बह्मांड के प्रबंध (सुरक्षा का काम) (अतन्द्रितः) सावधान होकर (न) न (वर्तेयम्) करुँ (हि) (तो) नि:संदेह (सर्वशः) सब (मनुष्याः) मनुष्य (मम) मेरे (वर्त्म) मार्ग पर (अनुवर्तन्ते) चल पड़े।

३.२४

उत्सीदेयुः इमे लोकाः न कुर्याम् कर्म चेत् अहम् ।
संकरस्य च कर्ता स्याम् उपहन्याम् इमाः प्रजाः ।।२४।।

यदि मैं (ब्रह्मांड के प्रबंध का) कर्म न करुँ तो यह सब संसार नष्ट हो जाए। और (यह सब प्रबंध केवल प्रलय के दिन तक है। प्रलय के अवसर पर) सर्व प्राणियों को (मैं) अनचाहे (वस्तू के प्रकार) नष्ट करने वाला हूँ।

(चेत) यदि (अहम) मैं (कर्म) (ब्रह्मांड के प्रबंध का) कर्म (न) न (कुर्याम्) करुँ तो (इमे) यह सब (लोकाः) संसार (उत्सीदेयुः) नष्ट हो जाए (च) और (यह सब प्रबंध केवल प्रलय के दिन तक है। प्रलय के अवसर पर) (इमाः प्रजाः) सर्व प्राणियों को (मैं) (संङ्करस्य) अनचाहे (वस्तू के समान) (उपहन्याम) नष्ट (कर्ता) करने वाला (स्याम्) हूँ।

अज्ञानियों को सत्कर्म के लिए कैसे प्रेरित करें।

३.२५

सक्ताः कर्मणि अविद्वासः यथा कुर्वन्ति भारत।
कुर्यात् विद्वान् तथा असक्तः चिकीर्षुः लोक-संग्रहम् ।।२५।।

(भारत) हे अर्जुन! (यथा) जैसे (अविद्वांस) अज्ञानी (सक्ताः) (कर्म फल की) अपेक्षा (के

नोट ३.२५: पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, ''सारे प्राणी ईश्वर का परिवार है और ईश्वर उस व्यक्ति से अधिक प्रेम करता है जो प्राणियों की अधिक सेवा करता है''(Mishkat-al-masabih-३-१३९२)
(इस में केवल मुसलमानों का वर्णन नही है बलके सारे प्राणियों का वर्णन है)

हे अर्जुन! जैसे अज्ञानी (कर्म फल की) अपेक्षा (के साथ) कर्म करते हैं। वैसे ही (विद्वान) ज्ञानी पुरुषों को निस्वार्थ होकर संसार के कल्याण के उद्देश से कर्म करने चाहिए।

साथ) (कर्मणि) कर्म करते है। (तथा) वैसे ही (विद्वान्) ज्ञानी पुरुषों को (असक्तः) निःस्वार्थ होकर (लोक-संग्रह्य) संसार के कल्याण के (चिकीर्षु) उद्देश से (कुर्यात्) कर्म करने चाहिए।

३.२६

न बुद्धिभेदम् जनयेत् अज्ञानाम् कर्मसंगिनाम्
जोषयेत् सर्व कर्माणि विद्वान् युक्तः समाचरन् ।।२६।।

ज्ञानी पुरुषों (को चाहिए की) अज्ञानी लोग जो कर्मों को केवल अच्छे फल की लालच में करते हैं। उनकी बुद्धी में भ्रम न उत्पन्न होने दें। वेदों के ज्ञान उनको बताए और उनके सब कर्म (वेदों के अनुसार हों इसके लिए) प्रेरित करें।

(विद्वान) ज्ञानी पुरुषों (को चाहिए की) (अज्ञानाम्) अज्ञानी लोग जो (कर्मसङ्गिनाम्) कर्मों को केवल अच्छे फल की लालच में करते हैं। उनकी (बुद्धिभेदम्) बुद्धी में भ्रम (न) न (जनयेत्) उत्पन्न होने दें। (समाचरन्) वेदों के ज्ञान (युक्तः) उनको बताए (सर्व कर्माणि) और उनके सब कर्म (जोषयेत्) (वेदों के अनुसार हों इसके लिए) प्रेरित करें।

३.२७

प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणैः कर्माणि सर्वशः ।
अहङ्कार-विमूढ आत्मा कर्ता अहम् इति मन्यते।।२७।।

सारे कर्म (ईश्वर के बनाए हुए सत्व, रजो और तमो गुणों से और) ईश्वर के बनाए हुए भाग्य के कारण किये जाते हैं। (किन्तु) अहंकारी (और) मूर्ख लोग ऐसा मानते हैं कि यह सब (कर्म) मैं करता हूँ।

(सर्वशः) सारे कर्म (गुणै) (ईश्वर के बनाए हुए सत्व, रजो और तमो गुणों से और) (प्रकृते) ईश्वर के बनाए हुए भाग्य के कारण (क्रियमाणानि) किये जाते हैं। (अहङ्कार) (किन्तु) अहन्कारी (और) (विमूढ) मूर्ख लोग (मन्यते) ऐसा मानते हैं कि (इति) यह सब (कर्म) (अहम) मैं (स्वयः) (कर्ता) करता हूँ।

३.२८

तत्ववित् तु महाबाहोगुणकर्म विभागयोः।
गुणाः गुणेषु वर्तन्ते इति मत्वा न सज्जते ।।२८।।

हे महाबाहो (अर्जुन)! तत्वदर्शी पुरुष (ज्ञानी) कर्म (जो ईश्वर के बनाए हुए सात्विक, रजो और तमो) गुण (से प्रेरित होकर किए जाते हैं), उनके अंतर को समझता है। (और तीनों) गुणों में सर्वश्रेष्ठ गुण (सात्वीक गुण) ही अपनाता है। इस तरह के दृष्टीकोण से वह (पाप कर्मों में) फंसता नहीं है।

(महाबाहो) हे महाबाहो (अर्जुन) (तत्ववित्) तत्वदर्शी पुरुष (ज्ञानी) (कर्म) कर्म (गुण) (जो ईश्वर के बनाए हुए सात्विक, रजो और तमो गुण (से प्रेरित होकर किए जाते है), (विभागयोः) उनके अंतर को समझता है। (गुणेषु) (और तीनों) गुणों में (गुणाः) सर्वश्रेष्ठ गुण (सात्वीक गुण) (वर्तन्ते) (ही) अपनाता है। (इति) इस तरह के (मत्वा) दृष्टीकोण से वह (सज्जते) (पाप कर्मों में) फंसता (न) नहीं है।

३.२९

प्रकृतेः गुण सम्मूढाः सज्जन्ते गुणकर्मसु।
तान् अकृत्स्नविदः मन्दान् कृत्स्न-वित् विचालयेत् ।।२९।।

(ईश्वर ने) प्राकृतिक रुप से (मनुष्य को जो) गुण (बुद्धि, कौशल) दिये हैं। मूर्ख जन (उसे अपनी क्षमता मानते हैं) और उन गुणों से उसके अच्छे फल (धन संपत्ती इत्यादि) कमाने के धुन में लगे रहते हैं। (और मानव कल्याण के कर्म नहीं करते)। ज्ञानी पुरुषों को चाहिए कि इन अज्ञानी और ना समझ लोगों को विचलित (गुमराह) न होने दें।

(प्रकृतेः) (ईश्वर ने) प्राकृतिक रुप से (गुण) (मनुष्य को जो) गुण (कौशल) दिये है। (सम्भूढाः) मूर्ख जन (उसे अपनी क्षमता मानते हैं) (गुणकर्मसु) और उन गुणों से उस के अच्छे फल (धन संपत्ती इत्यादी) कमाने के (सज्जन्ते) लत में लगे रहते हैं (और मानव कल्याण के कर्म नहीं करते) (कृत्स्न-वित्) ज्ञानी पुरुषों को चाहिए कि (तान्) इन (अकृत्स्नविदः) अज्ञानी (मन्दन्) और ना समझ लोगों को (विचानमयते) विचलित (गुमराह) न होने दें।

३.३०

मयि सर्वाणि कर्माणि संन्यस्य अध्यात्म चेतसा।
निराशीः निर्ममः भूत्वा युध्यस्व विगतज्वरः।।३०।।

(हे अर्जुन) विवेक बुद्धि के द्वारा (मुझ) ईश्वर को पहचानते हुए, अपने सभी कर्म (कर्तव्य) केवल मेरे (लिए करो)। मेरे अतिरिक्त किसी से अपेक्षा ना रखो। आनंद भोगने की इच्छा न रखो। वासना छोड़ दो। सुस्ती और कामचोरी को छोड़ कर सत्कर्मों को युद्ध रुप से करने वाले बन जाओ।

(अध्यात्म चेतसा) (हे अर्जुन) विवेक और बुद्धि के द्वारा ईश्वर को पहचानते हुए (सर्वाणि) अपने सभी (कर्माणि) कर्म (कर्तव्य) (मयि) (केवल) मेरे (लिए करो) (संन्यस्य) मेरे अतिरिक्त किसी से अपेक्षा ना रखो। (निराशीः) आनंद भोगने की इच्छा न रखो। (निर्ममः) वासना छोड़ दो (विगतज्वरः) सुस्ती और कामचोरी को छोड़ कर (युध्यस्व) सत्कर्मों को युद्धरुप से करने वाले (भूत्वा) बन जाओ।

ईश्वर के आदेश का सारांश

३.३१

जे मे मतम् इदम् नित्यम् अनुतिष्ठन्ति मानवाः।
श्रद्धा-वन्तः अनसूयन्तः मुच्यन्ते ते अपि कर्मभिः ।।३१।।

वह लोग जो हमेशा मेरे इन आदेशों को पूरी

(ये) वह (मानवा) लोग जो (नित्यम्) हमेशा (मे) मेरे (इदम्) इन (मतम्) आदेशों को (श्रद्धा-वन्त) पूरी श्रद्धा के साथ (अनुतिष्ठन्ति) मानते हैं (अनसूयन्तः) और गलत विचारों से

नोट ३.२९: कारुन नाम का व्यक्ति पैगंबर मूसा की जाति में से था। ईश्वर ने उसे बहुत धन दिया था, किन्तु वह कहता था कि यह धन तो मुझे केवल ज्ञान के कारण दिया गया है। जो मुझे प्राप्त है। उसके अहंकार के कारण ईश्वर ने उसे और उसके घर को धरती में धंसा दिया। (पवित्र कुरआन, सूरे अल कसस, २८, आयत नं. ७६/८२ का सारांश)

श्रद्धा के साथ मानते हैं, और गलत विचारों से मुक्त हैं। उनके अनिवार्य कर्तव्य भी (पूरे हो जाते हैं) और वह (कर्म बंधन) से भी मुक्त हो जाते हैं।

मुक्त हैं। (ते) उनके (कर्मभिः) अनिवार्य कर्तव्य (अपि) भी (पूरे हो जाते हैं और वह) (मुच्यते) (कर्म बंधन) से मुक्त हो जाते हैं।

३.३२

येतु एतत् अभ्यसूयन्तः न अनुतिष्ठन्ति मे मतम् । सर्व-ज्ञान विमूढान् तान् विद्धि नष्टान् अचेतसः ।।३२।।

परन्तु जो मनुष्य मेरे आदेशों पर नहीं चलते हैं। और उनकी आलोचना करते है। उन लोगों को सम्पूर्ण ज्ञानों में अज्ञानी, पूरी तरह बर्बाद (और) अविवेकी (ईश्वर को न पहचानने वाला मनुष्य) जानो।

(तु) परन्तु (ये) जो मनुष्य (मे) मेरे (मतम्) आदेशों पर (न) नहीं (अनुतिष्ठन्ति) चलते हैं। (अभ्यसूयन्तः) और उनकी आलोचना करते हैं। (तान) उन लोगों को (सर्व) सम्पूर्ण (ज्ञान) ज्ञानों में (विमूढान) अज्ञानी (नष्टान) पूरी तरह बर्बाद (अचेतस) (और) अविवेकी (ईश्वर को न पहचानने वाला मनुष्य) (विद्धि) जानो।

कर्तव्य को पूरा करने के मार्ग की बाधाएं

३.३३

सदृशम् चेष्टते स्वस्याः प्रकृतेः ज्ञान-वान अपि। प्रकृतिम् यान्ति भूतानि निग्रहः किम् करिष्यति।।३३।।

(एक) ज्ञानी पुरुष उसके अपने स्वभाव के अनुसार व्यवहार करता है। इसी प्रकार सर्व प्राणी अपने-अपने स्वभाव के अनुसार व्यवहार करते हैं। तो किस प्रकार प्राकृतिक स्वभाव के अनुसार किए गए कर्मों को रोका जा सकता है।

(ज्ञानवान) (एक) ज्ञानी पुरुष (स्वस्याः) उसके अपने (प्रकृतेः) स्वभाव के (सदृशम्) अनुसार (चेष्टते) व्यवहार करता है। (असि) इसी प्रकार (भूतानि) सर्व प्राणी (प्रकृतिम्) अपने-अपने स्वभाव के (यान्ति) अनुसार व्यवहार करते हैं। (किम्) तो किस प्रकार (करिष्यति) प्राकृतिक स्वभाव के अनुसार किए गए कर्मों को (निग्रहः) रोका जा सकता है।

३.३४

इंद्रियस्य इन्द्रियस्य-अर्थे राग द्वेषौ व्यवस्थितौ। तयोः न वशम् आगच्छेत् तौ हि अस्य परिपन्थिनौ ।।३४।।

आनंद लेने की इच्छा का, आनंद का अनुभव देने वाले वस्तुओं से मित्रता (या) नफरत (घृणा का) (सम्बंध) होता है। इन दोनों (भावनाओं के) वश में नहीं आना चाहीए। निसंदेह यही (भावनाएं) रास्ते की रुकावट है।

(**अर्थात-**प्रेम या घृणा की भावना से प्रेरीत होकर मनुष्य ईश्वर के आदेश के उलट कर्म करता है।)

(इन्द्रियस्य) आनंद लेने की इच्छा का (इन्द्रियस्य अर्थे) आनंद का अनुभव देने वाले वस्तुओं से (राग) मित्रता (या) (द्वेषौ) (घृणा) नफरत (का) (व्यवस्थितौ) (सम्बंध) स्थित होता है। (तयौ) इन दोनों (भावनाओं के) (वशम) वश में (न) नहीं (आगच्छेत्) आना चाहीए (हि) निसंदेह (तौ) यही (भावनाएं) (परिपन्थिनौ) रास्ते की रुकावट (अस्य) है।

अपने स्वभाव को समझिए और धार्मिक कर्तव्य को पूरा करें-

३.३५

श्रेयान् स्वधर्मः विगुणः पर-धर्मात् सु-अनुष्ठितात्
स्व-धर्मे निधनम् श्रेयः पर-धर्मः भयआवहः
।।३५।।

(हे अर्जुन) अपने कर्तव्य को कम कुशलता से करना यह दुसरों के कर्तव्य को कुशलता से करने से अधीक श्रेष्ठ है। अपने कर्तव्य का पालन करते हुए मृत्यु पाना यही सबसे श्रेष्ठ है। (दुसरों के कर्तव्य करने में) (असफलता का) ड़र है।

(अर्थात जब ईश्वर ने अर्जुन को क्षत्रिय बनाया है तो अपना कर्तव्य करना (धर्म युद्ध करना ही) अर्जुन के लिए श्रेष्ठ है। अर्जुन का एक पंडीत की तरह व्यवहार करने से शायद अधर्म का नाश ना हो।

(स्वधर्मः) (हे अर्जुन) अपने कर्तव्य को (विगुणः) कम कुशलता से करना (पर-धर्मः) यह दुसरों के कर्तव्य को (सु-अनुष्ठितात्) कुशलता से करने से (श्रेयान्) अधीक श्रेष्ठ है। (स्व-धर्मेः) अपने कर्तव्य का पालन करते हुए (निधनम्) मृत्यु पाना (श्रेयः) यही सबसे श्रेष्ठ है। (दुसरों के कर्तव्य करने में) (भयआवहः) (असफलता का) ड़र है।

३.३६

अर्जुन उवाच,
अथ केन प्रयुक्तः अयम् पापम् चरति पूरुषः।
अनिच्छन् अपि वार्ष्णेय बलात् इव
नियोजितः।।३६।।

अर्जुन ने प्रश्न किया, हे कृष्ण! किसके द्वारा प्रेरित होकर मनुष्य यह पाप के कर्म करता है। जैसे बलपूर्वक ना चाहते हुए भी (किसी ने मनुष्य को) (पाप के कर्म पर) लगा दिया हो।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने प्रश्न किया (वार्ष्णय) हे कृष्ण (अथ केन्) किसके द्वारा (प्रयुक्त) प्रेरीत होकर (पुरुषः) मनुष्य (अथम्) यह (पापम्) पाप के कर्म करता है। (इव) जैसे (बलात्) बलपूर्वक (अनिच्छन्) ना चाहते हुए (अपि) भी (किसी ने मनुष्य को) (नियोजितः) (पाप के कर्म पर) लगा दिया हो।

अपने कर्तव्य को पूरा न करने के कारण

३.३७

श्री भगवान उवाच,
कामः एषः क्रोधः एषः रजो-गुण समुद्भवः
महा-अशनः महा-पाप्मा विद्धि एनम् इहवैरिणम्
।।३७।।

ईश्वर ने कहा अपनी इच्छा को पूरी करने की चाह (काम भावना ही सब पापों का कारण है) (जब इच्छा पुरी नहीं होती है तो) क्रोधः (उत्पन्न होता

(श्री भगवान उवाचः) ईश्वर ने कहा, (कामः) अपनी इच्छा को पूरी करने की चाह (काम भावना ही सब पापों का कारण है) (क्रोध) (जब इच्छा पूरी नहीं होती हैं तो) क्रोधः (उत्पन्न होता है) (एषः) और यह (काम भावना) (रजो गुण) रजो गुण (अर्थात अपनी इच्छा को पूरी करने के

है) और यह (काम भावना) रजो गुण (अर्थात अपनी इच्छा को पूरी करने के लिए निरंतर प्रयास के गुण से) उत्पन्न होता है। इसी काम भावना को इस संसार में महान शत्रु, घोर पाप और बड़े विनाश का कारण जानो।

(काम भावना को समझने के लिए नोट नं. N-८ का अध्ययन करें।)

लिए निरंतर प्रयास के गुण से) (समुदभवः) उत्पन्न होता है। (एनम्) इसी काम भावना को (इह) इस संसार में (वैरिणाम्) महान शत्रु (महापाप्मा) घोर पाप (महा अशनः) बड़े विनाश का कारण (विद्धि) जानो।

३.३८

धूमेन आव्रियते वहिनः यथा आदर्शः मलेन च।
यथा उल्बेन आवृतः गर्भः तथा तेन इदम् आवतम् ।।३८।।

जिस प्रकार आग धुएँ से, और दर्पण धूल से ढक जाती है। जिस प्रकार शिशु गर्भ में ढका रहता है। इसी प्रकार इस (काम भावना के कारण) यह (मनुष्य का विवेक) ढक जाता है। (अर्थात काम भावना के कारण उसकी बुद्धि और ज्ञान ढक जाता है और वह पाप और पुण्य को समझ नहीं पाता है।)

(यथा) जिस प्रकार (वहिन्) आग (धूमेन) धुएँ से (च) और (आदर्शः) दर्पण (मलेन) धूल से (आव्रियते) ढका जाती है। (यथा) जिस प्रकार (उल्बेन) शिशु (गर्भः) गर्भ (आवृतः) (में) ढका रहता है। (तथा) इसी प्रकार (तेन) इस (काम भावना के कारण) (इदम्) यह (मनुष्य का विवेक) (आवृत्तम) ढ़क जाता है।

३.३९

आवृतम् ज्ञानम् एतेन ज्ञानिनः नित्य-वैरिणा।
काम-रुपेण कौन्तेय दुष्परेण अनलेन च।।३९।।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! (एतेन) इस (काम-भावना या इच्छा भक्ती से) (ज्ञानिनः)

नोट ३.३७: स्वामी मुकुनन्दा जी ने श्लोक नं. ३.३७ की व्याख्या में लिखा है कि कामः शब्द का उपयोग वेदों में केवल यौन इच्छा के लिए नही हुआ है, बल्कि इसे हर शारीरिक आनंद लेने की इच्छा, धन, सम्मान और सत्ता की चाह को भी कहा है। अगर सरल शब्दों में कहें तो यह केवल अपनी इच्छाओं के अनुसार जीवन व्यतीत करने की चाह है। और मन की यह भावना धार्मिक अनिवार्य कर्तव्य को पूरा करने के मार्ग में सबसे बड़ी रुकावट है।

इस भावना की ईश्वर ने पवित्र कुरआन में निम्नलिखित शब्दों में निंदा की है।

‘‘(हे पैगंबर) क्या तुमने उस व्यक्ति को देखा जिसने अपना ईश्वर अपनी इच्छाओं को बना रखा है? तो क्या तुम उस (को सीधे मार्ग पर लाने) के ज़िम्मेदार हो सकते हो? क्या तुम समझते हो कि इनमें अधिकतर सुनते या समझते हैं? ये तो बस चौपायों की तरह हैं, बल्कि ये और बढ़कर मार्ग से भटके हुए हैं।’’ (सूरे अल फुरकान (२५) आयत-४३-४४)

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! इस (काम-भावना या इच्छा भक्ती से) ज्ञानि का ज्ञान भी ढक जाता है। काम भावना या इच्छा भक्ति के रुप में यह सदा की शत्रु है। और कभी तृप्त न होने वाली अग्नि के समान हमेशा जलती रहती है।

ज्ञानि का (ज्ञानम्) ज्ञान भी (आवृत्तम्) ढक जाता है। (कामरुपेण) काम भावना या इच्छा भक्ति के रुप में यह (नित्य-वैरिणा) सदा की शत्रु है। (च) और (दुष्पूरेण) कभी तृप्त न होने वाली (अनलेन) अग्नि के समान हमेशा जलती रहती है।

काम भावना को कैसे वश में करें?

३.४०

इन्द्रियाणि मनः बुद्धीः अस्य अधिष्ठानम् उच्यते।
एतैः विमोहयति एषः ज्ञानम् आवृत्य देहिनम् ।।४०।।

शरीर के आनंद लेने वाले अंग, मन, (और) बुद्धि इस (काम भावना का) रहने का स्थान कहा गया है। यह (काम-भावना) मनुष्य (के) ज्ञान (को) ढक कर (मनुष्य को) (सत्य मार्ग से) भटका देती है।

(इन्द्रियाणि) शरीर के आनंद लेने वाले अंग (मनः) मन (और) (बुद्धिः) बुद्धि (अस्य) इस (काम भावना का) (अधिष्ठानम्) रहने का स्थान (उच्यते) कहा गया है। (एषः) यह (काम-भावना) (देहिनम्) मनुष्य (के) (ज्ञानम्) ज्ञान (को) (आवृत्य) ढक कर (एतैः) उसे (मनुष्य को) (विमोहयति) (सत्य मार्ग से) भटका देती है।

३.४१

तस्मात् त्वम् इन्द्रियाणि आदौ नियम्य भरत-ऋषभ।
पाप्मानम् प्रजहि हि एनम् ज्ञान विज्ञान नाशनम् ।।४२।।

इसलिए, हे भारतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! तुम सबसे पहले अपनी इच्छाओं को (या कामः भावना को) वश में करो। इस ज्ञान विज्ञान (का) नाश करने वाली पापी (भावना को) निःसंदेह (तुम) बलपूर्वक मार ड़ालो।

(तस्मात्) इसलिए (भरत-ऋषभ) हे भारतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन (त्वम्) तुम (आदौ) सबसे पहले (इन्द्रियाणि) अपनी इच्छाओं को (या कामः भावना को) (नियम्य) वश में करो (एनम्) इस (ज्ञान) ज्ञान (विज्ञान) विज्ञान (नाशनम्) (का) नाश करने वाली (पाप्मानम्) पापी (भावना को) (हि) निःसंदेह (तुम) (प्रजहि) बलपूर्वक मार ड़ालो।

३.४२

इन्द्रियाणि पराणि आहुः इन्द्रियेभ्यः परम् मनः।
मनसः तु परा बुद्धिः यः बुद्धेः परतः तु सः ।।४२।।

इन्द्रियों को (इच्छाओं को) श्रेष्ठ कहा जाता है। मन, इन्द्रियों से (इच्छाओं से) श्रेष्ठ है। किन्तु बुद्धि, मन से (भी) श्रेष्ठ (है)। परंतु वह (ईश्वर) इस बुद्धि से भी महान है।

(इन्द्रियाणि) इन्द्रियों को (इच्छाओं को) (पराणि) श्रेष्ठ (आहुः) कहा जाता है। (मनः) मन: (इन्द्रियेभ्यः) इन्द्रियों से (इच्छाओं से) (परम्) श्रेष्ठ है। (तु) किन्तु (बुद्धिः) बुद्धि (मनसः) मन से (भी) (परा) श्रेष्ठ (है) (तु) परंतु (सः) वह (ईश्वर) (यःबुद्धेः) इस बुद्धि (परतः) से भी महान है।

३.४३

एवम् बुद्धेः परम् बुद्ध्वा सस्तभ्य आत्मानम् आत्मना।
जहि शत्रुम् महाबाहो काम-रुपम् दुरासदम् ।।४३।।

इसलिए हे महाबाहो (अर्जुन)! इस सत्य को जानने के बाद कि ईश्वर बुद्धि से महान है। अपने मन और बुद्धि में ईश्वर की श्रद्धा को दृढ़ता से स्थित करो। और इस काम भावना के रुप में जो शक्तिशाली शत्रु है, इस को मार डालो।

(एराम्) इसलिए (महाबाहो) हे महाबाहो (अर्जुन) (बुद्ध्वा) इस सत्य को जानने के बाद की (बुद्धेः) (ईश्वर) बुद्धि से (परम्) महान है। (आत्मानम्) अपने मन और बुद्धि में (आत्माना) ईश्वर की श्रद्धा को (संस्तभ्य) दृढ़ता से स्थित करो (कामरुपम) और इस काम भावना (इच्छा भक्ति) के रुप में जो (दुरासदम्) शक्तिशाली (शत्रुम्) शत्रु है (जहि) इस को मार ड़ालो।

अध्याय नं.४

ज्ञान कर्म सन्यास योग

श्री भगवानुवाच
इमं विवस्वते योगं प्रोक्तवानहमव्ययम्।
विवस्वान्मनवे प्राह मनुरिक्ष्वाकवेऽब्रवीत्॥1॥

एवं परम्पराप्राप्तमिमं राजर्षयो विदुः।
स कालेनेह महता योगो नष्टः परन्तप॥2॥

स एवायं मया तेऽद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तोऽसि मे सखा चेति रहस्यं ह्येतदुत्तमम्॥3॥

अर्जुन उवाच
अपरं भवतो जन्म परं जन्म विवस्वतः।
कथमेतद्विजानीयां त्वमादौ प्रोक्तवानिति॥4॥

श्रीभगवानुवाच
बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप॥5॥

अजोऽपि सन्नव्ययात्मा भूतानामीश्वरोऽपि सन्।
प्रकृतिं स्वामधिष्ठाय सम्भवाम्यात्ममायया॥6॥

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्॥7॥

परित्राणाय साधूनां विनाशाय च दुष्कृताम्।
धर्मसंस्थापनार्थाय सम्भवामि युगे युगे॥8॥

जन्म कर्म च मे दिव्यमेवं यो वेत्ति तत्वतः।
त्यक्तवा देहं पुनर्जन्म नैति मामेति सोऽर्जुन॥9॥

वीतरागभय क्रोधा मन्मया मामुपाश्रिताः।
बहवो ज्ञानतपसा पूता मद्भावमागताः॥10॥

ये यथा माँ प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः॥11॥

काङ्क्षन्तः कर्मणां सिद्धिं यजन्त इह देवताः।
क्षिप्रं हि मानुषे लोके सिद्धिर्भवति कर्मजा॥12॥

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्धयकर्तारमव्ययम्॥13॥

न मां कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति मां योऽभिजानाति कर्मभिर्न स बध्यते॥14॥

एवं ज्ञात्वा कृतं कर्म पूर्वैरपि मुमुक्षुभिः।
कुरु कर्मैव तस्मात्वं पूर्वैः पूर्वतरं कृतम्॥15॥

किं कर्म किमकर्मेति कवयोऽप्यत्र मोहिताः।
तत्ते कर्म प्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥16॥

कर्मणो ह्यपि बोद्धव्यं बोद्धव्यं च विकर्मणः।
अकर्मणश्च बोद्धव्यं गहना कर्मणो गतिः॥17॥

कर्मण्य कर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्॥18॥

यस्य सर्वे समारम्भाः कामसंकल्पवर्जिताः।
ज्ञानाग्निदग्धकर्माणं तमाहुः पंडितं बुधाः॥19॥

त्यक्त्वा कर्मफलासङ्गं नित्यतृप्तो निराश्रयः ।
कर्मण्यभिप्रवृत्तोऽपि नैव किंचित्करोति सः ॥20॥

निराशीर्यतचित्तात्मा त्यक्तसर्वपरिग्रहः ।
शारीरं केवलं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम् ॥21॥

यदृच्छालाभसंतुष्टो द्वंद्वातीतो विमत्सरः ।
समः सिद्धावसिद्धौ च कृत्वापि न निबध्यते ॥22॥

गतसङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञानावस्थितचेतसः ।
यज्ञायाचरतः कर्म समग्रं प्रविलीयते ॥23॥

ब्रह्मार्पणं ब्रह्म हविर्ब्रह्माग्नौ ब्रह्मणा हुतम् ।
ब्रह्मैव तेन गन्तव्यं ब्रह्मकर्मसमाधिना ॥24॥

दैवमेवापरे यज्ञं योगिनः पर्युपासते ।
ब्रह्माग्नावपरे यज्ञं यज्ञेनैवोपजुह्वति ॥25॥

श्रोत्रादीनीन्द्रियाण्यन्ये संयमाग्निषु जुह्वति।
शब्दादीन्विषयानन्य इन्द्रियाग्निषु जुह्वति ॥26॥

सर्वाणीन्द्रियकर्माणि प्राणकर्माणि चापरे ।
आत्मसंयमयोगाग्नौ जुह्वति ज्ञानदीपिते ॥27॥

द्रव्ययज्ञास्तपोयज्ञा योगयज्ञास्तथापरे ।
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाश्च यतयः संशितव्रताः ॥28॥

अपाने जुह्वति प्राणं प्राणेऽपानं तथापरे ।
प्राणापानगती रुद्ध्वा प्राणायामपरायणाः ॥29॥

अपरे नियताहाराः प्राणान्प्राणेषु जुह्वति ।
सर्वेऽप्येते यज्ञविदो यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥30॥

यज्ञशिष्टामृतभुजो यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
नायं लोकोऽस्त्ययज्ञस्य कुतोऽन्यः कुरुसत्तम ॥31॥

एवं बहुविधा यज्ञा वितता ब्रह्मणो मुखे ।
कर्मजान्विद्धि तान्सर्वानेवं ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे ॥32॥

श्रेयान्द्रव्यमयाद्यज्ञाज्ज्ञानयज्ञः परन्तप ।
सर्वं कर्माखिलं पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ॥33॥

तद्विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया ।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानं ज्ञानिनस्तत्वदर्शिनः ॥34॥

यज्ज्ञात्वा न पुनर्मोहमेवं यास्यसि पाण्डव ।
येन भुतान्यशेषेण द्रक्ष्यस्यात्मन्यथो मयि ॥35॥

अपि चेदसि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पापकृत्तमः ।
सर्वं ज्ञानप्लवेनैव वृजिनं सन्तरिष्यसि ॥36॥

यथैधांसि समिद्धोऽग्निर्भस्मसात्कुरुतेऽर्जुन ।
ज्ञानाग्निः सर्वकर्माणि भस्मसात्कुरुते तथा ॥37॥

न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ।
तत्स्वयं योगसंसिद्धः कालेनात्मनि विन्दति ॥38॥

श्रद्धावाँल्लभते ज्ञानं तत्परः संयतेन्द्रियः ।
ज्ञानं लब्धवा परां शान्तिमचिरेणाधिगच्छति ॥39॥

अज्ञश्चश्रद्दधानश्च संशयात्मा विनश्यति ।
नायं लोकोऽस्ति न परो न सुखं संशयात्मनः ॥40॥

योगसन्नयस्तकर्माणं ज्ञानसञ्छिन्नसंशयम् ।
आत्मवन्तं न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय ॥41॥

तस्मादज्ञानसम्भूतं हृत्स्थं ज्ञानासिनात्मनः ।
छित्वैनं संशयं योगमातिष्ठोत्तिष्ठ भारत ॥42॥

अध्याय का परिचय

इस अध्याय में वह दिव्य ज्ञान है जिसे जान कर और अपनाकर मनुष्य इस सांसारिक जीवन में भी सफल होगा और मृत्यु के बाद के जीवन में भी सफल होगा।

अध्याय का सारांश

- श्लोक नं. ४.१ में ईश्वर ने प्राचीन काल में कैसे दिव्य ज्ञान मानवजाति को दिया था इसका वर्णन है।
- यह दिव्य ज्ञान कैसे नष्ट हो गया इसका उल्लेख श्लोक नं. ४.२ में है।
- श्लोक नं. ४.३ में ईश्वर ने कहा कि वही प्राचीन काल का दिव्य ज्ञान आज वह अर्जुन को दे रहें हैं।
- श्लोक नं. ४.७-४.८ में ईश्वर मानवजाति का कैसे मार्गदर्शन करता है इसका वर्णन है।
- श्लोक नं. ४.९ से ४.११ में दिव्य ज्ञान प्राप्त करने के लाभ का वर्णन है। यह लाभ है स्वर्ग की प्राप्ती।
- श्लोक नं. ४.१२ में दिव्य ज्ञान को न मानने के कारण का वर्णन है।
- श्लोक नं. ४.१३-४.१४ में ईश्वर ने उन मूर्खों को अपना परिचय दिया जो जल्दी समृद्धी पाने के लिए किसी और की प्रार्थना करते हैं।
- श्लोक नं. ४.१५ में दिव्य ज्ञान प्राप्त करने की प्रेरणा है।
- श्लोक नं. ४.१६-४.१७ में दिव्य ज्ञान के महत्त्व का वर्णन है।
- श्लोक नं. ४.१८-४.१९ में दिव्य ज्ञान से होने वाले लाभ का वर्णन है।
- श्लोक नं. ४.२० से ईश्वर ने उपदेश देने का आरम्भ किया और पहला उपदेश है कि नि:स्वार्थ कर्म करो।
- श्लोक नं. ४.२१ में दूसरा उपदेश यह है कि मन और बुद्धि को वश में करके काम भावना को वश में किया जा सकता है। कारण यह कि काम भावना ही पाप का मुख्य कारण हैं।
- श्लोक नं. ४.२२ में तीसरा उपदेश यह है कि संतुष्ट रहो और इच्छाओं को वश में रखो, तभी अनिवार्य कर्तव्य पूरे किए जा सकते हैं।
- श्लोक नं. ४.२३ में चौथा उपदेश है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी और की उपासना न करो।
- श्लोक नं. ४.२४ में पाँचवां उपदेश है कि ईश्वर के लिए सब कुछ बलिदान कर दो और सब कुछ केवल ईश्वर से मांगो।
- श्लोक नं. ४.२५ से ४.२९ तक बहुत प्रकार की प्रार्थनाओं का वर्णन है।
- श्लोक नं. ४.३० में ईश्वर की प्रार्थनाओं के लाभ का वर्णन है।
- श्लोक नं. ४.३१ में प्रार्थना न करने के हानि का वर्णन है।

अध्याय
प्राचिन काल के दिव्य ज्ञान पाने वाले महापुरुष

४.१

श्री भगवान उवाच
इमम् विवस्वतेयोगम् प्रोक्तवान् अहम अव्ययम्।
विवस्वान् मनवेप्राह मनुः इक्ष्वाकवे अब्रवीत्
।।१।।

ईश्वर ने कहा! मैंने इस कभी न बदलने वाले और ईश्वर से जोड़ने वाले ज्ञान को विवस्वत से कहा था। विवस्वत ने मनु (से) कहा। मनु ने (इस दैविक ज्ञान को) इक्ष्वाकु से कहा।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (अहम्) मैंने (इमम्) इस (अव्ययम्) कभी न बदलने वाला और (योगम्) ईश्वर से जोड़ने वाला ज्ञान (विवस्वते) विवस्वत से (प्रोत्कवान्) कहा था। (विवस्वान्) विवस्वत ने (मनवे) मनु (से) (प्राह) कहा (मनु) मनु ने (इस दैविक ज्ञान को) (इक्ष्वाकवे) इक्ष्वाकु से (अब्रवीत) कहा।

४.२

एवम् परम्परा प्राप्तम् इमम् राजऋषयः विदुः।
सः कालेन इह महता योगः नष्टः परन्तप।।२।।

हे अर्जुन! इस तरह (गुरु से छात्र को दी जाने वाली शिक्षा की) परंपरा के द्वारा यह महान (और) दिव्य ज्ञान राज-ऋषियों ने भी प्राप्त किया। उसको जाना (और उसके अनुसार राज

(परन्तप) हे अर्जुन (एवम्) इस तरह (परम्परा) (गुरु से छात्र को दी जाने वाली शिक्षा की) परंपरा के द्वारा (महता) यह महान (और) (योग) दिव्य ज्ञान (राज ऋषिय) राज ऋषियों ने भी (प्राप्तम्) प्राप्त किया। (विदुः) उसको जाना (और उसके अनुसार राज किया) (कालेन)

नोट ४.१ :- श्लोक नं. ४.१ में ईश्वर ने चार महापुरुषों के नाम लिए हैं जिनको ईश्वर की ओर से अवतरित ज्ञान मिला था।
विवस्वत मनु को 'मुस्लिम हजरत नूह' और इसाई 'प्रोफेट नोह' कहते हैं। मनु के बाद जिनको ईश्वर की ओर से अवतरित ज्ञान मिला उनके नाम पवित्र कुरआन में इस प्रकार है।
हे मुहम्मद (स.) हमने तुम्हारी ओर उसी तरह अवतरित ज्ञान भेजा है जिस तरह नूह (मनु) और उनके बाद के पैगम्बरों की ओर अवतरित ज्ञान भेजा था। और (यही अवतरीत ज्ञान) हमने इब्राहीम और इस्माईल और इसहाक और याकूब और उनकी सन्तान (यूसुफ) और इसा और अय्यूब और यूनुस और हारुन और सुलैमान की ओर भेजी। और हमने दाऊद को जबूर (अवतरित ग्रंथ) प्रदान किया। (सूरे अन निसा, ४, आयत-१६३)
(अर्थात ईश्वर एक है, और उसने एक ही धर्म और ज्ञान के साथ सारे पैगंबरों को भेजा था।)

नोट ४.२ :- ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, सब मनुष्य (पहले) एक ही श्रद्धा वाले थे। (एक ही धर्म के मानने वाले थे)। फिर उन्होंने धर्म विभेद किया (अलग-अलग धर्म बना लिए)। और यदि तेरे ईश्वर की ओर से एक बात पहले से न निश्चय पा गई होती (अर्थात मानवजाति को प्रलय तक जीवित रखना है ईश्वर ने इस बात को न निश्चित किया होता) तो जिस चीज में वे विभेद कर रहे हैं उसका उनके बीच फैसला कर दिया जाता। (सूरे यूनुस १० आयत १९)

किया)। (किन्तु) समय के बीतने के साथ इस संसार में यह (दिव्य ज्ञान) लुप्त हो गया।

(किन्तु) समय के बीतने के साथ (इह) इस संसार में (सः) यह (दिव्य ज्ञान) (नष्टः) लुप्त हो गया।

४.३

सः एव अयम् मया ते अद्य योगः प्रोक्तः पुरातनः।
भक्तः असि मेसखा च इति रहस्यम् हि एतत् उत्तमम् ।।३।।

निःसंदेह प्राचीन काल में जो दिव्य ज्ञान मेरे (द्वारा) कहा गया था। यह वही (दिव्य ज्ञान है) (जो) आज (मैं तुमसे कह रहा हूँ)। (तुम) मेरे भक्त (और) मित्र हो, इस कारण निःसंदेह (तुम) इस महान (दिव्य ज्ञान के) रहस्य (को समझ सकोगे)।

(ए वं) निःसंदेह (पुरातनः) प्राचीन काल में (योगः) जो दिव्य ज्ञान (मया) मेरे (प्रोक्तः) (द्वारा) कहा गया था। (स) यह (अयम) वही (दिव्य ज्ञान है) (अद्य) (जो) आज (मैं तुमसे कह रहा हूँ) (च) और (मे) (तुम) मेरे (भक्तः) भक्त (सखा) (और) मित्र (असि) हो (इति) इस कारण (हि) निःसंदेह (तुम) (एतत्) इस (उत्तमम्) महान (रहस्यम्) (दिव्य ज्ञान के) रहस्य (को समझ सकोगे)।

४.४

अर्जुन उवाच, अपरम् भवतः जन्म परम् जन्म विवस्वतः।
कथम् एतत् विजानीयाम् त्वम आदौ प्रोक्तवान् इति।।४।।

अर्जुन ने प्रश्न किया (हे कृष्ण) विवस्वत (का)

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने प्रश्न किया (विवस्वतः) (हे कृष्ण) (विवस्वतः) (जन्म) (का) जन्म (परम) पहले हुआ (अपरम्) बाद में (भवतः जन्म) आपका जन्म हुआ (कथम) (तो मैं यह) कैसे (विजानीयाम्) समझू (एतत्) की (त्वम्) तुमने

नोट ४.२ :- वह समुदाय जिनको अवतरीत ग्रंथ दिए गये थे (अर्थात इसाई और यहुदी) और शिर्क (संगम) करने वाले, यह लोग ईश्वर को मानने वाले नहीं थे जब तक उनके पास स्पष्ट प्रमाण न आ जाता। अर्थात ईश्वर के पैगंबर जो पवित्र (ग्रंथ के) पन्ने (पेज) पढ़ते हैं। जिनमें (स्पष्ट) आयातें (ईश्वर के आदेश) लिखे हैं। (और जब पैगंबर और स्पष्ट प्रमाण अर्थात ईश्वर के आदेश आ गए तो इसके बाद) वह समुदाय जिनको अवतरीत ग्रंथ दिए गए हैं, वह विवाद में (फूट में) पड़ गए। (ईश्वर ने उनको) यही आदेश दिया था कि निःस्वार्थ होकर ईश्वर की प्रार्थना करो और एकाग्र होकर नमाज़ पढ़ो और जकात (दान) दें। और यही शाश्वत (सनातन) धर्म है। (पवित्र कुरआन ९८:१-५)

(नोटः आयत में 'दीने काइयमा' लिखा है। जिसका अर्थ है, वह सच्चा धर्म जो पहले से था, है और सदा रहेगा। इसलिए हमने इसका अनुवाद शाश्वत या सनातन धर्म किया है।)

नोट ४.४:- नालन्दा विशाल शब्द कोश (पेज नं.४१४) में 'जन्म' का अर्थ है।

१. गर्भ से निकलना २. उत्पत्ति ३. अस्तित्व में आना ४. अविर्भाव ५. सहारा, जीवन ६. आयु
अविर्भाव का अर्थ है उदय, अवतरण, जन्म, प्रकट होना। (hindi2dictionery.com)

जन्म पहले हुआ। बाद में आपका जन्म हुआ। (तो मैं यह) कैसे समझूं की तुमने यह (दिव्य ज्ञान) प्राचीन काल में (विवस्वत से) कहा था।

(इति) यह (दिव्य ज्ञान) (आदौ) प्राचीन काल में (विवस्वत से) (प्रोक्तवान्) कहा था।

४.५

श्री भगवान उवाच, बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव च अर्जुन।
तानि अहम् वेद सर्वाणि न त्वम् वेत्थ परन्तप।।५।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! मैं और तुम (इस धरती पर) बहुत बार संसार के सम्मुख आ चुके हैं। मैं उन सबको जानता हूँ। (किन्तु) तुम (उन सबको) नहीं जानते।

(इस श्लोक को समझने के लिए कृपया नोट नं. N-९.१ पढ़िए।)

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (अर्जुन) हे अर्जुन! (मे) मैं (च) और (तव) तुम (बहूनि) (इस धरती पर) बहुत बार (जन्मानि) संसार के सम्मुख (व्यतीतानि) आ चुके हैं। (अहम) मैं (तानि) उन (सर्वाणि) सबको (वेद) जानता हूँ (किन्तु) (त्वम्) तुम (उन सबको) (न) नहीं (वेत्थ) जानते।

ईश्वर द्वारा मानवजाति के मार्गदर्शन की पद्धति

४.६

अजः अपि सन् अव्ययात्मा भूतानाम् ईश्वरः अपि सन्।
प्रकृतिम् स्वाम् अधिष्ठाय सम्भवामि आत्म-मायया।।६।।

निःसंदेह मैं (ईश्वर) जन्म नहीं लेता हूँ। मैं (ईश्वर) अविनाशी हूँ (अर्थात मृत्यु मेरे लिए नहीं है) (और मैं) सर्व प्राणियों का (जन्मदाता) ईश्वर हूँ। (मैं) अपनी ईश्वरीय शक्ति से (संसार में दूत) उत्पन्न करता हूँ। (और अपनी ईश्वरीय शक्ति से) ऐसी मायावी प्रणाली स्थापित करता हूँ जो मनुष्य का मार्गदर्शन भी करे और परीक्षा भी ले।

(अपि) निःसंदेह (अजः) मैं (ईश्वर) जन्म नहीं लेता (सन्) हूँ (अव्ययात्मा) मैं (ईश्वर) अविनाशी हूँ (अर्थात मृत्यु मेरे लिए नहीं है) (भूतानाम ईश्वरः) (और मैं) सर्व प्राणियों का (जन्मदाता) ईश्वर (अपि सन्) भी हूँ। (स्वाम्) (मैं) अपनी (प्रकृतिम्) ईश्वरीय शक्ति से (सम्भवामि) (संसार में दूत) उत्पन्न करता हूँ। (आत्म-मायया) (और अपनी ईश्वरीय शक्ति से) ऐसी मायावी प्रणाली (अधिष्ठाय) स्थापित करता हूँ (जो मनुष्य का मार्गदर्शन भी करे और परीक्षा भी ले।)

४.७

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानि भवति भारत।
अभ्युत्थानम् अधर्मस्य तदा आत्मानम् सृजामि अहम्।।७।।

हे अर्जुन! निःसंदेह जब-जब धर्म में गिरावट

(भारत) हे अर्जुन! (हि) निःसंदेह (यदा यदा) जब-जब (धर्मस्य) धर्म में (ग्लानि) गिरावट (भवति) होने लगती है। (अधर्मस्य) और अधर्म (अभ्युत्थानम्) बढ़ने लगता है। (तदा)

होने लगती है। और अधर्म बढ़ने लगता है। तब तब मैं खुद (दिव्य ज्ञान) प्रदान करता हूँ।

(**नोट**-यह पवित्र पुस्तक 'भगवद् गीता' ईश्वर का प्रदान किया हुआ दिव्य ज्ञान है।)

तब तब (अहम) मैं (आत्मानम्) खुद (सृजामि) (दिव्य ज्ञान) प्रदान करता हूँ।

४.८

परित्राणाय साधूनाम् विनाशाय च दुष्कृताम् ।
धर्म संस्थापन-अर्थाय सम्भवामि युगेयुगे।।८।।

(सत्य मार्ग पर चलने वाले) धार्मिक लोगों की रक्षा करने के लिए। अधर्मियों का विनाश करने और धर्म की भलीभाँति स्थापना करने के लिए मैं हर युग में (दूत) उत्पन्न करता हूँ (जन्म देता हूँ)।

नोटः-ईश्वर ने श्री कृष्ण जी को महाभारत के युग में भेजा। आपने (श्री कृष्ण जी) ने अधर्मियों का विनाश करके फिर से धर्म की स्थापना की।

(साधुनाम) (सत्य मार्ग पर चलने वाले) धार्मिक लोगों की (परित्राणाय) रक्षा करने के लिए (दुष्कृताम्) अधर्मियों का (विनाशाय) विनाश करने (च) और (धर्म) धर्म की (संस्थापन-अर्थाय) भलीभाँति स्थापना करने के लिए मैं (युगे युगे) हर युग में (सम्भवामि) (दूत) उत्पन्न करता हूँ (जन्म देता हूँ।)

दिव्य ज्ञान का लाभ

४.९

जन्म कर्म च मे दिव्यम् एवम् यः वेत्ति तत्त्वतः।
त्यक्त्वा देहम् पुनः जन्म न एति माम् एति सः अर्जुन ।।९।।

(अर्जुन) हे अर्जुन (मे) मेरे (जन्म कर्म) जन्म कर्म (दिव्यम्) दिव्य हैं (भौतिक नहीं हैं।) (एवम्) इस प्रकार (अर्थात मेरे जन्म कर्म सब

नोट ४.७:- सृजन शब्द का अर्थ नालन्द विशाल शब्द कोश (पेज नं. १४१६) में निम्नलिखित है।
१. कोई वस्तु बनाकर तैयार करना। २. सृष्टी का उत्पन्न होना। ३. कोई वस्तु चलाना या छोड़ना।
इस कारण श्लोक में सृजामि का अर्थ हमने दिव्य ज्ञान का देना या प्रदान करना लिखा है। सृजामि का अर्थ किसी भी शब्द कोश में अवतार लेना नहीं है।

नोट ४.८:- स्वामी राम सुखदास महाराज ने श्लोक नं. १४.३ में सम्भव का अर्थ उत्पत्ति और श्लोक नं. १४.४ में सम्भवन्ति का अर्थ पैदा होते हैं ऐसा लिखा है। स्वामी मुकन्दानंद ने भी यही अर्थ अपने अनुवाद में लिया है। तथा स्वामी राम सुखराम जी ने श्लोक नं. ९.७ और ९.८ में विसृजामि का अर्थ रचना करना लिखा है।

नोट ४.८:- पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, "और हमने हर समुदाय में कोई न कोई प्रेषित (पैगम्बर) भेजा ताकि (मानवजाति) ईश्वर की प्रार्थना करें और मूर्तिपूजा से बचें।" (सूरे-अन-नहल (१६) आयत ३६)

हे अर्जुन! मेरे जन्म कर्म दिव्य हैं (भौतिक नहीं है।) इस प्रकार (अर्थात मेरे जन्म कर्म सब दिव्य हैं और मैं मनुष्य की तरह धरती पर जन्म नहीं लेता) जो मनुष्य इस सत्य को जान लेता है (तो उसे) देह को त्यागने के बाद (मृत्यु के बाद) (नर्क में) बार-बार जन्म नहीं मिलता है। उसे मैं मिलता हूँ। (अर्थ मेरी कृपादृष्टि और स्वर्ग मिलता है।)

(**नोटः** बार बार जन्म लेने का अर्थ समझने के लिए नोट नं. N-19 पढ़िये।)

दिव्य है और मैं मनुष्य की तरह धरती पर जन्म नहीं लेता) (यः) जो मनुष्य (तत्त्वतः) इस सत्य को (वेत्ति) जान लेता है (तो) (देहम्) (उसे) देह को (त्यक्त्वा) त्यागने के बाद (मृत्यु के बाद) (पुनः) (नर्क में) बार-बार (जन्म) जन्म (न एति) नहीं मिलता है (सः) उसे (माम् एति) मैं मिलता हुँ (अर्थ मेरी कृपादृष्टि और स्वर्ग मिलता है।)

४.१०

वीत राग भय क्रोधाः मत्-माया माम् उपाश्रिताः।
बहवः ज्ञान तपसा पूताः मत्-भावम् आगताः ।।१०।।

बहुत से लोग ज्ञान के प्रकाश में तप करके पवित्र हुए। (और) लालच, ड़र और क्रोध से मुक्ति पाई। (उन्होंने) मन से मेरे आज्ञा का पालन किया। (और) मेरी शरण ली। (इसलिए उन्हें) मेरा आशीर्वाद मिला।

(बहवः) बहुत से लोग (ज्ञान तपसा) ज्ञान के प्रकाश में तप करके (पूताः) पवित्र हुए (और) (राग,भय,क्रोधाः) लालच, ड़र और क्रोध से (वीत) मुक्ति पाई (मत माया) (उन्होंने) मन से मेरे आज्ञा का पालन किया। (माम्) (और) मेरी (उपश्रिताः) शरण ली (मद्भावम्) (इसलिए उन्हें) मेरा आर्शीवाद (आगताः) मिला।

४.११

ये यथा माम् प्रपद्यन्ते तान् तथा एव भजामि अहम्।
मम वर्त्म अनुवर्तन्ते मनुष्याः पार्थ सर्वशः।।११।।

हे अर्जुन! जो जिस प्रकार मेरी शरण लेता है। मैं उन्हें उसी प्रकार आश्रय देता हूँ। मनुष्य (को) सब प्रकार से (केवल) मेरे मार्ग का अनुसरण करना चाहीए।

(अर्जुन) हे अर्जुन! (ये) जो (यथा) जिस प्रकार (माम) मेरी (प्रपधन्ते) शरण लेता है। (अहम्) मैं (तान्) उन्हें (तथा एव) उसी प्रकार (भजामि) आश्रय देता हूँ (इसी कारण) (मनुष्या) मनुष्य (को) (सर्वश) सब प्रकार से (केवल) (मम) मेरे (ही) (वर्त्म) मार्ग का (अनुवर्तन्ते) अनुसरण करना चाहीए।

नोट ४.११:- पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा ईश्वर ने कहा है कि, ''मैं मनुष्य के कल्पना के अनुसार उससे व्यवहार करता हूँ। वह मुझसे जैसी अपेक्षा रखता है, वैसे ही मैं उसे फल देता हूँ।''

(बुखारी, मुस्लिम, हदीसे नबवी की रोशनी हदीस नं. ५६३)

दिव्य ज्ञान को न मानने के कारण

४.१२

काड्.क्षन्तः कर्मणाम् सिद्धिम् यजन्ते इह देवताः।
क्षिप्रम् हि मानुषे लोके सिद्धिः भवति कर्म-जा॥१२॥

इसी संसार में कर्मों से उत्पन्न (होने वाले) अच्छे फल (मिल जाए, अर्थात धन, संपत्ती, उन्नती मिले)। इस (लिए) इस लोक में मनुष्य कर्मों के अच्छे फल जल्दी से मिलने की चाह में देवताओं की उपासना करने लगते हैं।

(लौके) इसी संसार में (कर्म-जा) कर्मों से उत्पन्न (होने वाले) (सिद्धि) अच्छे फल (मिल जाए, अर्थात धन, संपत्ती, उन्नती मिले) (हि) इस (लिए) (इह) इस लोक में (मानुषे) मनुष्य (सिद्धिम) कर्मों के अच्छे फल (क्षिप्रम) जल्दी से मिलने की (काडषन्त) चाह में (देवता) देवताओं की (यजन्ते) उपासना करने लगते हैं।

दिव्य ज्ञान का महत्त्व

४.१३

चातुःवर्ण्यम् मया सृष्टम् गुण कर्म विभागशः।
तस्य कर्तारम् अपि माम् विद्धि अकर्तारम् अव्ययम्।।१३।।

गुणों (और) काम करने की क्षमता के अनुसार समाज में चार वर्णों की रचना, मैंने की है। मैं ही (इस सृष्टी रचना का) कर्ता हूँ। फिर भी मुझे अविनाशी ईश्वर को इन का कर्ता मत मानो।

नोटः (इसका कारण अगले श्लोकों में बताया गया है।)

(गुण) गुणों (और) (कर्म) काम करने की क्षमता के अनुसार समाज में (चातुःर्वर्ण्यम्) चार वर्णों की (सृष्टम्) रचना (मया) मैंने की है। (तस्य कर्तारम्) मैं ही (इस सृष्टी रचना का) कर्ता हूँ। (अपि) फिर भी (माम्) मुझे (अव्ययम्) अविनाशी ईश्वर को (अकर्तारम) इनका कर्ता मत (विद्धि) मानो।

४.१४

न माम् कर्माणि लिम्पन्ति न मे कर्मफले स्पृहा।
इति माम् यः अभिजानाति कर्मभिः न सः बध्यते।।१४।।

ना मुझे सृष्टि की रचना और मानव कल्याण के कर्म आकर्षित करते हैं। (और) न मुझे अपने कर्म फल की चाह है। (अर्थात मैं सब कुछ

(न) ना (माम) मुझे (कर्माणि) सृष्टि की रचना और मानव कल्याण के कर्म (लिम्पन्ति) आकर्षित करते हैं (न) (और) न (मे) मुझे (कर्मफले) अपने कर्म फल की (स्पृहा) चाह है (अर्थात मैं सब कुछ निस्वार्थ करता हूँ) (इति) इस प्रकार (यः) वह जो (अभिजानाति) मुझे

नोट ४.१२:- ईश्वर ने पवित्र कुरआन में शिर्क (संगम) करने के कारण के बारे में इस तरह कहा है। ''इन्होंने ईश्वर के सिवा और इलाह (पूज्य) बना रखा है ताकि वे इनकी शक्ति (का कारण) हों।'' (सूरे मरयम-१९, आयत-८१)

निःस्वार्थ करता हूँ)। इस प्रकार वह जो मुझे जानता है। वह (भी) कर्मों के (फल मिलने की लालसा में) नहीं बँधता।

(अर्थात-वह भी ईश्वर की तरह निःस्वार्थ कर्म करने लगते है)

जानता है। (सः) वह (भी) (कर्मभिः) कर्मों के (फल मिलने की लालसा में) (न) नहीं (बध्यते) बँधता।

४.१५

एराम् ज्ञात्वा कृतम् कर्म पूर्वैः अपि मुमुक्षुभिः।
कुरु कर्म एव तस्मात् त्वम् पूर्वैः पूर्व-तरम् कृतम् ।।१५।।

पूर्वकाल के मोक्ष चाहने वालों ने भी इस प्रकार (निःस्वार्थ कर्म के प्रणाली को) जानकर कर्म किये हैं। इसलिए तुम (भी) पूर्वजों के द्वारा सदा से किए जाने वाले कर्मों को ही (उन्हीं की तरह निःस्वार्थ) करो।

(पूर्वे) पूर्वकाल के (मुमुक्षुभिः) मोक्ष चाहने वालों ने (अपि) भी (एवम्) इस प्रकार (ज्ञात्वा) (निःस्वार्थ कर्म के प्रणाली को) जानकर (कर्म) कर्म (कृतम्) किये हैं। (तस्मात्) इसलिए (त्वम) तुम (भी) (पूर्वे) पूर्वजों के द्वारा (पूर्वतरम्) सदा से (कृतम्) किए जाने वाले (कर्म) कर्मों को (एवं) ही (उन्हीं की तरह निःस्वार्थ) (कुरु) करो।

कर्म के विषय में महत्त्वपूर्ण ज्ञान

४.१६

किम् कर्म किम् अकर्म इति कवयः अपि अत्र मोहिताः।
तत् ते कर्म प्रवक्ष्यामि यत् ज्ञात्वा मोक्ष्यसे अशुभात् ।।१६।।

कर्म (धार्मिक कर्तव्य) क्या है? (और) अकर्म (वह कर्म जो नहीं करने चाहिए वह) क्या है? इस प्रकार इस विषय में विद्वान भी भ्रमित (उलझन में पड़ जाते हैं,) अब वह कर्म-तत्त्व (मैं) तुम्हें समझाऊंगा। जिसको जानकर (तुम) अशुभ (कर्म करने से) मुक्त हो जाओगे।

(कर्म) कर्म (धार्मिक कर्तव्य) (किम्) क्या है (और) (अकर्म) अकर्म (वह कर्म जो नहीं करने चाहिए वह) (किम्) क्या है। (इति) इस प्रकार (अंग) इस विषय में (कवयः) विद्वान (अपि) भी (मोहिताः) भ्रमित (उलझन में पड़ जाते हैं, अब) (तते) वह (कर्म) कर्म-तत्त्व (मैं) (ते) तुम्हें (प्रवक्ष्यामि) समझाऊंगा (यत) जिसको (ज्ञात्वा) जानकर (तुम) (अशुभात्) अशुभ (कर्म करने से) (मोक्ष्यसे) मुक्त हो जाओगे।

४.१७

कर्मणः हि अपि बोद्धव्यम् बोद्धव्यम् च विकर्मणः।
अकर्मणः च बोद्धव्यम् गहना कर्मणः गतिः ।।१७।।

सत्कर्म (धार्मिक कर्तव्य) भी जानना चाहिए।

(कर्मणः) सत्कर्म (धार्मिक कर्तव्य) (अपि) भी (बौद्धव्यम्) जानना चाहिए (च) और (विकर्मणः) वह कर्म जो नहीं करना है (बौद्धव्यम्) (उनको भी) जानना चाहिए (च) तथा (अकर्मणः) कर्म के न करने को भी

और वह कर्म जो नहीं करना है (उनको भी) जानना चाहिए। तथा कर्म के न करने (को भी) जानना चाहिए। क्योंकि कर्मों के (तत्त्वज्ञान) की गहराई में पहुंचना कठिन है।

(बोद्धव्यम्) जानना चाहिए। (हि) क्योंकि (कर्मणः) कर्मों के (गहना) (तत्त्वज्ञान) की गहराई मे (गतिः) पहुंचना कठिन है।

४.१८

कर्मणि अकर्म यः पश्येत् अकर्मणि च कर्म यः।
सः बुद्धिमान् मनुष्येषु सः युक्तः कृत्स्न-कर्म-कृत्
।।१८।।

जो मनुष्य कर्म करने में कर्म ना करना देखता है। और जो कर्म ना करने में कर्म करना देखता है। वह मनुष्यों में बुद्धिमान है। वह सभी सत्कर्म करने में संयुक्त है (लगा हुआ है)।

(यः) जो मनुष्य (कर्मणि) कर्म करने में (अकर्म) कर्म ना करना (पश्यत्) देखता है (च) और (यः) जो (अकर्मणि) कर्म ना करने मे (कर्म) कर्म करना देखता है। (सः) वह (मनुष्येषु) मनुष्यों में (बुद्धिमान्) बुद्धिमान है। (सः) वह (कृत्सकर्म) सभी सत्कर्म (कृत) करने में (युक्त) संयुक्त है (लगा हुआ है)।

४.१९

यस्य सर्वे समारम्भाः काम संङ्कल्प वर्जिताः।
ज्ञान अग्नि दग्धः कर्माणम् तम् आहुः पण्डितम्
बुधाः ।।१९।।

वह (जिसने) आरम्भ से ही अपनी काम भावना (अपनी इच्छाओं) को न मानने का संकल्प लिया है। (वह जिसके) सभी कर्म दैविक ज्ञान की अग्नि में जल कर शुद्ध हो गए हैं। वह बुद्धिमान ज्ञानी कहा जाएगा।

(यस्य) वह (जिसने) (समारम्भाः) आरम्भ से ही (काम) अपनी काम भावना (अपनी इच्छाओं) को (वर्जिताः) न मानने का (संङ्कल्प) संकल्प लिया है। (सर्वे) (वह जिसके) सभी (कर्मणाम्) कर्म (आचरण/प्रयास) (ज्ञान अग्नि) दैविक ज्ञान की अग्नी में (दम्धः) जल कर शुद्ध हो गए हैं। (तम) वह (पण्डितम् बुधाः) बुद्धिमान ज्ञानी (आहु) कहा जाएगा।

४.२०

त्यक्तवा कर्म-फलः-आसग्डम् नित्य तृप्तः निराश्रयः।
कर्मणि अभिप्रवृत्तः अपि न एव किञ्चित् करोति सः ।।२०।।

(वह जिसने अपने) सत्कर्मों के फल की चाह को छोड़ दिया हो। वह सदैव तृप्त (संतुष्ट) रहता है।

(कर्म-फल) (वह जिसने अपने) सत्कर्मों के फल (आसग्डम्) की चाह को (त्याकत्वा) छोड़ दिया हो। (नित्यतुप्तः) वह सदैव तृप्त (संतुष्ट) रहता है। (निराश्रयः) और किसी के सहारे नहीं रहता। (कर्मणि) वह अपने कर्म करने में (अभिप्रवृत्तः) लगा रहता है। (अपि)

नोट ४.१८:- पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, हर काम को अच्छे तरीके से करने का प्रयास करो। किन्तु परिणाम यदि अपेक्षा के विपरीत हो तो ऐसा न कहो कि यदि मैं ऐसा करता तो ऐसा होता। बल्कि ऐसा कहो कि जो हुआ वह ईश्वर की इच्छा थी। (हदीस) (अर्थात जो होता है ईश्वर के इच्छा के अनुसार ही होता है।)

और किसी के सहारे नहीं रहता। वह अपने कर्म करने में लगा रहता है। फिर भी (वह) कभी नहीं (सोचता है कि) वह कोई कर्म कर रहा है।

(वह यही सोचता है कि जो कुछ हो रहा है, वह ईश्वर की आज्ञा और इच्छा से हो रहा है।)

फिर भी (वह) (न एष) कभी नहीं (सोचता है कि) (सः) वह (किञ्चित) कोई (करोति) कर्म कर रहा है।

महत्त्वपूर्ण दिव्य ज्ञान

४.२१

निराशीः यत चित्त-आत्मा त्यक्त सर्व परिग्रहः।
शारीरम् केवलम् कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बिषम् ।।२१।।

(वह जो किसी मनुष्य से कोई) अपेक्षा नहीं रखता है। (वह जिसने) मन और बुद्धि (को) वश में रखा है। (वह जिसने) आनंद लेने के और दिखावे के सभी वस्तुओं को त्याग दिया है। (और जो) केवल अपने शरीर को जीवित और स्वस्थ रखने के लिए कर्म करता है। (वह) पाप नहीं कमाता है।

(क्योंकी पाप तो आनंद लेने, दिखावा करने, मन और बुद्धि को वश में न रखकर कर्म करने से होते है।)

(निराशीः) (वह जो किसी मनुष्य से कोई) अपेक्षा नही रखता है। (चित-आत्मा) (वह जिसने) मन और बुद्धि (को) (यत्) वश में रखा है। (सर्व परिग्रहः) (वह जिसने) आनंद लेने के और दिखावे के सभी वस्तुओं को (त्यक्त) त्याग दिया है। (केवलम्) (और जो) केवल (शारीरम्) अपने शरीर को जीवित और स्वस्थ रखने के लिए। (कर्म-कुर्वन्) कर्म करता है। (किल्बिषम) (वह) पाप (न आप्नोति) नहीं कमाता है।

४.२२

यदृच्छा लाभ सन्तुष्टः द्वन्द्व अतीतः विमत्सरः।
समः सिद्धौ असिद्धौ च कृत्वा अपि न निबध्यते।।२२।।

(वह जो) अपने आप मिलने वाले लाभ से सन्तुष्ट रहता है। वह जिसने बहुत ज्यादा दुःखी और खुश होना छोड़ दिया है। वह जो ईर्ष्या (जलन) से मुक्त है। (वह जो) सफलता और विफलता में एक समान रहता है। और अपने कर्तव्यों का भी पालन करता है वह कर्मों में नहीं बंधता।.

(अर्थात उसके सभी अनिवार्य कर्म और कर्तव्य पूरे हो जाते हैं।)

(यदृच्छा) (वह जो) अपने आप मिलने वाले (लाभ) लाभ से (सन्तुष्टः) सन्तुष्ट रहता है। (द्वन्द) वह जिसने बहुत ज्यादा दुःखी और खुश होना (अतीतः) छोड़ दिया है। (विमत्सरः) वह जो ईर्ष्या (जलन) से मुक्त है। (सिध्द्धौ) (वह जो) सफलता और (असिद्धौ) विफलता में (समः) एक समान रहता है। (कृत्वा अपि) और अपने कर्तव्यों का भी पालन करता है (न निबध्यते) वह कर्मों में नहीं बंधता।

४.२३

गत-सङ्गस्य मुक्तस्य ज्ञान-अवस्थितः चेतसः।
यज्ञाय आचरतः कर्म समग्रम्
प्रविलीयते।।२३।।

(ऐसा व्यक्ति) मुक्त हो जाता है एक ईश्वर के साथ किसी और की उपासना करने के रास्ते से। ज्ञान (के प्रकाश में वह) अपने मन और बुद्धि को एक ईश्वर की श्रद्धा में स्थित कर देता है। वह अपने कर्म (केवल) ईश्वर को प्रसन्न करने वाले करता है। (इस प्रकार वह) पूर्णता (सारे पाप करने के अवसर और कारणों से) मुक्त हो जाता है।

(मुत्कस्य) (ऐसा व्यक्ति) मुक्त हो जाता है (गत सङ्गस्य) एक ईश्वर के साथ किसी और की उपासना करने के रास्ते से (ज्ञान्) ज्ञान (के प्रकाश में वह) (चेतसः) अपने मन और बुद्धि को (अवस्थित) एक ईश्वर की श्रद्धा में स्थित कर देता है। (कर्म) (वह अपने) कर्म (केवल) (यज्ञाय) ईश्वर को प्रसन्न करने वाले (आचरतः) करता है। (समग्रम्) (इस प्रकार वह) पूर्णता (प्रविलीयते) (सारे पाप करने के अवसर और कारणों से) मुक्त हो जाता है।

४.२४

ब्रह्म अर्पणम ब्रह्म हविः ब्रह्म अग्नौ ब्रह्मणा हुतम्
ब्रह्म एव तेन गन्तव्यम् ब्रह्म कर्म
समाधिना।।२४।।

(वह जिसने अपना जीवन) ईश्वर को अर्पण कर दिया है। (वह जो सब कुछ केवल) ईश्वर से मांगता है। (वह जो ईश्वर को) 'आदि'। सबसे पहला और महान मानता है। वह जिसकी साधना केवल ईश्वर के लिए होती है। (वह जो) कर्म (केवल) ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए करता है। नि:संदेह (इन कर्मों के कारण) उस (ईश्वर की कृपा से) (वह) ईश्वर (के स्वर्ग को) प्राप्त करने के योग्य हो जाता है।

(ब्रह्म अर्पणम्) (वह जिसने अपना जीवन) ईश्वर को अर्पण कर दिया है। (ब्रह्म हविः) (वह जो सब कुछ केवल) ईश्वर से मांगता है। (ब्रह्म अग्नौ) (वह जो ईश्वर को) आदि, सबसे पहला और महान (मानता है) (समाधिना) वह जिसकी साधना केवल (ब्रह्म) ईश्वर के लिए होती है। (कर्म) (वह जो) कर्म (केवल) (ब्रह्मणा हेतुम) ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए करता है। (एव) नि:संदेह (इन कर्मों के कारण) (तेन) उस (ईश्वर की कृपा से) (ब्रह्म) (वह) ईश्वर (के स्वर्ग को) (गन्तव्यम्) प्राप्त करने के योग्य हो जाता है।

अनेक प्रकार के प्रार्थना की पद्धति

४.२५

दैवम् एव अपरे यज्ञम् योगिनः पर्युपासते।
ब्रह्म अग्नौ अपरे यज्ञेम् यज्ञेन एव उपजुह्वति
।।२५।।

नि:संदेह कुछ सज्जन पुरुष ईश्वर की भक्ति और कर्तव्यपालन के लिए (ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए) ईश्वर को आदि (सबसे पहला और

(एरां) नि:संदेह (अपरे) कुछ सज्जन पुरुष (दैवम्) ईश्वर की (योगिन) भक्ति और (यज्ञम्) कर्तव्यपालन के लिए (ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए) (ब्रह्म) ईश्वर को (अग्नौ) 'आदि' (सबसे पहला और महान) मानते हैं। (पर्युपासते) और

महान) मानते हैं। और उसकी प्रार्थना करते हैं। कुछ (दुसरे) सज्जन पुरुष ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्म के लिए अपने सत्कर्म ईश्वर को अर्पित करते हैं।

(ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्म निम्नलिखित हैं)

उसकी प्रार्थना करते हैं। (अपरे) कुछ (दुसरे) सज्जन पुरुष (यज्ञने) ईश्वर को प्रसन्न करने वाले कर्म के लिए (यज्ञम्) अपने सत्कर्म (उपजुह्वति) ईश्वर को अर्पित करते हैं।

४.२६

श्रोत्र-आदीनि इन्द्रियाणि अन्येसयम् अग्निषु जुह्वति ।
शब्द-आदीन् विषयान् अन्येइन्द्रिय अग्निषु जुह्वति।।२६।।

कुछ लोग अपने आनंद लेने वाले अंगो को नियंत्रित करने को सबसे महान कर्म मानते हैं। जैसे सुनने का कर्म, और उसकी आहुती देते हैं। (वह ऐसी बातें नही सुनते जो नही सुनना चाहिए)। दुसरे लोग ईश्वर के नाम के जाप को सबसे महान मानते है। और आनंद करने की इच्छा और आनंद करने की वस्तुओं की आहुति देते हैं। (और ईश्वर के नामों का जाप करते रहते हैं)

(अन्ये) कुछ लोग (इन्द्रियाणि) अपने आनंद लेने वाले अंगो को (संयम) नियंत्रित करना। (अग्निषु) सबसे महान कर्म मानते हैं। (श्रोत्र आद्रिन्) जैसे सुनने का कर्म (जुह्वति) और उसकी आहुती देते हैं (वह ऐसी बातें नहीं सुनते जो नहीं सुनना चाहिए) (अन्ये) दुसरे लोग (शब्द आदीन) ईश्वर के नाम के जाप को (अग्निषु) सब से महान मानते हैं। (इन्द्रिय) आनंद करने की इच्छा और (विषान्) आनंद करने की वस्तुओं की (जह्वति) आहुति देते हैं (और ईश्वर के नामों का जाप करते रहते हैं)

४.२७

सर्वाणि इन्द्रिय कर्मांणि प्राण-कर्माणि च अपरे।
आत्म-संयम योग अग्नौ जुह्वति ज्ञान-दीपिते।।२७।।

कुछ लोग ज्ञान के प्रकाश में ईश्वर की प्रार्थना (और) अपने आप पर नियंत्रण करने को सबसे महत्त्वपूर्ण मानते हैं। (और उसका अनुसरण/अभ्यास) करते हैं। कुछ लोग अपने सभी आनंद लेने वाले अंगो और इच्छाओं को और जीवित रहने के कर्म (खाने पीने को सबसे महत्त्वपूर्ण मानते हैं) और उसकी आहुति देते हैं। (अर्थात उपवास रखते हैं।)

(अपरे) कुछ लोग (ज्ञानदीपते) ज्ञान के प्रकाश में (योग) ईश्वर की प्रार्थना (और) (आत्म संयम) अपने आप पर नियंत्रण करने को (अग्नौ) सबसे महत्त्वपूर्ण मानते हैं। (और उसका अनुसरण/अभ्यास) करते हैं। कुछ लोग) (सर्व इन्द्रिय) अपने सभी आनंद लेने वाले अंगों और इच्छाओं को (प्राण कर्मणि) और जीवित रहने के कर्म (खाने पीने को सबसे महत्त्वपूर्ण मानते हैं) (जुह्वति) और उसकी आहुति देते हैं। (अर्थात उपवास रखते हैं।)

४.२८

द्रव्य-यज्ञाः तपः-यज्ञाः योग-यज्ञाः तथा अपरे।
स्वाध्याय ज्ञान-यज्ञाः च यतयः संशित-व्रताः ।।२८।।

(अपरे) कुछ लोग (ईश्वर को प्रसन्न करने) (द्रव्य-यज्ञा) धन दान करते हैं। (तपयज्ञा) कुछ

कुछ लोग (ईश्वर को प्रसन्न करने) धन दान करते हैं। कुछ लोग तप करते हैं। कुछ लोग ध्यान लगाकर ईश्वर से जुड़ते हैं। कुछ लोग वेदों का अध्ययन करते हैं। तथा ज्ञान प्राप्त करके ईश्वर को प्रसन्न करते हैं। तथा कुछ लोग पूरा प्रयास करते हैं कि उन्होंने जो ईश्वर को वचन दिया है, वह पूरा करें। (व्रत पूरा करें।)

लोग तप करते है। (योग यज्ञा) कुछ लोग ध्यान लगाकर ईश्वर से जुड़ते हैं। (स्वाध्याय) कुछ लोग वेदों का अध्ययन करते हैं। (ज्ञान यज्ञा) और ज्ञान प्राप्त करके ईश्वर को प्रसन्न करते हैं। (च) और कुछ लोग (यतयः) पुरा प्रयास करते हैं कि (संशित) उन्होंने जो ईश्वर को वचन दिया है, (व्रताः) वह पूरा करें। (व्रत पूरा करें।)

४.२९/४.३०

अपाने जुह्यति प्राणम् प्राणे अपानम् तथा अपरे।
प्राण अपान् गती रुद्धवा प्राण-आयाम परायणाः।।२९।।
अपरे नियत आहाराः प्राणेषु जुह्यति।
सर्वे अपि एते यज्ञ-विदः यज्ञ-क्षपित कल्मषाः ।।३०।।

कुछ लोग बाहर निकलने वाली श्वास को अंदर आने वाली श्वास में, और अंदर आने वाली श्वास को बाहर जाने वाली श्वास में करके ईश्वर को अर्पित करते हैं। इसी तरह कुछ लोग अंदर आने वाली श्वास और बाहर जाने वाली श्वास की गति को रोककर, अंदर आने वाली श्वास को लम्बा करके एक ईश्वर में एकाग्रता की परिस्थिती में आ जाते हैं। और कुछ लोग ईश्वरीय नियमों के अनुसार भोजन लेकर भीतर आने वाली श्वास को भीतर आने वाली श्वास में रखकर ईश्वर की प्रसन्नता के लिए ईश्वर को अर्पित करते हैं। नि:संदेह यह सब लोग ईश्वर की उन प्रार्थनाओं को जानते थे जिससे ईश्वर प्रसन्न होता है। उन्होंने वह प्रार्थनाएं की, जिसके कारण उन्हें पापों से मुक्ति मिली।

(अपरे) कुछ लोग (अपाने) बाहर निकलने वाली श्वास को (प्राणम्) अंदर आने वाली श्वास में (प्राणे) और अंदर आने वाली श्वास को (अपानम्) बाहर जाने वाली श्वास में करके (जुहति) ईश्वर को अर्पित करते हैं। (तथा) इसी तरह (अपरे) कुछ लोग (प्राण) अंदर आने वाली श्वास (अपानम्) और बाहर जाने वाली श्वास की (गति) गति को (रुद्धवा) रोककर (प्राण) अंदर आने वाली श्वास को (आयाम) लम्बा करके (परायणाः) एक ईश्वर में एकाग्रता की परिस्थिती में आ जाते है। (अपरे) और कुछ लोग (नियत) ईश्वरीय नियमों के अनुसार (आहार) भोजन लेकर (प्राणान्) भीतर आने वाली श्वास को (प्राणेषु) भीतर आने वाली श्वास में रखकर (जुह्यति) ईश्वर की प्रसन्नता के लिए ईश्वर को अर्पित करते हैं। (अपि) नि:संदेह (एते) यह (सर्वे) सब लोग (यज्ञ विदः) ईश्वर की उन प्रार्थनाओं को जानते थे जिससे ईश्वर प्रसन्न होता है। (यज्ञ क्षपित) उन्होंने वह प्रार्थनाएं की, जिसके कारण (कल्मषाः) उन्हें पापों से मुक्ति मिली।

ईश्वर की प्रार्थना न करने के नुकसान

४.३१

यज्ञ-शिष्ट अमृत-भुजः यान्ति ब्रह्म सनातनम् ।
न अयम् लोकः अस्ति अयज्ञस्य कुतः अन्यः कुरु-सत्-तम ।।३१।।

अपनी प्रार्थना के फलस्वरुप (ईश्वर की प्रार्थना करने वाले) पाते हैं ईश्वर की सदा रहने वाला स्वर्ग, और अमर जीवन का आनंद। हे कुरुश्रेष्ठ! (अर्जुन) जो ईश्वर की प्रसन्नता के लिए प्रार्थना नहीं करते हैं, (उन्हें) इस संसार में शांति नहीं मिलती है। (यदि इस संसार में शान्ति नहीं मिलती है तो) मृत्यु के बाद के जीवन में (शान्ति) कहाँ से मिलेगी?

(यज्ञ शिष्ट) अपनी प्रार्थना के फलस्वरुप (यान्ति) (ईश्वर की प्रार्थना करने वाले) पाते हैं (ब्रह्म) ईश्वर की (सनातनम्) सदा रहने वाला (स्वर्ग) (अमृत भुजः) और अमर जीवन का आनंद (कुरु-सत-तम) हे कुरुश्रेष्ठ! (अर्जुन) (अयज्ञस्य) जो ईश्वर की प्रसन्नता के लिए प्रार्थना नहीं करते हैं (अयम् लोकः) (उन्हें) इस संसार में (अस्ति) शांति (न) नहीं मिलती है। (यदि इस संसार में शान्ति नहीं मिलती है तो) (अन्य) मृत्यु के बाद के जीवन में (कुतः) (शान्ति) कहाँ से मिलेगी?

नोटः अन्य को समझने के लिए नोट नं. N-4 पढ़िए।

ज्ञान और प्रार्थना मुक्ती के रास्ते हैं।

४.३२

एवम् बहु-विधाः यज्ञाः वितताः ब्रह्मणः मुखे।
कर्म-जान् विद्धि तान् सर्वान् एवम् ज्ञात्वा विमोक्ष्यसे।।३२।।

वेदों की वाणी में इस प्रकार के बहुत तरह के ईश्वर की प्रार्थना के वर्णन हैं। (हे अर्जुन, इस सत्य को) जानो की सत्कर्म करने से वह हमारे आचरण में जीवित होते हैं। इस प्रकार सभी ईश्वर की प्रार्थना के ज्ञान को जानकर उन पर अमल (अभ्यास) करके तुम अपने पापों से मुक्ति पाओगे।

(ब्राह्मण-मुखे) वेदों की वाणी में (एवम्) इस प्रकार के (बहुविद्या) बहुत तरह के (यज्ञा-वितता) ईश्वर की प्रार्थना के वर्णन हैं। (विद्धि) (हे अर्जुन, इस सत्य को) जानो की (कर्म) सत्कर्म करने से (जान) वह हमारे आचरण में जीवित होते हैं (एवम्) इस प्रकार (सर्वान्) सभी (ज्ञात्वा) ईश्वर की प्रार्थना के ज्ञान को जानकर (तान्) उन पर अमल (अभ्यास) करके (विमोक्ष्यसे) तुम अपने पापों से मुक्ति पाओगे।

नोट ४.३२ :- ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ईश्वर को तुम्हें यातना देकर क्या करना है, यदि तुम कृतज्ञता दिखलाओ और उसमें श्रद्धा रखों? ईश्वर तो कदरदाँ (महत्व को समझने वाला) और (सब कुछ) जानने वाला है। (सूरे अन निसा-(४), आयत-(१४७))

दिव्य ज्ञान का महत्त्व

४.३३

श्रेयान् द्रव्य-मयात् यज्ञात् ज्ञान-यज्ञः परन्तप।
सर्वम् कर्मं अखिलम् पार्थ ज्ञाने परिसमाप्यते ।।३३।।

हे अर्जुन! दिव्य ज्ञान (के प्रकाश में) ईश्वर की प्रार्थना करना (यह) श्रेष्ठ है, सांसारिक वस्तुओं के दान द्वारा (ईश्वर की प्रार्थना करने से)। हे अर्जुन! सारे कर्मो के सिद्धि (perfection) का आधार दिव्य ज्ञान की पूरी जानकारी पर है।

(परन्तप) हे अर्जुन! (ज्ञान) दिव्य ज्ञान (के प्रकाश में) (यज्ञः) ईश्वर की प्रार्थना करना (यह) (श्रेयान) श्रेष्ठ है। (द्रव्य-मयात्) सांसारिक वस्तुओं के दान द्वारा (ईश्वर की प्रार्थना करने से) (पार्थ) हे अर्जुन! (सर्वम्) सारे (कर्म) कर्मो के सिद्धि (perfection) का आधार (ज्ञाने) दिव्य ज्ञान की (परिसमाप्यते) पूरी जानकारी पर है।

४.३४

तत् विद्धि प्रणिपातेन परिप्रश्नेन सेवया।
उपदेक्ष्यन्ति ते ज्ञानम् ज्ञानिनः तत्त्वदर्शिनः ।।३४।।

उस ईश्वर को जानो ज्ञानियों के चरणों के पास बैठकर। उनसे सरलतापूर्वक प्रश्न करके, उनकी सेवा करके। वह तुम्हें दिव्य ज्ञान का उपदेश देंगे। यह वह ज्ञानी हैं जो तत्वदर्शी हैं (ईश्वर को पहचानते हैं)।

(तत्) उस ईश्वर को (विद्धि) जानो (प्रणिपातेन) ज्ञानियों के चरणों के पास बैठकर (परिप्रश्नेन) उनसे सरलतापूर्वक प्रश्न करके (सेवया) उनकी सेवा करके (ते) वह तुम्हें (ज्ञानम्) दिव्य ज्ञान का (उपदेक्ष्यन्ति) उपदेश देंगे (ज्ञानिन) यह वह ज्ञानी हैं जो (तत्त्वदर्शन) तत्वदर्शी हैं (ईश्वर को पहचानते हैं)

४.३५

यत् ज्ञात्वा न पुनः मोहम् एवम् यास्यसि पाण्डव।
येन भूतानि अशेषेण द्रक्ष्यसि **आत्मनि** अथो मयि।।३५।।

हे अर्जुन! इस (दिव्य ज्ञान) को जानकर (तुम) फिर से भ्रम (गुमराही) में नहीं पड़ोगे। इस (दिव्य ज्ञान द्वारा तुम) सम्पूर्ण प्राणियों को मुझसे देखोगे। दुसरे शब्दों में (उनका निर्माता) मैं (ही हूँ ऐसा देखोगे)।

(पाण्डव) हे अर्जुन! (यत) इस (दिव्य ज्ञान) को (ज्ञात्वा) जानकर (तुम) (पुनः) फिर से (मोहम) भ्रम (गुमराही) में (न) नहीं (यास्यसि) पड़ोगे (येन) इस (दिव्य ज्ञान द्वारा तुम) (भूतानि अशेषेण) सम्पूर्ण प्राणियों को (आत्मानि) मुझसे (द्रक्ष्यसि) देखोगे (अथो) दुसरे शब्दों में (उनका निर्माता) (मयि) मैं (ही हूँ ऐसा देखोगे)

नोट ४.३५:- श्लोक नं. ९.५ में यह स्पष्ट रुप से कहा गया है कि न ईश्वर किसी में रहता है और न कोई ईश्वर में रहेगा। इस कारण इस श्लोक नं ४.३१ के अनुवाद में हमने 'आत्मानि' का अर्थ 'ईश्वर से' लिया है।

४.३६

अपि चेत् असि पापेभ्यः सर्वेभ्यः पाप-कृत-त मः।
सर्वम् ज्ञान-प्लवेन एव वृजिनम्
सन्तरिष्यसि।।३६।।

यदि सारे पापियों में तुम सबसे बड़े पाप के कार्य करने वाले हो, तो भी निःसंदेह इस ज्ञान की नौका के द्वारा, पापों के समुद्र को बिना बाधा के पार कर लोगे।

(चेत) अगर (सर्वेभ्य) सारे (पापेभ्यः) पापियों में (सर्वम्) तुम सबसे बड़े (पाप) पाप के (कृत् तमः) कार्य करने वाले (असि) हो, (अपि) तो भी (एवं) निःसंदेह (ज्ञान) इस ज्ञान की (प्लेवन) नौका के द्वारा, (वृजिनम्) पापों के समुद्र को (सन्तरिष्यसि) बिना बाधा के पार कर लोगे।

४.३७

यथा एधांसि समिद्धः अग्निः भस्म-सात् कुरुते अर्जुन।
ज्ञान-अग्निः सर्व-कर्माणि भस्मसात् कुरुते तथा
।।३७।।

हे अर्जुन! जिस प्रकार जलती हुई आग, इंधन (की लकड़ी को) भस्म कर देती है। ऐसे ही इस दिव्य ज्ञान का प्रकाश सम्पूर्ण पाप कर्मों को भस्म कर देती है।

(अर्जुन) हे अर्जुन! (यथा) जिस प्रकार (समिद्धः) जलती हुई (अग्निः) आग (एधांसि) इंधन (की लकड़ी को) (भस्मसात्) भस्म (कुरुते) कर देती है। (तथा) ऐसे ही (ज्ञान-अग्नि) इस दिव्य ज्ञान का (अग्निः) प्रकाश (सर्व) सम्पूर्ण (कर्माणि) (पाप) कर्मों को (भस्मसात्) भस्म (कुरुते) कर देती है।

४.३८

न हि ज्ञानेन सदृशम् पवित्रम् इह विद्यते।
तत् स्वयम् योग संसिद्धः कालेन आत्मनि
विन्दति।।३८।।

निःसंदेह! इस दिव्य ज्ञान के जैसा इस संसार में (और) (कोई साधन) नहीं है (जो पापों से) पवित्र करे। इस (दिव्य ज्ञान के द्वारा) (व्यक्ति) स्वयम् ईश्वर से जुड़ जाता है और समय के बितने (गुजरने) के साथ वह अपने अन्दर संपूर्ण (शान्ति) पाता है।

(हि) निःसंदेह! (ज्ञानेन) इस दिव्य ज्ञान (सहशम्) के जैसा (इह) इस संसार में (और) (न) (कोई साधन) नहीं (विद्यते) है (पवित्रम्) (जो पापों से) पवित्र करे (तत्) इस (दिव्य ज्ञान के द्वारा) (स्वयम्) (व्यक्ति) स्वयम् (योग) ईश्वर से जुड़ जाता है (कालेन्) और समय के बितने के साथ (आत्मनि) वह अपने अन्दर (संसिद्ध) संपूर्ण (विन्दति) (शान्ति) पाता है।

(**नोट**- योग का अर्थ ईश्वर से जुड़ना भी है।)

४.३९

श्रद्धा-वान् लभते ज्ञानम् तत-परः संयत इन्द्रियः।
ज्ञानम् लब्ध्वा पराम् शान्तिम् आचिरेण
अधिगच्छति ।।३९।।

जिसकी ईश्वर में दृढ श्रद्धा है, और जिसने अपने

(श्रद्धा-वान्) जिसकी ईश्वर में दृढ श्रद्धा है (इन्द्रियः) और जिसने अपने इन्द्रियों को (संयत) वश में कर लिया है। (ज्ञानम्) (वही) इस दिव्य ज्ञान को (लभते) प्राप्त करता है।

इन्द्रियों को वश में कर लिया है। (वही) इस दिव्य ज्ञान को प्राप्त करता है। इस दिव्य ज्ञान (के अनुसार प्रार्थना करके) (वह) उस महान ईश्वर (का आशिर्वाद) भी पा लेता है। (फिर) विलंब न करते हुए वह महान (ईश्वर का) शान्ति स्थान (स्वर्ग) भी प्राप्त कर लेता है।

(ज्ञानम्) इस दिव्य ज्ञान (के अनुसार प्रार्थना करके) (तत-पर) (वह) उस महान ईश्वर (का आशिर्वाद) (लभते) भी पा लेता है (फिर) (आर्चरेण) विलंब न करते हुए वह (पराम) महान (ईश्वर का) (शान्तिम) शान्ति स्थान (स्वर्ग) भी (अधिगच्छति) प्राप्त कर लेता है।

ईश्वर की प्रार्थना न करने वालों का अन्त कैसे होगा?

४.४०

अज्ञः च अश्रद्दधानः च संशय आत्मा विनश्यति।
न अयम् लोकः अस्ति न परः न सुखम् संशय आत्मनः ।।४०।।

वह जिसे ईश्वरीय ग्रंथ का ज्ञान नहीं और (वह) जिसकी ईश्वर में श्रद्धा नहीं। और वह लोग जो ईश्वर और उसके अवतारित ज्ञान में संदेह (शक) करते हैं। उनका विनाश होगा। ऐसे संदेह करने वाले लोगों का न इस लोक (पृथ्वी) में (भला होगा) न अन्य लोक (में भला होगा) (और इन्हें) न कहीं सुख मिलेगा।

(अज्ञः) वह जिसे ईश्वरीय ग्रंथ का ज्ञान नही (च) और (वह) (अश्रद्धानः) जिसकी ईश्वर में श्रद्धा नहीं (च) और (संशय आत्मा) वह लोग जो ईश्वर और उसके अवतारीत ज्ञान में संदेह (शक) करते हैं। (विनश्यति) उनका विनाश होगा (संशय आत्मनः) ऐसे संदेह करने वाले लोगों का (न) न (अयम् लोक) इस लोक (पृथ्वी) में (भला होगा) (न परः) न अन्य लोक (में भला होगा) (न सुखम्) (और इन्हें) न कहीं सुख मिलेगा।

नोट ४.३९: पवित्र कुरआन में लिखा है कि, ''(ईश्वर ने) पैगम्बर (मुहम्मद साहब (स.) को भेजा है)) जो तुम्हें (मानवजाति को) ईश्वर की स्पष्ट आयतें (आदेश) पढ़कर सुनाता है, ताकि वह उन लोगों को जो ईश्वर में श्रद्धा रखते हैं और जिन्होंने अच्छे कर्म किए, (उन्हें) अंधेरों (अज्ञानता) से निकालकर प्रकाश की ओर ले आए। जो कोई ईश्वर में श्रद्धा रखेगा और अच्छे कर्म करेगा, उसे वह (ईश्वर) ऐसे उद्यानों (स्वर्ग में) प्रवेश देगा, जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। ऐसे लोग उनमें सदैव रहेंगे। ईश्वर ने उनके लिए उत्तम रोज़ी (जीविका) रखी है।'' (सूरे अल तलाक-६५ आयत-११)

नोट ४.४०:- ईश्वर ने पवित्र कुरआन में मानवजाति से कहा कि, ''क्या मैंने तुम्हें आदेश नही दिया था, कि हे आदम की सन्तानों, तुम शैतान की बन्दगी न करो, निश्चय ही वह तुम्हारा खुला दुश्मन है। और यह की मेरी ही बन्दगी करो। यही सीधा मार्ग है। और उसने तो तुममें से एक भारी गिरोह (समुदाय) को गुमराह कर दिया है। क्या तुम बुद्धि नहीं रखते थे?
यह वही नरक है जिसकी तुम्हें धमकी दी जाती थी। तुमने जो एक ईश्वर में श्रद्धा नहीं रखा था तो उसके बदले में आज इस नरक का इंधन बनो।'' (सूरे यासीन-३६, आयत-६०-६४)

दिव्य ज्ञान संक्षेप में

४.४१

योग संन्यस्त कर्माणम् ज्ञान सछिन्न संशयम् ।
आत्म-वन्तम् न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।।४१।।

हे अर्जुन! जो ईश्वर से जुड़ने वाली प्रार्थना करता है, जो अपने सत्कर्मों (के फल को) छोड़ देता है, और जो ज्ञान के प्रकाश से अपने शक को दूर करता है और ईश्वर में दृढ़ श्रद्धा वाला ऐसा व्यक्ति कर्मों से बंधा नहीं रहता।

(धनंजय) हे अर्जुन! (योग) जो ईश्वर से जुड़ने वाली प्रार्थना करता है। (कर्मणाम्) जो अपने सत्कर्मों (के फल को) (संन्यस्त) छोड़ देता है। (ज्ञान) जो ज्ञान के प्रकाश से (संशयम्) अपने शक (संदेह) को (सदिच्छन्न) दूर करता है। (आत्म-वन्तम्) ईश्वर में दृढ़ श्रद्धा वाला ऐसा व्यक्ति (कर्माणि निबध्नन्ति) कर्मों से बंधा नहीं रहता।

४.४२

तस्मात् अज्ञान-सम्भूतम् हृत्सथम् ज्ञान आसिना आत्मनः।
छित्वा एनम् संशयम् योगम् आतिष्ठ उत्तिष्ठ भारत।।४२।।

इस कारण, हे अर्जुन! अज्ञान के कारण हृदय में जो संशय जन्म लेता है। उन्हें इस ईश्वर के ज्ञान की तलवार से काट दो। ईश्वर की प्रार्थना में स्थित रहो और (युद्ध के लिए) खड़े हो जाओ।

(तस्मात्) इस कारण (भारत) हे अर्जुन! (अज्ञान) अज्ञान के कारण (हृत्सथम) हृदय में जो (संशयम) संशय (सम्भूतम्) जन्म लेता है। उन्हें (एनम्) इस (आत्मनः) ईश्वर के (ज्ञान) ज्ञान की (आसिना) तलवार से (छित्वा) काट दो (योगम्) ईश्वर की प्रार्थना में (अतिष्ट) स्थित रहो और (उत्तिष्ठ) (युद्ध के लिए) खड़े हो जाओ।

नोट ४.४१:- पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, मेरे अनुयायियों में से सत्तर हजार अनुयायी बिना कर्मों का ईश्वर को हिसाब दिए स्वर्ग में जाऐंगे। यह वह लोग हैं जिनका ईश्वर में दृढ विश्वास है। (हदीस मुस्लिम, अहमद)
ऐसी ही शिक्षा श्लोक नं. ४.४१ में है। जो गुण श्लोक नं. ४.४१ में बताए गए हैं, ऐसे व्यक्ति को उसके कर्म स्वर्ग में जाने से नहीं बंधेगे या रोकेंगे।

नोट ४.४१:- (कर्मों से न बंधन के दो अर्थ हो सकते हैं)

१) उसके सभी अनिवार्य कर्तव्य पूरे हो जाते हैं। और वह कर्म के बंधन से छूट जाता है।
२) स्वर्ग में जाने के पहले जब कर्मों की जांच होगी, तब उसके कोई कर्म उसे नहीं बंधेगे। वह सफलतापूर्वक अपना कर्मों की जांच करवाकर स्वर्ग में प्रवेश करेगा।
इस श्लोक को अच्छी तरह समझने के लिए नोट नं. N-11 का अध्ययन करें।

(अध्याय नं.५)

कर्म संन्यास योग

अर्जुन उवाच
सन्न्यासं कर्मणां कृष्ण पुनर्योगं च शंससि।
यच्छ्रेय एतयोरेकं तन्मे ब्रूहि सुनिश्चितम् ॥1॥

श्रीभगवानुवाच
सन्न्यासः कर्मयोगश्च निःश्रेयसकरावुभौ।
तयोस्तु कर्मसन्न्यासात्कर्मयोगो विशिष्यते ॥2॥

ज्ञेयः स नित्यसन्न्यासी यो न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वो हि महाबाहो सुखं बन्धात्प्रमुच्यते ॥3॥

साङ्ख्ययोगौ पृथग्बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकमप्यास्थितः सम्यगुभयोर्विन्दते फलम् ॥4॥

यत्साङ्ख्यैः प्राप्यते स्थानं तद्योगैरपि गम्यते।
एकं साङ्ख्यं च योगं च यः पश्यति स पश्यति ॥5॥

सन्न्यासस्तु महाबाहो दुःखमाप्तुमयोगतः।
योगयुक्तो मुनिर्ब्रह्म नचिरेणाधिगच्छति ॥6॥

योगयुक्तो विशुद्धात्मा विजितात्मा जितेन्द्रियः।
सर्वभूतात्मभूतात्मा कुर्वन्नपि न लिप्यते ॥7॥

नैव किंचित्करोमीति युक्तो मन्येत तत्ववित्।
पश्यञ्श्रृण्वन्स्पृशञ्जिघ्रन्नश्नन्गच्छन्स्वपंश्वसन् ॥8॥

प्रलपन्विसृजन्गृह्णन्नुन्मिषन्निमिषन्नपि ॥
इन्द्रियाणीन्द्रियार्थेषु वर्तन्त इति धारयन् ॥9॥

ब्रह्मण्याधाय कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न स पापेन पद्मपत्रमिवाम्भसा ॥10॥

कायेन मनसा बुद्ध्या केवलैरिन्द्रियैरपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति संग त्यक्त्वात्मशुद्धये ॥11॥

युक्तः कर्मफलं त्यक्त्वा शान्तिमाप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तो निबध्यते ॥12॥

सर्वकर्माणि मनसा संन्यस्यास्ते सुखं वशी।
नवद्वारे पुरे देही नैव कुर्वन्न कारयन् ॥13॥

न कर्तृत्वं न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्मफलसंयोगं स्वभावस्तु प्रवर्तते ॥14॥

नादत्ते कस्यचित्पापं न चैव सुकृतं विभुः।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥15॥

ज्ञानेन तु तदज्ञानं येषां नाशितमात्मनः।
तेषामादित्यवज्ज्ञानं प्रकाशयति तत्परम् ॥16॥

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूतकल्मषाः ॥17॥

विद्याविनयसम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः ॥18॥

इहैव तैर्जितः सर्गो येषां साम्ये स्थितं मनः।
निर्दोषं हि समं ब्रह्म तस्माद् ब्रह्मणि ते स्थिताः ॥19॥

न प्रहृष्येत्प्रियं प्राप्य नोद्विजेत्प्राप्य चाप्रियम् ।
स्थिरबुद्धिरसम्मूढो ब्रह्मविद् ब्रह्मणि स्थितः ॥20॥

बाह्यस्पर्शेष्वसक्तात्मा विन्दत्यात्मनि यत्सुखम् ।
स ब्रह्मयोगयुक्तात्मा सुखमक्षयमश्नुते ॥21॥

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते ।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ॥22॥

शक्नोतीहैव यः सोढुं प्राक्शरीरविमोक्षणात् ।
कामक्रोधोद्भवं वेगं स युक्तः स सुखी नरः ॥23॥

योऽन्तःसुखोऽन्तरारामस्तथान्तर्ज्योतिरेव यः ।
स योगी ब्रह्मनिर्वाणं ब्रह्मभूतोऽधिगच्छति ॥24॥

लभन्ते ब्रह्मनिर्वाणमृषयः क्षीणकल्मषाः ।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः ॥25॥

कामक्रोधवियुक्तानां यतीनां यतचेतसाम् ।
अभितो ब्रह्मनिर्वाणं वर्तते विदितात्मनाम् ॥26॥

स्पर्शान्कृत्वा बहिर्बाह्यांश्चक्षुश्चैवान्तरे भ्रुवोः ।
प्राणापानौ समौ कृत्वा नासाभ्यन्तरचारिणौ ॥27॥

यतेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः ।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः ॥28॥

भोक्तारं यज्ञतपसां सर्वलोकमहेश्वरम् ।
सुहृदं सर्वभूतानां ज्ञात्वा मां शान्तिमृच्छति ॥29॥

अध्याय का परिचय

● इस अध्याय का नाम है कर्म सन्यास योग। इस अध्याय में दो प्रकार के कर्मों का वर्णन है।

१. कर्म योग २. कर्म सन्यास

● कर्म योग, यह वह कर्म हैं जिनसे मनुष्य व्यक्तिगत स्तर पर ईश्वर से निकट होता है, जुड़ता है। ईश्वर की कृपा दृष्टी प्राप्त करता है। और अपने अनिवार्य कर्तव्य को पूरा करता है।

● कर्म सन्यास, यह वह कर्म हैं जो मनुष्य मानव समाज के कल्याण के लिए करता है। सन्यास का अर्थ है छोड़ देना। तो कर्म सन्यास ऐसे कर्म हैं जिनके फल को छोड़ दिया जाता है। या ऐसे कर्म जो नि:स्वार्थ किए जाते हैं। क्योंकि जनकल्याण के कर्मों से कोई व्यक्तिगत लाभ नहीं होता।

● इस अध्याय में कहा गया है कि कर्म संन्यास से कर्म योग श्रेष्ठ है; क्योंकि जब मनुष्य व्यक्तिगत स्तर पर ईश्वर की प्रार्थना नियमित रुप से करता होगा और अपने अनिवार्य कर्तव्यों को पूरा करता होगा तो ही उसके लिए ईश्वर को प्रसन्न करने जनकल्याण के कर्म करना आसान हो जाएंगे।

● इस अध्याय में कर्म योगी और कर्म संन्यासी के गुणों का वर्णन है, ताकि मनुष्य अपने आप में चिन्तन करे और यदि कोई गुण नहीं है तो उसे अपने में उत्पन्न करे।

● अन्त में इन कर्मों को करने से जो फल मिलता है उसका वर्णन है। और वह कर्म-फल है स्वर्ग।

अध्याय का सारांश

● श्लोक नं. ५.२ से ५.६ तक कर्म योग और कर्म सन्यास का परिचय है, और अन्त में कहा गया है कि कर्मयोग करने वाले के लिए कर्म सन्यास सरल होगा।

● श्लोक नं. ५.४ और ५.५ में कर्म संन्यास को सांख्य कहा गया है। सांख्य का अर्थ है विश्लेषण करना। जब व्यक्ति दिव्य ज्ञान का विश्लेषण करता है तभी वह कर्म सन्यास के लिए प्रेरीत होता है। उदाहरण के तौर पर श्लोक नं.५.१८ का अर्थ है वह व्यक्ति जो दिव्य ज्ञान को संपूर्ण रुप से जानता है और जो नर्म स्वभाव का है वह ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता और कुत्ता खाने वाले और ज्ञानी पंडित को भी एक दृष्टि से देखता है।

जब तक मनुष्य के मन में इस श्लोक के अनुसार भावना नहीं होगी। वह जातिवाद और छूतछात से उपर उठकर सारे प्राणियों का एक समान सेवा कभी नहीं करेगा।

अध्याय

५.१

अर्जुन उवाच,
संन्यासम् कर्मणाम् कृष्ण पुनः योगम् च शंससि।
यत् श्रेयः एतयोः एकम् तत् मे ब्रूहि सु-निश्चितम् ।।१।।

अर्जुन ने कहा,हे कृष्ण! आप कर्मों को नि:स्वार्थ रुप से करने के लिए कहते हो। और फिर प्रार्थना द्वारा ईश्वर से जुड़ने की प्रशंसा करते हो। इन दोनों साधनों में जो एक निश्चित रुप से श्रेष्ठ है उसको मेरे लिए कहिये।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा, (कृष्ण) हे कृष्ण! (आप) (कर्मणाम्) कर्मों को (सन्न्यासम) नि:स्वार्थ रुप से करने के लिए कहते हो। (च) और (पुनः) फिर (योगम्) प्रार्थना द्वारा ईश्वर से जुड़ने की (शंससि) प्रशंसा करते हो (एतयो) इन दोनों साधनों में (यत) जो (एकम्) एक (सुनिश्चितम्) निश्चित रुप से (श्रेयः) श्रेष्ठ है (तत्) उसको (मे) मेरे लिए (ब्रूहि) कहिये।

कर्म योग श्रेष्ठ है-

५.२

श्री भगवान उवाच,
संन्यासः कर्मयोगः च निःश्रेयस-करौ उभौ।
तयोः तु कर्म-संन्यासात् कर्म-योगः विशिष्यते।।२।।

ईश्वर ने कहा, संन्यास योग और कर्मयोग यह दोनों ही कल्याण करने वाले हैं, परन्तु इन दोनों में संन्यास योग से कर्मयोग श्रेष्ठ है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (संन्यासः) संन्यास योग (च) और (कर्मयोगः) कर्मयोग (उभौ) यह दोनों ही (निःश्रेयस-करौ) कल्याण करने वाले हैं (तु) परन्तु (तयोः) इन दोनों में (कर्म-सन्न्यासात्) संन्यास योग से (कर्मयोगः) कर्मयोग (विशिष्यते) श्रेष्ठ है।

५.३

ज्ञेयः सः नित्य सन्न्यासी यः न द्वेष्टि न काङ्क्षति।
निर्द्वन्द्वः हि महाबाहो सुखम् बन्धात् प्रमुच्यते ।।३।।

हे अर्जुन! उस व्यक्ति को हमेशा संन्यासी समझना चाहिए (जो) न (किसी से) द्वेष करता है (और) न (किसी से) आशा रखता है। (और) जो सुख-दु:ख में संयम रखता है। नि:संदेह वह अनिवार्य कर्तव्य पूरे करके उनके बंधन से मुक्त हो जाता है और सुखी रहता है।

(महाबाहो) हे अर्जुन! (सः) उस व्यक्ति को (नित्य) हमेशा (संन्यासी) संन्यासी (ज्ञेय) समझना चाहिए (न) (जो) न (द्वेष्टि) (किसी से) द्वेष करता है (और) (न) न (किसी से) (काङ्क्षति) आशा करता है (और) (निर्द्वन्द्वः) जो सुख-दु:ख में संयम रखता है। (हि) नि:संदेह (बन्धात्) वह अनिवार्य कर्तव्य पूरे करके उनके बंधन से (प्रमुच्यते) मुक्त हो जाता है (सुखम्) और सुखी रहता है।

५.४

सांङ्ख्य योगौ पृथक बालाः प्रवदन्ति न पण्डिताः।
एकम् अपि आस्थितः सम्यक् उभयोः विन्दते फलम् ।।४।।

मूर्ख लोग संन्यास, योग और कर्म योग को अलग-अलग कहते हैं। (किन्तु) ज्ञानी ऐसा नहीं कहते। (वास्तव में) दोनों के वही फल (परिणाम) है, जो किसी एक को अच्छी तरह करने से मिलता है।

(वह फल या परिणाम हैं ईश्वर की प्रसन्नता और पापों से मुक्ति)

(बालाः) मूर्ख लोग (सांङ्ख्य) संन्यास योग (योगौ) कर्म योग (पृथक) अलग-अलग (प्रवदन्ति) कहते हैं (पण्डिता) (किन्तु) ज्ञानी ऐसा (न) नहीं (कहते) (उभयो) (वास्तव में) दोनों के (अपि) वही (फलम्) फल (परिणाम) हैं जो (आस्थितः) किसी एक को (सम्यक्) अच्छी तरह करने से (विन्दते) मिलता है।

५.५

यत् सांङ्ख्यैः प्राप्यते स्थानम् तत् योगैः अपि गम्यते।
एकम् सांङ्ख्यम् च योगम् च यः पश्यति सः पश्यति।।५।।

(जो आध्यात्मिक स्थान) संन्यास योग को करने से मिलता है। कर्मयोग से भी वही आध्यात्मिक स्थान प्राप्त होता है। वह जो संन्यास योग और कर्म योग को एक जैसा ही देखता है (समझता है) वही (धार्मिक सत्य और तथ्य को सही दृष्टिकोण से) देखता है।

(यत) जो (स्थानम्) आध्यात्मिक स्थान (सांख्यै) सन्यास योग को करने से (प्राप्यते) मिलता है। (योगै) कर्म योग से (अपि) भी (तत) वही (गम्यते) आध्यात्मिक स्थान प्राप्त होता है। (यः) वह जो (सांख्यम्) सन्यास योग (च) और (योगम्) कर्म योग को (एकम्) एक जैसा ही (पश्यति) देखता है (समझता है) (सः) वही (धार्मिक सत्य और तथ्य को सही दृष्टिकोण से) देखता है।

कर्म योग का महत्त्व-

५.६

संन्यासः तु महाबाहो दुःखम् आप्तुम् अयोगतः।
योगयुक्तः मुनिः ब्रह्म नचिरेण अधिगच्छति।।६।।

(तु) किन्तु (महाबाहो) हे अर्जुन (संन्यास) सन्यास योग (अयोगता) कर्म योग के बिना (आप्तुम) सिद्ध होना (दुःखम) कठिन है

नोट ५.५ : (जो व्यक्ति नियमित रुप से ईश्वर की प्रार्थना में लगा रहता है, उसके लिए समाज सेवा करना भी आसान होगा। वह जिसे अपने मुक्ति की चिंता न हो, वह समाज के सुख शांति की क्या चिंता करेगा? इस कारण जो कर्म योग करता है, उसके लिए संन्यास योग आसान होता है)।

- सांख्या और संन्यास योग में क्या सम्बन्ध है। सांख्य योग से हम ईश्वर, प्रकृति, मानव समाज को समझते है, जब हम समझेंगे कि यह संसार ईश्वर का परिवार है तब ही हम जनकल्याण के कर्म करेंगे और सन्यास योग वास्तव में जनकल्याण का कर्म ही है।

किन्तु, हे अर्जुन! सन्यास योग कर्म योग के बिना सिद्ध होना कठिन है। भला व्यक्ति जो ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ है, वह देर लगाए बिना ईश्वर के आशिर्वाद को प्राप्त कर लेता है।

(मुनि) भला व्यक्ति (योगयुक्तः) जो ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ है (नचिरेण) देर लगाए बिना (शीघ्र ही) (ब्रह्म) ईश्वर के आशिर्वाद को (अधिगच्छति) प्राप्त कर लेता है।

५.७

योगयुक्तः विशुद्ध-आत्मा विजित-आत्मा जित-इन्द्रियः।
सर्व-भूत आत्म-भूत-आत्मा कुर्वन् अपि न लिप्यते।।७।।

वह जो ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ है। वह जिसके सोच-विचार पवित्र हैं। वह जिसने अपनी इच्छाओं को वश में कर लिया है। वह जिसने अपने इन्द्रियों को वश में कर लिया है। (वह जिसका विश्वास है कि) मनुष्य का ईश्वर ही सारे प्राणियों का ईश्वर है। नि:संदेह (वह व्यक्ति संसार के सारे) कर्म करता है (किन्तु) (पाप में) लिप्त नहीं होता (पाप में नहीं फंसता)।

(योगयुक्तः) वह जो ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ है (विशुद्ध-आत्मा) वह जिसके सोच-विचार पवित्र हैं (विजित-आत्मा) वह जिसने अपनी चाह (मन) को वश में कर लिया है। (जित-इन्द्रियः) वह जिसने अपने इन्द्रियों को वश में कर लिया है। (भूत-आत्मा) (वह जिसका विश्वास है की) मनुष्य का ईश्वर ही (सर्व-भूत-आत्म) सारे प्राणियों का ईश्वर है। (अपि) नि:संदेह (कुर्वन्) (वह व्यक्ति संसार के सारे) कर्म करता है (किन्तु) (न-लिप्यते) (पाप में) लिप्त नहीं होता (पाप में नहीं फसता)।
(श्लोक नं. ५.१० में भी ऐसा ही कथन है)

५.८/५.९

न एव किञ्चित् करोमि इति युक्तः मन्येत तत्त्ववित्।
पश्यन् शृण्वन् स्पृशन् जिघ्रन् अश्नन् गच्छन् स्वपन् श्वसन्।।८।।
प्रलपन् विसृजन् गृह्णन् उन्मिषन् निमिषन् अपि।
इन्द्रियाणि इन्द्रिय-अर्थेषु वर्तन्ते इति धारयन्।।९।।

ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति देखता हुआ, सुनता हुआ, छूता हुआ, सूँघता हुआ, खाता हुआ, चलता हुआ, सोता हुआ, श्वास लेता हुआ, बोलता हुआ, देता हुआ, लेता हुआ, (आँख) खोलता हुआ, आँख मूँदता हुआ, सोचता हुआ, नि:संदेह वह इस सत्य को जानता है कि मैं नि:संदेह कुछ नहीं करता हूँ। परंतु आनंद करने की इच्छा आनंद करने के वस्तु को पाने के लिए लगी हुई है। इस प्रकार का उसे विश्वास है।

(श्लोक नं. १५.७ को पढ़िए तो यह श्लोक समझ में आएगा)

(युक्त) ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति (पश्यन्) देखता हुआ (शृण्वन) सुनता हुआ (स्पृशन्) छूता हुआ (जिघ्रन्) सूँघता हुआ (अश्नन्) खाता हुआ (गच्छन्) चलता हुआ (स्वपन्) सोता हुआ (श्वसन्) श्वास लेता हुआ (प्रलपन्) बोलता हुआ (विसृजन्) देता हुआ (गृह्णन्) लेता हुआ (उन्मिषन्) (आँख) खोलता हुआ (निमिषन्) (आँख) मूँदता हुआ (मन्यते) सोचता हुआ (एव) नि:संदेह (तत्त्ववित) वह इस सत्य को जानता है कि (न एव किञ्चन्) मैं नि:संदेह कुछ नहीं (करोमि) करता हूँ (अपि) परंतु (इन्द्रियाणि) आनंद करने की इच्छा (इन्द्रिय अर्थेषु) आनंद करने के वस्तू को (वर्तन्ते) पाने के लिए लगी हुई है। (इति) इस प्रकार का उसे (धारभत्) विश्वास है।

५.१०

ब्रह्मणि आधाय कर्माणि सङ्गम् त्यक्त्वा करोति यः।
लिप्यते न सः पापेन पदम् पत्रम् इव अम्भसा।।१०।।

वह (जिसने) अपने सारे कर्म ईश्वर को अर्पण कर दिए हैं। (और) ईश्वर के प्रार्थना के साथ किसी और की उपासना को छोड़कर सत्कर्म करते हैं। वह नहीं लिप्त होते (फंसते) पापों में, जैसे कमल का पत्ता (बचा रहता है) पानी से।

(यः) वह (जिसने) (कर्माणि) अपने सारे कर्म (ब्रह्मणि) ईश्वर को (आधाय) अर्पण कर दिए हैं (और) (सङ्गम्) ईश्वर के प्रार्थना के साथ किसी और की उपासना को (त्यक्त्वा) छोड़कर (करोति) सत्कर्म करते हैं। (सः) वह (न) नहीं (लिप्यते) लिप्त होते (फंसते) (पापेन) पापों में (इव) जैसे (पदम-पत्रम्) कमल का पत्ता (बचा रहता है) (अम्भसा) पानी से।

५.११

कायेनः मनसा बुद्ध्या केवलैः इन्द्रियैः अपि।
योगिनः कर्म कुर्वन्ति सङ्गम् त्यक्त्वा आत्म शुद्धये।।११।।

(वह जिसने) छोड़ दिया है एक ईश्वर की प्रार्थना के साथ किसी और की प्रार्थना को। केवल (वही) (एक ईश्वर की) प्रार्थना करने वाला, पवित्र शरीर, मन, सोच, इच्छाओं, (और) आत्मा (के साथ) सत्कर्म कर सकता है।

(त्यक्त्वा) (वह जिसने) छोड़ दिया है (सङ्गम्) एक ईश्वर की प्रार्थना के साथ किसी और की प्रार्थना को (केवलैः) केवल (वही) (योगिनः) (एक ईश्वर की) प्रार्थना करने वाला (शुद्धये) पवित्र (कायेनः) शरीर (मनसा) मन (बुद्ध्या) सोच (इन्द्रियैः) इच्छाओं (आत्म) (और) आत्मा (के साथ) (कर्म) सत्कर्म (कुर्वन्ति) कर सकता है।

५.१२

युक्तः कर्म-फलम् त्यक्त्वा शान्तिम् आप्नोति नैष्ठिकीम्।
अयुक्तः कामकारेण फले सक्तः निबध्यते।।१२।।

ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति अपने सत्कर्म के फल को छोड़ देता है। (अर्थात सत्कर्म निस्वार्थ करता है) और शांति प्राप्त करता है। सत्य मार्ग से भटका हुआ व्यक्ति जो

(युक्तः) ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति (कर्म-फलम्) अपने सत्कर्म के फल को (त्यक्त्वा) छोड़ देता है (अर्थात सत्कर्म निस्वार्थ करता है) (शान्तिम्) और शांति (आप्नोति) प्राप्त करता है। (नैष्ठिकम्) सत्य मार्ग से भटका हुआ व्यक्ति (अयुक्तः) जो ईश्वर की प्रार्थना नहीं करता वह (काम) (केवल) मन के आंनद (फले सक्तः) फल कि आशा के

नोट ५.१२ पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, ईश्वर कह रहा है कि ''हे मेरे भक्तों मेरी प्रार्थना के लिए अपने आप को (काम से) मुक्त कर लो (समय निकालो), तो मैं तुझे मन से धनी कर दूँगा और सरल और पवित्र जीवन दूँगा। और अगर तुमने लापरवाही की, तो मैं न तेरे हाथ खाली करुँगा और न तेरी दरिद्रता दूर करुँगा। (हाथ न खाली करने का अर्थ है, वह व्यक्ति सदैव व्यस्त रहेगा, उसके पास कभी समय नहीं होगा। और वह हमेशा पैसों के लिए परेशान रहेगा) (हदीसे कुदसी)

ईश्वर की प्रार्थना नहीं करता वह (केवल) मन के आंनद फल की आशा के कारण (कर्म करता है), और बंधा रहता है।
(अर्थात उसके अनिवार्य कर्तव्य पूरे नहीं होते)

(कारेण) कारण (कर्म करता है) (निबध्यते) और बंधा रहता है।

५.१३

सर्व कर्माणि मनसा संन्यस्य आस्ते सुखम् वशी।
नव-द्वारे पुरे देही न एव कुर्वन् न कारयन्।।१३।।

(ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति) दृढ संकल्प के साथ वे सब कर्म जो निषिद्ध (Prohibited) हैं छोड़ देता है। अपने आपको वश में रखता है और सुख से रहता है। (कारण कि वह जानता है कि) यह शरीर जो नौ द्वार वाले नगर (शहर) के समान हैं, न तो यह कर्म कर सकता है। (और) न किसी से करवा सकता है।

(ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति) (मनसा) दृढ संकल्प के साथ (सर्व) वे सब (कर्माणि) कर्म जो निषिद्ध हैं। (संन्यस्य) छोड़ देता है (वशी) अपने आपको वश में रखता है। (सुखम्) और सुख से रहता है। (कारण कि वह जानता है कि) (देही) यह शरीर (नव-द्वारे) जो नौ द्वार वाले (पुरे) नगर (शहर) के समान हैं (न एव) न तो यह (कुर्वन्) कर्म कर सकता है। (न) (और) न (कारयन्) किसी से करवा सकता है।

५.१४

न कर्तृत्वम् न कर्माणि लोकस्य सृजति प्रभुः।
न कर्म-फल संयोगम् स्वभावः तु प्रवर्तते।।१४।।

लोगों को न ही कर्म (करने का) (और) न ही कर्म करवाने का (और) न ही कर्मों के फल (देने का) अधिकार है। (यदि मनुष्य) अपने स्वभाव को ईश्वर की इच्छा (आदेश) के अनुसार कर ले तो (सारे कर्म सही प्रकार से) होने लगें।

(लोकस्य) लोगों को (न) न (ही) (कर्माणि) कर्म (करने का) (न) (और) न ही (कर्तृव्यम्) कर्म करवाने का (न) (और) न (ही) (कर्म-फल) कर्मों के फल (देने का) (सृजति) अधिकार है। (स्वभावः) (अगर मनुष्य) अपने स्वभाव को (प्रभुः) ईश्वर की इच्छा (आदेश) (संयोगम्) के अनुसार कर ले (तु) तो (प्रवर्तते) (सारे कर्म सही प्रकार से) होने लगें।

नोट ५.१२ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''जो कोई (व्यक्ति इस संसार और जीवन में) शीघ्र मिलने वाली चीज़ (कर्म फल) का इच्छुक हो, उसे हम इसी (जीवन) में शीघ्र दे देते हैं, जो कुछ जिसे देना चाहते हैं। फिर उसके लिए हमने नरक तैयार कर रखा है, जिसमें वह धिक्कारा और ठुकराया हुआ प्रवेश करेगा। और जो कोई (व्यक्ति) मृत्यु के बाद के जीवन में सफलता का इच्छुक हो, और उसके लिए प्रयास करे जैसी कि उसकी योग्यता है, और वह एक ईश्वर में श्रद्धा वाला भी है, तो ऐसे लोगों के प्रयास की प्रशंसा की जाएगी। (अर्थात उन्हें स्वर्ग मिलेगा) (सूरे बनी इस्राईल-१७, आयत-१८-१९)

नोट ५.१४ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''हमने सांसारिक जीवन में इनके (मनुष्य के) बीच इनकी जीविका (व्यापार, व्यवसाय) को बाँटा है और हमने इनमें एक को दूसरे पर दर्जो में (सामाजिक पद) में उच्चता प्रदान की है। ताकि इनमें एक दूसरे से काम लेता रहे।'' (सूरह-अज-जुखरुफ-४३, आयत नं. ३२) अर्थात समाज में जो व्यक्ति जिस व्यवसाय या पद पर है वह सब ईश्वर ने ही निश्चित किया है। मनुष्य स्वयम कुछ नही कर सकता।

ईश्वर कर्मो का हिसाब लेगा-

५.१५

न आदत्ते कस्यचित् पापम् न च एवं सु-कृतम् विभुः।
अज्ञानेन आवृत्तम् ज्ञानम् तेन मुह्यन्ति जन्तवः।।१५।।

अज्ञानता ने (मनुष्य के) ज्ञान को ढांप लिया है, जिसके कारण मनुष्य मोहित हो गया है (भ्रम में है और कल्पना करता है कि) (वह) ईश्वर (जो सर्वव्यापी है) (वह) न (किसी के) अच्छे कर्म स्वीकार करेगा। और न पापों का दंड देगा।

(अज्ञानने) अज्ञानता ने (ज्ञानम्) (मनुष्य के) ज्ञान को (आवृत्तम्) ढांप लिया है, (तेन) जिसके कारण (जन्तवः) मनुष्य (मुह्यन्ति) मोहित हो गया है (भ्रम में है और कल्पना करता है कि) (विभू) (वह) ईश्वर (जो सर्वव्यापी है) (न) (वह) न (किसी के) (सुन्कृतम्) अच्छे कर्म (आदत्ते) स्वीकार करेगा। (च) और (न) न (पापम्) पापों का दंड देगा।

भगवद् गीता का महत्त्व-

५.१६

ज्ञानेन तु तत् अज्ञानम् येषाम् नाशितम् आत्मनः।
तेषाम् आदित्य-वत् ज्ञानम् प्रकाशयति तत् परम् ।।१६।।

नि:संदेह वह (सारे) मनुष्य जिनके ज्ञान को अज्ञानता ने नष्ट कर दिया है। यह सच्चा ज्ञान उस सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को उन पर सूर्य के समान प्रकाशित कर देता है।

(तु) नि:संदेह (तत्) वह (सारे) (आत्मनः) मनुष्य (येषाम्) जिनके (ज्ञानेन्) ज्ञान को (अज्ञानम्) अज्ञानता ने (नाशितम्) नष्ट कर दिया है। (ज्ञानम्) यह सच्चा ज्ञान (तत्) उस (परम्) सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को (तेषाम) उन पर (आदित्य-वत्) सूर्य के समान (प्रकाशयति) प्रकाशित कर देता है।

५.१७

तत् बुद्धयः ततआत्मानः तत-निष्ठाः तत-परायणाः।
गच्छन्ति अपुनः-आवृत्तिम् ज्ञान निर्धूत कल्मषाः।।१७।।

(जिन लोगों ने) ज्ञान के द्वारा उस ईश्वर से अपनी बुद्धि को जोड़ रखा है। वह जिसका मन

(ज्ञान) (जिन लोगों ने) ज्ञान के द्वारा (तत्) उस ईश्वर से (बुद्धयः) अपनी बुद्धि को जोड़ रखा है। (तत-आत्मानः) वह जिसका मन और आत्मा ईश्वर की याद में मग्न है। (तत-निष्ठाः) वह जिसकी ईश्वर में दृढ़ श्रद्धा है। (तत-परायणाः) वह जिसने केवल ईश्वर की शरण ली है।

नोट ५.१५ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, वे लोग जो हमसे (ईश्वर से) मिलने की आशा नहीं रखते और सांसारिक जीवन ही पर निहाल हो गए हैं, और उसी पर संतुष्ट हो बैठे, और जो हमारी निशानियों (आदेशों) की ओर से असावधान है। ऐसे लोगों का ठिकाना आग (नरक) है, उसके बदले में जो वे कर्म रहे।''
(सूरह-युनूस-११ आयत-७-८७)

और आत्मा ईश्वर की याद में मग्न है। वह जिसकी ईश्वर में दृढ़ श्रद्धा है। वह जिसने केवल ईश्वर की शरण ली है। वह प्राप्त करते हैं (स्वर्ग) जहाँ से कोई दोबारा नहीं लौटता है, और जहाँ मनुष्य पाप और दु:खों से मुक्त हो जाता है।

(गच्छन्ति) वह प्राप्त करते है (स्वर्ग) (अपुन:) जहाँ से कोई दोबारा नहीं (आवृत्तिम) लौटता है (निर्धूत कल्मषा) और जहाँ मनुष्य पाप और दु:खों से मुक्त हो जाता है।

दिव्य ज्ञान का महत्त्व-

५.१८

विद्या विनय सम्पन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि च एव श्वपाके च पण्डिता: सम-दर्शिन: ।।१८।।

वह व्यक्ति जो दिव्य ज्ञान को संपूर्ण रुप से जानता हैं। और जो नर्म स्वभाव का है। (वह) ब्राह्मण, गाय, हाथी, कुत्ता, और कुत्ता खाने वाले, और ज्ञानी पंडित को भी एक दृष्टि से देखता है।

(अर्थात-सब ईश्वर की रचना हैं, और सबको जिने का समान अधिकार है।)

(विद्या) वह व्यक्ति जो दिव्य ज्ञान को (सम्पन्ने) संपूर्ण रुप से जानता है। (विनय) और जो नर्म स्वभाव का है। (ब्राह्मणे) (वह) (ब्राह्मण) (गवि) गाय (हास्तिनि) हाथी (शुनि) कुत्ता (च) और (श्वपाके) कुत्ता खाने वाले (च) और (पण्डिता:) ज्ञानी पंडित (एव) को भी (सम-दर्शिन:) एक दृष्टि से देखता है।

५.१९

इह एव तै: जित: सर्ग: येषाम् साम्ये स्थितम् मन:।
निर्दोषम् हि समम् ब्रह्म तस्मात् ब्रह्मणि ते स्थिता:।।१९।।

वह ईश्वर की श्रद्धा में दृढता से स्थित थे। इस कारण उन्होंने इस जीवन में सारे सृष्टि को जीता। यह वह (लोग थे) जिनके मन: बिना दोष

(ते) वह (ब्रह्मणि) ईश्वर की श्रद्धा में (स्थिता) दृढता से स्थित थे (तस्मात) इस कारण (तै) उन्होंने (इह एव) इस जीवन में (सर्ग:) सारे सृष्टि को (जित:) जिता (त्रेषाम) यह वह (लोग थे) (मन:) जिनके मन: (निर्दोषम) बिना दोष (संदेह) के (बह्म) ईश्वर (समम्) की तरह

नोट ५.१८ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा,हे लोगों! हमने तुम्हें पैदा किया एक पुरुष और स्त्री से, और तुम्हारी बहुत सी जातियाँ और वंश बनाये, ताकि तुम एक-दूसरे को पहचान सको। ईश्वर के यहाँ तो तुममें सबसे ज्यादा आदरणीय वह हैं जो तुममें सबसे अधिक ईश्वर से ड़रने वाला है। (सूरे अल-हुजूरात (४९) आयत-१३)

नोट ५.१९ ईश्वर ने कुरआन में कहा कि, ईश्वर ने उन लोगों से जो तुममें ईश्वर पर श्रद्धा रखते हैं और अनुकूल कर्म किए, यह वादा किया है कि वह उन्हें धरती में राज्याधिकारी बनायेगा। जैसा वह उनसे पहले के लोगों को राज्याधिकारी बना चुका है। (सुरे-अन-नूर (२४) आयत-५५)

(संदेह) के ईश्वर की तरह समानता और न्याय के सिद्धांत पर स्थित थे।

(साम्ये) समानता और न्याय के सिद्धांत पर (स्थिताः) स्थित थे।

सुख शान्ति कैसे प्राप्त करें?-

५.२०

न प्रहृष्येत् प्रियम् प्राप्य न उद्विजेत् प्राप्य च अप्रियतम्।
स्थिरबुद्धिः असम्मूढः ब्रह्म-वित् ब्रह्मणि स्थितः ।।२०।।

(वह सच्चा व्यक्ति) जिसकी बुद्धि (एक ईश्वर की श्रद्धा पर) स्थिर है। (जिसे ईश्वर के आदेश में कोई) संदेह नहीं। जिसे ईश्वर के आदेश का संपूर्ण ज्ञान है। जो ईश्वर के आदेश पालन पर दृढता से स्थित है। (वह) प्रिय वस्तु को प्राप्त करके न बहुत प्रसन्न होता है और अप्रिय वस्तु या स्थिती प्राप्त करके न बहुत दुःखी होता है।

(स्थिर-बुद्धिः) (वह सच्चा व्यक्ति) जिसकी बुद्धि (एक ईश्वर की श्रद्धा पर) स्थिर है। (असम्मूढः) (जिसे ईश्वर के आदेश में कोई) संदेह नहीं (ब्रह्मवित्) जिसे ईश्वर के आदेश का संपूर्ण ज्ञान है। (ब्रह्मणि स्थितः) जो ईश्वर के आदेश पालन पर दृढता से स्थित है। (प्रियम्) (वह) प्रिय वस्तु को (प्राप्य) प्राप्त करके (न) न (प्रहृष्यते) बहुत प्रसन्न होता है (च) और (अप्रियतम्) अप्रिय वस्तु या स्थिती (प्राप्य) प्राप्त करके (उद्विजेत्) न बहुत दुःखी होता है।

५.२१

ब्राह्म-स्पर्शेषु असक्त-आत्मा विन्दति आत्मनि यत् सुखम्।
सः ब्रह्म-योग युक्त आत्मा सुखम् अक्षयम् अश्नुते।।२१।।

आनंद देने वाली प्राकृतिक वस्तु में रुचि न रखने वाला व्यक्ति अपने अंदर जो सात्विक सुख है उसका अनुभव करता है। वह (व्यक्ति जो) ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ व्यक्ति है (वह मृत्यु के बाद भी) अनंत सुख का अनुभव करेगा (आनंद लेगा)।

(ब्राह्म-स्पर्शेषु) आनंद देने वाली प्राकृतिक वस्तु (असक्त-आत्मा) में रुचि न रखने वाला (व्यक्ति) (आत्मनि) अपने अंदर (यत्-सुखम्) जो (सात्विक) सुख है। (विन्दति) उसका अनुभव करता है। (सः) वह (व्यक्ति जो) (ब्रह्मः योग) ईश्वर की प्रार्थना में (युक्तः आत्मा) लगा हुआ व्यक्ति है (वह मृत्यु के बाद भी) (अक्षयम्) अनंत (सुखम्) सुख का (अश्नुते) अनुभव करेगा (आनंद लेगा)।

नोट ५.२१ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा,''सुन लो! ईश्वर की याद (स्मरण) से दिलों को सन्तोष (शांति) प्राप्त होता है।'' (सूरे-अर-रअद-(१३) आयत-२८)

५.२२

ये हि संस्पर्श-जाः भोगाः दुःख योनयः एव ते।
आदि अन्तवन्तः कौन्तेय न तेषु रमते बुधः ।।२२।।

निःसंदेह जो आनंद उत्पन्न होता है (आनंद देने वाली वस्तुओं से) वह निःसंदेह कारण बनते हैं दुःख का पहले (अर्थात पृथ्वी लोक के जीवन में)। और मृत्यु के बाद वाले जीवन में भी। (इस कारण) हे अर्जुन बुद्धिमान इन आनंद देने वाली वस्तुओं से रुची नहीं रखते।

(हि) निःसंदेह (ये) जो (भोगाः) आनंद (संस्पर्श-जाः) उत्पन्न होता है (आनंद देने वाली वस्तुओं से) (ते) वह (एवं) निःसंदेह (योनय) कारण बनते हैं (दुःख) दुःख का (आदि) पहले (अर्थात पृथ्वी लोक के जीवन में) (अन्तवन्तः) और मृत्यु के बाद वाले जीवन में भी (कौन्तेय) (इस कारण) हे अर्जुन (बुधः) बुद्धिमान (तेषु) इन आनंद देने वाली वस्तुओं से (रमते) रुची (न) नहीं रखते।

५.२३

शक्नोति इह एव यः सोढूम् प्राक शरीर विमोक्षणात् ।
काम क्रोध उद्भवम् वेगम् सः युक्तः सः सुखी नरः।।२३।।

जो (व्यक्ति) इस शरीर को त्यागने से पहले इस (शरीर में) उन शक्तियों को वश में करने की क्षमता विकसित करता है, जो उत्पन्न होती है क्रोध से, (और) काम भावना से (आनंद लेने की इच्छा से)। वही (व्यक्ति) सुखी व्यक्ति है।

(यः) जो (व्यक्ति) (शरीर) इस शरीर को (विमोक्षणात्) त्यागने से (प्राक्) पहले (इह एवं) इस (शरीर में) (वेमम्) उन शक्तियों को (सोढुम) वश में करने की (शक्नोति) क्षमता विकसित करता है (उदभवम्) जो उत्पन्न होती है (क्रोध) क्रोध से (काम) (और) काम भावना से (आनंद लेने की इच्छा से) (सः) वही (व्यक्ति) (सुखी) सुखी (नर) व्यक्ति है।

स्वर्ग कैसे प्राप्त करें?-

५.२४

यः अन्तः-सुखः अन्तः-आरामः तथा अन्तः-ज्योतिः एव यः।
सः योगी ब्रह्म-निर्वाणम् ब्रह्म-भूतः अधिगच्छति।।२४।।

वह (जो) मन के भीतर से सुखी है। जो अंदर से संतुष्ट है। और जो अंदर से दिव्य ज्ञान से प्रकाशित है। वह (व्यक्ति) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला है। भूतकाल में (मृत्यु के पश्चात वह) ईश्वर के शांति के स्थान (स्वर्ग) को प्राप्त कर लेगा।

(यः) वह (जो) (अन्तःसुख) मन के भीतर से सुखी है। (अन्तः आराम) जो अंदर से संतुष्ट है (तथा) और (अन्तः ज्योति) जो अंदर से दिव्य ज्ञान से प्रकाशित है। (एव) वह (व्यक्ति) (योगी) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला है। (भूत) भूतकाल में (मृत्यु के पश्चात वह) (ब्रह्म निर्वाणम्) ईश्वर के शांति के स्थान (स्वर्ग) (अधिगच्छति) प्राप्त कर लेगा।

५.२५

लभन्ते ब्रह्म-निर्वाणम् ऋषयः क्षीण-कल्मषाः।
छिन्न द्वैधाः यत-आत्मानः सर्वभूत हिते रताः
।।२५।।

पवित्र और पुण्य लोग जिनके संपूर्ण पाप नष्ट हो गए हैं। जिनके सम्पूर्ण संशय मिट गए हैं। जिनका शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रिय वश में है। जो सम्पूर्ण प्राणियों के भलाई के काम में लगे रहते हैं। वह ईश्वर के स्वर्ग को प्राप्त कर लेता है।

(ऋषयः) पवित्र और पुण्य लोग (क्षीण-कल्मषाः) जिनके संपूर्ण पाप नष्ट हो गए हैं। (छिन्न द्वैधा) जिनके सम्पूर्ण संशय मिट गए हैं। (यत-आस्मान) जिनका शरीर, मन, बुद्धि और इन्द्रिय वश में हैं। (सर्वभूत) जो सम्पूर्ण प्राणियों के (हिते) भलाई के काम में (रताः) लगे रहते हैं। (ब्रह्म-निर्वाणम्) वह ईश्वर के स्वर्ग को (लभन्ते) प्राप्त कर लेता है।

५.२६

काम क्रोध विमुक्तानाम् यतीनाम् यत-चेतसाम्।
अभितः ब्रह्म-निर्वाणम् वर्तते विदित-आत्मनाम्
।।२६।।

पवित्र और पूज्य व्यक्ति (जिसने) काम भावना और क्रोध से मुक्ति पा लिया है (अपने इन भावनाओं को सभी ओर से वश में कर लिया है)। और जिसने अपनी इच्छाओं को वश में रखा है। और जिसने अपने आपको (अपने अस्तित्व में आने के कारण को) पहचान लिया है। वह ईश्वर के स्वर्ग को प्राप्त करेगा।

(नोट-मनुष्य के इस धरती पर जन्म लेने का उद्देश ईश्वर की प्रार्थना ही है।)

(यतीनाम) पवित्र और पूज्य व्यक्ति (जिसने) (काम) काम भावना (क्रोध) क्रोध (विमुक्तानाम्) मुक्ति पा लिया है (अपने इन भावनाओं को (अभितः) सभी ओर से वश में कर लिया है) (यत-चेतसाम्) और जिसने अपनी इच्छाओं को वश में रखा है। (विदित-आत्मनाम्) और जिसने अपने आपको (अपने अस्तित्व में आने के कारण को) पहचान लिया है। (ब्रह्म निर्वाणम्) वह ईश्वर के स्वर्ग को (वर्तते) प्राप्त करेगा।

५.२७/५.२८

स्पर्शान् कृत्वा बहिः बाह्यान् चक्षुः च एव अन्तरे भ्रुवोः।
प्राण-अपानौ समौ कृत्वा नास-अभ्यन्तर चारिणौ।।२७।।
यत इन्द्रिय मनः बुद्धिः मुनिः मोक्ष परायणः।
विगत इच्छा भय क्रोधः यः सदा मुक्त एव सः
।।२८।।

(बहिः) (पवित्र व्यक्ति जो) बाहर के (स्पर्शान्) सब आनंद करने के स्रोत, साधन और भावना को (बाह्यान) बाहर (कृत्वा) करता है। (च) और (चक्षुः) नेत्रों की दृष्टि को (ध्यान को) (भ्रवोः) भौंहे (eyebrow) के (अन्तरे) बीच में (स्थित करके) (नास-अभ्यन्तर) नासिका में

नोट ५.२६ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''मैंने तो जिन्नों और मनुष्यों को केवल इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी बन्दगी (उपासना) करें।'' (पवित्र कुरआन, ५१.५६)

(पवित्र व्यक्ति जो) बाहर के सब आनंद करने के स्त्रोत, साधन और भावना को बाहर करता है। और नेत्रों की दृष्टि को (ध्यान को) भौंहे (eyebrow) के बीच में (स्थित करके) नासिका में चलने वाली अन्दर और बाहर आने जाने वाली सांस को बराबर करता है। (अर्थात प्राणायम करता है या ध्यान लगाता है।)

जो वश में रखता है अपने आनंद का अनुभव करने वाले अंगो को। (और) मन और बुद्धि को (अपनी चाह और सोच को)। वह व्यक्ति पवित्र और पूज्य व्यक्ति है। उसके पापों को ईश्वर क्षमा करेगा। जो व्यक्ति अपने आनंद का अनुभव करने की इच्छा, डर, क्रोध को वश में करता है, नि:संदेह वह सदा के लिए नर्क से मुक्त हो जाता है।

नोट:- (मोक्ष का एक अर्थ ईश्वर का सारे पापों को क्षमा करना भी है, श्लोक नं. १८.६६ में इस का वर्णन है।)

(बहि:) (पवित्र व्यक्ति जो) बाहर के (स्पर्शान्) सब आनंद करने के स्त्रोत, साधन और भावना को (बाह्यान) बाहर (कृत्वा) करता है। (च) और (चक्षु:) नेत्रों की दृष्टि को (ध्यान को) (भ्रवो:) भौंहे (eyebrow) के (अन्तरे) बीच में (स्थित करके) (नास-अभ्यन्तर) नासिका में (चारिणौ) चलने वाली (प्राण-अपानौ) अन्दर और बाहर आने जाने वाली सांस को (समौ) बराबर (कृत्वा) करता है। (अर्थात प्राणायम करता है या ध्यान लगाता है।)

(यत) जो वश में रखता है (इन्द्रिय) अपने आनंद का अनुभव करने वाले अंगो को (मन:बुद्धि:) (और) मन और बुद्धि को (अपनी चाह और सोच को) (मुनि:) वह व्यक्ति पवित्र और पूज्य व्यक्ति है। (मोक्ष परायण:) उसके पापों को ईश्वर क्षमा करेगा। (य:) जो व्यक्ति (इच्छा) अपने आनंद का अनुभव करने की इच्छा (भय) डर (क्रोध) क्रोध (विगत) को वश में करता है (एव) नि:संदेह (स:) वह (सदा) सदा के लिए (मुक्त) नर्क से मुक्त हो जाता है।

नोट ५.२७/५.२८ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''वह जो हमारी आयतों पर ईमान लाए (ईश्वर में श्रद्धा को अपनाया) और आज्ञाकारी रहे। (उनसे ईश्वर कहेगा), प्रवेश करो स्वर्ग में। तुम भी और तुम्हारे जोड़े भी (अर्थात पती-पत्नी) हर्षित होकर। उनके आगे सोने की थालियाँ और प्याले गर्दिश करेंगे (सामने रखें जाएँगे) और वहाँ वह सब कुछ होगा, जो दिलों को भाए और आँखे जिससे लज़्ज़त (स्वाद) पाएँ। और तुम उस स्वर्ग में सदैव रहोगे।

यह वह स्वर्ग है जिसके तुम वारिस (उत्तराधिकारी) हो, उन सत्कर्मो के बदले में है जो सत्कर्म तुम करते रहे। तुम्हारे लिए वहाँ बहुत से स्वादिष्ट फल है जिन्हें तुम खाओगे।

नि:संदेह अपराधी लोग सदैव नरक की यातना में रहेंगे। वह (यातना) कभी उन पर से हल्की (कम) न होगी और वे उसी में निराश पड़े रहेंगे। हमने उन पर कोई जुल्म नहीं किया, परन्तु वे खुद ही जालिम (पापी) थे। वे पुकारेंगे, ''ऐ मालिक! हमारे ईश्वर, हमारा काम ही तमाम कर दे (हमें मृत्यु दे दे)। ईश्वर कहेगा, ''तुम्हें तो इसी दशा में रहना है। निश्चय ही हम तुम्हारे पास सत्य लेकर आए, किन्तु तुम में से अधिकतर लोगों को सत्य प्रिय नहीं।'' (सूरे अज-जुखरुफ-४३, आयत-६९-७८)

५.२९

भोक्तारम् यज्ञ तपसाम् सर्वलोक महा-ईश्वरम् ।
सुहृदम् सर्व भुतानाम् ज्ञात्वा माम् शान्तिम् ऋच्छति।।२९।।

वह ईश्वर है जिसके लिए सब प्रार्थनाएं और तपस्याएं की जाती हैं। वह जो महान ईश्वर है सब लोगों का वह बहुत दया करने वाला है सभी प्राणीयों पर। मुझे (अर्थात ईश्वर को) जो ऐसा मानता है, वह प्राप्त करेगा शान्ति के स्थान (स्वर्ग) को।

(भोक्तारम्) वह ईश्वर जिसके लिए सब (यज्ञ) प्रार्थनाएं (तपसाम्) तपस्याएं की जाती हैं। (महा ईश्वरम्) वह जो महान ईश्वर है। (सर्व लोक) सब लोगों का (सुहृदम्) वह जो बहुत दया करने वाला है (सर्व भुतानाम्) सभी प्राणीयों पर (माम्) मुझे (अर्थात ईश्वर को) (ज्ञात्वा) जो ऐसा मानता है। (ऋच्छति) वह प्राप्त करेगा (शान्तिम्) शान्ति के स्थान (स्वर्ग) को।

नोट ५.२९ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, तुम्हारा ईश्वर अकेला ईश्वर है। उसके सिवा कोई भी प्रार्थना के योग्य नहीं। वह कृपाशील और दयावान है। (सूरे-अल-बकरह (२) आयत नं. (१६३))

(अध्याय नं.६)

आत्म संयम योग

अनाश्रितः कर्मफलं कार्यं कर्म करोति यः।
स सन्यासी च योगी च न निरग्निर्न चाक्रियः ॥1॥

यं सन्यासमिति प्राहुर्योगं तं विद्धि पाण्डव।
न ह्यसन्न्यस्तसङ्कल्पो योगी भवति कश्चन ॥2॥

आरुरुक्षोर्मुनेर्योगं कर्म कारणमुच्यते।
योगारूढस्य तस्यैव शमः कारणमुच्यते ॥3॥

यदा हि नेन्द्रियार्थेषु न कर्मस्वनुषज्जते।
सर्वसङ्कल्पसन्न्यासी योगारूढ़स्तदोच्यते ॥4॥

उद्धरेदात्मनाऽत्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः ॥5॥

बन्धुरात्मात्मनस्तस्य येनात्मैवात्मना जितः।
अनात्मनस्तु शत्रुत्वे वर्तेतात्मैव शत्रुवत् ॥6॥

जितात्मनः प्रशान्तस्य परमात्मा समाहितः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु तथा मानापमानयोः ॥7॥

ज्ञानविज्ञानतृप्तात्मा कूटस्थो विजितेन्द्रियः।
युक्त इत्युच्यते योगी समलोष्टाश्मकांचनः ॥8॥

सुहृन्मित्रार्युदासीनमध्यस्थद्वेष्यबन्धुषु।
साधुष्वपि च पापेषु समबुद्धिर्विशिष्यते ॥9॥

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः ॥10॥

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम् ॥11॥

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥12॥

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेन्द्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये ॥13॥

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः ॥14॥

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति ॥15॥

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन ॥16॥

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥17॥

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा ॥18॥

यथा दीपो निवातस्थो नेंगते सोपमा स्मृता।
योगिनो यतचित्तस्य युञ्जतो योगमात्मनः ॥19॥

यत्रोपरमते चित्तं निरुद्धं योगसेवया।
यत्र चैवात्मनात्मानं पश्यन्नात्मनि तुष्यति ॥20॥

सुखमात्यन्तिकं यत्तद्बुद्धिग्राह्यमतीन्द्रियम् ।
वेत्ति यत्र न चैवायं स्थितश्चलति तत्त्वतः ॥21॥

यं लब्ध्वा चापरं लाभं मन्यते नाधिकं ततः ।
यस्मिन्स्थितो न दुःखेन गुरुणापि विचाल्यते ॥22॥

तं विद्याद् दुःखसंयोगवियोगं योगसञ्ज्ञितम्।
स निश्चयेन योक्तव्यो योगोऽनिर्विण्णचेतसा ॥23॥

सङ्कल्पप्रभवान्कामांस्त्यक्त्वा सर्वानशेषतः ।
मनसैवेन्द्रियग्रामं विनियम्य समन्ततः ॥24॥

शनैः शनैरुपरमेद्बुद्ध्या धृतिगृहीतया।
आत्मसंस्थं मनः कृत्वा न किंचिदपि चिन्तयेत् ॥25॥

यतो यतो निश्चरति मनश्चञ्चलमस्थिरम् ।
ततस्ततो नियम्यैतदात्मन्येव वशं नयेत् ॥26॥

प्रशान्तमनसं ह्येनं योगिनं सुखमुत्तमम् ।
उपैति शांतरजसं ब्रह्मभूतमकल्मषम् ॥27॥

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी विगतकल्मषः ।
सुखेन ब्रह्मसंस्पर्शमत्यन्तं सुखमश्नुते ॥28॥

सर्वभूतस्थमात्मानं सर्वभूतानि चात्मनि ।
ईक्षते योगयुक्तात्मा सर्वत्र समदर्शनः ॥29॥

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति ।
तस्याहं न प्रणश्यामि स च मे न प्रणश्यति ॥30॥

सर्वभूतस्थितं यो मां भजत्येकत्वमास्थितः ।
सर्वथा वर्तमानोऽपि स योगी मयि वर्तते ॥31॥

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन ।
सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः ॥32॥

अर्जुन उवाच
योऽयं योगस्त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन ।
एतस्याहं न पश्यामि चञ्चलत्वात्स्थितिं स्थिराम् ॥33॥

चञ्चलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥34॥

श्रीभगवानुवाच
असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥35॥
असंयतात्मना योगो दुष्प्राप इति मे मतिः ।
वश्यात्मना तु यतता शक्योऽवाप्तुमुपायतः ॥36॥

अर्जुन उवाच
अयतिः श्रद्धयोपेतो योगाच्चलितमानसः ।
अप्राप्य योगसंसिद्धिं कां गतिं कृष्ण गच्छति ॥37॥

कच्चिन्नोभयविभ्रष्टश्छिन्नाभ्रमिव नश्यति ।
अप्रतिष्ठो महाबाहो विमूढो ब्रह्मणः पथि ॥38॥

एतन्मे संशयं कृष्ण छेत्तुमर्हस्यशेषतः ।
त्वदन्यः संशयस्यास्य छेत्ता न ह्युपपद्यते ॥39॥

श्रीभगवानुवाच
पार्थ नैवेह नामुत्र विनाशस्तस्य विद्यते ।
न हि कल्याणकृत्कश्चिद्दुर्गतिं तात गच्छति ॥40॥

प्राप्य पुण्यकृतां लोकानुषित्वा शाश्वतीः समाः ।
शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽभिजायते ॥41॥

अथवा योगिनामेव कुले भवति धीमताम् ।
एतद्धि दुर्लभतरं लोके जन्म यदीदृशम् ॥42॥

तत्र तं बुद्धिसंयोगं लभते पौर्वदेहिकम् ।
यतते च ततो भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन ॥43॥

पूर्वाभ्यासेन तेनैव ह्रियते ह्यवशोऽपि सः ।
जिज्ञासुरपि योगस्य शब्दब्रह्मातिवर्तते ॥44॥

प्रयत्नाद्यतमानस्तु योगी संशुद्धकिल्बिषः ।
अनेकजन्मसंसिद्धस्ततो यात परां गतिम् ॥45॥

तपस्विभ्योऽधिको योगी ज्ञानिभ्योऽपि मतोऽधिकः
कर्मिभ्यश्चाधिको योगी तस्माद्योगी भवार्जुन ॥46॥

योगिनामपि सर्वेषां मद्गतेनान्तरात्मना ।
श्रद्धावान्भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः ॥47॥

अध्याय का परिचय

● अध्याय नं. २ में हमने जाना की हमारे शरीर के अन्दर ईश्वर की ओर से एक रुह है जो अमर है। इस कारण मनुष्य के मृत्यु से उसका अन्त नहीं हो जाता है।

मनुष्य अपनी इच्छा अनुसार जीवन व्यतीत करने के लिए स्वतंत्र नहीं है। उसके कुछ अनिवार्य कर्तव्य हैं जो उसे करने ही होंगे। और कर्मों को अच्छी तरह करने के लिए ईश्वर में श्रद्धा सबसे जरुरी है।

● अध्याय नं. ३ में अनिवार्य कर्तव्य (कर्मबंधन) का विस्तार से वर्णन है।

● अध्याय नं. ४ में दिव्य ज्ञान का वर्णन है। जब दिव्य ज्ञान होगा तब ही अनिवार्य कर्तव्य ठिक तरह से होंगे।

● अध्याय नं. ५ में अनिवार्य कर्म के दो भाग किए। पहला व्यक्तिगत जीवन से जुड़ा कर्म योग:। दुसरा सामाजिक जीवन से जुड़ा कर्म सन्यास।

● इन दोनों को पूरा करने के लिए ईश्वर में श्रद्धा और उसकी प्रार्थना अतिआवश्यक है। इस ६ अध्याय में इसी का वर्णन है।

● हम कर्म-योग और कर्म-सन्यास, काम भावना और प्रबल इच्छाओं के कारण नहीं कर पाते हैं। ईश्वर में ध्यान लगने से हम काम भावना और इच्छाओं को वश में कर सकते हैं। इस कारण इस ६ अध्याय में ध्यान योग का विस्तार से वर्णन है।

अध्याय का सारांश

● कर्म सन्यास यह नि:स्वार्थ जनसेवा का नाम है। नि:स्वार्थ सेवा या फल की आशा न करना ही सन्यास है। श्लोक नं. ६.१ से ६.४ में सन्यासी व्यक्ति और संन्यास के महत्त्व का वर्णन है।

● कर्म योग और कर्म सन्यास करने के मार्ग पर हमारा अपना मन और रजो गुण और तमो गुण वाली आत्मा सबसे बड़ी रुकावट है। श्लोक नं. ६.५ से ६.७ में इसी का वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.८-६.९ में मन और आत्मा को वश में करने के महत्त्व का वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.१० से ६.१५ तक ध्यान लगाने के पद्धति का वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.१६ में कौन ध्यान नहीं लगा सकता है उसकी जानकारी है।

● श्लोक नं. ६.१७ में सारे कष्टों को दूर करने का उपाय है।

● श्लोक नं. ६.१८ से ६.२२ मे ध्यान योग के लाभ का वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.२३ से ६.२४ तक कर्म योगियों और कर्म सन्यासियों के लिए महत्त्वपूर्ण उपदेश है।

● श्लोक नं. ६.३० से ६.३२ में ध्यान योग से कर्म योगी और कर्म सन्यासी के स्वभाव में जो बदलाव आता है उसका वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.३३ से ६.३६ में ध्यान योग करने में जो बाधाऐं आती हैं उनका वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.३७ से ६.४३ में वह योगी जो अपने कर्तव्य को भली भाँति पूरा नहीं कर पाते हैं, मृत्यु के बाद उनके साथ क्या होगा इसका वर्णन है।

● श्लोक नं. ६.४६ और ६.४७ में कर्मयोगी के उंचे स्थान का वर्णन है।

अध्याय

सच्चा सन्यासी कौन?

६.१

भगवान उवाच,
अनाश्रितः कर्म-फलम् कार्यम् कर्म करोति यः।
सः संन्यासी च योगी च न निः अग्निः न च अक्रियः।।१।।

ईश्वर ने कहा, जो (व्यक्ति) सत्कर्म को कर्तव्य समझकर करता है। (और) अपने सत्कर्म के फल की आशा नहीं रखता (अर्थात कर्मों को निस्वार्थ करता है)। वही व्यक्ति संन्यासी है और कर्म योगी है। और न वह व्यक्ति जो अग्नि (पर बना भोजन नहीं खाता), और न वह जो कोई कर्म नहीं करता (सांसारिक जीवन को जिसने त्याग दिया हो।)

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (यः) जो (व्यक्ति) (कर्म) सत्कर्म को (कार्यम्) कर्तव्य समझकर (करोति) करता है (कर्म) (और) अपने सत्कर्म के (फलम्) फल की (अनाश्रितः) आशा नहीं रखता (अर्थात कर्मों को निःस्वार्थ करता है) (यः) वही व्यक्ति (संन्यासी) संन्यासी है (च) और (योगी) कर्म योगी है। (च) और (न) न (वह व्यक्ति जो) (निःअग्निः) अग्नि (पर बना भोजन नहीं खाता) (न च अक्रिय) और न वह जो कोई कर्म नहीं करता (सांसारिक जीवन को जिसने त्याग दिया हो।)

६.२

यम् संन्यासम् इति प्राहुः योगम् तम् विद्धि पाण्डव।
न हि असंन्यस्त सङ् कल्पः योगी भवति कश्चन।।२।।

इस प्रकार, हे अर्जुन, जिसे सन्यास (निःस्वार्थ कर्म करना) कहते हैं, उसी को ईश्वर की प्रार्थना जानो। निःसंदेह बिना निःस्वार्थ कर्म करने के संकल्प के कोई भी ''कर्म-योगी'' नहीं बन सकता।

(इति) इस प्रकार (पाण्डव) हे अर्जुन (यम्) जिसे (संन्यासम्) सन्यास (निःस्वार्थ कर्म करना) (प्राहुः) कहते हैं (तम्) उसी को (योगम्) ईश्वर की प्रार्थना (विद्धि) जानो (हि) निःसंदेह (असंन्यस्त) बिना निःस्वार्थ कर्म करने के (सङ्कल्पः) संकल्प के (कश्चन) कोई भी (योगी) कर्म योगी (न) नहीं (भवति) बन सकता।

नोट ६.२: ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, तुम धार्मिकता (सच्चाई Righteousness) के पद को नहीं पहुंच सकते जब तक की अपनी उन चीजों में से न खर्च करो जो तुम्हें प्रिय हैं। और जो चीज़ भी तुम खर्च करोगे, तो ईश्वर उसका जानने वाला है। (सूरे आले-इमरान (३) आयत (९२))
(अर्थात अपना समय और धन जो मनुष्य को अत्यंन्त प्रिय होता है जब तक मनुष्य इसे निःस्वार्थ ईश्वर की प्रसन्नता के लिए नहीं खर्च करेगा तब तक ईश्वर का प्रिय नहीं होगा)

६.३

आरुरुक्षोः मुनेः योगम् कर्म कारणम् उच्यते।
योग आरुढस्य तस्य एव शमः कारणम् उच्यते।।३।।

ईश्वर ने कहा कि, वह कर्म जिससे व्यक्ति ईश्वर से जुड़ जाता है। (उन कर्मों के) कारण वह पवित्र व्यक्ति भक्ति के पहले चरण में होता है। ईश्वर ने कहा कि धैर्या, वासनाओं पर रोक, शांत और संतुष्ट रहने के कारण वह पवित्र व्यक्ति, निसंदेह भक्ति के उच्चतम चरण में होता है।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा कि (योगम् कर्म) वह कर्म जिससे व्यक्ति ईश्वर से जुड़ जाता है। (कारणम्) (उन कर्मों के) कारण (मुनेः) वह पवित्र व्यक्ति (आरुरुक्षोः) भक्ति के पहले चरण में होता है। (उच्यते) ईश्वर ने कहा कि (शमः) धैर्य, वासनाओं पर रोक, शांत और संतुष्ट रहने (कारणम्) के कारण (तस्य) वह पवित्र व्यक्ति (एव) निःसंदेह (योग) भक्ति के (आरुढस्य) उच्चतम चरण में होता है।

६.४

यदा हि न इन्द्रिय-अर्थेषु न कर्मसु अनुषज्जते।
सर्व-सड्कल्प संन्यासी योग-आरुढः तदा उच्यते।।४।।

ईश्वर ने कहा की जब सन्यासी इस बात का संकल्प करता है कि न (तो वह) आनंद का अनुभव कराने वाले वस्तुओं का उपयोग करेगा। (और) न सब अनावश्यक काम (करेगा)। तब (वह व्यक्ति) भक्ति के अंतिम चरण में होता है।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा कि (यदा) जब (सन्यासी) सन्यासी (सड्कल्प) इस बात का संकल्प करता है कि (न) न (तो वह) (इन्द्रिय अर्थेषु) आनंद का अनुभव कराने वाले वस्तुओं का उपयोग करेगा (न) (और) न (सर्व) सब (अनुषजते) अनावश्यक (कर्मसु) काम (करेगा) (तदा) तब (वह व्यक्ति) (योग आरुढः) भक्ति के अंतिम चरण में होता है।

मन और आत्मा को वश में करने का महत्त्वः-

६.५

उद्धरेत् आत्मना आत्मानम् न आत्मानम् अवसादयेत् ।
आत्म एव हि आत्मनः बन्धुः आत्मा एव रिपुः आत्मनः ।।५।।

निःसंदेह, मनुष्य को चाहिए की अपनी आत्मा को ऊपर उठाए (पवित्र करें)। मनुष्य को चाहिए कि (अपनी आत्मा को) नीचे की तरफ न ले जाए (अपवित्र न करे)। आत्मा मनुष्य की मित्र है, और आत्मा (ही) मनुष्य की शत्रु भी है।

(हि) निःसंदेह (आत्मानम्) मनुष्य को चाहिए कि (आत्मनः) अपनी आत्मा को (उद्धाते) ऊपर उठाए (पवित्र करें) (आत्मानम्) मनुष्य को चाहिए कि (अवसादेयते) (अपनी आत्मा को) नीचे की तरफ (न) न ले जाए (अपवित्र न करे)। (आत्मा) आत्मा (आत्मना) मनुष्य की (बन्धु) मित्र है (अत्मना) और आत्मा (ही) (आत्मना) मनुष्य की (रिपुः) शत्रु भी है।

नोट ६.५ यहाँ आत्मा का वर्णन है। आत्मा और रुह में अन्तर है। रुह सदैव पवित्र रहती है। जबकि आत्मा की स्थिती मनुष्य के कर्मों के अनुसार होती है। नोट नं. N-2 में इसका विस्तार से वर्णन है

नोट ६.५ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, सफल हो गया (वह) जिसने आत्मा को पवित्र किया। और असफल हुआ जिसने उसे दोषित किया। (सुरे अश-शम्स (९१) आयत-९-१०)

६.६

बन्धुः आत्मा आत्मनः तस्य यैन आत्मा एव आत्मना जितः।
अनात्मनः तु शत्रुत्वे वर्तेत आत्मा एव शत्रु-वत् ।।६।।

जिस व्यक्ति ने अपनी आत्मा (को) जीत लिया, उसके लिए उसकी आत्मा मित्र हो जाती है। किन्तु वही आत्मा उस व्यक्ति की, जिसने उसे वश में नहीं किया है, शत्रु होती है और नि:संदेह सदैव शत्रु की तरह व्यवहार करती है।

(येन) जिस (आत्मनः) व्यक्ति ने (आत्मा) अपनी आत्मा (को) (जितः) जीत लिया (तस्य) उसके लिए (आत्मा) उसकी आत्मा (बन्धु) मित्र हो जाती है (तु) किन्तु (आत्मा एवं) वही आत्मा (आत्माना) उस व्यक्ति की (अनात्मानः) जिसने उसे वश में नहीं किया है। (शत्रूत्वे वर्तेत) शत्रु होती है (एव) और नि:संदेह (शत्रु वत्) सदैव शत्रु की तरह व्यवहार करती है।

६.७

जित-आत्मनः प्रशान्तस्य परम-आत्मा समाहितः।
शीत उष्ण सुख दुःखेषु तथा मान अपमानयोः।।७।।

वह जो आत्मा को जीत लेता है। वह शान्ति से रहता है। (और) सर्दी (दरिद्रता), गर्मी (समृद्धि), सुख-दुःख, इसी प्रकार मान-अपमान (में भी) दृढ़ता से ईश्वर की प्रार्थना में लगा रहता है।

(जित आत्मा) वह जो आत्मा को जीत लेता है। (प्रशान्तस्य) वह शान्ति से रहता है (और) (शीत) सर्दी (दरिद्रता) (उष्ण) गर्मी (समृद्धि) (सुख) सुख (दुखेषु) दुःख (तथा) इसी प्रकार (मान) मान (अपजानयो) अपमान (में भी) (सम्मोहित) दृढ़ता से (परम-आत्मा) ईश्वर की प्रार्थना में लगा रहता है।

६.८

ज्ञान विज्ञान तृप्त आत्मा कूट-स्थः विजित-इन्द्रियः।
युक्तः इति उच्यते योगी सम लोष्ट् अश्म काञ्चनः।।८।।

इसी प्रकार जिसका मन संतुष्ट है। जिसने अपनी इच्छाओं को वश में कर रखा है, जो दिव्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा पर दृढ़ता से स्थित है। जिसके लिए मिट्टी का ढेला, पत्थर, और स्वर्ण एक जैसे हैं। उसे ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ योगी कहा जाएगा।

(इति) इसी प्रकार (तृपव आत्मा) जिसका मन संतुष्ट है (विजिय-इन्द्रिया) जिसने अपनी इच्छाओं को वश में कर रखा है। (इमि-विदून) जो दिव्य ज्ञान विज्ञान की शिक्षा पर (कृत-स्या) दृढ़ता से स्थित है। (लोष्ट-अश्म-काच्यन) जिसके लिए मिट्टी का ढेला पत्थर और स्वर्ण (सम) एक जैसे हैं (युत्क योगी) उसे ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ योगी (उच्यते) कहा जाएगा।

६.९

सु-हृत् मित्र अरि उदासीन मध्यस्थ द्वेष्य बन्धुषु।
साधुषु अपि च पापेषु सम-बुद्धिः विशिष्यते।।९।।

(मित्र) (जब ऐसा भक्त) दोस्त और (अरी) शत्रु से (सुहृत्) समान व्यवहार करता है, (द्वेष्य) कपट करनेवालों (बन्धुषु) सम्बन्धियों, (साधुषु)

(जब ऐसा भक्त) दोस्त और शत्रु से समान व्यवहार करता है। कपट करने वालों, सम्बन्धियों, भलाई के कर्म करने वालों और पापियों से भी निःपक्ष रहते हुए समान बुद्धि अर्थात न्याय के साथ निर्णय करने वाला होता है, (तब वह और भी) श्रेष्ठ हो जाता है।

भलाई के कर्म करने वालों (च) और (पापेषु) पापियों से (अपि) भी (उदासीन) निःपक्ष रहते हुए (सम) समान (बुद्धिः) बुद्धि यानी न्याय के साथ (मध्यस्थ) निर्णय करने वाला होता है, (तब वह और भी) (विविष्यते) श्रेष्ठ हो जाता है।

ध्यान योग की पद्धती

६.१०

योगी युज्जीत सततम् आत्मानम् रहसि स्थितः।
एकाकी यत-चित्त-आत्मा निराशीः अपरिग्रहः।।१०।।

ईश्वर की प्रार्थना करने वाले को चाहिए कि ईश्वर की प्रार्थना के लिए सदैव अपने आपको शान्त स्थान पर ले जाए। एकांत में अपने आपको स्थित करके, नम्रता से, इच्छाओं को त्याग कर अपने मन और बुद्धि को ईश्वर के ध्यान में लगाए।

(योगी) ईश्वर की प्रार्थना करने वाले को चाहिए की (युन्तीत) ईश्वर की प्रार्थना के लिए (सत्यतम्) सदैव (आत्यानम्) अपने आपको (रहसि) शान्त स्थान पर ले जाए (एकाकी) एकांत में (आत्मा) अपने आपको (स्थितः) स्थित करके (अपरिग्रह) नम्रता से (निराशी) इच्छाओं को त्याग कर (यत-चिंता) अपने मन और बुद्धि को ईश्वर के ध्यान में लगाए।

६.११

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरम् आसनम् आत्मनः।
न अति उच्छितम् न अति नीचम् चैल-अजिन कुश उत्तरम।।११।।

पवित्र धरती जो न बहुत अधिक उँची हो और न बहुत अधिक नीची हो, उस पर घास अथवा पतला मुलायम वस्त्र अथवा मृगछाला बिछाकर अपने आपको मजबूती से स्थित करके बैठ जाए।

(शुचौ) पवित्र (देशे) धरती (न) जो न (अति) बहुत अधिक (उच्छितम्) उँची हो (न) और न (अति) बहुत अधिक (नीचम्) नीची हो, (कुश) उस पर घास अथवा पतला (चैल) मुलायम वस्त्र (अजिन) अथवा मृगछाला (उत्तरम्) बिछाकर (आत्मनः) अपने आपको (स्थिम्) मजबूती से (प्रतिष्ठाप्य) स्थित करके (आसनम्) बैठ जाए।

६.१२

तत्र एक-अग्रम् मनः कृत्वा यत-चित्त इन्द्रिय क्रियः।
उपविश्य आसने युज्ज्यात् योगम् आत्म विशुद्धये।।१२।।

इस आसन पर बैठकर, मन, इच्छाओं और कर्मों को वश में करके, मन में केवल एक सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को (रखते हुए), ईश्वर की प्रसन्नता और मन को (बुरे कर्मों से) पवित्र करने के लिए ईश्वर के स्मरण में लीन हो जाओ।

(तत्र) इस (आसने) आसन पर (उपविश्य) बैठकर, (चित्त) मन, (क्रियः) इच्छाओं और कर्मों को (यत्) वश में (कृत्वा) करके (मनः) मन में (एक) केवल एक (अग्रम) सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को (रखते हुए) (युज्जायात्) ईश्वर की प्रसन्नता (आत्म) और मन को (बुरे कर्मों से) (विशुद्धये) पवित्र करने के लिए (योगम्) ईश्वर के स्मरण में लीन हो जाओ।

६.१३

समम् काय शिरः ग्रीवम् धारयन् अचलम् स्थिरः।
सम्प्रेक्ष्य नासिका अग्रम् स्वम् दिशः च अनवलोकयन् ।।१३।।

शरीर, (सिर) मस्तिष्क और गर्दन को सीधा रखकर, मन को किसी (की ओर) न भटकाकर, एक ईश्वर की याद को स्थिर करके, किसी भी दिशा में न देखते हुए, अपनी नाक के अगले भाग की जगह पर देखते हुए।

(काय) शरीर (शिरः) मस्तिष्क (ग्रीवम्) और गर्दन को (समम्) सीधा रखकर (अचलम्) मन को किसी (की ओर) न भटकाकर, (स्थिर) एक ईश्वर की याद को स्थिर करके, (च) किसी भी (दिशः) दिशा में (अनवलोकयन्) न देखते हुए, (स्वम्) अपनी (नासिका) नाक के (अग्रम्) अगले भाग की जगह पर (सम्प्रेक्ष्य) देखते हुए।

६.१४

प्रशान्त आत्मा विगत-भीः ब्रह्मचारि-व्रते स्थितः मनः संयम्य मत् चित्तः युक्तः आसीत मत् परः ।।१४।।

शान्त मन और भय के बिना, दृढ़ संकल्प के साथ की ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करेंगे, अपने विचारों पर संयम रखो, और मुझे सबसे महान मानते हुए बैठो, और मुझमें अपने ध्यान को लगाओ।

(प्रशान्त आत्मा) शान्त मन (विगत भीः) भय के बिना (व्रते स्थितः) दृढ़ सन्कल्प के साथ की (ब्रह्मचारि) ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करेंगे (मनःसंयम्य) अपने विचारों पर संयम रखो और (आसीत् मत् परः) मुझे सबसे महान मानते हुए बैठो और (मत् चितः युक्तः) मुझमें अपने ध्यान को लगाओ।

६.१५

युञ्जन् एवम् सदा आत्मानम् योगी नियत-मानसः।
शान्तिम् निर्वाण-परमाम् मत्-संस्थाम् अधिगच्छति।।१५।।

इस तरह भक्त, सदैव अपने मन को वश में रखकर, नियोजित समय अनुसार भक्ति करते हुए, (संसार में) सच्ची शान्ति (और मरने के बाद) मेरे धाम यानी स्वर्ग के सबसे श्रेष्ठ शान्ति वाले धाम को पाता है।

(एराम्) इस तरह (योगी) भक्त, (सदा) सदैव (आत्मानम्) अपने (मानसः) मन को (नियत) वश में रखकर, (युन्जन्) नियोजित समय अनुसार भक्ति करते हुए, (शान्तिम्) (संसार में) सच्ची शान्ति (मत्) (और मरने के बाद) मेरे (संस्थाम्) धाम (निर्माण परमाम्) यानी स्वर्ग के सबसे श्रेष्ठ शान्ति वाले धाम को (अधिगच्छति) पाता है।

ध्यान योग के लिए योग्यताः-

६.१६

न अति अश्नतः तु योगः अस्ति न च एकान्तम् अनश्नतः।
न च अति स्वप्न-शीलस्य जाग्रतः न एव च अर्जुन।।१६।।

हे अर्जुन! लेकिन सच तो यह है कि भक्ति न बहुत अधिक भोजन करने वाला कर सकता है। और न बिलकुल भूखा रहने वाला कर सकता है। और न बहुत अधिक सोने वाला कर सकता है। और न ही हर समय जागने वाला कर सकता है।

(अर्जुन) हे अर्जुन! (तु) लेकिन (एवं) सच तो यह है कि (योगः) भक्ति (न) न (अति) बहुत अधिक (अश्नतः) भोजन करने वाला कर सकता (अस्ति) है (च) और (न) न (एकान्तम्) बिलकुल (अनश्नतः) भूखा रहने वाला कर सकता है (च) और (न) न (अति) बहुत अधिक (स्वप्नन-शीलस्य) सोने वाला कर सकता है (च) और (न) न ही (जाग्रतः) हर समय जागने वाला कर सकता है।

दुःख दूर करने के उपायः-

६.१७

युक्त आहार विहारस्य युक्त चेष्टस्य कर्मसु।
युक्त स्वप्न-अवबोधस्य योगः भवति दुःख-हा।।१७।।

ईश्वर के आदेश अनुसार भोजन करना और जीवन व्यतीत करना। ईश्वर के आदेश अनुसार प्रयत्न और कर्म करना। ईश्वर के आदेश अनुसार सोना और जागना। (यही ईश्वर की) प्रार्थना है। (और) यही सभी दुःखों से मुक्ति पाने का उपाय है।

(युक्त आहार विहारस्य) ईश्वर के आदेश अनुसार भोजन करना और जीवन व्यतीत करना (युक्त चेष्टस्य कर्मसु) ईश्वर के आदेश अनुसार प्रयत्न और कर्म करना (युक्त स्वपन अवबेधस्य) ईश्वर के आदेश अनुसार सोना और जागना (योग भवति) (यही ईश्वर की) प्रार्थना है। (दुःख-हा) (और) यही सभी दुखों से मुक्ति पाने का उपाय है।

ध्यान योग के लाभ

६.१८

यदा विनियतम् चित्तम् आत्मनि एव अवतिष्ठते
निस्पृहः सर्व कामेभ्यः युक्त इति उच्यते तदा।।१८।।

जब मनुष्य मन की इच्छाएं पूरी करने की सभी (चाह को) त्याग देता है और विशेष रुप से ईश्वर (के आदेश का पालन करने में) स्थित रहता है, तो ऐसे मनुष्य को (ईश्वर की प्रार्थना में पूरी तरह लगा हुआ) कहा जाएगा।

(यदा) जब मनुष्य (कामेभ्य) मन की इच्छाएं पूरी करने की (सर्व) सभी (चाह को) (निस्पृह) त्याग देता है (विनियतम) और विशेष रुप से (आत्मनि) ईश्वर (के आदेश का पालन करने में) (अवतिष्ठते) स्थित रहता है तो (तदा) ऐसे मनुष्य को (युक्त) (ईश्वर की प्रार्थना में पूरी तरह लगा हुआ) (उच्यते) कहा जाएगा।

६.१९

यथा दीपः निवात-स्थः न इङ्ते सा उपमा स्मृता।
योगिनः यत-चित्तस्य युञ्जतः योगम् आत्मनः।।१९।।

ईश्वर याद दिला रहा है कि, जिस तरह बिना हवा के स्थान पर (रखा हुआ) दीप टिमटिमाता नहीं। इसी तरह उस भक्त का (जिसका) मन वश में है (और), और आत्मा ईश्वर की प्रार्थना में व्यस्त रहती है। वह ईश्वर की प्रार्थना (से डगमगाता नहीं)।

(स्मृता) ईश्वर याद दिला रहा है कि, (यथा) जिस तरह (निवात) बिना हवा के (स्थः) स्थान पर (रखा हुआ) (दीपः) दीप (इडगते) टिमटिमाता (न) नहीं (सा उपमा) इसी तरह (योगिनः) उस भक्त का (जिसका) (चित्तस्य) मन (यत्) वश में है (और), (आत्मनः) और आत्मा (युञ्जत) ईश्वर की प्रार्थना में व्यस्त रहती है (योगम्) वह ईश्वर की प्रार्थना (से डगमगाता नहीं)।

६.२०

यत्र उपरमते चित्तम् निरुद्धम् योग-सेवया।
यत्र च एव आत्मना आत्मानम् पश्यन् आत्मनि तुष्यति।।२०।।

निःसंदेह, मनुष्य जब (ईश्वर की याद में एकाग्र रहता है) (तो) स्वयम् (वह) ईश्वर के अस्तित्व का एहसास (अनुभव) करता है और संतुष्ट हो जाता है (शान्त हो जाता है)। और (यह) अन्दर की शान्ति की स्थिती और मन का ईश्वर से जुड़ा होना बुरे कर्मों से बचने का कारण बनते हैं।

(ए वं) निःसंदेह, (आत्मना) मनुष्य (यत्र) जब (ईश्वर की याद में एकाग्र रहता है) (आत्मनि) (तो) स्वयम् (वह) (आत्मनम) ईश्वर के अस्तित्व का (पश्यन्) एहसास (अनुभव) करता है। (तुष्यति) और संतुष्ट हो जाता है। (शान्त हो जाता है) (च) और (यह) (उपरमते) अन्दर की शान्ति की (यत्र) स्थिती (चित्तम्) और मन का (योग) ईश्वर से जुड़ा होना (निरुद्धम्) बुरे कर्मों से बचने का (सेवया) कारण बनते हैं।

६.२१

सुखम् आत्यन्ति कम् यत् तत् बुद्धिः ग्राहम् अतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न च एव अयम् स्थितः चलति तत्वतः।।२१।।

निःसंदेह, वह भक्त जो समझ बूझकर इच्छाओं से दूर हो जाता है और सबसे श्रेष्ठ सुख को जान जाता है तो फिर वह (एकाग्रता के द्वारा) उस ईश्वर की याद को स्थित करने से और ईश्वर की याद में लीन होने और सच्चाई का आभास करने से कभी भी नहीं हटता।

(ए वं) निःसंदेह, (तत्) वह भक्त (यत्) जो (अतीन्द्रयम्) समझ बूझकर (बुद्धि) इच्छाओं से दूर (ग्राह्यम्) हो जाता है (आत्यन्तिकम्) और सबसे श्रेष्ठ (सुखम्) सुख को (वेत्ति) जान जाता है,(यत्र) तो फिर वह (अयम्) (एकाग्रता के द्वारा) उस (स्थितः) ईश्वर की याद को स्थित करने से (च) और (तत्त्वतः) ईश्वर की याद में लीन होने और सच्चाई का आभास करने से (न) कभी भी नहीं (चलति) हटता।

६.२२

यम् लब्ध्वा च अपरम् लाभम् मन्यते न अधिकम् ततः।
यस्मिन् स्थितः न दुःखेन गुरुणा अपि विचाल्यते।।२२।।

(ईश्वर की ओर से शान्ति) प्राप्त होने के बाद (वह भक्त) उस ईश्वर के अतिरिक्त किसी और (शक्ति को) अधिक लाभ देने वाला नहीं मानता। उस (शान्त) स्थिती (के बाद वह भक्त) बहुत बड़े कठिन समय में भी डगमगाता नहीं।

(लब्ध्वा) (ईश्वर की ओर से शान्ति) प्राप्त (यम्) होने के बाद (वह भक्त) (ततः) उस ईश्वर (अपरम्) के अतिरिक्त किसी और (शक्ति को) (अधिकम्) अधिक (लाभम्) लाभ देने वाला (न) नहीं (मन्यते) मानता (यस्मिन्) उस (शान्त) (स्थितः) स्थिती (के बाद वह भक्त) (गुरुणा अपि) बहुत बड़े (दुःखेन) कठिन समय में भी (विचाल्यते) डगमगाता (न) नहीं।

कर्मयोगियों और सन्यास योगियों के लिए महत्त्वपूर्ण आदेश

६:२३

सः निश्चयेन योक्तव्यः योगः अनिर्विण्ण-चेतसा।
तम् विद्यात् दुःख-संयोग वियोगम् योग-संज्ञितम् ।।२३।।

मनुष्य को जानना चाहिए कि एकाग्र होकर की जाने वाली ईश्वर की प्रार्थना कठिन परिस्थितियों में पड़ने से बचा लेती है। इसलिए उस (ईश्वर की) प्रार्थना को एकाग्र मन और दृढ़ता के साथ करना चाहिए।

(विधात) मनुष्य को जानना चाहिए कि (योग संज्ञितम्) एकाग्र होकर की जाने वाली ईश्वर की प्रार्थना (दुःख संयोग) कठिन परिस्थितियों में पड़ने से (वियोगम्) बचा लेती है (तम्) इसलिए (सः) उस (ईश्वर की) (योग) प्रार्थना को (अनिविण्ण चेतसा) एकाग्र मन (निश्चयेन) और दृढ़ता के साथ (योक्तव्यः) करना चाहिए।

६:२४

सडकल्प प्रभवान् कामान् त्यक्तत्वा सर्वान् अशेषतः।
मनसा एव इन्द्रिय-ग्रामम् विनियम्य समन्ततः।।२४।।

शरीर के आनंद का अनुभव करने वाले अंगो पर सभी ओर से नियंत्रण रखो और मन में उत्पन्न होने वाली सभी कामनाओं को पूरी तरह से मन से छोड़ देने का संकल्प करो।

(इन्द्रिय-ग्रामम्) शरीर के आनंद का अनुभव करने वाले अंगो पर (समन्ततः) सभी ओर से (विनियम्य) नियंत्रण रखो (एवं) और (प्रभवान्) मन में उत्पन्न होने वाली (सर्वान्) सभी (कामान्) कामनाओं को (अशेषतः) पूरी तरह से (मनसाः) मन से (त्यक्त्वा) छोड़ देने का (सड़कल्प) संकल्प करो।

६ : २५

शनैः शनैः उपरमेत् बुद्धया धृति-गृहीतया।
आत्म-संस्थम् मनः कृत्वा न किञ्चित् अपि चिन्तयेत् ।।२५।।

मन में ईश्वर की याद को स्थित करो, और किसी चीज़ (या पूजे जाने वाले के बारे में) मत सोचो। (और) धीरे-धीरे अपने मन और सोच को (उनसे) दृढ संकल्प के साथ हटा लो।

(मन) मन में (आत्म) ईश्वर की याद को (संस्थम) स्थित (कृत्वा) करो (अपि) और (किञ्चित्) किसी चीज़ (या पूजे जाने वाले के बारे में) (न) मत (चिन्तयेत्) सोचो (शनै-शनै) (और) धीरे-धीरे (बुद्धया) अपने मन और सोच को (उनसे) (धृति-गृहीतया) दृढ़ संकल्प के साथ (उपरमेत्) हटा लो।

६ : २६

यतः यतः निश्चलति मनः चञ्चलम् अस्थिरम् ।
ततः ततः नियम्यः एतत् आत्मनि एव वशम् नयेत् ।।२६।।

जब-जब स्थिर न रहने वाला चंचल मन भटकने लगे तब-तब इस (मन को) वहाँ से हटा कर ईश्वर (की याद के लिए) बाध्य कर देना चाहिए।

(यतः यतः) जब-जब (अस्थिरम्) स्थिर न रहने वाला (चञ्चलम्) चंचल (मनः) मन (निश्चलति) भटकने लगे (ततः ततः) तब-तब (एतत्) इस (मन को) (नियम्या) वहाँ से हटा कर (आत्मनि) ईश्वर (की याद के लिए) (वशम् नयेत) बाध्य कर देना चाहिए।

६ . २७

प्रशान्त मनसम् हि एनम् योगिनम् सुखम् उत्तमम् ।
उपैति शान्त-रजसम् ब्रह्म-भूतम् अकल्मषम ।।२७।।

निःस्संदेह उस ईश्वर की प्रार्थना करने वाले भक्त को मन की शान्ति और बहुत अधिक सुख प्राप्त होगा। ईश्वर की भक्ति में लगे मनुष्य के रजो गुण (और तमो गुण) भी शान्त (कम) होंगे, और पापों से मुक्ति भी पा लेगा।

(हि) निःस्संदेह (एनम्) उस (योगिनम्) ईश्वर की प्रार्थना करने वाले भक्त को (प्रशान्त मनसम्) मन की शान्ति (सुखम् उत्तमम्) और बहुत अधिक सुख प्राप्त होगा। (ब्रह्म-भूतम्) ईश्वर की भक्ति में लगे मनुष्य के (शान्त-रजसम्) रजो गुण (और तमो गुण) भी शान्त (कम) होंगे। (अकल्मषम्) और पापों से मुक्ति भी पा लेगा।

नोट ६ . २४ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''(हे पैगंबर) ईश्वर में श्रद्धा रखने वालों से कहो, वे अपनी निगाहें (दृष्टी) को नीची रखें और अपनी शर्मगाहों (गुप्त अंगो) की रक्षा करें (अश्लिलता से)। यह उनके लिए अधिक शुद्धता की बात है। निःसंदेह ईश्वर उसकी खबर रखता है, जो कुछ वे करते है।'' (सूरे अन-नूर (२४) आयत (३०))

६:२८

युज्जन् एवम् सदा आत्मानम् योगी विगत कल्मषः।
सुखेन ब्रह्म-सस्पर्शम् अत्यन्तम् सुखम् अश्नुते।।२८।।

ईश्वर की प्रार्थना करने वाला इस तरह जब अपने आपको सदैव एक ईश्वर की प्रार्थना में लगाता है तो वह ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव करके (इस जीवन में) शान्ति पाता है। (और इस जीवन के बाद) अत्यंत सुख-शान्ति वाले स्थान (स्वर्ग) को भी प्राप्त कर लेता है।

(योगी) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला (एवम्) इस तरह जब (आत्मानम्) अपने आप को (सदा) सदैव (युञ्जन्) एक ईश्वर की प्रार्थना में लगाता है, तो (विगत कल्मषः) पापों से मुक्त हो जाता है। और (ब्रह्म संस्पर्शम्) वह ईश्वर के अस्तित्व का अनुभव करके (सुखेन्) (इस जीवन में) शान्ति पाता है (अत्यन्तम् सुखम् अश्नुते) (और इस जीवन के बाद) अत्यंत सुख-शान्ति वाले स्थान (स्वर्ग) को भी प्राप्त कर लेता है।

६:२९

सर्व-भूत-स्थम् आत्मानम् सर्व भूतानि च आत्मनि।
ईक्षते योग-युक्त-आत्मा सर्वत्र सम-दर्शनः।।२९।

ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ मनुष्य सभी ओर एक जैसा दृश्य देखता है। (और वह देखता है कि) वह स्वयम् सभी प्राणियों पर निर्भर है और सभी प्राणी ईश्वर पर निर्भर हैं।

(योग-युक्त-आत्मा) ईश्वर की प्रार्थना में लगा हुआ मनुष्य (सर्वत्र) सभी ओर (सम-दर्शन) एक जैसा दृश्य (ईक्षते) देखता है (आत्मानम्) (और वह देखता है कि) वह स्वयम (सर्व-भूत-स्थम्) सभी प्राणियों पर निर्भर है (च) और (सर्व भूतानि) सभी प्राणी (आत्मानि) ईश्वर (पर निर्भर है)

(मनुष्य जीवित रहने के लिए संसार पर निर्भर है। और यह संसार ईश्वर चलाता है)

ध्यान योग से विचारों में सुधार का वर्णन

६.३०

यः माम् पश्यति सर्वत्र सर्वम् च मयि पश्यति।
तस्य अहम् न प्रणश्यामि सः च मे न प्रणश्यति।।३०।।

(यः) वह व्यक्ति (माम्) मुझे (ही) (पश्यति) देखता है (सर्वत्र) सभी ओर (सर्वम्) (जो) सभी ओर (मयि) (सभी चीज़ को) मेरी

नोट ६.२८ ईश्वर निःसंदेह (ईश्वर से) ड़र रखने वाले निश्चिन्तता की जगह (स्वर्ग) में होंगे। बागों और स्त्रोतों में। बारीक और गाढ़े रेशम के वस्त्र पहने हुए, एक-दूसरे के आमने-सामने उपस्थित (बैठे) होंगे। ऐसा ही उनके साथ मामला होगा। और हम साफ गोरी, बड़ी आंखों वाली स्त्रियों से उनका विवाह कर देंगे। वे वहाँ निश्चिन्तता के साथ हर प्रकार के स्वादिष्ट फल इच्छानुसार मँगवाते होंगे। वहाँ (स्वर्ग में) वे मृत्यु का मज़ा कभी न चखेंगे। बस पहली मृत्यु जो हुई, सो हुई। और उसने (ईश्वर ने) उन्हें भड़कती हुई आग की यातना से बचा लिया।'' (सूरे अल दुखखान (४४) आयत (५१-५६))

नोट ६.२९ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा है, ''वही (ईश्वर) तो है जिसने तुम्हारे लिए धरती की सारी वस्तूएं उत्पन्न कीं।'' (सूरे अल बकरह (२) आयत (२९))

वह व्यक्ति मुझे (ही) देखता है सभी ओर, (जो) सभी ओर (सभी चीज़ को) मेरी (रचना के रुप में) देखता है। (इस दृष्टिकोण के बाद) वह मुझसे दूर नहीं और न मैं उससे दूर हूँ।

(पश्यति) (रचना के रुप में) देखता है। (तस्य) (इस दृष्टिकोण के बाद) वह (अहम्) मुझसे (प्रणश्यामि) दूर (न) नहीं (च) और (न) न (मे) मैं (सः) उससे (प्रणश्यति) दूर हूँ।

६.३१

सर्व-भूत-स्थितम् यः माम् भजति एकत्वम् आस्थितः।
सर्वथा वर्तमानः अपि सः योगी मयि वर्तते।।३१।।

जो (व्यक्ति देखता है) सभी प्राणियों के अस्तित्व को (और) स्वीकार करता (है कि उनका) अस्तित्व (केवल) मुझ एक ईश्वर से ही है (तो) वह भक्त सभी प्राणियों की सेवा का कर्म करता है, किन्तु (वह) कर्म मेरे लिए होते है।

नोट :- भज= स्वीकार करना (संस्कृत हिन्दी शब्दार्थ कोश पेज नं. ६७३)

(यः) जो (व्यक्ति देखता है) (सर्व भूत) सभी प्राणियों के (स्थितम्) अस्तित्व को (भजति) (और) स्वीकार करता (है की उनका) (आस्थितः) अस्तित्व (केवल) (माम्) मुझ (एकत्वम्) एक ईश्वर से ही है (सः) (तो) वह (योगी) भक्त (सर्वथा वर्तमान) सभी प्राणियों की सेवा का कर्म करता है (अपि) किन्तु (मयि वर्तते) (वह) कर्म मेरे लिए होते हैं।

६.३२

आत्म औपम्येन सर्वत्र समम् पश्यति यः अर्जुन।
सुखम् वा यदि वा दुःखम् सः योगी परमः मतः।।३२।।

हे अर्जुन! जो व्यक्ति सब प्राणियों के सुख-दुःख को अपने (सुख-दुःख) के समान ही देखता है (तो) वह योगी सबसे श्रेष्ठ है यह मेरा निर्णय है।

(अर्जुन) हे अर्जुन! (यः) जो व्यक्ति (सर्वत्र) सब प्राणियों के (सुखम् वा दुःखम्) सुख-दुःख को (आत्म औपन्येन) अपने (सुख-दुःख) के (समम्) समान ही (पश्यति) देखता है (सः) (तो) वह (योगी) योगी (परमः) सबसे श्रेष्ठ है (मतः) यह मेरा निर्णय है।

ध्यान योग करने की कठिनाईयाँ

६.३३

अर्जुन उवाच
यः अयम् योगः त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एथिस्य अहम् न पश्यामि चञ्चलत्वात स्थितिम् स्थिराम् ।।३३।।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (मधुसूदन) हे कृष्ण (यःअयम् योग) ईश्वर की प्रार्थना के इस (साम्येन) सबसे सही तरीके को जो (त्वया) आपने (मुझसे) (प्रोक्तः) कहा (चञ्चलत्वात्

नोट ६.३२ पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, तुम में से कोई भी उस समय तक ईश्वर में श्रद्धा रखने वाला नहीं समझा जाएगा जब तक तुम अपने भाई के लिए वही पसंद न करो जो तुम अपने लिए पसंद करते हो। (हदीस-बुखारी-मुस्लिम)

अर्जुन ने कहा, हे कृष्ण ईश्वर की प्रार्थना के इस सबसे सही तरीके को जो आपने (मुझसे) कहा। मन के चंचल स्थिती के कारण मैं इस पर स्थिर रहना सम्भव नहीं देखता हूँ।

स्थितिम्) मन के चंचल स्थिती के कारण (अहम्) मैं (एतस्य) इस पर (स्थिराम्) स्थिर रहना (न) (सम्भव) नहीं (पश्यामि) देखता हूँ।

६.३४

चञ्चलम् हि मनः कृष्ण प्रमाथि बल-वत् दृढम्।
तस्य अहम् निग्रहम् मन्ये वायोः इव सु-दुष्करम्
।।३४।।

हे कृष्ण!, निःसंदेह, मन चंचल, उत्तेजित, बलवान, ज़िद्दी (है)। इसको वश में करना मैं वायु (हवा) (को वश में करने) जैसा बहुत कठिन मानता हूँ।

(कृष्ण) हे कृष्ण! (हि) निःसंदेह (मनः) मन (चञ्चलम्) चंचल है (प्रमाथि) उत्तेजित है (बलवत्) बलवान है (और) (दृढम्) ज़िद्दी है (तस्य) उसको (निग्रहम्) वश में करना (अहम्) मैं (वायोः) वायु (को वश में करने) (इवं) जैसा ही (सु-दुष्करम्) बहुत कठिन (मन्ये) मानता हूँ।

६.३५

श्री भगवान उवाच,
असंशयम् महाबाहो मनः दुर्निग्रहम् चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।३५।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! इसमें कोई संशय नहीं कि चंचल मन (को) वश में करना कठिन है। किन्तु हे अर्जुन, अभ्यास और वैराग्य से इसे वश में किया जा सकता है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (महाबाहो) हे अर्जुन (असंशयम्) इसमें कोई संशय नहीं कि (चलम्) चंचल (मन) मन (को) (दुर्निग्रहम्) वश में करना कठिन है। (तु) किन्तु (कौन्तेय) हे अर्जुन (अभ्यासेन) अभ्यास (च) और (वैराग्येण) वैराग्य से (गृह्यते) इसे वश में किया जा सकता है।

६.३६

असंयत आत्मना योगः दुष्प्रापः इति मे मतिः।
वश्य आत्मना तु यतत शक्यः अवाप्तुम् उपायतः
।।३६।।

बेकाबू (अनियंत्रित) मन (के कारण) ईश्वर में ध्यान लगाना कठिन है। अपनी क्षमता के अनुसार मन को वश में करने का प्रयास (करने से) (ईश्वर में ध्यान लगा) पाना सम्भव है। यह मेरा मत है।

(असंयत) बेकाबू (अनियंत्रित) (आत्मना) मन (के कारण) (योगः) ईश्वर में ध्यान लगाना (दुष्प्राप) कठिन है (उपायतः) अपनी क्षमता के अनुसार (वश्य आत्मना) मन को वश में करने का (यतता) प्रयास (करने से) (अवाप्तुम्) (ईश्वर में ध्यान लगा) पाना (शक्यः) सम्भव है। (इति) यह (मे) मेरा (मतिः) मत है।

विफल योगी का परिणाम

६.३७

अर्जुन उवाच
अयतिः श्रद्धया उपेतः योगात् चलित मानसः।
अप्राप्य योग-संसिद्धिम् काम् गतिम् कृष्ण गच्छति।।३७।।

अर्जुन ने कहा, ''आलसी व्यक्ति जो ईश्वर में श्रद्धा के साथ ईश्वर की प्रार्थना के लिए प्रयास करता रहता है। (किन्तु) चंचल मन के कारण प्रार्थना में परिपूर्ण (सिद्ध) नहीं हो पाता है, हे कृष्ण, वह किस धाम को प्राप्त करेगा?''

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (अयतिः) आलसी व्यक्ति (श्रद्धया) जो ईश्वर में श्रद्धा के साथ (योगात्) ईश्वर की प्रार्थना के लिए (उपेतः) प्रयास करता रहता है (चलित मानसः) (किन्तु) चंचल मन के कारण (योग संसिद्धिम्) प्रार्थना में परिपूर्ण (सिद्ध) (अप्राप्त) नहीं हो पाता है (कृष्ण) हे कृष्ण (काम् गतिम्) वह किस धाम (गच्छति) को प्राप्त करेगा?

६.३८

कच्चित् न उभय विभ्रष्टः छिन्न अभ्रम् इरा नश्यति।
अप्रतिष्ठः महा-बाहो विमूढः ब्रह्मणः पथि।।३८।।

हे कृष्ण! (जो व्यक्ति किसी) भ्रम में है, और ईश्वर के सत्य मार्ग पर स्थित न रह सका। क्या वह बिखरे हुए बादल के समान भटककर दोनों (लोक में, अर्थात इस संसार और अन्य लोक में) बरबाद नहीं हो जाता?

(महाबाहो) हे कृष्ण (विमूढः) (जो व्यक्ती किसी) भ्रम में है (ब्राह्मण पथि) और ईश्वर के सत्य मार्ग पर (अप्रतिष्ठः) स्थित न रह सका (कश्चित) क्या वह (छिन्न उब्रम्) बिखरे हुए बादल (इव) के समान (विभ्रष्टः) भटककर (उभय) दोनों (लोक में, अर्थात इस संसार और अन्य लोक में) (नश्यति) बरबाद (न) नहीं हो जाता?

६.३९

एतत् मे संशयम् कृष्ण छेत्तुम् अर्हसि अशेषतः।
त्वत् अन्यः संशयस्य छेत्ता न हि उपपद्यते।।३९।।

हे कृष्ण! यह मेरी शंका है, जिसे पूरी तरह दूर करने के लिए आपसे विनंती करता हूँ। निःसंदेह आपके (सिवा) इस शंका को दूर करने वाला दूसरा कोई हो नहीं सकता।

(कृष्ण) हे कृष्ण (एतत्) यह (मे) मेरी (संशयम्) शंका है (अशेषतः) जिसे पूरी तरह (छेत्तुम्) दूर करने के लिए (अर्हसि) आपसे विनंती करता हूँ (हि) निःसंदेह (त्वत्) आपके (सिवा) (अस्य) इस (संशयस्य) शंका को (छेत्ता) दूर करने वाला (अन्यः) दूसरा (न उपपद्यते) कोई हो नहीं सकता।

६.४०

श्री भगवान उवाच,
पार्थ न एव इह न अमुत्र विनाशः तस्य विद्यते।
न हि कल्याण-कृत् कश्चित् दुर्गतिम् तात गच्छति।।४०।।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (पार्थ) हे अर्जुन! (न इह) न इस संसार में (एवं) और (न अमुत्र) न अन्य लोक में (तस्य) (सत्य कर्म

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! न इस संसार में और न अन्य लोक में (सत्य कर्म करने वाले) व्यक्ति का विनाश होता है। मेरे प्यारे (अर्जुन) लोगों का कल्याण करने वाला व्यक्ति नि:संदेह कभी नरक के स्थान को नहीं पाता।

करने वाले) व्यक्ति का (विनाश) विनाश (विद्यते) होता है। (तात) मेरे प्यारे (अर्जुन) (कल्याण कृत्) लोगों का कल्याण करने वाला व्यक्ति (हि) नि:संदेह (कश्चित) कभी (दुर्गतिम्) नरक के स्थान को (न) नहीं (गच्छति) पाता।

६.४१

प्राप्य पुण्य-कृताम् लोकान् उषित्वा शाश्वतीः समाः।
शुचीनाम् श्री-मताम् गेहे योग-भ्रष्टः अभिजायते।।४१।।

ईश्वर की कम प्रार्थना वाला व्यक्ति, उसने जो कुछ भी पुण्य इस संसार में किए (उनके कारण) स्थायी स्वर्ग का वही (स्थान) पाता है (जो स्थान व्यक्तियों को मिलता है)। (वह स्वर्ग में) नया जीवन पवित्र और महान पद वाले लोगों के घर में या समूह में पाता है।

(योग-भ्रष्ट) ईश्वर की कम प्रार्थना वाला व्यक्ति (पुण्य कृताम) उसने जो कुछ भी पुण्य (लोकान) इस संसार में किए (उनके कारण) (उषित्वा शाश्वती) स्थायी स्वर्ग का (समा) वही (स्थान) (प्राप्य) पाता है (जो स्थान पवित्र व्यक्तियों को मिलता है) (अभिजायते) (वह स्वर्ग में) नया जीवन (शुचीनाम श्री-मताम्) पवित्र और महान पद वाले लोगों के (गेहे) घर में या समूह में पाता है।

६.४२

अथवा योगिनाम् एव कुले भवति धी-मताम्।
एतत् हि दुर्लभ-तरम् लोके जन्म यत् ईदृशम् ।।४२।।

या (वह कम प्रार्थना वाला व्यक्ति) तपस्वी और बुद्धिजीवियों के समूह में स्थान पाता है किन्तु ऐसा बहुत कम होता है। अर्थात इस तरह का परलोक में स्वर्ग में पवित्र लोगों में नया जीवन पाना।

(अथवा) या (वह कम प्रार्थना वाला व्यक्ति) (योगिनाम्) तपस्वी (एवं) और (धी मताम्) बुद्धिजीवियों के (कुले) समूह में (भवति) स्थान पाता है (एतत् हि) किन्तु ऐसा (दुर्लभ तरम्) बहुत कम होता है (यत् ईदृशम्) अर्थात इस तरह का (लोके) परलोक में (जन्म) स्वर्ग में पवित्र लोगों में नया जीवन पाना।

नोट ६.४० ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा है कि, ''जिस किसी ने अच्छा कर्म किया, पुरुष हो या स्त्री, यदि वह ईमान पर है (एक ईश्वर में श्रद्धा रखता है) तो हम उसे अवश्य अच्छा जीवन प्रदान करेंगे और हम उनके सत्कर्म का बदला उन्हें अवश्य देंगे।'' (सुरे-अन-नहल-१६, आयत-९७)

नोट ६.४१ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा है, ''और वे लोग जो इमान ले आए और उनकी संतान भी ईमान लाकर उनके सत्य मार्ग पर चली तो हम उनकी संतान को भी उनके पद तक पहुचा देंगे (स्वर्ग में उनके साथ कर देंगे) और उनके पुण्य में कुछ कम न करेंगे। हर व्यक्ति जो कर्म उसने किए उससे बंधा हुआ है।'' (सुरे-अत-तूर-५२, आयत-२१)

६.४३

तत्र तम् बुद्धि-संयोगम् लभते पौर्व-देहिकम् ।
यतते च ततः भूयः संसिद्धौ कुरुनन्दन।।४३।।

हे अर्जुन! (कम प्रार्थना करने वाले व्यक्ति को भी स्वर्ग में स्थान इस कारण मिलता है कि) वह उस पहले के सांसारिक जीवन में मन से ईश्वर में श्रद्धा रखता था। और वह बार-बार परिपूर्ण या हर तरह से सही होने का प्रयास करता था।

(कुरुनन्दन) हे अर्जुन (कम प्रार्थना करने वाले व्यक्ति को भी स्वर्ग में स्थान इस कारण मिलता है कि) (तत्र) वह (तम्) उस (पौर्व देहिकम्) पहले के सांसारिक जीवन में (बुद्धि संयोगम्) मन से ईश्वर में श्रद्धा (लभते) रखता था (च) और (ततः) वह (भूयः) बार बार (संसिद्धौ) परिपूर्ण या हर तरह से सही होने का (यतते) प्रयास करता था।

६.४४

पूर्व अभ्यासेन तेन एव ह्रियते हि अवशः अपि सः।
जिज्ञासुः अपि योगस्य शब्द-ब्रह्म अतिवर्तते।।४४।।

(कम प्रार्थना करने वाले व्यक्ति को भी स्वर्ग में स्थान इस कारण मिलता है क्योंकि) पहले के (सांसारिक जीवन में) स्वयम् वह वेदों के अभ्यास (पढ़ने) की ओर आकर्षित था, और वह प्रयास करता था ईश्वर के प्रार्थना की। और (उसने) ईश्वर के नाम के जाप करने में भी प्रगति की थी।

(कम प्रार्थना करने वाले व्यक्ति को भी स्वर्ग में स्थान इस कारण मिलता है क्योंकि) (पूर्व) पहले के (सांसारिक जीवन में) (अवशः) स्वयम् (तेन) वह (अभ्यासेन) वेदों के अभ्यास (पढ़ने) की ओर (ह्रियते) आकर्षित था (अपि सः) और वह (जिज्ञासुः) प्रयास करता था (योगस्य) ईश्वर की प्रार्थना की। (अपि) और (उसने) (शब्द ब्रह्म) ईश्वर के नाम के जाप करने में भी (अतिवर्तते) प्रगति की थी।

६.४५

प्रयत्नात् यतमानः तु योगी संशुद्ध किल्बिषः।
अनेक जन्म संसिद्धः ततः याति पराम् गतिम् ।।४५।।

किन्तु (इस प्रकार का स्वर्ग मिलना कम होता है। जो साधारण तौर से होता है वह यह है कि) ईश्वर की कम प्रार्थना करने वाला भक्त जो कड़ी मेहनत के साथ (ईश्वर की प्रार्थना का) प्रयत्न करता था, नरक में कई बार (दंड के कारण) मृत्यु पाकर नया जीवन पाने के बाद सभी पापों से पूरी तरह मुक्त हो जाता है। (उसके बाद) जीवन का सबसे श्रेष्ठ लक्ष्य (स्वर्ग) प्राप्त करता है।

(तु) किन्तु (इस प्रकार का स्वर्ग मिलना कम होता है। जो साधारण तौर से होता है वह यह है की) (योगी) ईश्वर की कम प्रार्थना करने वाला भक्त जो (यतमानः) कड़ी मेहनत के साथ (प्रयत्नात्) (ईश्वर की प्रार्थना का) प्रयत्न करता था (अनेक जन्म) नरक में कई बार (दंड के कारण) मृत्यु पाकर नया जीवन पाने के बाद (किल्बिषः) सभी पापों से (संसिद्धः) पूरी तरह (सशुद्ध) मुक्त हो जाता है। (ततः) (उसके बाद) (परम् गतिम्) जीवन का सबसे श्रेष्ठ लक्ष्य (गतिम्) प्राप्त करता है।

योगी का उँचा स्थान

६.४६

तपस्विभ्यः अधिकः योगी ज्ञानिभ्यः अपि मतः अधिक।
कर्मिभ्य च अधिकः योगी तस्मात् योगी भव अर्जुन।।४६।।

ईश्वर की प्रार्थना करने वाला भक्त (योगी) तपस्वी से श्रेष्ठ है, और वह ज्ञानियों से भी श्रेष्ठ समझा जाता है। और ईश्वर की प्रार्थना करने वाला भक्त धार्मिक परंपरा करने वालों से भी श्रेष्ठ (समझा जाता है)। इस कारण हे अर्जुन, योगी बनो।

(योगी) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला भक्त (योगी) (तपस्विभ्यः) तपस्वी से (अधिकः) श्रेष्ठ है। (अपि) और वह (ज्ञानिभ्यः) ज्ञानियों से भी (अधिकः) श्रेष्ठ (मतः) समझा जाता है। (च) और (योगी) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला भक्त (कर्मिभ्य) धार्मिक परंपरा करने वालों से भी (अधिकः) श्रेष्ठ (समझा जाता है) (तस्मात्) इस कारण (अर्जुन) हे अर्जुन (योगी भव) योगी बनो।

६.४७

योगिनाम् अपि सर्वेषाम् मत-गतेन अन्तः-आत्मना।
श्रद्धावान् भजते यः माम् सः मे युक्त-तमः मतः।।४७।।

ईश्वर की प्रार्थना करने वाले सम्पूर्ण भक्तों में भी जो सच्ची श्रद्धा के साथ मुझमें तल्लीन रहते हुए मन की गहराई से मेरी प्रार्थना में व्यस्त रहता है। वह मेरे मत के अनुसार सर्वश्रेष्ठ योगी है।

(योगिनाम्) ईश्वर की प्रार्थना करने वाले (सर्वेषाम्) सम्पूर्ण भक्तों में (अपि) भी (यः) जो (श्रद्धावान) सच्ची श्रद्धा के साथ (मत् गतेन) मुझमें तल्लीन रहते हुए (अन्त आत्मना) मन की गहराई से (माम्) मेरी (भजते) प्रार्थना में व्यस्त रहता है (सः) वह (मे) मेरे (मतः) मत के (युक्ततमः) सर्वश्रेष्ठ योगी है।

(अध्याय नं.७)

ज्ञान विज्ञान योग

श्रीभगवानुवाच
मय्यासक्तमनाः पार्थ योगं युञ्जन्मदाश्रयः।
असंशयं समग्रं मां यथा ज्ञास्यसि तच्छृणु ॥1॥

ज्ञानं तेऽहं सविज्ञानमिदं वक्ष्याम्यशेषतः।
यज्ज्ञात्वा नेह भूयोऽन्यज्ज्ञातव्यमवशिष्यते ॥2॥

मनुष्याणां सहस्रेषु कश्चिद्यतति सिद्धये।
यततामपि सिद्धानां कश्चिन्मां वेत्ति तत्वतः ॥3॥

भूमिरापोऽनलो वायुः खं मनो बुद्धिरेव च।
अहङ्कार इतीयं मे भिन्ना प्रकृतिरष्टधा ॥4॥

अपरेयमितस्त्वन्यां प्रकृतिं विद्धि मे पराम्।
जीवभूतां महाबाहो ययेदं धार्यते जगत् ॥5॥

एतद्योनीनि भूतानि सर्वाणीत्युपधारय।
अहं कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयस्तथा ॥6॥

मत्तः परतरं नान्यत्किञ्चिदस्ति धनञ्जय।
मयि सर्वमिदं प्रोतं सूत्रे मणिगणा इव ॥7॥

श्रीभगवानुवाच
रसोऽहमप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषं नृषु ॥8॥

पुण्यो गन्धः पृथिव्यां च तेजश्चास्मि विभावसौ।
जीवनं सर्वभूतेषु तपश्चास्मि तपस्विषु ॥9॥

बीजं मां सर्वभूतानां विद्धि पार्थ सनातनम्।
बुद्धिर्बुद्धिमतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम् ॥10॥

बलं बलवतां चाहं कामरागविवर्जितम्।
धर्माविरुद्धो भूतेषु कामोऽस्मि भरतर्षभ ॥11॥

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्चये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि ॥12॥

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।
मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम् ॥13॥

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।
मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते ॥14॥

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः ॥15॥

चतुर्विधा भजन्ते मां जनाः सुकृतिनोऽर्जुन।
आर्तो जिज्ञासुरर्थार्थी ज्ञानी च भरतर्षभ ॥16॥

तेषां ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमहं स च मम प्रियः ॥17॥

उदाराः सर्व एवैते ज्ञानी त्वात्मैव मे मतम्।
आस्थितः स हि युक्तात्मा मामेवानुत्तमां गतिम् ॥18॥

बहूनां जन्मनामन्ते ज्ञानवान्मां प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वमिति स महात्मा सुदुर्लभः ॥19॥

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया ॥20॥

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम् ॥21॥

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान् ॥22॥

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि ॥23॥

अव्यक्तं व्यक्तिमापन्नं मन्यन्ते मामबुद्धयः।
परं भावमजानन्तो ममाव्ययमनुत्तमम् ॥24॥

नाहं प्रकाशः सर्वस्य योगमायासमावृतः।
मूढोऽयं नाभिजानाति लोको मामजमव्ययम् ॥25॥

वेदाहं समतीतानि वर्तमानानि चार्जुन।
भविष्याणि च भूतानि मां तु वेद न कश्चन ॥26॥

इच्छाद्वेषसमुत्थेन द्वन्द्वमोहेन भारत।
सर्वभूतानि सम्मोहं सर्गे यान्ति परन्तप ॥27॥

येषां त्वन्तगतं पापं जनानां पुण्यकर्मणाम्।
ते द्वन्द्वमोहनिर्मुक्ता भजन्ते मां दृढव्रताः ॥28॥

जरामरणमोक्षाय मामाश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तद्विदुः कृत्स्नमध्यात्मं कर्म चाखिलम् ॥29॥

साधिभूताधिदैवं मां साधियज्ञं च ये विदुः।
प्रयाणकालेऽपि च मां ते विदुर्युक्तचेतसः ॥30॥

अध्याय का परिचय

- अब तक जो कुछ हमने पढ़ा उसका सार यह है की कुछ कर्म बन्धन है जिनसे हम बन्धे हैं। एक है कर्म योग जो व्यक्तिगत स्तर पर हमारे अनिवार्य कर्म हैं और दुसरा है कर्म सन्यास जो सामाजिक स्तर पर हमारे लिए अनिवार्य कर्तव्य है।

- इनको भली-भाँति पूरा करने का ज्ञान हमें अध्याय नं. ४ से मिला।

इनको पूरा करने में सबसे बड़ी बाधा हमारा अपनी इच्छाओं को सबसे अधिक महत्त्व देना हैं।

- अपनी इच्छाओं को वश में करने की एक ही पद्धति है और वह है, 'ध्यान योग' जो हमने अध्याय नं. ६ में सिखा।

किंतु यह अपने कर्तव्यों को पूरा करना और लम्बे समय तक ध्यान-योग करना यह सब कठिन काम है। मनुष्य इन्हें क्यों करेगा?

- श्लोक नं. १८.१८ में है की तीन बात प्रेरणा देती है। (Motivating factors है) जिनके कारण मनुष्य इन्हें करता है। वह है,

ज्ञान (Divine Knowledge)

ईश्वर में श्रद्धा (Faith in God)

अन्य लोक में श्रद्धा (Belief in hereafter)

इस कारण अब अध्याय नं.७ से १८ तक इन्हीं तीनों विषयों पर अलग अलग प्रकार से चर्चा होगी ताकि मन में इन पर विश्वास बैठ जाए।

अध्याय नं. ७ से १३ तक मुख्य ज्ञान ईश्वर के बारे में है।

अध्याय का सारांश

- श्लोक नं. १ में ईश्वर ने कहा, ''मुझमें मन लगाकर निश्चित समय पर मेरी प्रार्थना करो। मेरी शरण लेते हुए मेरे आदेश का पालन करो, ''यही कर्मयोग और सन्यास योग को करने का आदेश है। और इनको करने की प्रेरणा ईश्वर और अन्य लोक में श्रद्धा से मिलेगी। अन्य लोक का उल्लेख श्लोक नं. ७.५ में और पुरा अध्याय ईश्वर में श्रद्धा उत्पन्न करने के लिए ही है।

- श्लोक नं. ७.४ और ७.५ में ईश्वर ने कहा की पृथ्वी, जल, तेज, वायु, आकाश, मन, बुद्धि, अहंकार इन आठ तत्त्वों से मैंने इस हीन (inferior) संसार को बनाया है। किन्तु मनुष्य को इसके अतिरिक्त मेरी महान प्राकृतिक रचना अन्य लोक को जानने का प्रयास करना चाहिए।

यह अन्य लोक का परिचय है जहाँ हम मृत्यु के बाद अनंत काल तक रहेंगे।

- अन्य लोक के बाद ईश्वर ने जल, रस, चन्द्रमा, सूर्य, प्रभा, इत्यादि द्वारा अपनी महानता का परिचय दिया।

जल, रस, चन्द्रमा इत्यादि ईश्वर की महानता को कैसे प्रकट करते हैं? इसको उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं।

- जब किसी चित्रकार की महानता को परखना हो तो हम उसके बनाए गए चित्र का निरीक्षण करते हैं अर्थात चित्र ही चित्रकार के महानता का प्रमाण है।

इसी प्रकार ईश्वर की रची हुई वस्तुएं ही ईश्वर की महानता का प्रमाण है। श्लोक में पहले जल का उल्लेख है इसलिए हम पहले जल के उदाहरण से आरम्भ करते हैं।

संसार में अनेक प्रकार के कोल्ड्रींक्स हैं; जैसे कोको कोला, लिम्का, मँगोला इत्यादि। जो बड़ी बड़ी मल्टी नॅशनल कॉर्पोरेट कम्पनियां बनाती हैं, किन्तु एक प्यास से मरता हुआ व्यक्ति मरते समय केवल जल मांगता है। वह कभी नहीं कहता की मुझे एक घुंट कोको कोला पिला दें। इसी तरह मनुष्य सारा जीवन जल को पीता है जिसमें कोई स्वाद नही है फिर भी वह कभी जल से नहीं उकताता। यही ईश्वर की महानता का प्रमाण है कि बिना स्वाद का जल ही मनुष्य जीवन भर पीना चाहता है और यह जल उसके स्वास्थ को भी अच्छा करता है।

● श्लोक नं. ७.९ में ईश्वर ने कहा है कि मैं पृथ्वी का पवित्र गन्ध हूँ।

गर्मी के मौसम के बाद जब पहली वर्षा होती है उस समय पृथ्वी से मिट्टी की एक सुगन्ध उठती है। इसे सुंघकर किसान में खुशहाली की आशा उत्पन्न होती है और वह एकदम प्रसन्न हो जाता है।

विश्व में अनेक प्रकार के इतर, सेंट और सुगन्ध बनते हैं। किन्तु किसी सुगन्ध में वह गुण नही है जो ईश्वर की मिट्टी के सुगन्ध से किसान में उत्पन्न होते है। यही ईश्वर की महानता है।

● इस अध्याय में और अध्याय नं. १० में ईश्वर की महानता को प्रकट करने वाले जिन वस्तुओं के नाम हैं उनसे ईश्वर की महानता कैसे प्रकट होती है यदि हम इसका वर्णन करें तो हजारों पन्ने भी कम पड़ेंगे।

इस कारण यह काम हम आप पर छोड़ते हैं। आप स्वयम् उनके बारे में सोचिए, तो मन से आपको ईश्वर की महानता का विश्वास हो जाएगा।

● श्लोक नं. ७.७ से ७.११ तक ईश्वर की महानता का परिचय है।

● श्लोक नं. ७.१२ और ७.१३ में ईश्वर को न पहचानने का कारण बताया गया है।

● श्लोक नं. ७.१४ और ७.१५ में कहा गया है कि, सत्वगुण, रजोगुण और तमो गुण मनुष्य की परीक्षा के लिए है।

● श्लोक नं. ७.१६-७.१९ में उन लोगों का वर्णन है जो ईश्वर में श्रद्धा रखते है।

● श्लोक नं. ७.२० से ७.२३ तक देवताओं को पूजने के कारण और उनके परिणाम का वर्णन है।

● श्लोक नं. ७.२४ से ७.२६ में मूर्ख लोग ईश्वर के बारे में जो कल्पना करते हैं उसका वर्णन है।

● श्लोक नं. ७.२७ में सत्य मार्ग से भटक जाने के कारण का वर्णन है।

● श्लोक नं. ७.२८-७.२९ में ईश्वर में श्रद्धा के महत्त्व का वर्णन है।

अध्याय

७.१

श्री भगवान उवाच,
मयि आसक्त-मनाः पार्थ योगम् युज्जन् मत-आश्रयः।
असंशयम् समग्रम् माम् यथा ज्ञास्यसि तत् शृणु ।।१।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! मुझमें अपने मन को लगाते हुए मेरी शरण लेते हुए अनुसूचित समय पर मेरी प्रार्थना करो। बिना किसी संदेह के पूरी तरह से जैसे मुझे जान सकते हो वह सुनो।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (पार्थ) हे अर्जुन! (मयि) मुझमें (मनाः) अपने मन को (आसक्त) लगाते हुए (मत-आश्रयः) मेरी शरण लेते हुए। (योगम् युज्जन्) अनुसूचित समय पर मेरी प्रार्थना करो। (असंशयम्) बिना किसी संदेह के (समग्रम्) पूरी तरह से (यथा) जैसे (माम्) मुझे (ज्ञास्यसि) जान सकते हो वह (शृणु) सुनो।

ईश्वर और अन्य लोक के विषय में ज्ञान का महत्त्वः-

७.२

ज्ञानम् ते अहम् स विज्ञानम् इदम् वक्ष्यामि अशेषतः।
यत ज्ञात्वा न इह भूयः अन्यत् ज्ञातव्यम् अवशिष्यते ।।२।।

कुशलता से इस ज्ञान (और इसके) साथ विज्ञान (को) मैं तुमसे कहूँगा। जिसे जानकर इस संसार में फिर से (तुम्हें) कोई और ज्ञान जानने की आवश्यकता नहीं रहेंगी।

(अशेषतः) कुशलता से (ज्ञानम) इस ज्ञान (स) (और इसके) साथ (विज्ञानम्) विज्ञान (को) (अहम्) मैं (ते) तुम (से) (वक्ष्यामि) कहूँगा (यते) जिसे (ज्ञात्वा) जानकर (इह) इस संसार में (भूयः) फिर से (तुम्हें) (अन्यत्) कोई और ज्ञान (ज्ञातव्यम्) जानने की (अवशिष्यते) आवश्यकता (न) नहीं रहेगी।

७.३

मनुष्याणाम् सहस्त्रेषु कश्चित् यतति सिद्धये।
यतताम् अपि सिद्धानाम् कश्चित् माम् वेत्ति तत्वतः।।३।।

हजारों मनुष्य में कुछ लोग ही एक ईश्वर में पूर्णतयः एकाग्र होकर प्रार्थना करने का प्रयास करते हैं। और ऐसे पूर्णतयः एकाग्र होकर प्रार्थना करने का प्रयास करने वालों में कुछ ही लोग मेरी वास्तविकता (सत्य) को जान पाते हैं।

(सहस्त्रेषु) हजारों (मनुष्याणाम्) मनुष्य में (कश्चित्) कुछ लोग ही (सिद्धये) एक ईश्वर में पूर्णतया एकाग्र होकर प्रार्थना करने का (यतति) प्रयास करते हैं (अपि) और (सिद्धानाम्) ऐसे पूर्णतयः एकाग्र होकर प्रार्थना (यतताम्) करने का प्रयास करने वालों में (कश्चित्) कुछ ही लोग (माम्) मेरी (तत्त्वतः) वास्तविकता (सत्य) को (वेत्ति) जान पाते हैं।

सृष्टी की रचना के पदार्थ :-

७.४

भूमिः आपः अनलः वायुः खम् मनः बुद्धिः एव च।
अहंकारः इति इयम् मे भिन्ना प्रकृतिः अष्टधा।।४।।

पृथ्वी (मिट्टी), जल, अग्नि, वायु, आकाश। इसी प्रकार मन, बुद्धि और निःसंदेह अहंकार। यह (इस संसार में) मेरी आठ प्रकार की अलग-अलग सृष्टि की रचना करने के पदार्थ हैं।

(भूमिः) पृथ्वी (मिट्टी) (आपः) जल (अनलः) अग्नि (वायुः) वायु (खम्) आकाश (इति) इसी प्रकार (मनः) मन (बुद्धिः) बुद्धि (च एवं) और निःसंदेह (अहंकारः) अहंकार (इति इयम्) यह (इस संसार में) (मे) मेरी (अष्टधा) आठ प्रकार की (भिन्ना) अलग-अलग (प्रकृतिः) सृष्टि की रचना करने के पदार्थ हैं।

ईश्वर की सबसे महत्त्वपूर्ण रचना अन्य लोक है :-

७.५

अपरा इयम् इतः तु अन्याम् प्रकृतिम् विद्धि मे पराम्।
जीव-भूताम् महा-बाहो यया इदम् धार्यते जगत् ।।५।।

किन्तु हे अर्जुन! इस हीन (पृथ्वी के) अतिरिक्त मेरी श्रेष्ठ रचना अन्य लोक को जानने का प्रयास करो, जिस पर इस संसार के सारे प्राणियों की (सफलता या असफलता) निर्भर करती है।

नोट : अन्य लोक को समझने के लिए नोट नं. N-4 पढ़िए।

(तु) किन्तु (महाबाहो) हे अर्जुन (अपरा इयम्) इस हीन (इतः) (पृथ्वी के) अतिरिक्त (मे) मेरी (पराम्) श्रेष्ठ (प्रकृतिम्) रचना (अन्याम्) अन्य लोक (विद्धि) को जानने का प्रयास करो (यथा) जिस पर (इदम्) इस (जगत्) संसार के (जीव-भूताम्) सारे प्राणियों की (सफलता या असफलता) (धार्यते) निर्भर करती है।

नोट नं. ७.५ श्लोक नं. ७.४ में ईश्वर ने आठ तत्वों के नाम गिनाए हैं। जिससे उसने इस संसार की रचना की है। यह आठ तत्त्व ईश्वर की महानता को प्रकट करते हैं। इसे सारे ज्ञानी जानते हैं। किन्तु ईश्वर ने इस संसार को श्लोक नं. ७.५ में (अपरा) कहा है, जिसका अर्थ है हीन (Inferior) और वह लोक जिसमें मनुष्य मृत्यु के बाद रहेगा उसे (पराम्) कहा है, अर्थात श्रेष्ठ।
पवित्र कुरआन में भी ईश्वर ने सांसारिक जीवन को खेल-कूद और मृत्यु के बाद के जीवन को वास्तविक जीवन कहा है। वह आयत इस प्रकार है।

और सांसारिक जीवन तो एक खेल और तमाशे के सिवा और कुछ भी नहीं। और आखिरत (मृत्यु के बाद का लोक) का घर उन लोगों के लिए अधिक अच्छा है जो (ईश्वर से) ड़रने वाले हैं। क्या तुम समझते नहीं हो? (सूरह अल अनआम ६, आयत ३२.)

७.६

एतत योनिनी भूतानि सर्वाणि इति उपधारय।
अहम् कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयः तथा।।६।।

इस प्रकार सभी धरती पर जन्म लेने वाले प्राणियों की (सफलता और असफलता) निर्भर करती है इन (दोनों पर, अर्थात पृथ्वी लोक और अन्य लोक पर)। और मैं (ही) इस सृष्टि का आरंभ करने वाला हूँ। (और) सम्पूर्ण जगत का (में ही) विनाश करने वाला हूँ।

(इति) इस प्रकार (सर्वाणि) सभी (योनिनी भुतानि) धरती पर जन्म लेने वाले प्राणियों की (उपधारय) (सफलता और असफलता) निर्भर करता है। (एतत) इन (दोनों पर, अर्थात पृथ्वी लोक और अन्य लोक पर) (तथा) और (अहम) मैं (ही) (प्रभवः) इस सृष्टि का आरंभ करने वाला हूँ। (कृत्सस्य) (और) सम्पूर्ण (जगतः) जगत का (में ही) (प्रलयः) विनाश करने वाला हूँ।

ईश्वर का परिचय :-

७.७

मत्तः पर-तरम् न अन्यत् किश्चत् अस्ति धनज्जय।
मयि सर्वम् इदम् प्रोतम् सूत्रे मणि-गणाः इव ।।७।।

हे अर्जुन! मुझ (एक ईश्वर) से श्रेष्ठ कोई दुसरा जरा भी नहीं है। जिस प्रकार मणियाँ सूत धागे में पिरोयी हुई (होने के कारण टिकी रहती है)। (इसी प्रकार) यह सारा संसार मुझ (एक ईश्वर के सहारे टिका हुआ है, या मुझ पर ही निर्भर है)

(धनंजय) हे अर्जुन (मन्त) मुझ (एक ईश्वर) से (पर-तरम्) श्रेष्ठ (अन्यत्) कोई दुसरा (न किश्चित) जरा भी नहीं (अस्ति) है (इव) जिस प्रकार (मणि गणाः) मणियाँ (सुत्रे) सूत धागे में (प्रोतम्) पिरोयी हुई (होने के कारण टिकी रहती हैं) (सर्वम्) (इसी प्रकार) यह सारा संसार (मयि) मुझ (एक ईश्वर के सहारे टिका हुआ है या मुझ पर ही निर्भर है)

७.८

रसः अहम् अप्सु कौन्तेय प्रभास्मि शशिसूर्ययोः।
प्रणवः सर्ववेदेषु शब्दः खे पौरुषम् नृषु।।७.८।।

हे अर्जुन! मैं जल का स्वाद हूँ। सूर्य, चंद्रमा का प्रकाश हूँ। सारे वेदों में ओंकार (ॐ) हूँ। आकाश का शब्द या जाप हूँ। मनुष्यों की शक्ति और क्षमता हूँ।

(कौन्तेय) हे अर्जुन (अहम्) मैं (अप्सु) जल का (रसः) स्वाद हूँ (राशि सूर्ययो) सूर्य चंद्रमा का (प्रभा) प्रकाश (अस्मि) हूँ (सर्व) सारे (वेदेषु) वेदों में (प्रणवः) ओकार (ॐ) हूँ। (खे) आकाश का (शब्दः) शब्द या जाप हूँ। (नृषु) मनुष्यों की (पौरुषम्) शक्ति और क्षमता हूँ।

(अर्थात जल का स्वाद, सूर्य, के प्रकाश में पेड़-पौधो का बढ़ना, चंद्रमा के प्रकाश में फलों का पकना इत्यादि को देखकर मेरी महानता का अनुभव करो।)

७.९

पुण्यः गन्धः पृथिव्याम् च तेजः च अस्मि विभावसौ।
जीवनम् सर्व भूतेषु तपः च अस्मि तपस्विषु ।।९।।

पृथ्वी की पवित्र सुगंध (मैं हूँ)। और (अग्नि का) प्रकाश (मैं) हूँ। तथा सम्पूर्ण प्राणियों में प्राण (मैं हूँ)। और तपस्या करने वालों की तपस्या (मैं) हूँ।

(पृथ्वीयाम्) पृथ्वी की (पुण्य) पवित्र (गंध) सुगंध (मैं हूँ) (च) और (विभावसौ) (अग्नि का) (तेज) प्रकाश (अस्मि) (मैं) हूँ (च) तथा (सर्व भुतेषु) सम्पूर्ण प्राणियों में (जीवनम्) प्राण (मैं हूँ) (च) और (तपस्विषु) तपस्या करने वालों की (तपः) तपस्या (अस्मि) (मैं) हूँ।

७.१०

बीजम् माम् सर्व-भूतानाम् विद्धि पार्थ सनातनम् ।
बुद्धिः बुद्धि-मताम् अस्मि तेजः तेजस्विनाम् अहम् ।।१०।।

हे अर्जुन! सम्पूर्ण प्राणियों का अनादि बीज मुझे जानो। बुद्धिमानों में बुद्धि (मुझसे जानो)। तेजस्वियों में प्रकाश मैं हूँ।

(पार्थ) हे अर्जुन (सर्व) सम्पूर्ण (भुतानाम) प्राणियों का (सनातनम्) अनादि (बीजम्) बीज (माम्) मुझे (विद्धि) जानो (बुद्धिमताम्) बुद्धिमानों में (बुद्धिः) बुद्धि (मुझसे जानो) (तेजस्विनाम्) तेजस्वियों में (तेजः) प्रकाश (अहम्) मैं (अस्मि) हूँ।

७.११

बलम् बल-वताम् च अहम् काम राग विवर्जितम्
धर्माविरुद्धः भूतेषु कामः अस्मि भरत-ऋषभ।।११।।

हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन! बलवानों में काम और क्रोध से रहित शक्ति मैं हूँ और प्राणियों में आनंद का अनुभव करने की ऐसी इच्छा हूँ जो धर्म विरोधी नहीं।

(भारत ऋषभ) हे भरतवंशियों में श्रेष्ठ अर्जुन (बलवताम्) बलवानों में (विवर्जितम्) काम और क्रोध से रहित (बलम्) शक्ति (अहम्) मैं हूँ (च) और (भूतेषु) प्राणियों में (कामः) आनंद का अनुभव करने की ऐसी इच्छा (अस्मि) हूँ (धर्माविरुद्धः) जो धर्म विरोधी नहीं।

ईश्वर को न पहचानने के कारण :-

७.१२

ये च एव सात्त्विकाः भावाः राजसाः तामसाः च ये।
मत्तः एव इति तान् विद्धि न तु अहम् तेषु ते मयि ।।१२।।

निःसंदेह यह जो सात्विक और रजो और तमो गुण हैं वह भी मेरे द्वारा (बनाए गए हैं)। किन्तु

(एरां) निःसंदेह (मे) यह जो (सात्विक) सात्विक (च) और (राजसाः) राजस (च) और (तामसाः) तामस (यावाः) भाव (गुण) है (ये) वह भी (मत) मेरे द्वारा (बनाए गए हैं) (तु) किन्तु (तान्) तुम यह (वेते) इस प्रकार (विद्धि) समझो कि (अहम्) मैं (तेषु) उन

तुम यह इस प्रकार समझो कि मैं उन (मनुष्य) जैसा नहीं हूँ और वह (मनुष्य) भी मेरे (जैसे नहीं)।

(मनुष्य) जैसा (न) नहीं हूँ (च) और (ते) वह (मनुष्य) भी (मयि) मेरे (जैसे नहीं)।

७.१३

त्रिभिः गुण-मयैः भावैः एभिः सर्वम् इदम् जगत् मोहितम् न अभिजानाति माम् एभ्यः परम् अव्ययम् ।।१३।।

ईश्वर द्वारा निर्मित किए गए इन तीनों गुणों में फंसकर यह सब संसार (के मनुष्य) मोहित हैं (भ्रम में है)। इस कारण (इन तीनों गुणों से ऊपर उठकर वह) मुझ महान (और) अविनाशी (ईश्वर को) नहीं जान पाते हैं।

(भवि) ईश्वर द्वारा निर्मित किए गए (एभिः) इन (त्रिभि) तीनों (गुण) गुणों में (मयै) फंसकर (इदम) यह (सर्वम्) सब (जगत) संसार (के मनुष्य) (मोहितम्) मोहित है (भ्रम में है) (एभ्य) इस कारण (इन तीनों गुणों से ऊपर उठकर वह) (माम्) मुझ (परम) महान (और) (अव्ययम्) अविनाशी (ईश्वर को) (न) नहीं (अभिजानाति) जान पाते हैं।

सतो, रजो और तमो गुण मनुष्य की परिक्षा के लिए है।

७.१४

दैवी हि एषा गुण-मयी मम माया दुरत्यया। माम् एव ये प्रपद्यन्ते मायाम् एताम् तरन्ति ते।।१४।।

निःसंदेह मेरे द्वारा (बनाई गई) इन दिव्य गुणों (पर आधारित) मेरे परीक्षा को पार करना बहुत कठिन है। (किन्तु) जो लोग मेरी शरण में आ जाते है वह इस परीक्षा को निःसंदेह पार कर जाते हैं।

(हि) निःसंदेह (मयी) मेरे द्वारा (बनाई गई) (एषा) इन (तीनों) (दैवी) दिव्य (गुण) गुणों (पर आधारित) (मम्) मेरे (माया) परीक्षा को (दुरत्यया) पार करना बहुत कठिन है। (ये) (किन्तु) जो लोग (माम) मेरी (प्रपद्यन्ते) शरण में आ जाते हैं (ते) वह (एताम्) इस (मायाम्) परीक्षा को (एव) निःसंदेह (तरन्ति) पार कर जाते हैं।

७.१५

न माम् दुष्कृतिनः मूढाः प्रपद्यन्ते नर-अधमाः। मायया अपहृत ज्ञानाः आसुरम् भावम् आश्रिताः ।।१५।।

(इस दिव्य ज्ञान पर आधारित) परीक्षा (से पार

(मायया) (इस दिव्य ज्ञान पर आधारित) परीक्षा (से पार कराने वाले) (ज्ञानाः) दिव्य ज्ञान को (आसुरम्) असुर (शैतानी/राक्षस) (भावम्) भाव (स्वभाव) (आश्रिताः) अपनाने

नोट ७.१४ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा है कि, हम ज़रुर तुम्हें डर, भूख, जान-माल की हानियों और आमदनियों के घाटे में डाल कर तुम्हारी परीक्षा लेंगे। (सूरे अल-बकरा २, आयत १५५)

कराने वाले) दिव्य ज्ञान को असुर (शैतानी/ राक्षसी) स्वभाव अपनाने वालों से असुर (शैतान) ने अपहरण कर लिया है (भुला दिया है)। (कारण के यह) मूर्ख दुष्कर्म करने वाले, नरक में गिरने वाले, यह मनुष्य मेरी शरण नहीं लेते (मेरी प्रार्थना नहीं करते)।

वालों से (अपहृत) असुर (शैतान) ने अपहरण कर लिया है (भुला दिया है) (मूढाः) (कारण के यह) मूर्ख (दुष्कृतिनः) दुष्कर्म करने वाले (नर-अधमाः) नरक में गिरने वाले यह मनुष्य (माम्) मेरी (प्रपद्यन्ते) शरण नहीं लेते (मेरी प्रार्थना नहीं करते)

ईश्वर में कौन श्रद्धा रखता है?

७.१६

चतुः र्विधाः भजन्ते माम् जनाः सु-कृतिनः अर्जुन।
आर्तः जिज्ञासुः अर्थ-अर्थी ज्ञानीच भरत-ऋषभ।।१६।।

हे भारत में श्रेष्ठ (अर्जुन)! सत्कर्म करने वालों में केवल चार प्रकार के मनुष्य, मुझ में श्रद्धा रखते हैं (मेरी प्रार्थना करते हैं)। वह जो कष्ट में हैं। वह जिसे मुझे जानने की जिज्ञासा है (इच्छा है)। वह जिसे धन और संपत्ती चाहिए। (और) वह जो ज्ञानी हैं।

(भरत-ऋषभ) हे भारत में श्रेष्ठ (अर्जुन) (सुकृतिनः) सत्कर्म करने वालों में (चतुः) केवल चार प्रकार के (जना) मनुष्य (माम) मुझ में (भजन्ते) श्रद्धा रखते हैं (मेरी प्रार्थना करते हैं) (अर्ति) वह जो कष्ट में हैं (जिज्ञासु) वह जिसे मुझे जानने की जिज्ञासा है (इच्छा है) (अर्थ-अर्थी) वह जिसे धन और संपत्ती चाहिए (ज्ञानी) (और) वह जो ज्ञानी हैं।

७.१७

तेषाम् ज्ञानी नित्य-युक्तः एक भक्तिः विशिष्यते।
प्रियः हि ज्ञानिनः अत्यर्थम् अहम् सः च मम प्रियः ।।१७।।

इन (चारों में) (वह जो) ज्ञानी (है) वह सदैव मेरी प्रार्थना में लगा रहता है। (और मुझ) एक ईश्वर की ही भक्ति करता है। वह श्रेष्ठ है, क्योंकि उस ज्ञानी को मैं बहुत ही प्रिय हूँ, और वह भी मुझे (बहुत) प्रिय है।

(तेषाम्) इन (चारों में) (ज्ञानी) (वह जो) ज्ञानी (है) (नित्य युक्तः) वह सदैव मेरी प्रार्थना में लगा रहता है (एक-भक्तिः) (और मुझ) एक ईश्वर की ही भक्ति करता है (विशिष्यते) वह श्रेष्ठ है (हि) क्योंकि (ज्ञानिनः) उस ज्ञानी को (अहम्) मैं (अत्यर्थम्) बहुत ही (प्रिय) प्रिय हूँ (च) और (सः) वह भी (मम) मुझे (प्रियः) (बहुत) प्रिय है।

नोट ७.१७ पवित्र कुरआन में लिखा है कि, अल्लाह के बन्दों में से सिर्फ ज्ञानवान लोग ही उससे ड़रते हैं। बेशक अल्लाह प्रभुत्वशाली और माफ करने वाला है। (सूरे फातिर ३५, आयत २८)

७.१८

उदाराः सर्वे एव एते ज्ञानी तु आत्मा एव मे मतम्
आस्थितः सः हि युक्त-आत्मा माम् एव
अनुत्तमाम् गतिम् ।।१८।।

निःसंदेह यह सब (यह चारों) आदरणीय हैं किन्तु ज्ञानी (का) मन (पवित्र है इसलिए वह सबसे श्रेष्ठ है)। और इस कारण भी कि वह दृढता से मेरे आदेश का पालन करता है, सदैव मेरी प्रार्थना में लगा रहता है। निःसंदेह यही मनुष्य का सबसे उच्चतम जीवन का उद्देश होना चाहिए।

(एरां) निःसंदेह (सर्वे) यह सब (यह चारों) (उदारा) आदरणीय हैं (तु) किन्तु (ज्ञानी) ज्ञानी (का) (आत्मा) मन (पवित्र है इसलिए वह सबसे श्रेष्ठ है) (एते) और इस कारण भी कि (सः) वह (अस्थितः) दृढता से (मतम्) मेरे आदेश का पालन करता है (युक्त आत्मा) सदैव मेरी प्रार्थना में लगा रहता है। (एवं) निःसंदेह (अनुत्तमाम्) यही मनुष्य का सबसे उच्चतम (गतिम्) जीवन का उद्देश होना चाहिए।

७.१९

बहूनाम् जन्मनाम् अन्ते ज्ञान-वान् माम् प्रपद्यते।
वासुदेवः सर्वम् इति सः महा-आत्मा सु-दुर्लभः
।।१९।।

इस तरह मृत्यु तक सारे कर्मों को (केवल) मेरे सहारे पर करने वाले कृष्ण के जैसे बहुत सारे जन्म लेने वाले ज्ञानियों में अत्यंत दुर्लभ है।

(इति) इस तरह (अन्ते) मृत्यु तक (सर्वम्) सारे कर्मों को (माम्) (केवल) मेरे (प्रपद्यते) सहारे पर करने वाले (वासुदेवः) कृष्ण (सः) के जैसे (बहूनाम्) बहुत सारे (जन्मनाम्) जन्म लेने वाले (ज्ञानवान्) ज्ञानियों में (सुदुर्लभः) अत्यंत दुर्लभ है।

नोट ७.२० पवित्र कुरआन में ईश्वर ने पैगम्बर मुहम्मद (स.) से कहा कि जो ईश्वर के अतिरिक्त दुसरों की पूजा करते हैं। उनसे पूछो कि क्या तुम जिन्हें ईश्वर ठहराते हो उनमें कोई है जो पहली बार (प्रकृति की) रचना करता है और फिर उसे दोबारा भी पैदा करे? कहो, ईश्वर ही पहली बार पैदा करता है, फिर वही उसकी पुनरावृत्ती करेगा। (इस सत्य को जानने के बाद) फिर तुम कहाँ से उलटे भटके चले जा रहे हो।
(हे मुहम्मद (स.) इनसे) कहो, क्या तुम जिन्हें ईश्वर ठहराते हो उनमें कोई है, जो सत्य का मार्ग दिखा सकता हो? ईश्वर ही सत्य के मार्ग पर ड़ालता है। फिर जो सत्य का मार्ग दिखाता हो वह इस बात का ज्यादा हकदार है कि उसका अनुकरण किया जाए, या वह जो स्वयं ही मार्ग न पाए जब तक कि उसे मार्ग न दिखाया जाए, तो तुम्हें क्या हो गया है? तुम कैसे (किसी की प्रार्थना का) निर्णय करते हो?

और उनमें से अधिकतर लोग तो बस अटकल (अंदाजा, अनुमान) पर चलते हैं। इसमें कोई सन्देह नहीं कि अटकल सत्य की तुलना में कुछ भी लाभ नहीं देगा। जो कुछ ये कर रहे हैं ईश्वर उसे भली-भाँति जानता है। और यह कुरआन ऐसा नहीं कि ईश्वर के अतिरिक्त इसे कोई और बना लाए। यह ईश्वर की वाणी है। जो अवतरित ग्रंथ इससे पहले अवतरित हुए उनकी पुष्टि करता है और उन ही ग्रंथों का इसमें वर्णन है। इसमें कोई संदेह नहीं कि कुरआन ईश्वर ने अवतरित किया है। (सूरे यूनुस-१०, आयत-३७)

देवताओं को पूजने के कारण:-

७.२०

कामैः तैः तैः हृतज्ञानाः प्रपद्यन्ते अन्य देवताः।
तम् तम् नियमम् आस्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया।।२०।।

(केवल) अपनी इच्छाओं की पूर्ति के प्रयास में जो लोग ईश्वर के दिव्य ज्ञान से दूर हो गए हैं। (वह) दूसरे देवताओं की शरण लेते हैं (उनकी प्रार्थना करते हैं)। वह लोग स्वयम् देवताओं की प्रार्थना के नियम बनाते हैं। जैसे ईश्वर ने अपनी प्रार्थना के नियम बनाए हैं।

(कामै) (केवल) अपनी इच्छाओं की पूर्ति के प्रयास में (तैतै) जो लोग (हत्व ज्ञाना) ईश्वर के दिव्य ज्ञान से दूर हो गए (अन्य) (वह) दूसरे (देवता) देवताओं की (प्रपधन्ते) शरण लेते हैं (उनकी प्रार्थना करते हैं) (तम् तम्) वह लोग (स्वयथा) स्वयम् (आस्थाय) देवताओं की प्रार्थना के (नियमम्) नियम बनाते हैं (प्रकृत्या नियता) जैसे ईश्वर ने अपनी प्रार्थना के नियम बनाए हैं।

७.२१

यः यः याम् याम् तनुम् भक्तः श्रद्धया अर्चितुम् इच्छति।
तस्य तस्य अचलाम् श्रद्धाम् ताम् एव विदधामि अहम् ।।२१।।

जो जो (देवताओं के) भक्त जिस जिस देवता में श्रद्धा रखते हैं और उनकी भक्ति की इच्छा करते हैं। मैं (ईश्वर) नि:संदेह उन (भक्तों के) श्रद्धा को उन देवताओं पर और दृढ़ कर देता हूँ।

(यः यः) जो जो (भक्त) (देवताओं के) भक्त (याम् याम्) जिस जिस (तमुम) देवता में (श्रद्धया) श्रद्धा रखते हैं (अर्चितुम) और उनकी भक्ति की (इच्छति) इच्छा करते हैं (अहम) मैं (ईश्वर) एवं (नि:संदेह) (तस्य तस्य) उन (भक्तों के) (श्रद्धाय) श्रद्धा को (ताम्) उन देवताओं पर (अचलाम्) और दृढ़ (मज़बूत) (विदधामि) कर देता हूँ।

७.२२

सः तया श्रद्धा युक्तः तस्य आराधनम् ईहते।
लभते च ततः कामान् मया एव विहितान् हि तान् ।।२२।।

(सः) वह (भक्त) (तया) उस (देवता की) (श्रद्धा युक्तः) पूरी श्रद्धा के साथ (ईहते) (अपनी इच्छाओं के पूरा होने) की अपेक्षा के

नोट ७.२१ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''और जो कोई इसके बाद भी कि मार्गदर्शन खुलकर उसके सामने आ गया है, पैगम्बर का विरोध करेगा और एक ईश्वर में श्रद्धा रखने वालों (ईमानवालों) के मार्ग के सिवा किसी और मार्ग का अनुगमन करेगा, हम उसे उसी के हवाले करेंगे जिसको उसने अपनाया और उसे नरक में झोकेंगे। और वह बुरा ठिकाना है।'' (सूरे अन निसा-४, आयत-११५)

नोट ७.२१ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, उनके दिलों में एक रोग है जिसे ईश्वर ने और अधिक बढ़ा दिया, और जो झूठ वे बोलते हैं, उनके फलस्वरुप उनके लिए दर्दनाक सज़ा (दंड) है। (सूरे अल बकर २, आयत १०)

वह (भक्त) उस (देवता की) पूरी श्रद्धा के साथ (अपनी इच्छाओं के पूरा होने) की अपेक्षा के साथ भक्ति करता है और उस (देवता से वह) अपनी इच्छा की वस्तु प्राप्त भी कर लेता है, किन्तु (सत्य यह है कि) उसे मेरे द्वारा ही (उसके इच्छा की सारी वस्तुएँ) दी जाती हैं।

साथ (तस्य आराधनम) भक्ति करता है (च) और (ततः) उस (देवता से वह) (कामान्) अपनी इच्छा की वस्तु (लाभते) प्राप्त भी कर लेता है (एवं) किन्तु (सत्य यह है कि) (तान्) उसे (मया) मेरे द्वारा ही (विहितान्) (उसके इच्छा की सारी वस्तुएँ) दी जाती हैं।

७.२३

अन्त-वत् तु फलम् तेषाम् तत् भवति अल्प-मेधसाम्।
देवान् देव-यजः यान्ति मत् भक्ताः यान्ति माम् अपि।।२३।।

मेरी प्रार्थना करने वाले (मृत्यु के बाद) निःसंदेह मेरे (स्वर्ग में) जाएंगे। देवताओं की प्रार्थना करने वाले देवताओं के पास जाऐंगे। (किन्तु) उनके कर्म-फल के कारण उन कम बुद्धि वालों का विनाश होगा।

(मत भक्ता) मेरी प्रार्थना करने वाले (मृत्यु के बाद) (अपि) निःसंदेह (माम्) मेरे (स्वर्ग में) (यान्ति) जाएंगे (देव-यजः) देवताओं की प्रार्थना करने वाले (देवान्) देवताओं के पास (यान्ति) जाऐंगे (तु) (किन्तु) (फलम्-तेषाम्) उनके कर्म-फल के कारण (तत) उन (अल्प मेधसाम्) कम बुद्धि वालों का (अन्त-वत्) विनाश (भवति) होगा।

बुद्धिहीन व्यक्तियों की गलतीः-

७.२४

अव्यक्तम् व्यक्तिम् आपन्नम् मन्यन्ते माम् अबुद्धयः।
परम् भावम् अजानन्तः मम अव्ययम् अनुत्तमम् ।।२४।।

(मम) मेरे (परम) महान (अनुत्तमम) और सबसे श्रेष्ठ (अव्ययम्) अविनाशी (भावम) भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (अबुद्धयः)

नोट ७.२३ (एक ईश्वर में श्रद्धा न रखने वालों से) कहो, जिनके ईश्वर होने का तुम्हें गुमान है उनको पुकार कर देखो। उन्हें न तो तुमसे किसी कष्ट के दूर करने का अधिकार प्राप्त है औन न (उसे) बदलने का।

जिनको ये (ईश्वर के सिवा) पुकारते हैं, वे तो स्वयं अपने रब (ईश्वर) की तरफ पहुंचने की चाह रखते हैं, उनमें जो सबसे (ईश्वर के) अधिक निकट है वह भी इसी चाह में हैं और वे उसकी (ईश्वर की) दयालुता की आशा रखते हैं और उसकी यातना से ड़रते हैं। वास्तव में तेरे रब की यातना ड़रने ही की चीज़ है। (सूरे बनी इस्राईल-१७, आयत-५६-५७)

नोट ७.२२ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''और जिस दिन वह एक ईश्वर में श्रद्धा न रखने वालों को घेर लायेगा और उन्हें भी जिन्हें वे ईश्वर को छोड़ कर पूजते हैं।'' फिर वह उनसे कहेगा (जिनको लोग ईश्वर के अतिरिक्त पूजते हैं) क्या मेरे इन बन्दों को पथभ्रष्ट तुमने किया था या वह स्वयम् मार्ग से भटक गए थे? वे कहेंगे (हे ईश्वर) तू महिमावान है। यह हमसे नहीं हो सकता था कि तेरे सिवा दूसरे संरक्षक मित्र बनाते, परन्तु तूने उन्हें और उनके पूर्वजों को सुख सामग्री दी यहाँ तक कि वे तेरी याद को भुला बैठे और ये विनष्ट होने वाले लोग थे। (सूरह अल फुरकान-२५, आयत-१७-१८)

मेरे महान और सबसे श्रेष्ठ अविनाशी भाव को न जानते हुए, बुद्धिहीन मनुष्य, में (जो) अदृश्य (निर्गुण और निराकार हूँ) (मैंने) मनुष्य की तरह शरीर धारण कर लिया है, ऐसा मानते हैं।

बुद्धिहीन मनुष्य (माम्) में (जो) (अव्यक्तम्) अदृश्य (निर्गुण और निराकार हूँ) (व्यक्तिम्) (मैंने) मनुष्य की तरह शरीर (आपन्नम्) धारण कर लिया है (मन्यते) ऐसा मानते हैं।

७.२५

न अहम् प्रकाशः सर्वस्य योग-माया समावृतः।
मूढः अयम् न अभिजानाति लोकः माम् अजम् अव्ययम् ।।२५।।

(इस पृथ्वी) लोक में, मैं (अपने) प्रकाश (तेज) को सारे लोगों को नहीं देखता। मेरा न दिखाई देना, यह मनुष्य की परीक्षा (से संबंध रखता है)। में जन्म लेने वाला नहीं हूँ (और) अविनाशी हूँ (मुझे मृत्यू नहीं)। इस सत्य को मूर्ख लोग नहीं जानते।

(लोक) (इस पृथ्वी) लोक में, (अहम्) मैं (प्रकाश) (तेज) (अपने) प्रकाश को (सर्वस्य) सारे लोगों को (न) नहीं देखता (समावृतः) मेरा न दिखाई देना (योग-माया) यह मनुष्य की परीक्षा (से संबंध रखता है) (माम्) में (अजम्) जन्म लेने वाला नहीं हूँ (और) (अव्ययम्) अविनाशी हूँ (मुझे मृत्यू नहीं) (अयम) इस सत्य को (मुढः) मूर्ख लोग (न) नहीं (अभिजानाति) जानते।

७.२६

वेद अहम् समतीतानि वर्तमानानि च अर्जुन।
भविष्याणि च भूतानि माम् त वेद न कश्चन ।।२६।।

हे अर्जुन! मैं भुतकाल में जो हो चुका। वर्तमान काल में जो है और भविष्यकाल में जो होगा। (उन सबको) जानता हूँ। परन्तु मानवजाति मुझे तनिक सा भी नहीं जानती है।

(अर्जुन) हे अर्जुन (अहम) मैं (समतीतानी) भुतकाल में जो हो चुका (वर्तमानानि) वर्तमान काल में जो है। (च) और (भविष्याणि) भविष्यकाल में जो होगा। (वेद) (उन सबको) जानता हूँ। (तु) परन्तु (भूतानि) मानवजाति (माम) मुझे (कश्चन) तनिक सा भी (न) नहीं (वेद) जानती है।

जिवन में चिन्ताओं का कारण :-

७.२७

इच्छा द्वेष समुत्थेन द्वन्द्व मोहेन भारत।
सर्व भूतानि सम्मोहम् सर्गे यान्ति परन्तप।।२७।।

हे अर्जुन! भ्रम (सत्य को न जानने के कारण) (उन्नती और समृद्धी की) इच्छा (और असफलता और कष्ट) से द्वेष (जैसे) द्वन्द्व

(भारत) हे अर्जुन! (मोहेन) भ्रम (सत्य को न जानने के कारण) (इच्छा द्वेष) (उन्नती और समृद्धी की) इच्छा (और असफलता और कष्ट) से द्वेष (जैसे) (द्वन्द्व) द्वन्द्व (Duality) (समुत्थेन) (मन में) जन्म लेते है (परन्तप) हे अर्जुन (सर्व भुतानि) सारे लोग (सर्गे) जन्म से

(Duality) (मन में) जन्म लेते हैं। हे अर्जुन! सारे लोग जन्म से ही इस भ्रम में ग्रस्त (मुबतिला) रहते हैं।

ही (सम्मोहम्) इस भ्रम में (यान्ति) ग्रस्त (मुबतिला) रहते हैं।

नोट-(मानवजाति को भ्रम यह है कि इस पृथ्वी पर सफलता ही वास्तविक सफलता है और सत्य यह है कि सत्कर्म करके स्वर्ग पाना ही वास्तविक सफलता है। किन्तु मनुष्य जन्म से ही केवल पृथ्वी पर सफल होने के प्रयास में लगा रहता है और यह उसका भ्रम है।)

ईश्वर में श्रद्धा का महत्त्व :-

७.२८

येषाम् तु अन्त-गतम् पापम् जनानाम् पुण्य कर्मणाम्।
ते द्वन्द्व मोह निर्मुक्ताः भजन्ते माम् दृढ-व्रताः ।।२८।।

दृढता से जो मुझ पर श्रद्धा रखते हैं (मेरी प्रार्थना करते हैं) और जिनके पाप पुण्य कर्मों के कारण नष्ट हो गए हैं। वह लोग द्वन्द्व और भ्रम से मुक्त होते हैं।

द्वन्द्व का अर्थ है DualitieS या सुख से प्रेम और दुखः को नापसन्द करना।

(दृढव्रताः) दृढता से जो (माम्) मुझ पर (भजन्ते) श्रद्धा रखते हैं (मेरी प्रार्थना करते हैं) (येषाम) और जिनके (जनानाम्) पाप (पुण्य-कर्मणाम) पुण्य कर्मों के कारण (अन्त-गतम्) नष्ट हो गए हैं। (ते) वह लोग (द्वन्द्व) द्वन्द्व (मोह) और भ्रम (निर्मुक्ताः) से मुक्त होते हैं।

७.२९

जरा मरण मोक्षाय माम् आश्रित्य यतन्ति ये।
ते ब्रह्म तत् विदुः कृत्स्नम् अध्यात्मम् कर्म च अखिलम् ।।२९।।

जो प्रयास करते हैं मेरे शरण में आने की। वह छुटकारा पाते हैं बुढापे (और) मृत्यु से (अर्थात वह स्वर्ग पाते हैं जहाँ बुढापा और मृत्यु नहीं है)। वह उस ईश्वर को भी पहचानते हैं और पूरी तरह (उन) सभी सत्कर्मों को भी जानते हैं जिससे आध्यात्मिक सफलता मिलती है। (अर्थात ईश्वर की कृपा और प्रसन्नता मिलती है)।

(ये) जो (यतन्ति) प्रयास करते हैं (अश्रित्य) मेरे शरण में आने की (मोक्षाय) वह छुटकारा पाते हैं (जरा) बुढापे (और) (मरण) मृत्यु से (अर्थात वह स्वर्ग पाते हैं जहाँ बुढापा और मृत्यु नहीं है) (ते) वह (तत) उस (ब्रह्म) ईश्वर (विदुः) को भी पहचानते हैं (च) और (अखिलम्) पूरी तरह (उन) (कृत्स्नम्) सभी (अध्यात्मम् कर्म) सत्कर्मों को भी जानते हैं जिससे आध्यात्मिक सफलता मिलती है। (अर्थात ईश्वर की कृपा और प्रसन्नता मिलती है)

७.३०

स-अधिभूत अधिदैवम् माम् स-अधियज्ञम् च ये विदुः।
प्रयाण काले अपि च माम् ते विदुः युक्त-चेतसः ।।३०।।

(ये) जो (माम्) मुझे (स-अधिभूत) सारे प्राणियों का ईश्वर (अधिदैवम) सारे देवताओं का ईश्वर (च) और (स-अधियज्ञक) वह ईश्वर

जो मुझे सारे प्राणियों का ईश्वर। सारे देवताओं का ईश्वर, और वह ईश्वर केवल जिसके लिए प्रार्थनाएं की जाती हैं ऐसा समझता है। उसके मन में ईश्वर की पूर्ण श्रद्धा है। वह मृत्यु के समय भी मुझे (ही) जानता है (मेरा ही नाम लेता है)

केवल जिसके लिए प्रार्थनाएं की जाती हैं। (विदुः) ऐसा समझता है (युक्त चतस) उसके मन में ईश्वर की पूर्ण श्रद्धा है। (ते) वह (प्रयाण-काले) मृत्यु के समय भी (माम्) मुझे (ही) (विदुः) जानता है (मेरा ही नाम लेता है)

नोटः (श्लोक नं. ८.१३ के अनुसार मृत्यु के समय जो ॐ कहेगा जो कि ईश्वर का एक नाम है तो उसे स्वर्ग मिलेगा।)

(अध्याय नं.८)

अक्षर ब्रह्म योग

अर्जुन उवाच
किं तद्ब्रह्म किमध्यात्मं किं पुरुषोत्तम।
अधिभूतं च किं प्रोक्तमधिदैवं किमुच्यते॥1॥

अधियज्ञः कथं कोऽत्र देहेऽस्मिन्मधुसूदन।
प्रयाणकाले च कथं ज्ञेयोऽसि नियतात्मभिः॥2॥

श्रीभगवानुवाच
अक्षरं ब्रह्म परमं स्वभावोऽध्यात्ममुच्यते।
भूतभावोद्भवकरो विसर्गः कर्मसंज्ञितः॥3॥

अधिभूतं क्षरो भावः पुरुषश्चाधिदैवतम्।
अधियज्ञोऽहमेवात्र देहे देहभृतां वर॥4॥

अंतकाले च मामेव स्मरन्मुक्त्वा कलेवरम्।
यः प्रयाति स मद्भावं याति नास्त्यत्र संशयः॥5॥

यं यं वापि स्मरन्भावं त्यजत्यन्ते कलेवरम्।
तं तमेवैति कौन्तेय सदा तद्भावभावितः॥6॥

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युद्ध च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्॥7॥

अभ्यासयोगयुक्तेन चेतसा नान्यगामिना।
परमं पुरुषं दिव्यं याति पार्थानुचिन्तयन्॥8॥

कविं पुराणमनुशासितार-मणोरणीयांसमनुस्मरेद्यः।
सर्वस्य धातारमचिन्त्यरूप- मादित्यवर्णं तमसः परस्तात्॥9॥

प्रयाण काले मनसाचलेन भक्त्या युक्तो योगबलेन चैव।
भ्रुवोर्मध्ये प्राणमावेश्य सम्यक्- स तं परं पुरुषमुपैति दिव्यम्॥10॥

यदक्षरं वेदविदो वदन्ति विशन्ति यद्यतयो वीतरागाः।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण प्रवक्ष्ये॥11॥

सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्न्याधायात्मनः प्राणमास्थितो योगधारणाम्॥12॥

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्॥13॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनीः॥14॥

मामुपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयमशाश्वतम्।
नाप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिं परमां गताः॥15॥

आब्रह्मभुवनाल्लोकाः पुनरावर्तिनोऽर्जुन।
मामुपेत्य तु कौन्तेय पुनर्जन्म न विद्यते॥16॥

सहस्रयुगपर्यन्तमहर्यद्ब्रह्मणो विदुः।
रात्रिं युगसहस्रान्तां तेऽहोरात्रविदो जनाः॥17॥

अव्यक्ताद्व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्त्यहरागमे।
रात्र्यागमे प्रलीयन्ते तत्रैवाव्यक्तसंज्ञके॥18॥

भूतग्रामः स एवायं भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्र्यागमेऽवशः पार्थ प्रभवत्यहरागमे॥19॥

परस्तस्मात्तु भावोऽन्योऽव्यक्तोऽव्यक्तात्सनातनः।
यः स सर्वेषु भूतेषु नश्यत्सु न विनश्यति॥20॥

अव्यक्तोऽक्षर इत्युक्तस्तमाहुः परमां गतिम् ।
यं प्राप्य न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम ॥21॥

पुरुषः स परः पार्थ भक्त्या लभ्यस्त्वनन्यया।
यस्यान्तः स्थानि भूतानि येन सर्वमिदं ततम् ॥22॥

यत्र काले त्वनावत्तिमावृत्तिं चैव योगिनः।
प्रयाता यान्ति तं कालं वक्ष्यामि भरतर्षभ ॥23॥

अग्निर्ज्योतिरहः शुक्लः षण्मासा उत्तरायणम्।
तत्र प्रयाता गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्मविदो जनाः॥24॥

धूमो रात्रिस्तथा कृष्ण षण्मासा दक्षिणायनम्।
तत्र चान्द्रमसं ज्योतिर्योगी प्राप्य निवर्तते॥25॥

शुक्ल कृष्णे गती ह्येते जगतः शाश्वते मते।
एकया यात्यनावृत्ति मन्ययावर्तते पुनः ॥26॥

नैते सृती पार्थ जानन्योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात्सर्वेषु कालेषु योगयुक्तो भवार्जुन ॥27॥

वेदेषु यज्ञेषु तपःसु चैव दानेषु यत्पुण्यफलं प्रदिष्टम्।
अत्येत तत्सर्वमिदं विदित्वा योगी परं स्थानमुपैति चाद्यम् ॥28॥

अध्याय का परिचय

श्लोक नं. १८.१८ के अनुसार तीन कारणों से मनुष्य सत्कर्म के लिए प्रेरित होता है। दिव्य ज्ञान का होना, ईश्वर में श्रद्धा और अन्य लोक पर विश्वास।

इस भगवद् गीता के हर श्लोक में ज्ञान है। अध्याय नं. ७ से १३ में ईश्वर में श्रद्धा को प्रबल करने का ज्ञान है। और पूरे भगवद् गीता में उचित अवसर पर ईश्वर ने अन्य लोक का भी वर्णन किया है।

अन्य लोक में सफल होने के लिए मनुष्य को जो ज्ञान चाहिए वह सबसे अधिक ज्ञान इसी अध्याय नं. ८ में है।

अन्य लोक की यात्रा का आरम्भ होता है मृत्यु से। अर्थात मृत्यु उचित स्थिती में हो। उचित स्थिती में मृत्यु होने के लिए मनुष्य को उचित तरीके से जीवन व्यतीत करना होगा और अपने मन में ईश्वर के बारे में उचित श्रद्धा रखना होगा।

दूसरे शब्दों में इसे ऐसा भी कह सकते हैं कि यदि मनुष्य ईश्वर के बारे में उचित श्रद्धा रखता है। अपने योग्यता के अनुसार ईश्वर की प्रार्थना करता है, तो उसकी उचित स्थिती में मृत्यु होगी। वह उज्ज्वल मार्ग से स्वर्ग की ओर जाएगा। और सत्कर्मों के कारण यदि उसे ईश्वर से स्वर्ग में प्रवेश की अनुमति मिल गई तो फिर वह सदैव के लिए स्वर्ग में रहेगा।

इस अध्याय नं. ८ को पढ़कर और इसके कथन में पूर्ण विश्वास करने से हमारा जीवन उचित मार्ग पर होगा। मृत्यु उचित स्थिती में होगी और मृत्यु के बाद स्वर्ग जाने का उज्ज्वल मार्ग भी मिलेगा।

- Hereafter या अन्य लोक की श्रद्धा इस प्रकार है कि मृत्यु के बाद व्यक्ति परलोक में प्रलय तक रहेगा। प्रलय के दिन ईश्वर आत्मा को फिर शरीर में प्रवेश करायेगा। उसके बाद कर्मों का लेखा-जोखा होगा। फिर कर्मों के अनुसार व्यक्ति उज्वल या अंधेरे मार्ग से स्वर्ग या नर्क में चला जाएगा। ईश्वर में श्रद्धा वाले नर्क में अपनी सज़ा पूरी करके स्वर्ग में आ जाएगें और जो ईश्वर को नहीं मानते वह सदैव नर्क में रहेंगे।

- वह लोक जहाँ स्वर्ग और नर्क है उसी को अन्य लोक कहते हैं। वहाँ मनुष्य को अनन्त काल तक रहना है।

- अन्य लोक का वर्णन निम्नलिखित श्लोकों में है।

- ४.३१, ४.४०, ६.४०, ७.५, ७.६, ८.२०

- प्रलय का वर्णन ३.२४, ७.६, ८.२२, ९.७, श्लोकों में है।

- प्रलय के दिन जीवित किए जाने का वर्णन ९.७, १५.८, १५.९, १५.१०, १५.११ श्लोकों में है। कर्मो का लेखा-जोखा देने का वर्णन श्लोक नं. ५.१५ में है।

अध्याय का सारांश

इस अध्ययन का सार इस प्रकार है।

- श्लोक नं. ८.१ से ८.४ तक ईश्वर का इस प्रकार से वर्णन है कि ईश्वर के बारे में जो गलतफहमी (भ्रान्ति) है वह दूर हों।

- श्लोक नं. ८.५ से ८.९ तक ईश्वर को याद करने के महत्त्व का वर्णन है। जो व्यक्ति ईश्वर को याद करते हुए मृत्यु पाएगा। वह स्वर्ग

पाएगा और ऐसा तभी होगा जब मनुष्य जीवन में भी ईश्वर को याद करता होगा।

- श्लोक नं. ८.१० से ८.१५ तक स्वर्ग कैसे प्राप्त किया जाए इसका वर्णन है।

- श्लोक नं. ८.१७ में है कि ईश्वर का एक दिन मनुष्य के १००० वर्ष के बराबर है, तो मनुष्य को प्रयास करना चाहिए कि उसका स्वर्ग जाने में एक दिन की देरी न हो।

- श्लोक नं. ८.१८ और ८.१९ में लिखा है कि हर रात मनुष्य की अस्थायी (Temporary) मृत्यु हो जाती है। सुबह वह जीवित हो जाता है। इस अस्थायी जीवन और मृत्यु के समान, स्थायी मृत्यु के बाद भी स्थायी जीवन है।

- श्लोक नं. ८.२२ में अन्य लोक में सफलता के महत्वपूर्ण सुत्र का वर्णन है। और वह संगम से बचना है। अर्थात एक ईश्वर के साथ किसी और की प्रार्थना न करना।

- श्लोक नं. ८.२८ में कहा गया है कि मनुष्य जो कुछ भी पुण्य करता है उसका फल उसे स्वर्ग में मिलेगा।

अध्याय

ईश्वर का परिचय :-

८.१

अर्जुन उवाच,
किम तत् ब्रह्म किम् अध्यात्मम् किम् कर्म पुरुष-उत्तम।
अधि-भूतम् च किम् प्रोक्तम् अधि-दैवम् किम् उच्यते।।१।।

अर्जुन ने कहा, वह ईश्वर कौन है? आत्मा क्या है? पुरुष उत्तम (ईश्वर के) काम क्या है? और सभी प्राणियों का ईश्वर किसे कहते हैं? देवताओं का ईश्वर किसे कहते हैं?

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (तत्) वह (ब्रह्म) ईश्वर (किम) कौन है (अध्यात्मम) आत्मा (किम) क्या है (पुरुष उत्तम) पुरुष उत्तम (ईश्वर के) (कर्म) काम (किम) क्या है (च) और (अधि-भूतम्) सभी प्राणियों का ईश्वर (किम) किसे (प्रोक्तम्) कहते हैं। (अधि-दैवम्) देवताओं का ईश्वर (किम) किसे (उच्यते) कहते हैं।

८.२

अधियज्ञः कथम् कः अत्र देहे अस्मिन् मधुसूदन।
प्रयाण-काले च कथम् ज्ञेयः असि नियत-आत्मभिः ।।२।।

वह ईश्वर जिसके लिए सारी प्रार्थनाएं की जाती हैं (उसे मैं) कैसे (जानू)? हे कृष्ण यहाँ इस शरीर में कौन है? और मृत्यु के समय मन को वश में करके कैसे (उस ईश्वर को) जाना (जा सकता) है? (या स्मरण किया जा सकता है।)

(अधियज्ञः) वह ईश्वर जिसके लिए सारी प्रार्थनाएं की जाती हैं। (कथम्) (उसे मैं) कैसे (जानू) (मधुसुदन) हे कृष्ण (अत्र) यहाँ (अस्मिन) इस (देहे) शरीर में (कः) कौन है (च) और (प्रयाण-काले) मृत्यु के समय (नियत-आत्मभिः) मन को वश में करके (कथम्) कैसे (उस ईश्वर को) (ज्ञेय) जाना (असि) (जा सकता) है।

८.३

श्री भगवान उवाच,
अक्षरम् ब्रह्म परमम् स्वभावः अध्यात्मम् उच्यते।
भूत-भाव-उद्भव-करः विसर्गः कर्म संज्ञितः ।।३।।

ईश्वर ने कहा, महान अविनाशी (ॐ) को ब्रह्म (ईश्वर) कहते हैं। मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तीत्व) है उसे आत्मा कहते हैं। प्राणियों के स्वभाव की रचना करना और (उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के) कर्म (उनको) प्रदान करना (इसे ईश्वर का) कर्म कहा जाता है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (परमम्) महान (अक्षरम्) अविनाशी (ॐ) को (ब्रह्म) ब्रह्म (ईश्वर) (उच्यते) कहते हैं। (स्वभावः) मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तीत्व) है उसे (अध्यात्मम्) आत्मा कहते हैं। (भूत) प्राणियों के (भाव) स्वभाव की (उद्भव) रचना करना और (करः) (उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के) कर्म (उनको) (विसर्गः) प्रदान करना (कर्म) (इसे ईश्वर का) कर्म (संज्ञितः) कहा जाता है।

नोट ८.३ पवित्र कुरआन की एक सूरह इस प्रकार है। कहो, ''वह ईश्वर यकता है (एक है)'' ईश्वर निर्पेक्ष (और सर्वधार) है, न वह जनिता है और न जन्म (अर्थात न वह पैदा हुआ और न इसको सन्तान है) और न कोई उसका समकक्ष है। (सूरह इवलास-११२, आयत-१-३)

नोट ८.३ अक्षर का अर्थ है अविनाशी। ईश्वर अविनाशी है। 'अक्षर' (शब्द) को भी कहते हैं। (संस्कृत हिन्दी शब्दार्थ कोश पं.ईश्वरचंद्र पेज नं.८)
श्लोक नं. १७.२३ में ईश्वर के तीन नामों का वर्णन है। उसमें एक ॐ है। ॐ यह भी केवल दो अक्षर है। इस प्रकार अक्षर का अर्थ हुआ अविनाशी ईश्वर जिसका नाम ॐ है।

Swami Mukundananda has translated shloke No. 8.3 as follow (www.holy-bhagavad-gita.org)

The blessed Lord said: The Supreme Indestructible Entity is called Brahman; one's own self is called Adhyatma. Actions pertaining to the material personality of living beings, and its development are called karma, or fruitive activities.

Shree Krishna says that the Supreme is called Brahman (In the Vedas, God is referred to by many Names Brahman is one of them). It is beyond space, time, and the chain of cause and effect. These are the characteristics of the material realm, while Brahman is transcendental to the material plane. It is unaffected by the changes in the universe, and is imperishable. Hence, It is described as akshram. In the Brihadaranyak Upanishad 3.8.8 Brahman has been described in the same manner: "learned people speak of Brahman as akshar (indestructible)." It is also designated as Puram (Supreme) because It possesses qualities beyond those possessed by Maya and the souls."
The path of spirituality is called adhyatma, and science of the soul is also called adhyatma. But here the word has been used for one's own self, which includes the **Soul**, Body, Mind, and Intellect.

८.४

अधिभूतम् क्षरः भावः पुरुषः च अधिदैवतम्।
अधियज्ञः अहम् एव अत्र देहे-भृताम् वर।।४।।

हे देहधारियों में श्रेष्ठ (अर्जुन)! (मैं) सारे प्राणियों का ईश्वर हूँ और मनुष्य नाश होने वाली प्रकृति वाला (नाशवान) है। मैं (ही) देवताओं का ईश्वर हूँ। सारी प्रार्थनाएं केवल मेरे लिए हैं। नि:संदेह इस शरीर पर (मेरा ही राज है)।

(देह भूतम्) हे देहधारियों में श्रेष्ठ (अर्जुन) (अधिभूतम) (मैं) सारे प्राणियों का ईश्वर हूँ (च) और (पुरुषः) मनुष्य (क्षरःभावः) नाश होने वाली प्रकृति वाला नाशवान है (अहम) मैं (ही) (अधिदैवतम्) देवताओं का ईश्वर हूँ। (अधियज्ञः) सारी प्रार्थनाएं केवल मेरे लिए हैं (एव) नि:संदेह (अत्र) इस (देहे) शरीर पर (मेरा ही राज है)।

स्वर्ग में प्रवेश के योग्य कैसे बनें :-

८.५

अन्त-काले च माम् एव स्मरन् मुक्तवा कलेवरम्
यः प्रयाति सः मत् भावम् याति न अस्ति अत्र संशयः।।५।।

मृत्यु के समय शरीर को त्यागते हुए जो (मेरा स्मरण) करता है, नि:संदेह वह मेरी आज्ञाकारी स्वभाव (सात्विक गुणों वाला स्वभाव) प्राप्त कर चुका इस तरह (मानने में) कोई संदेह नहीं है।

(अन्त-काले) मृत्यु के समय (कलेवरम्) शरीर को (मुक्तवा) त्यागते हुए (यः) जो (मम) मेरा (स्मरन्) स्मरण करता है (एव) नि:संदेह (सः) वह (मत-भावम्) मेरी आज्ञाकारी स्वभाव (सात्विक गुणों वाला स्वभाव) (याति) प्राप्त कर चुका (अत्र) इस तरह (मानने में) (संशय) कोई संदेह (न) नहीं (अस्ति) है।

८.६

यम् यम् वा अपि स्मरन् भावम् त्यजति अन्ते कलेवरम्।
तम् तम् एव एति कौन्तेय सदा तत् भाव भावितः।।६।।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! जीवन के अन्तिम क्षणों में शरीर को त्यागते समय (मृत्यु के समय) (मृतक) जिस-जिस व्यक्तीत्व (देवता या प्राकृतिक शक्ति को भी) स्मरण करता है, नि:संदेह वह उसी को पाता है। (क्योंकि) सदा वह व्यस्त रहा उस (देवता या शक्ति की) प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए।

(श्लोक नं.७.२३ में है की ऐसे लोगों का विनाश होगा।)

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! (अन्त) जीवन के अन्तिम क्षणों में (कलेवरम्) शरीर को (त्यजति) त्यागते समय (मृत्यु के समय) (यम यम) (मृतक) जिस-जिस (भावम्) व्यक्तीत्व (देवता) या प्राकृतिक शक्ति (वा अपि) को भी (स्मरण) स्मरण करता है (एवं) नि:संदेह (तम तम) वह उसी को (एति) पाता है। (सदा) (क्योंकि) सदा वह व्यस्त रहा (तत्) उस (देवता या शक्ति की) (भाव) प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए।

नोट ८.६ पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, जो व्यक्ति जानबुझकर श्रद्धा और सतकर्म के प्रति जिस प्रकार का जीवन व्यतीत करेगा। उसे उसी स्थिती में मृत्यु आएगी। (हदीस-मुस्लिम)

८.७

तस्मात् सर्वेषु कालेषु माम् अनुस्मर युध्य च।
मयि अर्पित मनः बुद्धिः माम् एव एष्यसि असंशयः।।७।।

इस कारण हर समय मुझे ही स्मरण (याद) करते रहो। मन और बुद्धि को मुझे अर्पण करने के लिए (अपने आपसे) युद्ध करो। निःसंदेह (इस तरह तुम) मुझे पा लोगे।

(तस्मात्) इस कारण (सर्वेषु) हर (कालेषु) समय (माम्) मुझे ही (अनुस्मर) याद करते रहो (मनः) मन (च) और (बुद्धि) बुद्धि को (मयि) मुझे (अर्पित) अर्पण करने के लिए (युद्ध) (अपने आपसे) युद्ध करो (असंशय) निःसंदेह (इस तरह तुम) (माम) मुझे (एष्यसि) पा लोगे।

८.८

अभ्यास-योग युक्तेन चेतसा न अन्य गामिनः।
परमम् पुरुषम् दिव्यम् याति पार्थ अनुचिन्तयन् ।।८।।

वेदों के पढ़ने में और ईश्वर की प्रार्थना में लगे रहो। अपने मन को किसी दुसरी ओर मत भटकाओ। हे अर्जुन, (इस प्रकार तुम) (ऐसी बुद्धि) पाओगे जो सदैव व्यस्त रहता है महान दिव्य ईश्वर (की याद में)।

(अभ्यास) वेदों के पढ़ने में और (योग) ईश्वर की प्रार्थना में (युत्केन) लगे रहो (चेतसा) अपने मन को (अन्य) किसी दुसरी ओर (न) मत (गामिनः) भटकाओ (पार्था) हे अर्जुन (इस प्रकार तुम) (याति) (ऐसी बुद्धि) पाओगे (अनुचिन्तयन्) जो सदैव व्यस्त रहता है। (परमम् पुरुषम दिव्यम्) महान दिव्य ईश्वर (की याद में)।

८.९

कविम् पुराणम् अनुशासितारम् अणोः अणीयांसम् अनुस्मरेत् यः।
सर्वस्य धातारम् अचिन्त्य रुपम् आदित्य-वर्णम् तमसः परस्तात् ।।९।।

(ऐसा व्यक्ति जिसका मन सदैव ईश्वर के स्मरण में व्यस्त रहता है) वह (ईश्वर को इस प्रकार) याद करता है (कि ईश्वर) ब्रह्मा (सृष्टि का रचयिता है)। सबसे प्राचीन है। ब्रह्माण्ड का नियंत्रण करने वाला है। अणु और उससे भी छोटे कण को जानता है।

(यः) (ऐसा व्यक्ति जिसका मन सदैव ईश्वर के स्मरण में व्यस्त रहता है) वह (अनुस्मरेत्) (ईश्वर को इस प्रकार) याद करता है (कि ईश्वर) (कविम्) ब्रह्मा (सृष्टि का रचयिता है) (पुराणम्) सबसे प्राचीन है (अनुशासितारम्) ब्रह्माण्ड का नियंत्रण करने वाला (अणोः अणीयासम्) अणु और उससे भी छोटे कण को जानता है। (सर्वस्व धातारम्) सबको पोषण करने वाला

नोट ८.७ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, और मैंने जिन्न और मनुष्य को केवल इसलिए पैदा किया है कि वे मेरी प्रार्थना करें। (सूरे अज जारियात-५१, आयत-५६)

नोट ८.८ पैगंबर मुहम्मद (स.) ने कहा स्वर्ग में प्रवेश करने के बाद मनुष्य एक वस्तु के अतिरिक्त किसी वस्तु के लिए नहीं पछताऐगा। और वह एक वस्तु है मनुष्य का धरती पर बिताया हुआ वह समय जो उसने ईश्वर की याद (स्मरण) के बिना बिताए थे। (हदीस)

सबका पोषण करने वाला है। (वह ऐसा है कि उस) के रुप को समझ नहीं सकता। वह सूर्य की तरह प्रकाश स्वरुप (सबको जीवन देने वाला), और वह बिना दोष के हैं।

(अचिन्त्य रुपम्) जिसके रुप को समझ नहीं सकता (आदित्य-वर्णम्) वह सूर्य की तरह प्रकाश स्वरुप (सबको जीवन देने वाला) (तमस परस्तात्) और वह बिना दोष के हैं।

नोटः 'कविम' के कुछ अर्थ-इस प्रकार है। १. कविता का रचियता २. पंडित ३. शुक्र ४. सूर्य ५. ब्रह्मा ६. ऋषि (पेज नं. २१७ नालंदा विशाल शब्द सागर)

मृत्यु के समय ईश्वर को याद करने का महत्त्व :-

८.१०

प्रयाण-काले मनसा अचलेन भक्त्या युक्तः योग-बलेन च एव।
भ्रुवोः मध्ये प्राणम् आवेश्य सम्यक्सः तम् परम् पुरुषम् उपैति दिव्यम् ।।१०।।

(सज्जन व्यक्ति जो अपनी) प्रार्थना की शक्ति से अपनी सांस को (अपने मन को) दो भौओं (Eyebrow) के मध्य में पूरी तरह से स्थित करता है। (अर्थात बलपूर्वक अपने मन को ईश्वर के ध्यान में स्थित करता है)। और ऐसे ही जीवन भर ईश्वर की प्रार्थना में व्यस्त रहता है। जीवन के अंतिम क्षणों में (वह) अपने मन को किसी ओर भटकने नहीं देता। निःसंदेह वह (पवित्र व्यक्ति) उस महान ईश्वर की दिव्य स्वर्ग को पा लेता है।

(योग बलेन) (सज्जन व्यक्ति जो अपनी) प्रार्थना की शक्ति से (प्राणम्) अपनी सांस को (अपने मन को) (भ्रुवोः मध्ये) दो भौओं के मध्य में (सम्यक्सः) पूरी तरह से (आवेश्य) स्थित करता है। (अर्थात बलपूर्वक अपने मन को ईश्वर के ध्यान में स्थित करता है) (भक्तया-युक्तः) और ऐसे ही जीवन भर ईश्वर की प्रार्थना में व्यस्त रहता है। (प्रयाण-काले) जीवन के अंतिम क्षणों में (मनसा अचलेन) (वह) अपने मन को किसी ओर भटकने नहीं देता (एवं) निःसंदेह (सः) वह (पवित्र व्यक्ति) (तम्) उस (परम पुरुषम्) महान ईश्वर की (दिव्यम्) दिव्य स्वर्ग को (उपैति) पा लेता है।

८.११

यत् अक्षरम् वेद-विदः वदन्ति विशन्ति यत् यतयः वीत-रागाः।
यत् इच्छन्तः ब्रह्मचर्यम् चरन्ति तत् ते पदम् सङग्रहेण प्रवक्ष्ये।।११।।

(वह स्वर्ग) जिसमें प्रवेश करने के लिए वेदों के विद्वान अविनाशी ईश्वर के (नाम का) जाप करते हैं। बड़े मुनि क्रोध को छोड़ देते हैं (और) ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन बिताते हैं। उस स्थान (स्वर्ग के बारे में) संक्षिप्त में कहूँगा।

(यत्) (वह स्वर्ग) जिसमें (विशन्ति) प्रवेश करने के लिए (वेद-विदः) वेदों के विद्वान (अक्षरम्) अविनाशी ईश्वर के (वदन्ति) (नाम का) जाप करते हैं। (यतयः) बड़े मुनि (वीत-रागाः) क्रोध को छोड़ देते हैं (और) (ब्रह्मचर्य चरन्ति) ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन बिताते हैं। (तत) उस (पदम) स्थान (स्वर्ग के बारे में) (सङग्रहेण) संक्षिप्त में (प्रवक्ष्ये) कहूँगा।

नोट ८.९ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''ईश्वर आकाशों और धरती का पैदा करनेवाला है। उसने तुम्हारे लिए तुम्हारी अपनी सहजाति से जोड़े बनाए और चौपायों के जोड़े भी। और इस तरीके पर तुमको फैलाता रहता है। **ईश्वर जैसी कोई चीज़ नही।** वह सब कुछ सुनता, देखता है। (सूरे-अश-शुरा-४२ आयत-११)

स्वर्ग कैसे प्राप्त करें?:-

८.१२

सर्व-द्वाराणि संयम्य मनः हृदि निरुध्य च।
मूर्ध्नि आधाय आत्मनः प्राणम् आस्थितः योग-धरणाम् ।।१२।।

(ईश्वर के स्वर्ग को प्राप्त करने के लिए निम्नलिखित कर्म आवश्यक है)

शरीर के सब द्वारो पर (अंगो पर) नियंत्रण रखो। इच्छाओं को हृदय में सीमित (कैद) रखो, और ईश्वर से जोड़ने वाली प्रार्थना को स्थापित करो (कायम करो)। मन को (दो भौऔं Eyebrow के मध्य में) मस्तक में स्थापित करके ईश्वर में ध्यान लगाओ।

(सर्व-द्वाराणि) शरीर के सब द्वारो पर (अंगो पर) (संयम्य) नियंत्रण रखो (मनः) इच्छाओं को (हृदि) हृदय में (निरुध्य) सीमित (कैद) रखो (च) और (योग-धारणाम्) ईश्वर से जोड़ने वाली प्रार्थना को (आस्थितः) स्थापित करो (कायम करो) (आत्मन) मन को (मुर्ध्नि आधाय) (दो भौऔं के मध्य में) मस्तक में स्थापित करके (प्राणम्) ईश्वर में ध्यान लगाओ।

८.१३

ॐ इति एक-अक्षरम् ब्रह्म व्याहरन् माम् अनुस्मरन् ।
यः प्रयाति त्यजन् देहम् सः याति परमाम् गतिम् ।।१३।।

इस प्रकार जो (मुनि) शरीर को त्यागते समय (मृत्यु के समय) मुझ (ईश्वर को) याद करता है। (और) कहता है ॐ, अविनाशी ईश्वर एक है। वह (मुनि) प्राप्त करता है, सबसे महान जीवन का लक्ष्य (अर्थात स्वर्ग)।

(श्लोक नं. १७.२३ में है कि ॐ तत सत यह तीन ईश्वर के नाम है।)

(इति) इस प्रकार (यः) जो (मुनि) (देह) शरीर को (प्रयाति त्यजन) त्यागते समय (मृत्यु के समय) (मम्) मुझ (ईश्वर को) (अनुस्मरन्) याद करता है (व्यावहरन्) (और) कहता है (ॐ) ॐ (अक्षरम्) अविनाशी (ब्रह्म) ईश्वर (एक) एक है (सः) वह (मुनि) (याति) प्राप्त करता है (परमाम्) सबसे महान (गतिम्) जीवन का लक्ष्य (अर्थात स्वर्ग)।

नोट ८.१३

- पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा मरते समय जिस व्यक्ति के अन्तिम शब्द होगे ''ईश्वर एक है। उसके अतिरिक्त दुसरा कोई प्रार्थना योग्य नही'' तो उसका स्वर्ग में जाना निश्चित है। अरबी में यह शब्द इस प्रकार कहे जाते हैं ''ला इलाहा इल-लल् लाह'' (हदीस अहमद-२१५२९-अबु दाउद-३११६)

इस का अर्थ इस प्रकार है।

ला=नही है

इलाहा=प्रार्थना के योग्य (कोई)

इल=अतिरिक्त (अन्य)

(शेष भाग अगले पेज़ पर है।)

८.१४

अनन्य-चेताः सततम् यः माम् स्मरति नित्यशः।
तस्य अहम् सु-लभः पार्थ नित्य युक्तस्य योगिनः।।१४।।

हे पार्थ! जो मुनि किसी अन्य (देवता) के बारे में सोचे बिना नियमित तौर पर सदैव मेरे स्मरण (में व्यस्त रहता है)। उसके लिए मुझे पाना सरल है। (यह वह) भक्त (है जो सदैव मेरी प्रार्थना में) व्यस्त रहता है।

(पार्थ) हे पार्थ (यः) जो मुनि (अनन्य चेताः) किसी अन्य (देवता) के बारे में सोचे बिना (नित्यशः) नियमित तौर पर (सततम्) सदैव (माम् स्मरति) मेरे स्मरण (में व्यस्त रहता है) (तस्य) उसके लिए (अहम) मुझे (सु-लभ) पाना सरल है (योगिनः) (यह वह) भक्त (है जो सदैव मेरी प्रार्थना में) (युक्तस्य) व्यस्त रहता है।

८.१५

माम् उपेत्य पुनः जन्म दुःख आलयम् अशाश्वतम्
न आप्नुवन्ति महा-आत्मानः संसिद्धिम् परमाम् गताः।।१५।।

(इस तरह) मुझे प्राप्त करके पवित्र व्यक्ति स्थायी कष्ट से भरी नर्क के स्थान में बार-बार नया जीवन नहीं पाता है। (बल्कि) पुर्णतः मेरी प्रार्थना में लगकर (स्वर्ग को जो) सबसे श्रेष्ठ लक्ष्य है उसे प्राप्त करता है।

(माम्) (इस तरह) मुझे (उपत्ये) प्राप्त करके (महा-आत्मानः) मुनि (पवित्र व्यक्ति) (अशाश्र्वतम्) स्थायी (दुःख) कष्ट से भरी (आलयम्) (नर्क) के स्थान में (पुनः) बार-बार (जन्म) नया जीवन (न) नहीं पाता है (संसिद्धिम्) (बल्कि) पुर्णतः मेरी प्रार्थना में लगकर (परमाम्) (स्वर्ग को जो) सबसे श्रेष्ठ (गताः) लक्ष्य है (आप्नुवन्ति) प्राप्त करता है।

नोट ८.१३ का शेष भाग

लल-लाह=नही (सिवाय एक) ईश्वर के
नही है प्रार्थना के योग्य (कोई) ईश्वर के सिवाय।
नोटः पूरा कलमा इस तरह है ''ला इलाहा इल लल लाह, मुहम्मादूर रसूल अल्लाह''
इसके आधे भाग का ऊपर वर्णन है।

- ''ॐ एक अक्षरम ब्रह्मा'' का अर्थ इस प्रकार है।

ॐ ईश्वर (के नाम से आरम्भ करता हूँ) (श्लोक १७:२३ के अनुसार ॐ ईश्वर का नाम है।)
एक=एक है
अक्षरम=अविनाशी
ब्रह्मा=ईश्वर
ॐ, ईश्वर एक और अविनाशी है।
(अक्षरम् शब्द यह श्लोक नं. ८.११, ११.१८, ११.३७, १२.१, १२.३, १२.४, में आया है और कुल मिलाकर इसका अर्थ है ईश्वर के अतिरिक्त प्रार्थना के योग्य कोई नहीं।)

८.१६

आ-ब्रह्म-भुवनात् लोकाः पुनः आवर्तिनः अर्जुन। माम् उपेत्य तु कौन्तेय पुनः जन्म न विद्यते।।१६।।

हे अर्जुन! ईश्वर (के) स्थान (स्वर्ग के) चारों ओर जो लोक हैं (८४ लाख जो नर्क हैं) वहाँ चक्कर चलता रहता है (शरीर के नष्ट होने का और नया शरीर मिलने का)। किन्तु हे अर्जुन, मुझको (ईश्वर को) प्राप्त करने के बाद (मेरे स्वर्ग को प्राप्त करने के बाद) फिर नया जीवन नहीं है। (अर्थात जिसे स्वर्ग मिल गया, तो वह सदैव जीवित रहेगा)।

(अर्जुन) हे अर्जुन (ब्रह्म) ईश्वर (के) (भुवनात) स्थान (स्वर्ग के) (आ) चारों ओर (लोकाः) जो लोक हैं (८४ लाख जो नर्क हैं) (पुनः आवर्तिनः) वहाँ चक्कर चलता रहता है। (शरीर के नष्ट होने का और नया शरीर मिलने का) (तु) किन्तु (कौन्तेय) हे अर्जुन (माम्) मुझको (ईश्वर को) (उपेत्य) प्राप्त करने के बाद (मेरे स्वर्ग को प्राप्त करने के बाद) (पुनःजन्म) फिर नया जीवन (न) नहीं (विद्यते) है। (अर्थात जिसे स्वर्ग मिल गया तो वह सदैव जीवित रहेगा)।

८.१७

सहस्त्र युग पर्यन्तम् अहः यत् ब्रह्मणः विदुः। रात्रिम् युग सहस्त्रान्ताम् ते अहः-रात्र विदः जनाः।।१७।।

मनुष्य के एक हजार वर्ष के बराबर है (ईश्वर का) एक दिन। (ईश्वर के एक) रात की अवधि भी (मनुष्य के) एक हजार वर्ष के बराबर है। जो ईश्वर को जानते हैं, वह मनुष्य (ईश्वर के) रात और दिन को अच्छी तरह जानते हैं।

(सहस्त्र युग) मनुष्य के एक हजार वर्ष के (पर्यन्तम्) बराबर है (अहः) (ईश्वर का) एक दिन (रात्रिम युग) (ईश्वर के एक) रात की अवधि भी (सहस्या याम) (मनुष्य के) एक हजार वर्ष के बराबर है (यत्) जो (ब्रह्मणः) ईश्वर को (विदुः) जानते हैं (ते) वह (जनाः) मनुष्य (अहरात्र) (ईश्वर के) रात दिन को (विदः) अच्छी तरह जानते हैं।

नोट ८.१७ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''तेरे रब (ईश्वर) के यहाँ एक दिन तुम्हारी गणना के हजार वर्ष जैसा है।'' (सुरे-अल-हज्ज (२२) आयत (४७))

स्वर्ग के वर्णन के साथ ईश्वर का एक दिन मनुष्य को एक हजार वर्ष के बराबर है इस सत्य को बताने की क्या अवश्यकता थी? स्वर्ग के वर्णन के साथ ईश्वर के एक दिन की अवधि भी बताई जाती है ताकि मनुष्य स्वर्ग में जाने के लिए एक दिन की भी देरी ना करे।

इस बात को आप निम्नलिखित प्रसंग से समझ सकते हैं।

श्री अबु सईद खुदरी कहते हैं, ''हम अन्य शहरों से आए हुए गरीब लोगों के बीच बैठे हुए थे। एक सहाबी कुरआन पढ़ रहे थे और सब सुन रहे थे। इतने में पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) आ गये और हमसे पूछा कि क्या कर रहे हो? हमने कहा, कुरआन पढ़कर समझने का प्रयास कर रहे हैं। पैगंबर साहब (स.) ने ईश्वर की प्रशंसा की और हमारे पास बैठ गए और कहा कि प्रसन्न हो जाओ। ईश्वर तुम्हें सम्पूर्ण नूर (प्रकाश) देगा और धनवान लोगों से आधा दिन पहले स्वर्ग में प्रवेश कराऐगा। और ईश्वर का आधा दिन ५०० वर्ष का है। श्री अबु सईद खुदरी कहते हैं, यह सुनकर हम बहुत प्रसन्न हुए। (हदीस अबु दाऊद)

तो जो अपना घर-बार सत्य धर्म के लिए छोड़ जाता और साधारण जीवन व्यतीत करता है। जब उन्हें ज्ञान होगा कि वह धनवान लोगों से ५०० वर्ष पहले स्वर्ग में जाएगा तो उन्हें अपने साधारण जीवन पर कभी पछतावा नहीं होगा।

हर दिन मृत्यु कैसे होती है?:-

८.१८

अव्यक्तात् व्यक्तयः सर्वाः प्रभवन्ति अहः-आगमे।
रात्रि-आगमे प्रलीयन्ते तत्र एव अव्यक्त संज्ञके।।१८।।

दिन के आने पर (आत्मा) जो दिखाई नहीं देती है (वह प्राणियों में) दिखाई देती है। (अर्थात जीवन) सारे प्राणियों में दिखाई देता है। निःसंदेह (इसी तरह) रात के आने पर (आत्मा) जो की दिखाई नहीं देती (उसकी) मृत्यु हो जाती है।

(अहः) दिन के (आगमे) आने पर (अव्यक्तात्) (आत्मा) जो दिखाई नहीं देती है (व्यक्तयः) (वह प्राणियों में) दिखाई देती है। (सर्वाः प्रभवन्ति) (अर्थात जीवन) सारे प्राणियों में दिखाई देता है (एवं) निःसंदेह (इसी तरह) (रात्रि आगमे) रात के आने पर (संज्ञके) (आत्मा) जो की (अव्यक्त) दिखाई नहीं देती (प्रलीयन्ते) (उसकी) मृत्यु हो जाती है।

८.१९

भूत-ग्रामः सः एव अयम् भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
रात्रि आगमे अवशः पार्थ प्रभवति अहः आगमे।।१९।।

रात के आने पर (सारे प्राणी) अपने आप मृत्यु पाते हैं। दिन के आने पर (उनमें जीवन) दिखाई देता है। हे पार्थ (अर्जुन) सारे प्राणियों का निःसंदेह वह सब (मेरे द्वारा) उनका बार-बार निर्माण करना या जीवन देना है।

(रात्रि आगमे) रात के आने पर (सारे प्राणी) (अवशः) अपने आप (प्रलीयते) मृत्यु पाते हैं। (अहः आगमे) दिन के आने पर (प्रभवति) (उनमें जीवन) दिखाई देता है। (पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (भूत-ग्राम) सारे प्राणियों का (एवं) निःसंदेह (अयम्) यह सब (सः) उनका (भूत्वा भूत्वा) (मेरे द्वारा) बार-बार निर्माण करना या जीवन देना है।

नोट ८.१९ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ईश्वर आत्मा को उनकी (मनुष्य की) मृत्यु के समय पूर्णतः कब्जे में कर लेता है, और जो अभी मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ है, उनकी आत्मा को उसके सोने की अवस्था में कब्जे में कर लेता है।
फिर जिसके लिए मृत्यु का फैसला दे चुका होता है उसे रोक लेता है और दूसरों को एक निर्धारित समय तक के लिए छोड़ देता है। निश्चय ही इसमें विचारशील लोगों के लिए बड़ी निशानियाँ है। (सूरे-अज जुमर (३८) आयत (४२))

(अर्थात हमारी रुह जिसका वर्णन अध्याय २ में श्लोक नं. १९ से ३० तक है वह तो हमारे शरीर में रहती है। किन्तु आत्मा जिसका वर्णन अध्याय ६ में श्लोक ५ और ६ में है और जिसमें तीनों गुण और बहुत सारी भावनाएँ होती हैं वह सोते समय शरीर से फरिश्ते निकाल लेते हैं और जागने पर फिर शरीर में प्रवेश करा देते हैं। यही श्लोक नं. ८.१९ में कहा गया है।)

श्लोक नं. ८.१८ और ८.१९ यह बात समझायी जा रही है कि जैसे हर दिन मनुष्य की सोते समय अस्थायी (Temporary) मृत्यु और जागने पर जीवन मिलता है। इसी प्रकार वास्तविक मृत्यु के बाद फिर एक जीवन मिलेगा जो अनंतकाल के लिए होगा। और जिस लोक में हमें रहना है उस अन्य लोक का वर्णन श्लोक नं. ८.१९ से ८.२२ तक है।

अन्य लोक का वर्णन :-

८.२०

परः तस्मात् तु भावः अन्यः अव्यक्तः अव्यक्तात् सनातनः।
यः सः सर्वेषु नश्यत्सु न विनश्यति।।२०।।

किन्तु (ईश्वर द्वारा हर दिन निर्माण करने के) बाद (भी) (एक) निर्माण (है) (और वह है) अन्य लोक (वह लोक जहाँ मनुष्य मृत्यु के बाद फिर जीवित किए जाएंगे और फिर वहाँ अन्त काल तक रहेंगें) जो न दिखाई देने वाली की अपेक्षा न दिखाई देने वाली है। सदा स्थित रहने वाली है और वह जो सारे प्राणियों के मृत्यु पर भी (जिसका) विनाश नहीं होगा।

(तु) किन्तु (परः तस्मात) (ईश्वर द्वारा हर दिन निर्माण करने के) बाद (भी) (भाव) (एक) निर्माण (है) (अन्य) (और वह है) अन्य लोक (वह लोक जहाँ मनुष्य मृत्यु के बाद फिर जीवित किए जाएंगे और फिर वहाँ अन्तकाल तक रहेंगें) (अव्यक्तः अव्यक्तात्) जो न दिखाई देने वाली से अधिक न दिखाई देने वाली है। (सनातनः) सदा स्थित रहने वाली है। (यः सः) और वह जो (सर्वेषु) सारे (भुतेषु) प्राणियों (नश्यत्सु) मृत्यु पर भी (विनश्यति) (जिसका) विनाश (न) नहीं होगा।

८.२१

अव्यक्तः अक्षरः इति उक्तः तम् आहुः परमाम् गतिम।
यम् प्राप्य न निवर्तन्ते तत् धाम परमम मम ।।२१।।

इस (अन्य लोक) को ईश्वर न दिखाई देने वाली और अविनाशी कह रहा है। इसी तरह (ईश्वर) इसे सबसे श्रेष्ठ लक्ष्य, स्थान भी कह रहा है। जिसे प्राप्त कर लेने के बाद (मनुष्य संसार में) दोबारा नहीं आते। (ईश्वर यह भी कह रहा है कि) वह (अन्य लोक का) सबसे श्रेष्ठ धाम ही मेरे रहने का स्थान है।

(तम्) इस (अन्य लोक) को ईश्वर (अव्यक्तः) न दिखाई देने वाली (अक्षर) और अविनाशी (उक्तः) कह रहा है (इति) इसी तरह (ईश्वर) (परमाम्) इसे सबसे श्रेष्ठ (गतिम) लक्ष्य, स्थान (आहु) भी कह रहा है (यम्) जिसे (प्राप्य) प्राप्त कर लेने के बाद (निवर्तन्ते) (मनुष्य संसार में) दोबारा (न) नहीं आते (तत्) (ईश्वर यह भी कह रहा है कि) वह (अन्य लोक का) (परमम्) सबसे श्रेष्ठ धाम ही (मम) मेरे (धाम) रहने का स्थान है।

नोट ८.२० ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, क्या इन लोगों ने देखा नहीं कि ईश्वर कैसे पहली बार पैदा करता है, फिर उसकी पुनरावृत्ती करता है। (बार-बार पैदा करता है)। निश्चय ही यह (पुनरावृत्ती) ईश्वर के लिए सरल है। (हे मुहम्मद) कहो, धरती में चलो-फिरो और देखो कि उसने कैसे पहली बार पैदा किया है? फिर ईश्वर ही दूसरी बार (प्रलय के दिन) उठायेगा। निस्संदेह ईश्वर को हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है। (सूरह अल अनकबूत-२९, आयत-१९-२०)

नोट ८.२१ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''हर एक जीव को मौत का मज़ा चखना है।'' फिर तुम्हें हमारी ओर पलट कर आना होगा। जो लोग ईमान लाए और अनुकूल कर्म किए, उन्हें हम स्वर्ग के भवनों में बसायेंगे जिनके नीचे नहरें बह रही होंगी। वहाँ वह सदैव रहेंगे। क्या ही अच्छा बदला है, सत्कर्म करने वालों के लिए। (सूरह अल अनकबूत-२९, आयत-५७-५८)

ईश्वर को पहचानिए :-

८.२२

पुरुषः सः परः पार्थ भक्त्या लभ्यः तु अनन्यया।
यस्य अन्तः-स्थानि भूतानि येन सर्वम् इदम् ततम्।।२२।।

हे अर्जुन! वह (ईश्वर) मनुष्य (होने से) परे है। निःसंदेह किसी और (प्राणी या देवता) की भक्ति के बिना उसकी भक्ति करने से ही उसे प्राप्त किया जा सकता है। (यह वह ईश्वर है) जिसके द्वारा सारे संसार का यह स्तित्व है और जिसके द्वारा सारे प्राणियों का अंत (अर्थात प्रलय का) स्थित होना है।

(पार्थ) हे अर्जुन (सः) वह (ईश्वर) (पुरुष) मनुष्य (होने से) (परः) परे है (तु) निःसंदेह (अनन्यया) किसी और (प्राणी या देवता) की भक्ति के बिना (भक्त्या) उसकी भक्ति करने से ही (लभ्यः) उसे प्राप्त किया जा सकता है (येन्) (यह वह ईश्वर है) जिसके द्वारा (सर्वम्) सारे संसार का (इदम्) यह (ततम्) स्तित्व है (यस्य) और जिसके द्वारा (भुतानि) सारे प्राणियों का (अन्तः) अंत (अर्थात प्रलय का) (स्थानि) स्थित होना है।

स्वर्ग और नरक में प्रवेश की प्रक्रिया :-

८.२३

यत्र काले तु अनावृत्तिम् आवृत्तिम् च एव योगिनः।
प्रयाताः यान्ति तम् कालम् वक्ष्यामि भरत-ऋषभ।।२३।।

निःसंदेह, हे भारत में श्रेष्ठ (अर्जुन)! जिस समय ईश्वर की प्रार्थना करने वाला मृत्यु के बाद स्वर्ग में और नर्क (में) भी जाएंगे, उस समय (के बारे में तुम्हें) बताता हूँ।

(तु) निःसंदेह (भरत ऋषभ) हे भारत में श्रेष्ठ (अर्जुन) (यत्र) जिस (काले) समय (योगिन्) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला (प्रयाताः) मृत्यु के बाद (अनावृतिम) स्वर्ग (च) और (आवृत्तिम) नर्क (एवं) (में) भी (यान्ति) जाएंगे (तम) उस (कालम्) समय (के बारे में तुम्हें) (वक्ष्यामि) बताता हूँ।

८.२४

अग्निः ज्योतिः अहः शुक्लः षट्-मासाः उत्तर-अयणम्।
तत्र प्रयाताः गच्छन्ति ब्रह्म ब्रह्म-विदः जनाः।।२४।।

वह मनुष्य (जो) ईश्वर को जानते हैं (और उसकी प्रार्थना करते हैं) मृत्यु के बाद ईश्वर (के स्वर्ग में) प्रकाशित पथ से जाएँगे। वह (मार्ग) दिव्य तेज से प्रकाशित है। (जैसे) दिन (के समय प्रकाश होता है) जब छह महिने सूर्य उत्तर की ओर होता है।

(जनाः) वह मनुष्य (जो) (ब्रह्म-विदः) ईश्वर को जानते है (और उसकी प्रार्थना करते हैं) (प्रयाताः) मृत्यु के बाद (ब्रह्म) ईश्वर (के स्वर्ग में) (शुक्लः) प्रकाशित पथ से (गच्छन्ति) जाएँगे (तत्र) वह (पथ) (अग्निः ज्योतिः) दिव्य तेज से प्रकाशित है (अहः) (जैसे) दिन (के समय प्रकाश होता है जब) (षट्-मासाः) छह महिने सूर्य (उत्तर-अयणम्) उत्तर की ओर होता है।

८.२५

धूमः रात्रिः तथा कृष्णः षण मासाः दक्षिण-अयणम्।
तत्र चान्द्र-मसम् ज्योतिः योगी प्राप्य निवर्ततेः।।२५।।

नर्क प्राप्त करने वाले भक्त अंधेरे मार्ग के द्वारा (नरक) जाएंगे। वहाँ (ऐसा लगेगा जैसे) छह महीने सूर्य दक्षिण में चला गया है। (जिसके कारण) अंधेरी रात है। धुआँ है और चंद्र के महीनों की धुंधली रौशनी है।

(निवर्ततेः) नर्क (प्राप्य) प्राप्त करने वाले (योगी) भक्त (कृष्णः) अंधेरे मार्ग के द्वारा (नरक) जाएंगे (षण) वहाँ (ऐसा लगेगा जैसे) छह (मासाः) महीने (दक्षिण) सूर्य दक्षिण में (अयणम्) चला गया है। (रात्रि) (जिसके कारण) अंधेरी रात है। (धूमः) धुआँ है (तथा) और (चान्द) चंद्र के (मसम्) महीनों की (ज्योति) धुंधली रौशनी है।

८.२६

शुक्ल कृष्णे गती हि एते जगतः शाश्वते मते।
एकया याति अनावृत्तिम् अन्यया आवर्तते पुनः।।२६।।

मेरे द्वारा वेदों में भी (मृत्यु के बाद) (इस) लोक (से) (जाने के लिए दो) रास्ते (मार्ग बताए गए हैं)। इन (दोनों मार्ग में) निःसंदेह (एक) प्रकाशित मार्ग है। (और दुसरा) अंधेरे (का मार्ग है)। एक मार्ग स्वर्ग की ओर जाता है (और) दुसरा (मार्ग) नर्क की ओर जाता है (जहाँ जीवन मृत्यु का कर्म चलता रहता है)

Note- ८.२६ इस श्लोक में पुनःआवर्तत नरक के लिए कहा गया है।

(मते) मेरे द्वारा (शाश्वते) वेदों में भी (मृत्यु के बाद) (जगतः) (इस) लोक (से) (गती) (जाने के लिए दो) रास्ते (मार्ग बताए गए हैं) (एते) इन (दोनों मार्ग में) (हि) निःसंदेह (शुक्ल) (एक) प्रकाशित मार्ग है (कृष्णे) (और दुसरा) अंधेरे (का मार्ग है) (एक्य) एक मार्ग (अनावृत्तिम्) स्वर्ग की ओर (याति) जाता है (अन्यया) (ओर) दुसरा (मार्ग) (पुनः आवर्तते) नर्क की ओर जाता है (जहाँ जीवन मृत्यु का कर्म चलता रहता है)

नोट ८.२४ पवित्र कुरआन इस बात की पुष्टी करता है कि आकाश में रास्ते हैं। वह आयत निम्नलिखित है।
और आसमान की कसम जिसमें रास्ते हैं। (सूरह अज़-जारियात-५१, आयत-७)

नोट ८.२६ प्रलय के दिन जब ईश्वर में श्रद्धा रखने वाले लोगों को स्वर्ग में जाने की अनुमती मिलेगी और जब वे स्वर्ग की ओर जा रहे होंगे उस समय का वर्णन पवित्र कुरआन में इस प्रकार है।
''जिस दिन (प्रलय के दिन) तुम ईश्वर में श्रद्धा रखने वाले पुरुषों और स्त्रियों को देखोगे कि उनका प्रकाश उनके आगे-आगे दौड़ रहा है और उनके दाहिने हाथ में है। (और उनसे कहा जाएगा कि) आज तुम्हें (स्वर्ग के) ऐसे ऐसे उद्यानों की शुभ-सूचना है जिनके नीचे नहरें बह रही हैं। जिनमें सदैव रहना है। यही है सबसे बड़ी सफलता। (सूरे-अल-हदीद (हदीद) (५७) आयत (१२))

८.२७

न एते सृती पार्थ जानन् योगी मुह्यति कश्चन।
तस्मात् सर्वेषु-कालेषु योग-युक्तः भव अर्जुन।।२७।।

हे अर्जुन इन दोनों मार्गो को जानने वाला भक्त थोडा सा भी भ्रम में नहीं रहता। इसलिए हे अर्जुन हर समय (मेरी) भक्ति में लगे रहो।

(पार्थ) हे अर्जुन (एते) इन दोनों (सृती) मार्गो को (जानन्) जानने वाला (योगी) भक्त (कश्चन) थोड़ा सा भी (मुह्यति) भ्रम में (न) नहीं रहता (तस्मात्) इसलिए (अर्जुन) हे अर्जुन (सर्वेषु) हर समय (कालेषु) समय (योग) (मेरी) भक्ति में (युक्तः) लगे (भव) रहो।

८.२८

वेदेषु यज्ञेषु तपः सु च एव दानेषु यत् पुण्य-फलम् प्रदिष्टम्।
अत्येति तत् सर्वम् इदम् विदित्वा योगी परम् स्थानम् उपैति च आद्यम् ।।२८।।

ईश्वर की प्रार्थना करने वाले भक्त को निःसंदेह वेदों के अभ्यास, प्रार्थना, तप और दान इत्यादी पुण्य के फल की जानकारी दी गई है। जो कभी नष्ट नहीं होगी। इन (पुण्य को) (भक्त) अच्छी तरह जानता है (और पुण्य कर्म करता है)। और (वह) इन सब (पुण्य के कर्मो के फल को) (ईश्वर के आश्वासन के अनुसार) मूल रुप में (स्वर्ग में अवश्य) प्राप्त करेगा।

(योगी) ईश्वर की प्रार्थना करने वाला भक्त को (एवं) निःसंदेह (वेदेषु) वेदों के अभ्यास (यज्ञेषु) प्रार्थना (तपःसु) तप (च) और (दानेषु) दान इत्यादी (पुण्य) पुण्य (फलम्) के फल (प्रदिष्टम्) की जानकारी दी गई है। (यत्) जो (अत्येति) कभी नष्ट नहीं होगी (इदम) इन (पुण्य को) (विदित्वा) (भक्त) अच्छी तरह जानता है (और पुण्य कर्म करता है) (च) और (वह) (तत्) इन (सर्वम) सब (पुण्य के कर्मों के फल को) (आद्यम्) (ईश्वर के आश्वासन के अनुसार) मूल रुप में (उपैति) (स्वर्ग में अवश्य) प्राप्त करेगा।

नोट ८.२८ पुण्य कर्म का बदला मिलने के बारे में कुरआन की एक आयत इस प्रकार है।

अगर तुम ईश्वर को अच्छा कर्ज दोगे। (अर्थात दान करोगे) तो वह उसे तुम्हारे लिए कई गुना बढ़ा देगा (अर्थात अधिक पुण्य देगा) और तुम्हें क्षमा कर देगा, और ईश्वर तो कद्रदान है, बुद्धिवान है। (सूरह अल तगाबून-६४, आयत-१७)

नोट ८.१६

स्वर्ग के चारो ओर नरक है ।नरक के उपर एक पुल है जिसे पुले-सिरात कहते है.।हर व्यक्ति को नरक के उपर से स्वर्ग में जाना है।इस विषय में कुरान की एक आयत इस तरह है।
और तुम में से हर व्यक्ति को नरक के उपर से गुजरना है। यह एक निश्चय पाई हुई बात है,जिसे पूरा करना तेरे रब (ईश्वर)के जिम्मे है।(सूरह मरयम-१९, आयत-७१)

अध्याय- ९

राज विद्या योग

श्रीभगवानुवाच
इदं तु ते गुह्यतमं प्रवक्ष्याम्यनसूयवे।
ज्ञानं विज्ञानसहितं यज्ज्ञात्वा मोक्ष्यसेऽशुभात्॥1॥

राजविद्या राजगुह्यं पवित्रमिदमुत्तमम्।
प्रत्यक्षावगमं धर्म्यं सुसुखं कर्तुमव्ययम्॥2॥

अश्रद्दधानाः पुरुषा धर्मस्यास्य परन्तप।
अप्राप्य मां निवर्तन्ते मृत्युसंसारवर्त्मनि॥3॥

मया ततमिदं सर्वं जगदव्यक्तमूर्तिना।
मत्स्थानि सर्वभूतानि न चाहं तेषवस्थितः॥4॥

न च मत्स्थानि भूतानि पश्य मे योगमैश्वरम्।
भूतभृन्न च भूतस्थो ममात्मा भूतभावनः॥5॥

यथाकाशस्थितो नित्यं वायुः सर्वत्रगो महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत्स्थानीत्युपधारय॥6॥

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिं यान्ति मामिकाम्।
कल्पक्षये पुनस्तानि कल्पादौ विसृजाम्यहम्॥7॥

प्रकृतिं स्वामवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूतग्राममिमं कृत्स्नमवशं प्रकृतेर्वशात्॥8॥

न च मां तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीनवदासीनमसक्तं तेषु कर्मसु॥9॥

मयाध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते सचराचरं।
हेतुनानेन कौन्तेय जगद्विपरिवर्तते॥10॥

अवजानन्ति मां मूढा मानुषीं तनुमाश्रितम्।
परं भावमजानन्तो मम भूतमहेश्वरम्॥11॥

मोघाशा मोघकर्माणो मोघज्ञाना विचेतसः।
राक्षसीमासुरीं चैव प्रकृतिं मोहिनीं श्रिताः॥12॥

महात्मानस्तु मां पार्थ दैवीं प्रकृतिमाश्रिताः।
भजन्त्यनन्यमनसो ज्ञात्वा भूतादिमव्यम्॥13॥

सततं कीर्तयन्तो मां यतन्तश्च दृढ़व्रताः।
नमस्यन्तश्च मां भक्त्या नित्ययुक्ता उपासते॥14॥

ज्ञानयज्ञेन चाप्यन्ते यजन्तो मामुपासते।
एकत्वेन पृथक्त्वेन बहुधा विश्वतोमुखम्॥15॥

अहं क्रतुरहं यज्ञः स्वधाहमहमौषधम्।
मंत्रोऽहमहमेवाज्यमहमग्निरहं हुतम्॥16॥

पिताहमस्य जगतो माता धाता पितामहः।
वेद्यं पवित्रमोङ्कार ऋक्साम यजुरेव च॥17॥

गतिर्भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणं सुहृत्।
प्रभवः प्रलयः स्थानं निधानं बीजमव्ययम्॥18॥

तपाम्यहमहं वर्षं निगृह्णाम्युत्सृजामि च।
अमृतं चैव मृत्युश्च सदसच्चाहमर्जुन॥19॥

त्रैविद्या मां सोमपाः पूतपापायज्ञैरिष्ट्वा स्वर्गतिं प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यमासाद्य सुरेन्द्रलोकमश्नन्ति दिव्यान्दिवि देवभोगान्॥20॥

ते तं भुक्त्वा स्वर्गलोकं विशालंक्षीणे पुण्य मर्त्यलोकं विशन्ति।
एवं त्रयीधर्ममनुप्रपन्ना गतागतं कामकामा लभन्ते ॥21॥

अनन्याश्चिन्तयन्तो मां ये जनाः पर्युपासते।
तेषां नित्याभियुक्तानां योगक्षेमं वहाम्यहम् ॥22॥

येऽप्यन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम् ॥23॥

अहं हि सर्वयज्ञानां भोक्ता च प्रभुरेव च।
न तु मामभिजानन्ति तत्त्वेनातश्च्यवन्ति ते ॥24॥

यान्ति देवव्रता देवान्पितृन्यान्ति पितृव्रताः।
भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम् ॥25॥

पत्रं पुष्पं फलं तोयं यो मे भक्त्या प्रयच्छति।
तदहं भक्त्युपहृतमश्नामि प्रयतात्मनः ॥26॥

यत्करोषि यदश्नासि यज्जुहोषि ददासि यत्।
यत्तपस्यसि कौन्तेय तत्कुरुष्व मदर्पणम् ॥27॥

शुभाशुभफलैरेवं मोक्ष्य से कर्मबंधनैः।
सन्न्यासयोगमुक्तात्मा विमुक्तो मामुपैष्यसि ॥28॥

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु मां भक्त्या मयि ते तेषु चाप्यहम् ॥29॥

अपि चेत्सुदुराचारो भजते मामनन्यभाक्।
साधुरेव स मन्तव्यः सम्यग्व्यवसितो हि सः ॥30॥

क्षिप्रं भवति धर्मात्मा शश्वच्छान्तिं निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति ॥31॥

मां हि पार्थ व्यपाश्रित्य येऽपि स्यु पापयोनयः।
स्त्रियो वैश्यास्तथा शूद्रास्तेऽपि यान्ति परां गतिम् ॥32॥

किं पुनर्ब्राह्मणाः पुण्या भक्ता राजर्षयस्तथा।
अनित्यमसुखं लोकमिमं प्राप्य भजस्व माम् ॥33॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु।
मामेवैष्यसि युक्त्वैवमात्मानं मत्परायण: ॥34॥

अध्याय का परिचय

- इस अध्याय का उद्देश ईश्वर में श्रद्धा को और शुद्ध करना है और अन्य लोक में श्रद्धा को प्रबल करना है।

अध्याय का सारांश

- ईश्वर में श्रद्धा को शुद्ध करने के लिए ईश्वर ने श्लोक नं. ९.४ में कहा कि सारे प्राणी मुझ पर निर्भर करते हैं और मैं किसी पर निर्भर नहीं हूँ।
- श्लोक नं. ९.५ में ईश्वर ने कहा है कि न मैं किसी प्राणी में रहता हूँ और न कोई मुझमें रहेगा।
- श्लोक नं. ९.६ में ईश्वर ने कहा कि जैसे वायु (हवा) प्राणियों के लिए अत्यंत आवश्यक है और जिसके कारण वह जीवित है। इसी प्रकार सारे प्राणी मुझसे जीवित हैं।
- श्लोक नं. ९.७ और ९.८ में ईश्वर कहते हैं कि जैसे मैंने सृष्टी की पहली बार रचना की थी उसी प्रकार प्रलय के समय सबकी फिर रचना करुंगा और जीवित करुंगा।
- श्लोक ९.११ में ईश्वर ने कहा मुझे किसी आकार में मानना मेरा अपमान करना है।
- श्लोक नं. ९.१६ में ईश्वर ने कहा कि यज्ञ में उपयोग होने वाली सारी सामग्री मेरी ही रचना है। इस कारण मुझे छोड़कर किसी और की उपासना मत करो।
- इसी प्रकार श्लोक नं. ९.१७, ९.१८, ९.१९ में ईश्वर ने बहुत सी गलतफहमी को दूर किया है।
- श्लोक नं. ९.२३, ९.२४, ९.२५ में संगम के कारण और उनके परिणाम को बताया है।
- और अन्त में ईश्वर में श्रद्धा रखने वाले को जो सफलता मिलेगी उसका वर्णन है।

अध्याय

इस दिव्य ग्रन्थ में अवतरित ज्ञान है।

९.१

श्री भगवान उवाच,
इदम् तु ते गुह्य तमम् प्रवक्ष्यामि अनसूयवे।
ज्ञानम् विज्ञान सहितम् यत् ज्ञात्वा मोक्ष्यसे अशुभात् ।।१।।

ईश्वर ने कहा (हे अर्जुन), तुम (किसी से) ईर्ष्या नहीं करते हो (इसलिए) अत्यन्त गोपनीय विज्ञान सहित ज्ञान (में तुमसे) कह रहा हूँ। जिसे जानकर (तुम) संसार के अशुभ स्थितियों से मुक्त हो जाओगे।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (ते) (हे अर्जुन)! तुम (किसी से) (अनसूयवे) ईर्ष्या नहीं करते हो (इसलिए) (गुह्य तमम्) अत्यन्त गोपनीय (विज्ञान सहितम्) विज्ञान सहित (ज्ञानम्) ज्ञान (प्रवक्ष्यामि) (में तुमसे) कह रहा हूँ (यत्) जिसे (ज्ञात्वा) जानकर (तुम) (अशुभात्) संसार के अशुभ स्थितियों से (मोक्ष्यसे) मुक्त हो जाओगे।

९.२

राज-विद्या राज-गुह्यम् पवित्रम् इदम् उत्तमम।
प्रत्यक्ष अवगमम् धर्म्यम् सु-सुखम् कर्तुम् अव्ययम् ।।२।।

शान्ति व सुख वाले धर्म का यह ज्ञान सारे ज्ञानों का राजा है। गोपनीय ज्ञानों का राजा है और अत्यंत पवित्र ज्ञान है। यह सबसे श्रेष्ठ और अविनाशी निर्माता (ईश्वर की ओर से) सीधा आया हुआ है।

(सु-सुखम्) शान्ति व सुख वाले (धर्म्यम्) धर्म का यह ज्ञान (विद्या) सारे ज्ञानों का (राज) राजा है (गुह्यम्) गोपनीय ज्ञानों का (राज) राजा है (पवित्रम) और अत्यंत पवित्र ज्ञान है (इदम्) यह (उत्तमम्) सबसे श्रेष्ठ और (अव्ययम्) अविनाशी (कर्तुम) निर्माता (ईश्वर की ओर से) (प्रत्यक्ष) सीधा (अवगमम्) आया हुआ है।

अधर्म व्यक्तियों का भविष्य :-

९.३

अश्रद्दधानाः पुरुषाः धर्मस्य अस्य परन्तप।
अप्राप्य माम् निवर्तन्ते मृत्युः संसार वर्त्मनि।।३।।

हे अर्जुन! (जो) मनुष्य श्रद्धा नहीं रखते इस धर्म में वह मेरे (स्वर्ग को) प्राप्त नहीं कर पाते। वह मृत्यु के संसार (नर्क) (के) मार्ग पर लौट जाते हैं।

(परन्तप) हे अर्जुन (पुरुषाः) (जो) मनुष्य (अश्रद्दधानाः) श्रद्धा नहीं रखते (अस्य) इस (धर्मस्य) धर्म में (अप्राप्य माम्) वह मेरे (स्वर्ग को) प्राप्त नहीं कर पाते (मृत्युः संसार) वह मृत्यु के संसार (नर्क) (वर्त्मनि) (के) मार्ग पर (निवर्तन्ते) लौट जाते हैं।

(नर्क को मृत्यु संसार कहा गया है। कारण कि यातनाओं के कारण व्यक्ति बार-बार मृत्यु पाता है और निरंतर यातना देने के लिए उसे हर बार जीवित किया जाता है।)

ईश्वर के महानता का वर्णन :-

९.४

मया ततम् इदम् सर्वम् जगत् अव्यक्त-मूर्तिना।
मत्-स्थानि सर्व-भूतानि न च अहम् तेषु अवस्थितः।।४।।

मेरी न दिखाई देने वाले अस्तित्व के कारण इस संपूर्ण जगत का फैलाव है। सब प्राणी मुझसे स्थित हैं (मुझ पर निर्भर है), और मैं उनसे स्थित (उन पर निर्भर) नहीं हूँ।

(यथा) मेरी (अव्यक्त) न दिखाई देने वाले (मूर्तिना) अस्तित्व के कारण (इदम्) इस (सर्व) संपूर्ण (जगत) जगत का (ततम्) फैलाव है (सर्व) सब (भूतानि) प्राणी (मत्) मुझसे (स्थानि) स्थित हैं (मुझ पर निर्भर है) (च) और (अहम्) मैं (तेषु) उनसे (अवस्थितः) स्थित (उन पर निर्भर) (न) नहीं हूँ।

नोट ९.३ पवित्र कुरआन में लिखा है कि, तुम्हारे रब ने कहा कि तुम मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी प्रार्थनाएँ स्वीकार करुँगा। जो लोग मेरी बन्दगी के मामले में घमंड से काम लेते हैं, निश्चय ही वे शीघ्र ही अपमानति होकर नरक में प्रवेश करेंगे। (सूरह-अल मोमिन-४०, आयत-६०)

९.५

न च मत्-स्थानि भूतानि पश्य मे योगम् ऐश्वरम।
भूत-भृत् न च भूतस्थः मम आत्मा भूत-भावनः।।५।।

न सारे प्राणी मुझमें रहते है और न (मैं) प्राणियों में रहता हूँ। मुझसे जुड़ी महान प्रकृती को देखो। मैं स्वयं सारे प्राणियों का रचनाकार हूँ, और सारे प्राणियों का अन्नदाता हूँ।

(न) न (भूतानि) सारे प्राणी (मत् स्थानि) मुझमें रहते है (च) और (न) न (मैं) (भूतस्थः) प्राणियों में रहता हूँ (मे) मुझसे (योगम् ऐश्वरम्) जुड़ी महान प्रकृती को (पश्य) देखो (मम) मैं (आत्मा) स्वयं (भूत-भावनः) सारे प्राणियों का रचनाकार हूँ (भूत-भृत्) और सारे प्राणियों का अन्नदाता हूँ।

९.६

यथा आकाश-स्थितः नित्यम् वायुः सर्वत्र-गः महान्।
तथा सर्वाणि भूतानि मत-स्थानि इति उपधारय।।६।।

जिस प्रकार वायु हमेशा और हर जगह आकाश में उपस्थित है। (और जीवन के लिए अत्यंत) महत्त्वपूर्ण है। इस तरह इस (सत्य को समझो कि) सारे प्राणी मुझ पर निर्भर हैं। (मेरे कारण जीवित हैं।)

(यथा) जिस प्रकार (वायुः) वायु (हवा) (नित्यम) हमेशा (सर्वत्र-गः) और हर जगह (आकाश स्थितः) आकाश में उपस्थित है। (महान) (और जीवन के लिए अत्यंत) महत्त्वपूर्ण है (यथा) इस तरह (इति) इस (सत्य को समझो कि) (सर्वाणि भूतानि) सारे प्राणी (मत-स्थानि) मुझ पर निर्भर है। (मेरे कारण जीवित हैं।)

प्रलय के दिन फिर से जीवित किए जाने का वर्णन :-

९.७

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिम् यान्ति मामिकाम्।
कल्प-क्षये पुनः तानि कल्प-आदौ विसृजामि अहम्।।७।।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! मैंने ब्रह्मांड के आरम्भ में इन सारे (मनुष्यों) को निर्माण किया है और ब्रह्माण्ड के अंत (प्रलय) के समय मेरी इच्छा से ईश्वरीय प्रकृति के द्वारा सारे मनुष्य दुबारा (उठाए) जाऐंगे। (जीवित किए जाएंगे)

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! (अहम) मैंने (कल्प-आदौ) ब्रह्मांड के आरम्भ में (तानि) इन सारे (मनुष्यों) को (विसृजामि) निर्माण किया है। (कल्पक्षये) और ब्रह्माण्ड के अंत (प्रलय) के समय (मामिकाम्) मेरी इच्छा से (प्रकृतिम्) ईश्वरीय प्रकृति के द्वारा (सर्वे) सारे (भूतानि) मनुष्य (पुनः) दोबारा (यान्ति) (उठाए) जाऐंगे।

नोट ९.६ जिस प्रकार Solar watch सोलर घड़ी सूर्य के प्रकाश से सक्रिय हो जाती है और काम करती है। इसी प्रकार ब्रह्माण्ड की हर वस्तु ईश्वर के तेज के एक अंश से सक्रिय और जीवित है। जैसे सोलर घड़ी की सुईयाँ सूर्य के प्रकाश से उर्जा पाकर चलती हैं। इसी प्रकार हमारा हृदय ईश्वर के तेज़ से उर्जा पाकर धड़कता है। इस विषय को अच्छी तरह समझने के लिए नोट नं. N-1 पढ़िए।

९.८

प्रकृतिम् स्वाम् अवष्टभ्य विसृजामि पुनः पुनः।
भूत-ग्रामम् इमम् कृत्सनम् अवशम् प्रकृतेः वशात।।८।।

मेरी अपनी प्रकृति के सहारे प्राणियों के विभिन्न समुदाय का बार-बार निर्माण कर रहा हूँ। (इसी प्रकार) इन सबका (प्रलय के समय दोबारा) अवश्य निर्माण करुंगा। (कारण कि यह मेरी निर्माण करने वाली) प्रकृति के वश में है।

(स्वाम्) मेरी अपनी (प्रकृतिम्) प्रकृति के (अवष्टभ्य) सहारे (भूत) प्राणियों के (ग्रामम्) विभिन्न समुदाय का (पुनः पुनः) बार-बार (विसृजामि) निर्माण कर रहा हूँ (इमम्) (इसी प्रकार) इन सबका (अवशम्) (प्रलय के समय दोबारा) अवश्य (कृत्सनम्) निर्माण करुंगा (प्रकृते) (कारण कि यह मेरी निर्माण करने वाली) प्रकृति के (वशात्) वश में है।

नोट ९.७ स्वामी प्रभुपाद जी ने श्लोक नं. ९.७ के अनुवाद में यान्ति का अर्थ to enter प्रवेश करना लिखा है। स्वामी राम सुखदास जी ने साधक-संजीवनी में श्लोक नं. ९.७ के अनुवाद में यान्ति का अर्थ ''प्राप्त होना'' लिखा है। श्लोक नं. १५.८ से १५.१० का अर्थ है कि प्रलय के समय ईश्वर सभी मनुष्यों के शरीर को फिर उत्पन्न करेगा और आत्मा शरीर में प्रवेश करेगी। इस कारण इस श्लोक नं. ९.७ में हमने यान्ति का अर्थ आत्मा का शरीर में प्रवेश करना या आत्मा का शरीर को प्राप्त करना या, मनुष्य का फिर जीवित होना या ईश्वर द्वारा प्रलय के दिन मनुष्य का दुबारा उठाया जाना लिया है।

नोट ९.७ प्रलय के दिन ईश्वर सभी मनुष्यों को फिर जीवित करेगा। इस विषय में पवित्र कुरआन में बहुतसी आयतें हैं। उनमें से एक निम्नलिखित है।

''(ईश्वर में श्रद्धा न रखने वाले) कहते थे, क्या जब हम मरकर मिट्टी हो जाएँगे और हड्डीयों का पंजर रह जाएँगे तो फिर उठा खड़े किए जाएँगे? और क्या हमारे बाप-दादा भी उठाए जाएँगे जो पहले गुजर चुके हैं? हे पैगम्बर, इन लोगों से कहो, नि:संदेह अगले और पिछले सब एक दिन (प्रलय के दिन) जरुर इकट्ठे किए जाने वाले हैं। जिसका समय निश्चित किया जा चुका है।'' (अर्थात प्रलय का समय निश्चित है और उस दिन सारे लोग जीवित किए जाएगें।) (सूरह अल वाकिया-५६, आयत-४७-५०)

नोट ९.८ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''क्या (इन्कार करने वाले) मनुष्य ने नहीं देखा कि हमने उसे वीर्य से पैदा किया? फिर क्या देखते हैं कि वह प्रत्यक्ष विरोधी झगड़ालू बन गया और उसने हम पर फबती कसी (अलोचना की) और अपने जन्म को भूल गया। कहता है, कौन हड्डियों में जान डालेगा, जबकि वे जीर्ण-शीर्ण हो चुकी होंगी? कह दो, उनमें वही जान डालेगा जिसने उनको पहली बार पैदा किया। वह तो सब प्रकार को पैदा करना जानता है। वही है जिसने तुम्हारे लिए हरे-भरे वृक्ष से आग पैदा कर दिया, तो लगे हो तुम उससे जलाने। क्या जिसने आकाशों और धरती को पैदा किया उसे इसकी सामर्थ्य नहीं कि उन जैसों को पैदा कर दे? क्यों नहीं, जबकि वह महान सृष्टा, अत्यन्त ज्ञानवान है। उसका मामला तो बस यह है कि जब वह किसी चीज़ (के पैदा करने) का इरादा करता है तो उससे कहता है, हो जा! और वह हो जाती है। अत: महिमा है उसकी, जिसके हाथ में हर चीज़ का पूरा अधिकार है। और उसी की ओर तुम लौटकर जाओगे।'' (पवित्र कुरआन सूरह-३६, आयत-७७-८३)

९.९

न च माम् तानि कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।
उदासीन-वत् आसीनम् असक्तम् तेषु कर्मसु ।।९।।

हे अर्जुन! यह सब (निर्माण के) कर्म मुझे नहीं बांधते (थकाते) और स्वार्थरहित (अनासक्त) बिना जुड़े, मैं इन कामों में लगा रहता हूँ।

(धनंजय) हे अर्जुन (तानि) यह सब (कर्मणि) (निर्माण के) कर्म (माम) मुझे (न) नहीं (निबध्नन्ति) बांधते (थकाते) (च) और (उदासीन-वत्) स्वार्थरहित (असक्तम्) (अनासक्त) बीना जुड़े (तपे) इन (कर्मसु) कामों में (आसीनम्) लगा रहता हूँ।

९.१०

मया अध्यक्षेण प्रकृतिः सूयते स चर-अचरम।
हेतुना अनेन कौन्तेय जगत् विपरिवर्तते।।१०।।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! मेरे आदेश से जो मैं प्रकृति को देता हूँ यह सब जीवित प्राणी और निर्जीव अस्तित्व में आते हैं और इस कारण इस जगत (में) परिवर्तन होता है।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) (मया) मेरे (अध्यक्षेण) आदेश से (प्रकृतिः) जो मैं प्रकृति को देता हूँ (स) यह सब (चर-अचरम्) जीवित प्राणी और निर्जीव (सूयते) अस्तित्व में आते है (हेतुना) और इस कारण (अनेन) इस (जगत्) जगत (में) (विपरिवर्तते) परिवर्तन होता है।

मूर्खों की गलतफहमी :-

९.११

अवजानन्ति माम् मूढाः मानुषीम् तनुम् आश्रितम।
परम् भावम् अजानन्तः मम भूत महा-ईश्वरम् ।।११।।

मूर्ख लोग मुझ महान ईश्वर (को) (सभी) प्राणियों (का) महान रचियता नहीं मानते। (वह मुझे) मनुष्य की तरह आकार या शरीर वाला मानकर मेरा अपमान करते हैं।

(मूढाः) मूर्ख लोग (माम) मुझ (महा-ईश्वरम्) महान ईश्वर (को) (भूत) (सभी) प्राणियों (का) (परम भावम्) महान रचियता (अजानन्तः) नहीं मानते (मानुषीम्) (वह मुझे) मनुष्य (की तरह) (तनुम) आकार या शरीर वाला (आश्रितम्) मानकर (माम) मेरा (अवजानन्ति) अपमान करते हैं।

अज्ञानीयों का भविष्य :-

९.१२

मोघ आशाः मोघ-कर्माणः मोघ-ज्ञानाः विचेतसः।
राक्षसीम् आसुरीम् च एव प्रकृतिम् मोहिनीम् श्रिताः।।१२।।

(एरां) निःसंदेह (ईश्वर को मनुष्य के समान शरीरवाला समझना) (राक्षसीम्) राक्षसी (विचेतसः) सोच या दृष्टीकोण है (च) और

नोट ९.९ पवित्र कुरआन में लिखा है कि, धरती और आकाश में जो भी है सब अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति की उसी से माँग कर रहे हैं। वह (ईश्वर) हर दिन काम में व्यस्थ रहता है। (सूरे अर रहमान-५५, आयत-२९)

नि:संदेह ईश्वर को मनुष्य के समान शरीरवाला समझना राक्षसी सोच या दृष्टिकोण है और इस भ्रम के कारण लोगों ने आसुरिक शक्तियों की शरण ली है। इस कारण उनके मृत्यु के बाद के जीवन में सफलता की कोई आशा नहीं है। उनके सब सत्कर्म नष्ट हो गए और उनका ज्ञान भी व्यर्थ हो गया।

(मोहिनीम) इस भ्रम के कारण (आसुरीम्) (लोगों ने) आसुरिक (प्रकृतिम्) शक्तियों की (श्रिताः) शरण ली है (इस कारण उनके) (मोघ आशा) (मृत्यु के बाद के जीवन में सफलता की कोई) आशा नहीं है। (मोघ कर्माणः) उनके सब सत्कर्म नष्ट हो गए। (मोघ ज्ञानाः) और उनका ज्ञान भी व्यर्थ हो गया।

ईश्वर में श्रद्धा रखने वालो के गुण :-

९.१३

महा-आत्मनः तु माम् पार्थ दैवीम् प्रकृतिम् आश्रिताः।
भजन्ति अनन्य मनसः ज्ञात्वा भूत आदिम् अव्ययम्।।१३।।

हे अर्जुन ज्ञानी, मुनि, पवित्र लोग नि:संदेह इस ज्ञान के साथ कि मैं प्राणियों का आरम्भ करने वाला, रचना करने वाला अविनाशी (ईश्वर हूँ)। मेरी दैविक प्रकृती शक्ति पर श्रद्धा रखते हैं (शरण लेते हैं)। और मन को दुसरों की ओर भटकाए बिना मेरी प्रार्थना करते हैं।

(पार्थ) हे अर्जुन! (महा-आत्मनः) ज्ञानी, मुनि पवित्र लोग तु नि:संदेह (ज्ञात्वा) इस ज्ञान के साथ की (भूत) मैं प्राणियों का (आदिम) आरम्भ करने वाला (रचना करने वाला) (अव्ययम्) अविनाशी (ईश्वर हूँ) (माम्) मेरी (दैवीम्) दैविक (प्रकृतिम्) प्रकृति शक्ति पर (आश्रिताः) श्रद्धा रखते हैं (शरण लेते हैं) (अनन्य मनसः) और मन को दुसरों की ओर भटकाए बिना (भजन्ति) मेरी प्रार्थना करते हैं।

९.१४

सततम् कीर्तयन्तः माम् यतन्तः च दृढ-व्रताः।
नमस्यन्तः च माम् भक्त्या नित्य-युक्ताः उपासते।।१४।।

ज्ञानी, मुनि, पवित्र लोग सदैव मेरी प्रशंसा करते हैं और प्रयास करते हैं दृढ़ संकल्प के साथ मुझे नमस्कार (सजदा/प्रणाम) करने की और श्रद्धा के साथ मेरे प्रार्थना में सदैव लगे रहते हैं।

(ज्ञानी, मुनि, पवित्र लोग) (सततम्) सदैव (कीर्तयन्तः) मेरी प्रशंसा करते हैं (च) और (यतन्तः) प्रयास करते हैं (दृढ-व्रता) दृढ़ संकल्प के साथ (नमस्यन्त) मुझे नमस्कार (सजदा/प्रणाम) करने की (और) (भक्त्या) श्रद्धा के साथ (माम्) मेरे (उपासते) प्रार्थना में (नित्य युक्ताः) सदैव लगे रहते हैं।

मानवजाति का वर्गीकरण :-

९.१५

ज्ञान-यज्ञेन च अपि अन्ये यजन्तः माम् उपासते।
एकत्वेन पृथक्तेन बहुधा विश्वतः मुखम्।।१५।।

इस संसार में मनुष्यों के दो समूह है पहला समूह

(इस संसार में मनुष्यों के दो समूह हैं) (ज्ञान यज्ञेन) (पहला समूह उन लोगों का है जो) धार्मिक शिक्षा के अनुसार प्रार्थना करते हैं। (च) और

उन लोगों का है जो धार्मिक शिक्षा के अनुसार प्रार्थना करते हैं और नि:संदेह दूसरा समूह उन मनुष्यों का है जो दूसरों की प्रार्थना करते हैं। पहला समूह मेरी प्रार्थना करता है मुझे एक (ईश्वर) मानकर। (दूसरा समूह) बहुत सारे और संसार के विभिन्न आकार और चीजों की प्रार्थना करते हैं।

(अपि) नि:संदेह (अन्ये यजन्तः) (दूसरा समूह उन मनुष्यों का है जो) दूसरों की प्रार्थना करते हैं। (माम् उपासते) (पहला समूह) मेरी प्रार्थना करता है। (एकत्वेन) (मुझे) एक (ईश्वर) मानकर (बहुधा) (दूसरा समूह) बहुत सारे (और) (विश्वतः) संसार के (पृथक्त्वेन) विभिन्न (मुखम्) आकार (और चीजों की प्रार्थना करते हैं।)

दूसरों की प्रार्थना करने वालों की गलतफहमी को ईश्वर ने इस प्रकार दूर किया :-

९.१६

अहम् क्रतुः अहम् यज्ञः स्वधा अहम् औषधम् ।
मन्त्रः अहम् अहम् एव आज्यम् अहम् अग्निः अहम् हुतम् ।।१६।।

(दूसरे समूह के भ्रम को ईश्वर ने अगले चार श्लोकों में स्पष्ट किया है, वह निम्नलिखित है।) मैं वैदिक विधि हूँ (अर्थात वेदों के अनुसार जो प्रार्थनाएं की जाती है वह मेरे लिए हैं)। वह मैं हूँ, जिसके लिए यज्ञ किया जाता है। वह वस्तु जो यज्ञ के समय अग्निकुंड में डाली जाती है, वह भी मेरी रचना है। वह मैं हूँ जो औषधी में उपचार प्रभाव (Healing effect) पैदा करता है। वह मैं हूँ, जो मंत्रो में प्रभाव पैदा करता है। वह अग्नि मेरी ही रचना है, जिसे तुम यज्ञ के समय जलाते हो। नि:संदेह मैंने ही घी की रचना की है जिसे तुम यज्ञ के समय अग्नि में ड़ालते हो, यज्ञ के समय जो भी वस्तु तुम हवन में ड़ालते हो वह मेरे द्वारा ही तुम्हें दी गई है।

(अहम् क्रतु) में वैदिक विधि हूँ (अर्थात वेदों के अनुसार जो प्रार्थनाएं की जाती हैं वह मेरे लिए हैं) (अहम यज्ञः) वह मैं हूँ जिसके लिए यज्ञ किया जाता है। (स्वधा अहम्) वह वस्तु जो यज्ञ के समय अग्नि में डाली जाती है, वह भी मेरी रचना है। (अहम औषधम्) वह मैं हुँ जो औषधी में उपचार प्रभाव (Healing effect) पैदा करता है। (मन्त्रः अहम्) वह मैं हूँ जो मंत्रो में प्रभाव पैदा करता है। (अहम् अग्निः) वह अग्नि मेरी ही रचना है जिसे तुम यज्ञ के समय जलाते हो। (एवं) नि:संदेह (अहम आज्यम) मैंने ही घी की रचना की है, जिसे तुम यज्ञ के समय अग्नि में ड़ालते हो। (अहम हुतम्) यज्ञ के समय जो भी वस्तु तुम हवन में ड़ालते हो वह मेरे द्वारा ही तुम्हें दी गई है।

९.१७

पिता अहम् अस्य जगतः माता धाता पितामहः।
वेद्यम् पवित्रम् ॐकारः ऋक साम यजुः एव च।।१७।।

(पिता अहम्) मैं पिता समान हूँ जिसके कारण तुम जन्म लेते हो। (अस्य जगतः) मैं इस जगत

नोट ९.१६ वह (ईश्वर) अविनाशी है (ईश्वर सदैव जीवित रहेगा, उसे मृत्यु नहीं) उसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। अतः उसी को पुकारो, धर्म को उसी के लिए विशुद्ध करके। सारी प्रशंसा ईश्वर ही के लिए है, जो सारे संसार का रब (पालनहार) है। (सुरे अल मोमिन-४०, आयत-६५)

मैं पिता समान हूँ जिसके कारण तुम जन्म लेते हो। मैं इस जगत की माँ के समान हूँ जो पालती है। मैं तुम्हारे पित्र का जीवनदाता हूँ जिसे तुम्हें जानना चाहिए। मैं पापों से पवित्र करने वाला हूँ। मैं अविनाशी ईश्वर ॐ हूँ, और निःसंदेह ऋग्वेद, सामवेद, यर्जुर्वेद मेरे द्वारा ही अवतरित किए गए हैं।

की (माता धाता) माँ के समान हूँ जो पालती है। (पितामह वेद्यम्) मैं तुम्हारे पित्र का जीवनदाता हूँ जिसे तुम्हें जानना चाहिए (पवित्रम्) मैं पापों से पवित्र करने वाला हूँ (ॐकार) (मैं) अविनाशी (ईश्वर ॐ हूँ) (च) और (एव) निःसंदेह (ऋक् साम यजुः) ऋग्वेद, सामवेद, यजुर्वेद मेरे द्वारा ही अवतरित किए गए हैं।

९.१८

गतिः भर्ता प्रभुः साक्षी निवासः शरणम् सुहृत।
प्रभवः प्रलयः स्थानम् निधानम् बीजम् अव्ययम् ।।१८।।

मैं ही तुम्हारे जीवन का लक्ष्य हूँ। मैं ही संसार का रचनाकार हूँ। मैं ही संसार का प्रभु हूँ। तुम जो पाप या पुण्य करते हो उसका साक्षी मैं हूँ। केवल मेरी ही शरण है जिसमें तुम सुरक्षित रहोगे। मैं तुम्हारा मित्र हूँ जो तुम्हारा ख्याल रखता है। इस ब्रह्मांड का निर्माण मैंने ही किया है। मैं ही ब्रह्मांड का अंत करुंगा। वह स्थान जहाँ तुम जीवन व्यतीत करते हो वह मेरी ही रचना है। मृत्यु के बाद तुम्हारा शरीर जहाँ होगा वह भी मेरी ही रचना है। मैं अविनाशी हूँ। हर वस्तु का बीज (अस्तित्व का कारण) मुझे ही समझो।

(गतिः) मैं ही तुम्हारे जीवन का लक्ष्य हूँ (भर्ता) मैं ही संसार का रचनाकार हूँ (प्रभुः) मैं ही संसार का प्रभु हूँ (साक्षी) तुम जो पाप या पुण्य करते हो उसका साक्षी मैं हूँ (निवासः शरणम्) केवल मेरी ही शरण है जिसमें तुम सुरक्षित रहोगे। (सुह्यत्) मैं तुम्हारा मित्र हूँ जो तुम्हारा ख्याल रखता है। (प्रभवः) इस ब्रह्मांड का निर्माण मैंने ही किया है (प्रलयः) मैं ही ब्रह्मांड का अंत करुंगा। (स्थानम्) वह स्थान जहाँ तुम जीवन व्यतीत करते हो वह मेरी ही रचना है। (निधानम्) मृत्यु के बाद तुम्हारा शरीर जहाँ होगा, वह भी मेरी ही रचना है। (अव्ययम्) मैं अविनाशी हूँ (बीजम्) हर वस्तु का बीज (अस्तित्व का कारण) मुझे ही समझो।

९.१९

तपामि अहम् वर्षम् निगृह्णामि उत्सृजामि च।
अमृतम् च एवं मृत्युः च सत् असत् च अहम् अर्जुन।।१९।।

मैं ही उस गर्मी का ईश्वर हूँ जो सूर्य में हैं और मैं ही वर्षा करता हूँ जो सूर्य के गर्मी से उत्पन्न होती है। मैं ही वर्षा भेजता हूँ और उसे रोक लेता हूँ

(तपामि अहम्) मैं ही उस गर्मी का ईश्वर हूँ (जो सूर्य में हैं) (अहम वर्षम्) और मैं ही वर्षा करता हूँ (जो सूर्य के गर्मी से उत्पन्न होती है) (निगृह्णामि उत्सृजामि) मैं ही वर्षा भेजता हूँ और उसे रोक लेता हूँ। (च) और (अमृतम्)

नोट ९.१८ ईश्वर की प्रशंसा पवित्र कुरआन में इस प्रकार है। हे पैगंबर कहो, हे ईश्वर! राज-सत्ता के स्वामी! तू जिसे चाहे राज्य प्रदान करे, और जिससे चाहे राज्य छीन ले। और जिसे चाहे सम्मानित करे, और जिसे चाहे अपमानित करे। तेरे ही हाथ में भलाई है। निःसंदेह तुझे हर चीज़ की सामर्थ्य प्राप्त है। (हर चीज़ तेरे कब्जे में है) (सूरे-आले-इमरान (३) आयत (२६))

और मैं उस स्वर्ग का स्वामी हूँ जहाँ मृत्यु नही और नि:संदेह, मैं ही उस नर्क का स्वामी हूँ जहाँ हर क्षण मृत्यु होती है। और हे अर्जुन, इस नाशवान संसार, और उस अविनाशी अन्य लोक का मैं ही स्वामी हूँ।

मैं उस स्वर्ग का स्वामी हूँ जहाँ मृत्यु नहीं (च एव) और नि:संदेह (मृत्यु) मैं ही उस नर्क का स्वामी हूँ जहाँ हर क्षण मृत्यु होती है। (च) और (अर्जुन) हे अर्जुन (असत) इस नाशवान संसार (च) और (सत्) (उस) अविनाशी अन्य लोक का (अहम) मैं ही स्वामी हूँ।

पुण्य करने वालो का भाग्यः-

९.२०

त्रै-विद्याः माम् सोम-पाः पूत पापाः यज्ञैः इष्ट्वा स्व-गतिम् प्रार्थयन्ते।
ते पुण्यम् आसाद्य सुर-इन्द्र लोकम् अश्नन्ति दिव्यान् दिवि देव-भोगान् ।।२०।।

(पहला समूह जो ईश्वर की प्रार्थना में व्यस्त रहता हैं वह) तीनों वेदों के अनुसार सोम रस के लिए (और) श्रेष्ठ लक्ष, स्वर्ग के लिए, मेरी प्रार्थना करते हैं और पुण्य कर्म करते हैं और पापों से पवित्र हो जाते हैं। फिर पुण्य कर्मों के फलस्वरुप स्वर्ग में महान देवताओं के लोक में देवताओं द्वारा दी गई आनंद का अनुभव दिलाने वाली वस्तुओं से दिव्य आनंद का अनुभव करते हैं।

(त्रै-विद्याः) तीनों वेदों के अनुसार (सोम-पाः) सोम रस के लिए (और) (स्व-गतिम्) श्रेष्ठ लक्ष, स्वर्ग के लिए, (माम्) मेरी (यज्ञैः इष्ट्वा) प्रार्थना करते हैं और पुण्य कर्म करते हैं (पूत पापाः) और पापों से पवित्र हो जाते हैं (पुण्यम् आसाद्य) फिर पुण्य कर्मों के फलस्वरुप (दिवि) स्वर्ग में (सुर-इन्द्र) महान देवताओं के (लोकम्) लोक में (देव-भोगान्) देवताओं द्वारा दी गई आनंद का अनुभव दिलाने वाली वस्तुओं से (दिव्यान) दिव्य (अश्नन्ति) आनंद का अनुभव करते हैं।

नोट ९.१९ ईश्वर पवित्र कुरआन में मानवजाति से प्रश्‍न करता है कि, भला वह कौन है जिसने आसमानों और जमीन को पैदा किया, और तुम्हारे लिए आसमान से पानी बरसाया, फिर उसके द्वारा वे शोभायमान (सुन्दर) बाग उगाए जिनके पेड़ों का उगाना तुम्हारे अधिकार में न था? क्या ईश्वर के साथ कोई दूसरा पूज्य-प्रभु भी (इन कार्यों में साझीदार) है? (नहीं) बल्कि यही लोग सत्य मार्ग से हटकर चले जा रहे हैं। (सूरह अन नम्ल-२७, आयत-६०)

नोट ९.२० स्वर्ग का वर्णन पवित्र कुरआन में इस प्रकार है; ''उस स्वर्ग का वर्णन यह है जिसके मिलने का वादा (ईश्वर से) डर रखने वालों से किया गया है। उसमें पानी की नहरें हैं जिसमें सड़ांध नहीं और दूध की नहरें हैं जिनका मजा नहीं बदलता। और शराब की नहरें हैं जो पीने वालों के लिए स्वादिष्ट है और साफ-सुथरे शहद की नहरें हैं। और उनके लिए वहाँ हर प्रकार के फल हैं। और ईश्वर की ओर से क्षमा है (अर्थात ईश्वर अब उनसे कभी क्रोधित नहीं होगा।) (सुरे-मुहम्मद (४७) आयत-१५)

९.२१

ते तम् भुक्त्वा स्वर्ग-लोकम् विशालम् क्षीणे पुण्ये मर्त्य-लोकम् विशन्ति।
एराम् त्रयी धर्मम् अनुप्रपन्नाः गत-आगतम् काम-कामाः लभन्ते।।२१।।

तीनों वेदों में बताए गए धर्म के नियमों का पालन करने वाले, पुण्य कर्मों में कमी के कारण मृत्यु लोक (नरक) में गिराए जाते हैं। उसके बाद दण्ड की अवधि पूरी करने के बाद यह लोग उस विशाल स्वर्ग लोक का आनंद लेते हैं। और अपनी इच्छाओं की पूर्ती में लगे हुए लोगों को मिलता है वह स्थान, जहाँ आना-जाना लगा रहता है। (अर्थात नर्क में जलकर अस्तित्व मिट जाता है और दण्ड की अवधि पूरी करने के लिए फिर अस्तित्व में आते हैं।)

(त्रयी) तीनों (वेदों में बताए गए) (धर्मम) धर्म के नियमों का (अनुप्रपन्नाः) पालन करने वाले (पुण्ये) पुण्य कर्मों में (क्षीणे) कमी के कारण (मृत्यु लोक) मृत्यु लोक (नर्क) में (विशान्ति) गिराए जाते हैं (एवम्) उसके बाद दण्ड की अवधि पूरी करने के बाद (ते) यह लोग (तम) उस (विशालम्) विशाल (स्वर्ग लोकम्) स्वर्ग लोक का (भुक्त्वा) आनंद लेते हैं (काम कामाः) अपनी इच्छाओं की पूर्ती में लगे हुए लोगों को (लाभन्ते) मिलता है। वह स्थान (गत-आगतम्) जहाँ आना-जाना लगा रहता है।

ईश्वर की शरण :-

९.२२

अनन्याः चिन्तयन्तः माम् ये जनाः पर्युपासते।
तेषाम् नित्य अभियुक्तानाम् योग क्षेमम् वह्यामि अहम् ।।२२।।

(ये) जो (जनाः) मनुष्य (माम्) मेरी (पर्युपासते) भली-भाँति प्रार्थना करते हैं। (अनन्याः) किसी और के बारे में (चिन्तयन्तः)

नोट ९.२२ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''जो कोई ईश्वर से डरते हुए कर्म करेगा, ईश्वर उसके लिए कठिनाइयों से निकलने का कोई मार्ग पैदा कर देगा और उसे ऐसे मार्ग से रोजी देगा जिधर उसका गुमान भी न जाता हो। जो ईश्वर पर भरोसा करेगा उसके लिए वह काफी है। ईश्वर अपना काम पूरा करके रहता है। ईश्वर ने हर चीज़ के लिए एक तकदीर (अन्दाजा) नियुक्त कर रखा है।'' (सूरह अल तलाक-६५, आयत-२ का अंतिम भाग और आयत नं.३)

नोट नं. ९:२२ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''धर्म में कोई जबरदस्ती नहीं। (ईश्वर के अवतरित ज्ञान द्वारा) धर्म का सत्य मार्ग असत्य मार्ग (गुमराही) से अलग होकर बिल्कुल स्पष्ट हो गया है। (तो जिसका दिल चाहे इसे माने और न चाहे तो न माने किन्तु) जो व्यक्ति मूर्तियों में श्रद्धा न रखे और ईश्वर में श्रद्धा रखे उसने मजबूत सहारा थाम लिया है। जो कभी टूटने का नहीं और ईश्वर सुनने और जानने वाला है, जो ईश्वर में श्रद्धा रखते हैं ईश्वर उनका संरक्षक मित्र है। वह (ईश्वर) उन्हें अंधेरों (अज्ञानता) से निकाल कर प्रकाश (सत्य, ज्ञान और मार्ग) की ओर लाता है और जो ईश्वर में श्रद्धा नहीं रखते उनके संरक्षक-मित्र शैतान (असूर) हैं, वे उन्हें प्रकाश से निकालकर अंधेरों की ओर ले जाते हैं। यही नरक में जाने वाले हैं, वे उसमें सदैव रहेंगे।'' (सूरे-अल-बकरह (२) आयत २५६-२५७)

जो मनुष्य मेरी भली-भाँति प्रार्थना करते हैं। किसी और के बारे में सोचे बिना हमेशा मेरी भक्ति में लगे हुए हैं। मैं उन लोगों की रक्षा की ज़िम्मेदारी लेकर चलता हूँ।

सोचे बिना (नित्य) हमेशा (अभियुक्तानाम् योग) मेरी भक्ति में लगे हुए हैं (अहम्) मैं (तेषाम्) उन (लोगों की) (क्षेमम्) रक्षा की जिम्मेदारी (वहामि) लेकर चलता हूँ।

देवताओं की पूजा के कारण और परिणाम :-

९.२३

ये अपि अन्य देवता भक्ताः यजन्ते श्रद्धया अन्विताः।
ते अपि माम् एव कौन्तेय यजन्ति अविधि-पूर्वकम् ।।२३।।

हे कुन्ती पुत्र अर्जुन, निःसंदेह जो दूसरे देवताओं की भक्ति करते हैं। और श्रद्धा के साथ उनकी भक्ति में लगे रहते हैं। निःसंदेह वह भी मेरी ही भक्ति करना चाहते हैं किंतु ज्ञान न होने के कारण नियमों का उल्लंघन करते हैं।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) (अपि) निःसंदेह (ये) जो (अन्य) दूसरे (देवता) देवताओं की (भक्ताः) भक्ति करते हैं (श्रद्धया) और श्रद्धा के साथ (यजन्ते) उनकी भक्ति में (अन्विताः) लगे रहते हैं। (एवं) निःसंदेह (ते-अपि) वह भी (माम्) मेरी ही (यजन्ति) भक्ति करना चाहते हैं (अविधि पूर्वकम्) (किंतु ज्ञान न होने के कारण) विधिनियमों का उल्लंघन करते हैं।

९.२४

अहम् हि सर्व यज्ञानाम् भोक्ता च प्रभुः एव च।
न तु माम् अभिजानन्ति तत्त्वेन अतः च्यवन्ति ते।।२४।।

निःसंदेह! मैं ही वह ईश्वर हूँ जिसके लिए सारी प्रार्थनाएं की जाती है। किन्तु (जो) इस सत्य को नहीं जानते, वह इस अज्ञानता के कारण नर्क में गिराए जाते हैं।

(हि) निःसंदेह! (अहम) मैं ही वह ईश्वर हूँ (भोक्ता) जिसके लिए (सर्व) सारी (यज्ञानाम्) प्रार्थनाएं की जाती हैं। (ते) किन्तु (जो) (तत्त्वेन) इस सत्य को (न) नहीं (अभिजानन्ति) जानते (ते) वह (अतः) (इस अज्ञानता) के कारण (च्यवन्ति) (नर्क में) गिराए जाते हैं।

९.२५

यान्ति देव-व्रताः देवान् पितॄन यान्ति पितृ-व्रताः।
भूतानि यान्ति भूत-इज्याः यान्ति मत् याजिनः अपि माम् ।।२५।।

मृत्यु के बाद देवताओं के पुजारी देवताओं के पास जाऐंगे। पितरों का पूजन करने वाले पितरों के पास जाऐंगे। भूत प्रेतों का पूजन करने वाले भूत प्रेतों के पास जाएंगे। केवल मेरी प्रार्थना करने वाले मेरे (स्वर्ग में) जाएंगे।

(देव व्रताः) (मृत्यु के बाद) देवताओं के पूजारी (देवान) देवताओं (के पास) (यान्ति) जाऐंगे (पितृ-व्रताः) पितरों का पूजन करने वाले (पितॄन्) पितरों के पास (यान्ति) जाऐंगे। (भूत-इज्याः) भूत प्रेतों का पूजन करने वाले (भूतानि) भूत प्रेतों के पास (यान्ति) जाएंगे (अपि) केवल (माम्) मेरी (याजिनः) प्रार्थना करने वाले (यान्ति मत्) मेरे (स्वर्ग में) जाएंगे।

नोटः श्लोक नं. ७.२३ में ईश्वर की प्रार्थना न करने वालों का विनाश होगा ऐसा लिखा है।

९.२६

पत्रम् पुष्पम् पलम् तोयम् यः मे भक्त्या प्रयच्छति।
तत् अहम् भक्ति-उपहृतम् अश्नामि प्रयत-आत्मनः।।२६।।

भक्त जो अपने मन को पवित्र रखता है, और भक्ति की भावना से जो कुछ भी मुझे अर्पण करता है। जैसे की पत्ता, फुल, फल, जल वह सब मैं स्वीकार कर लेता हूँ।

(भक्त्या) भक्त (प्रयत-आत्मनः) जो अपने मन को पवित्र रखता है और (भक्ति-उपहृतम्) भक्ति की भावना से (जो कुछ भी) (मे) मुझे (प्रयच्छति) अर्पण करता है। (यः) जैसे की (पत्रम्) पत्र (पत्ता) (पुष्पम्) फुल (फलम्) फल (तोयम्) जल (तत) वह सब (अहम्) मैं (अश्नामि) स्वीकार कर लेता हूँ।

अनिवार्य कर्म कैसे पूरे करें? :-

९.२७

यत करोषि यत् अश्नासि यत् जुहोषि ददासि यत्।
यत् तपस्यसि कौन्तेय तत् कुरुष्व मत् अर्पणम् ।।२७।।

हे कुन्ती पुत्र! (अर्जुन) (तुम) जो कुछ (कर्म) करते हो, जो कुछ खाते हो, जो कुछ अर्पित करते हो, जो कुछ दान देते हो, जो कुछ तपस्या करते हो वह केवल मुझे ही अर्पित करो।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र! (अर्जुन) (यत) (तुम) जो कुछ (करोषि) (कर्म) करते हो (यत्) जो कुछ (अश्नासि) खाते हो (यत) जो कुछ (जुहोषि) अर्पित करते हो (यत) जो कुछ (ददासि) दान देते हो (यत) जो कुछ (तपस्यसि) तपस्या करते हो (मत-अर्पणम्) वह केवल मुझे ही अर्पित (कुरुष्व) करो।

९.२८

शुभ अशुभ फलैः एवम् मोक्ष्यसे कर्म बन्धनैः।
संन्यास योग युक्त-आत्मा विमुक्तः माम् उपैष्यसि।।२८।।

निःस्वार्थ कर्म करो (फल की आशा न करो) अपने आपको मेरी भक्ति में व्यस्त रखो, यही पापों से मुक्ति का मार्ग है। इस तरह तुम शुभ-अशुभ कर्मों के फल से और अनिवार्य कर्तव्य के बन्धन से मुक्त हो जाओगे और मुझे प्राप्त कर लोगे, मेरे स्वर्ग को प्राप्त कर लोगे।

अर्थात- निस्वार्थ कर्म करने से और ईश्वर की याद में लगे रहने से पाप भी नहीं होते और अनिवार्य कर्तव्य भी कुशलता से पूर्ण हो जाती है और मृत्यु के बाद मनुष्य स्वर्ग ही पाता है।

(सन्यास योग) निस्वार्थ कर्म करो (फल की आशा न करो) (युक्त आत्मा) अपने आपको मेरी भक्ति में व्यस्त रखो (विमुक्तः) यही पापों से मुक्ति का मार्ग है (एवम्) इस तरह तुम (शुभ अशुभ फले) शुभ-अशुभ कर्मों के फल से (कर्म बन्धनैः) और अनिवार्य कर्तव्य के बन्धन से (मोक्ष्य से) मुक्त हो जाओगे (और) (माम-उपैष्यसि) मुझे प्राप्त कर लोगे (मेरे स्वर्ग को प्राप्त कर लोगे)।

ईश्वर के लिए सभी मनुष्य एक समान है :-

९.२९

समः अहम् सर्व-भूतेषु न मे द्वेष्यः अस्ति न प्रियः।
ये भजन्ति तु माम् भक्त्या मयि ते तेषु च अपि अहम् ।।२९।।

सर्व प्राणी मेरे लिए समान हैं। न मैं किसी से द्वेष करता हूँ और न प्रेम करता हूँ। किन्तु जो मेरी श्रद्धा के साथ प्रार्थना करते हैं, वह मेरे लिए हैं और मैं उनके लिए हूँ।

(सर्व भुतेषु) सर्व प्राणी (अहम) मेरे लिए (समः) समान है (न) न (मे) मैं (किसी से) (द्वेष्यः) द्वेष (अस्ति) करता हूँ (न) (और) न (प्रियः) प्रेम करता हूँ (तु) किन्तु (ये) जो (माम) मेरी (भक्त्या) श्रद्धा के साथ (भजन्ति) प्रार्थना करते हैं। (ते) वह (मयि) मेरे लिए हैं (च) और (अहम्) मैं (तेषु) उनके लिए हूँ।

ईश्वर में श्रद्धा रखने वालों का पतन नहीं होगा :-

९.३०

अपि चेत् सु-दुराचारः भजते माम् अनन्य-भाक।
साधुः एव सः मन्तव्यः सम्यक व्यवसितः हि सः।।३०।।

यदि अत्यन्त दुराचारी (पापी) श्रद्धा रखता है मुझमें और अनन्य (देवताओं) की भक्ति नहीं करता है तो नि:संदेह उसे पवित्र व्यक्ति (मुनि) मानना चाहिए। नि:संदेह वह सही परिपूर्ण संकल्प वाला (श्रद्धावाला) है।

(चेत) अगर (सु-दुराचार) अत्यन्त दुराचारी (पापी) (भजते) श्रद्धा रखता है (माम्) मुझमें (अनन्य भाक) और अनन्य (देवताओं) की भक्ति नहीं करता (एवं) (तो) नि:संदेह (सः) उसे (साधुः) पवित्र व्यक्ति (मुनि) (मन्तव्य) मानना चाहिए (हि) नि:संदेह (सः) वह (सम्यक) सही (परिपूर्ण) (व्यवसितः) संकल्प वाला (श्रद्धावाला है)।

९.३१

क्षिप्रम् भवति धर्म-आत्मा शश्वत-शान्तिम् निगच्छति।
कौन्तेय प्रतिजानीहि न मे भक्तः प्रणश्यति।।३१।।

बहुत जल्दी वह पवित्र व्यक्ति बन जाएगा। और मृत्यु के बाद निरन्तर शांत रहने वाला स्थान (स्वर्ग) प्राप्त करेगा। हे कुन्तीपुत्र अर्जुन घोषित कर दो कि मेरी प्रार्थना करने वालों का कभी पतन नहीं होता।

(क्षिप्रम्) बहुत जल्दी (वह) (धर्म आत्मा) पवित्र व्यक्ति (भवति) बन जाएगा (और मृत्यु के बाद) (शश्वत्-शान्तिम्) निरन्तर शांत रहने वाला स्थान (स्वर्ग) (निगच्छति) प्राप्त करेगा (पालेगा) (कौन्तेय) हे कुन्तीपुत्र (अर्जुन) (प्रतिजानीहि) घोषित कर दो कि (मे) मेरी (भक्तः) प्रार्थना करने वालों का (प्रणश्यति) (कभी) पतन (न) नहीं होता।

सारे मनुष्य स्वर्ग प्राप्त कर सकते :-

९.३२

माम् हि पार्थ व्यपाश्रित्य ये अपि स्युः पाप-योनयः।
स्त्रियः वैश्याः तथा शूद्राः ते अपि यान्ति पराम् गतिम् ।।३२।।

हे पार्थ! (अर्जुन), मेरी भक्ति करके मेरी शरण लेने वाले जो भी मनुष्य हैं, चाहे वह पापियों की पीढ़ी से हों, स्त्रियां हों, खेती या व्यापार करने वाले वैश्य हों, अथवा शुद्रा हो। निःसंदेह यह सभी (स्वर्ग की) सबसे श्रेष्ठ लक्ष को पाएंगे।

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (माम्) मेरी (भक्ति करके) (व्यपाश्रित्य) मेरी शरण लेने वाले (ये) जो (अपि) भी (स्युः) मनुष्य हैं (पाप) चाहे वह पापियों की (योनयः) पीढ़ी से हो (स्त्रियः) स्त्रिया हों (वैश्याः) खेती या व्यापार करने वाले वैश्य हों। (तथा) अथवा (शुद्राः) शुद्रा हो (हि) निःसंदेह (ते) यह (अपि) सभी (परम्) (स्वर्ग की) सबसे श्रेष्ठ (गतिम्) लक्ष को (यान्ति) पाएंगे।

संसार की वास्तविकता :-

९.३३

किम् पुनः ब्राह्मणाः पुण्याः भक्ताः राज-ऋषयः तथा।
अनित्यम् असुखम् लोकम् इमम् प्राप्य भजस्व माम् ।।३३।।

फिर ब्राह्मण, पवित्र मनुष्य, प्रार्थना करने वाले, और राज करने वाले ऋषियों का क्या कहना। इसलिए अस्थायी और दुःखों से भरे इस संसार को प्राप्त करके क्या करोगे? हमेशा की सफलता के लिए मेरी प्रार्थना में लग जाओ।

(पुनः) फिर (ब्राह्मणाः) ब्राह्मण (पुण्याः) पवित्र मनुष्य (भक्ताः) प्रार्थना करने वाले (तथा) और (राज-ऋषय) राज करने वाले ऋषियों का (किम्) क्या कहना (इमम्) इसलिए (अनित्यम्) अस्थायी (असुखम्) और दुःखों से भरे (लोकम्) इस संसार को (प्राप्य) प्राप्त करके (क्या करोगे) (माम्) (हमेशा की सफलता के लिए) मेरी (भजस्व) प्रार्थना में लग जाओ।

९.३४

मत-मनाः भव मत् भक्तः मत् याजी माम् नमस्कुरु।
माम् एव एष्यसि युक्तत्वा एवम् आत्मानम् मत-परायणः।।३४।।

मुझे अपने मन में रखो। मेरे भक्त बन जाओ।

(मत्-मना) मुझे अपने मन में रखो (मत-भक्त) मेरे भक्त (भाव) बन जाओ (मत् याजी) मेरी प्रार्थना करो (मत नमस्कुरु) मुझे नमस्कार (सजदा) करो (आत्मानम्) अपने आपको (युक्तत्वा) (मेरी प्रार्थना में) व्यस्त रखो

नोट ९:३२ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि जो भी पुण्य के कर्म करेगा पुरुष हो या स्त्री, और वह मोमिन भी हो (ईश्वर में श्रद्धा वाला भी हो) तो हम उसे (इस पृथ्वी पर) पवित्र और सरल जीवनशैली से जीवित रखेंगे। और मृत्यु के बाद (अन्य लोक में) उनके सत्कर्मों का उनको बहुत अच्छा बदला देंगे। (पवित्र कुरआन सूरह अन नहल -१६, आयत-९७)

मेरी प्रार्थना करो। मुझे नमस्कार (सजदा) करो। अपने आपको मेरी प्रार्थना में व्यस्त रखो। नि:संदेह, इस तरह मेरे सहारे तुम मुझे पा लोगे।

(एवं) नि:संदेह (एवम्) इस तरह (मत-परायण) मेरे सहारे (माम्) (तुम) मुझे (एष्यसि) पा लोगे।

नोट ९:३४ श्लोक नं. १८.५६ का अनुवाद स्वामी राम सुखदास महाराज ने साधक संजीवनी में इस प्रकार किया है।

(अपि) किन्तु (सच तो यह है कि) (सर्व) सभी (कर्माणि) सत्कर्मों को (मत) मेरे (व्यपाश्रय:) सहारे (कुर्वाण) करने वाला (मत) मेरी (प्रसादत) कृपादृष्टि (से ही) (शाश्वतम्) (स्वर्ग का) सदैव स्थित रहने वाला (अव्ययम्) अविनाशी (पदम्) स्थान (अवाप्नोति) पा सकता है।

किन्तु (सच तो यह है कि) सभी सत्कर्मों को मेरे सहारे करने वाला मेरी कृपादृष्टि (से ही) (स्वर्ग का) सदैव स्थित रहने वाला अविनाशी स्थान पा सकता है।

यह श्लोक भगवद गीता का सबसे महत्त्वपूर्ण श्लोक है। और (मत प्रसादात) अर्थात ''मेरी कृपा से'' यह शब्द ही गीता का सार है।

इसका अर्थ है मनुष्य चाहे जितनी भक्ति कर ले, प्रार्थना और पुण्य के कार्य कर ले, किन्तु स्वर्ग केवल ईश्वर की कृपा से ही मिलेगा। इस कारण मनुष्य का लक्ष्य केवल ईश्वर को प्रसन्न करना हो। पुण्य कमाना न हो। इसी कारण कहा जाता है, ''कर्म कर, फल की चिन्ता न कर''। इसको अच्छी तरह समझने के लिए नोट नं. N-5 पढ़िए। श्लोक नं. ९.३४ में ऐसी ही शिक्षा है।

नोट ९:३४ ईश्वर ने पैगम्बर मुहम्मद साहब से कहा कि, ''कह दो, (मेरे बन्दों से कि) ऐ मेरे बन्दों जिन लोगों ने पाप किया है, वे ईश्वर की दयालुता से निराश न हो। निस्संदेह ईश्वर सारे ही पापों को क्षमा कर देता है। निश्चय ही वह बड़ा क्षमाशील, अत्यन्त दयावान है।

ईश्वर की ओर ध्यान लगाओ और उसके आज्ञाकारी बन जाओ, इससे पहले कि तुम पर अज़ाब (ईश्वर का प्रकोप) आ जाए। फिर तुम्हारी सहायता न की जाएगी। (पवित्र क़ुरआन, अज़-ज़ुमर-३९, आयत-५३-५४)

(अध्याय नं.१०)

ज्ञान विज्ञान योग

श्रीभगवानुवाच
भूय एव महाबाहो श्रृणु मे परमं वचः।
यत्तेऽहं प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हितकाम्यया।।1।।

न मे विदुः सुरगणाः प्रभवं न महर्षयः।
अहमादिर्हि देवानां महर्षीणां च सर्वशः॥2॥

यो मामजमनादिं च वेत्ति लोकमहेश्वरम्।
असम्मूढः स मर्त्येषु सर्वपापैः प्रमुच्यते॥3॥

बुद्धिर्ज्ञानमसम्मोहः क्षमा सत्यं दमः शमः।
सुखं दुःखं भवोऽभावो भयं चाभयमेव च॥4॥

अहिंसा समता तुष्टिस्तपो दानं यशोऽयशः।
भवन्ति भावा भूतानां मत्त एव पृथग्विधाः॥5॥

महर्षयः सप्त पूर्वे चत्वारो मनवस्तथा।
मद्भावा मानसा जाता येषां लोक इमाः प्रजाः॥6॥

एतां विभूतिं योगं च मम यो वेत्ति तत्त्वतः।
सोऽविकम्पेन योगेन युज्यते नात्र संशयः॥7॥

अहं सर्वस्य प्रभवो मत्तः सर्वं प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते मां बुधा भावसमन्विताः॥8॥

मच्चित्ता मद्गतप्राणा बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तश्च मां नित्यं तुष्यन्ति च रमन्ति च॥9॥

तेषां सततयुक्तानां भजतां प्रीतिपूर्वकम्।
ददामि बद्धियोगं तं येन मामुपयान्ति ते॥10॥

तेषामेवानुकम्पार्थमहमज्ञानजं तमः।
नाशयाम्यात्मभावस्थो ज्ञानदीपेन भास्वता॥11॥

अर्जुन उवाच
परं ब्रह्म परं धाम पवित्रं परमं भवान्।
पुरुषं शाश्वतं दिव्यमादिदेवमजं विभुम्॥12॥

आहुस्त्वामृषयः सर्वे देवर्षिर्नारदस्तथा।
असितो देवलो व्यासः स्वयं चैव ब्रवीषि मे॥13॥

सर्वमेतदृतं मन्ये यन्मां वदसि केशव।
न हि ते भगवन्व्यक्तिं विदुर्देवा न दानवाः॥14॥

स्वयमेवात्मनात्मानं वेत्थ त्वं पुरुषोत्तम।
भूतभावन भूतेश देवदेव जगत्पते॥15॥

वक्तुमर्हस्यशेषेण दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
याभिर्विभूतिभिर्लोकानिमांस्त्वं व्याप्य तिष्ठसि॥16॥

कथं विद्यामहं योगिंस्त्वां सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्योऽसि भगवन्मया॥17॥

विस्तरेणात्मनो योगं विभूतिं च जनार्दन।
भूयः कथय तृप्तिर्हि श्रृण्वतो नास्ति मेऽमृतम्॥18॥

श्रीभगवानुवाच
हन्त ते कथयिष्यामि दिव्या ह्यात्मविभूतयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ नास्त्यन्तो विस्तरस्य मे॥19॥

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थितः।
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च॥20॥

आदित्यानामहं विष्णुर्ज्योतिषां रविरंशुमान्।
मरीचिर्मरुतामस्मि नक्षत्राणामहं शशी॥21॥

वेदानां सामवेदोऽस्मि देवानामस्मि वासवः।
इंद्रियाणां मनश्चास्मि भूतानामस्मि चेतना॥22॥

रुद्राणां शङ्करश्चास्मि वित्तेशो यक्षरक्षसाम्।
वसूनां पावकश्चास्मि मेरुः शिखरिणामहम्॥23॥

पुरोधसां च मुख्यं मां विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्।
सेनानीनामहं स्कन्दः सरसामस्मि सागरः॥24॥

महर्षीणां भृगुरहं गिरामस्म्येकमक्षरम्।
यज्ञानां जपयज्ञोऽस्मि स्थावराणां हिमालयः॥25॥

अश्वत्थः सर्ववृक्षाणां देवर्षीणां च नारदः।
गन्धर्वाणां चित्ररथः सिद्धानां कपिलो मुनिः॥26॥

उच्चैःश्रवसमश्वानां विद्धि माममृतोद्धवम्।
एरावतं गजेन्द्राणां नराणां च नराधिपम्॥27॥

आयुधानामहं वज्रं धेनूनामस्मि कामधुक्।
प्रजनश्चास्मि कन्दर्पः सर्पाणामस्मि वासुकिः॥28॥

अनन्तश्चास्मि नागानां वरुणो यादसामहम्।
पितॄणामर्यमा चास्मि यमः संयमतामहम् ॥29॥

प्रह्लादश्चास्मि दैत्यानां कालः कलयतामहम् ।
मृगाणां च मृगेन्द्रोऽहं वैनतेयश्च पक्षिणाम् ॥30॥

पवनः पवतामस्मि रामः शस्त्रभृतामहम् ।
झषाणां मकरश्चास्मि स्रोतसामस्मि जाह्नवी ॥31॥

सर्गाणामादिरन्तश्च मध्यं चैवाहमर्जुन ।
अध्यात्मविद्या विद्यानां वादः प्रवदतामहम् ॥32॥

अक्षराणामकारोऽस्मि द्वंद्वः सामासिकस्य च।
अहमेवाक्षयः कालो धाताहं विश्वतोमुखः॥33॥

मृत्युः सर्वहरश्चाहमुद्भवश्च भविष्यताम्।
कीर्तिः श्रीर्वाक्च नारीणां स्मृतिर्मेधा धृतिः क्षमा
॥34॥

बृहत्साम तथा साम्नां गायत्री छन्दसामहम् ।
मासानां मार्गशीर्षोऽहमृतूनां कुसुमाकरः॥35॥

द्यूतं छलयतामस्मि तेजस्तेजस्विनामहम्।
जयोऽस्मि व्यवसायोऽस्मि सत्त्वं सत्त्ववतामहम्
॥36॥

वृष्णीनां वासुदेवोऽस्मि पाण्डवानां धनञ्जयः।
मुनीनामप्यहं व्यासः कवीनामुशना कविः॥37॥

दण्डो दमयतामस्मि नीतिरस्मि जिगीषताम्।
मौनं चैवास्मि गुह्यानां ज्ञानं ज्ञानवतामहम् ॥38॥

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन।
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ॥39॥

नान्तोऽस्ति मम दिव्यानां विभूतीनां परन्तप।
एष तूद्देशतः प्रोक्तो विभूतेर्विस्तरो मया॥40॥

यद्यद्विभूतिमत्सत्त्वं श्रीमदूर्जितमेव वा।
तत्तदेवावगच्छ त्वं मम तेजोंऽशसम्भवम्॥41॥

अथवा बहुनैतेन किं ज्ञातेन तवार्जुन।
विष्टभ्याहमिदं कृत्स्नमेकांशेन स्थितो जगत्॥42॥

अध्याय का परिचय

● इस अध्याय का सातवां श्लोक इस प्रकार है जो (व्यक्ति) इन सब मेरी महानता की निशानियों में चिंतन करता है वह मुझे जान लेता है। वह व्यक्ति सत्य (को भी) पहचान लेता है। फिर मेरी प्रार्थना में लग जाता है। इस बात में कोई संशय नहीं है।

ईश्वर की महानता को पहचानना और उसकी प्रार्थना में लग जाना यही इस ग्रंथ और इस अध्याय का उद्देश है।

अध्याय का सारांश

● इस अध्याय में ईश्वर ने श्लोक नं. १०.१, १०.२, १०.३ में अपना परिचय दिया है।

● श्लोक नं. १०.४-१०.६ में ईश्वर ने उन गुणों का वर्णन किया है जो उसने मनुष्य में रखे हैं। ऐसे गुण कोई वैज्ञानिक किसी कम्प्युटर में नहीं रख सकता।

● श्लोक नं. १०.७-१०.८-१०.९ में ईश्वर में श्रद्धा के महत्त्व का वर्णन है।

● श्लोक नं. १०.१० और १०.११ में ईश्वर ने कहा जो ईश्वर में श्रद्धा रखने का प्रयास करते हैं उन्हें ईश्वर बुद्धियोगम् देता है। इसे मुस्लिम इमान कहते हैं।

● जैसे कोई पत्र लिखते समय पहले डीयर सर या प्रिय महोदय लिखते हैं फिर अपनी आवश्यकता का वर्णन करते हैं। इसी प्रकार अर्जुन ने तीन श्लोकों में (१०.१२/१०.१३/१०.१४) ईश्वर की प्रशंसा की फिर तीन श्लोकों में (१०.१६/१०.१७/१०.१८) में ईश्वर की महान रचनाओं को देखने की इच्छा प्रकट की।

● श्लोक नं. १०.१९ से १०.४० तक ईश्वर की महान रचनाओं का वर्णन है। इन श्लोकों में विष्णु, श्री कृष्ण, अर्जुन और महाऋषी वेद व्यास जी को भी ईश्वर की महान रचना कहा गया है।

● अन्त में ईश्वर ने कहा कि इतनी सारी रचनाओं में चिन्तन करने से अच्छा है कि तुम मेरे तेज के अंश को समझो, जिससे यह सारा ब्रह्माण्ड जीवित है।

(नोट जैसे सोलर घड़ी सूर्य के प्रकाश से चलती है। इसी प्रकार प्राणियों में जो प्राण है और जो अन्तरात्मा है वह ईश्वर के तेज से है।)

ईश्वर का परिचय :-

१०.१

भूयः एव महा-बाहो शृणु मे परमम् वचः ।
यत् ते अहम् प्रीयमाणाय वक्ष्यामि हित-काम्यया।।१।।

हे महान भुजाओं वाले अर्जुन! दोबारा सुनो मेरे सबसे श्रेष्ठ और दिव्य वचन (शिक्षा) को, जो मैं तुम्हारी हित की कामना से कहूँगा। नि:संदेह तुम मुझे अत्यंत प्रिय हो।

(महाबाहो) हे महान भुजाओं वाले (अर्जुन) (भूयः) दोबारा (शृणु) सुनो (मे) मेरे (परमम्) सबसे श्रेष्ठ और दिव्य (वचः) वचन (शिक्षा) को (यत्) जो (अहम्) मैं (ते) तुम्हारी (हित-काम्यया) हित की कामना से (वक्ष्यामि) कहूँगा (एवं) नि:संदेह (प्रीयमाणाय) (तुम मुझे) अत्यंत प्रिय हो।

१०.२

न मे विदुः सुर-गणाः प्रभवम् न महा-ऋषयः।
अहम् आदिः हि देवानाम् महा-ऋषीणाम् च सर्वशः।।२।।

न मुझे जानते हैं देवता (और) न मेरे अस्तित्व को (जानते हैं) महर्षि। नि:संदेह मैं सबसे पहले से हूँ (इस कारण) सारे देवताओं को और महाऋषियों (को जानता हूँ)।

(न) न (मे) मुझे (विदुः) जानते हैं (सुर-गणाः) देवता (न) (और) न (प्रभवम्) मेरे अस्तित्व को (जानते हैं) (महा-ऋषय) महर्षि (हि) नि:संदेह (अहम्) मैं (आदिः) सबसे पहले से हुँ (सर्वशः) (इस कारण) सारे (देवानाम्) देवताओं को (च) और (महा-ऋषीणाम्) महाऋषियों (को जानता हूँ)।

ईश्वर में श्रद्धा का महत्त्व :-

१०.३

यः माम् अजम् अनादिम् च वेत्ति लोक महा-ईश्वरम्।
असम्मूढः सः मर्त्येषु सर्व-पापैः प्रमुच्यते।।३।।

जो मुझे अजन्मा अनादि (आरंभ के बिना) और ब्रह्माण्ड का महान ईश्वर मानता है वह मूर्ख नहीं है। मृत्यु के बाद वह सब पापों से भी मुक्त हो जाएगा।

(यः) जो (माम्) मुझे (अजम्) अजन्मा (अनादिम्) अनादि (आरंभ के बिना) (च) और (लोक) ब्रह्माण्ड का (महा ईश्वरम्) महान ईश्वर (वेत्ति) मानता है (सः) वह (अस्सम्मूढः) मूर्ख नहीं है (मर्त्येषु) मृत्यु के बाद (वह) (सर्व पापे) सब पापों से भी (प्रमुच्यते) मुक्त हो जाएगा।

नोट १०.३ पवित्र कुरआन में ईश्वर के बारे में एक आयत इस प्रकार है। वही प्रथम भी है और अन्तिम भी, और गोचर (ज़ाहिर) भी है और अगोचर (छिपा) भी, और उसे हर चीज़ का ज्ञान है। (पवित्र कुरआन ५७:३)

प्राणियों में प्रजनन की क्षमता ईश्वर की महानता का प्रमाण है। :-

१०.४-५

बुद्धीः ज्ञानम् असम्मोहः क्षमा सत्यम् दमः क्षमः। सुखम् दुःखम् भवः अभावः भयम् च अभयम् एव च।।४।।
अहिंसा समता तृष्टिः तपः दानम् यशः अयशः। भवन्ति भावाः भूतानाम् मत्तः एव पृथक विधाः।।५।।

बुद्धिः ज्ञान का उपयोग करना, मोहित न होना, क्षमा करना, सत्य मार्ग पर चलना, अपने आपको वश (नियंत्रण) में रखना, तथा सुख, दुःख, जन्म, मृत्यु, भय, (साहस) अभय में एक समान रहना, और अहिंसा, न्याय का पालन करना, संतुष्ट रहना, तप करना, दान देना, यशः और अपयश में संयम बरतना, निःसंदेह यह अनेक प्रकार के भाव (भावनाएँ) हैं, जो मैंने रचना की है।

(यह सब भावनाएं ईश्वर की महानता को सिद्ध करती है। वैज्ञानिक सुपर कम्प्युटर का निर्माण कर सकते हैं। किन्तु यह सब भावना वह किसी रोबोट में नहीं डाल सकते हैं। वह ईश्वर ही है जो मिट्टी के शरीर में यह सब भावनाएं रच देता है।)

(बुद्धिः) बुद्धिः (ज्ञानम्) ज्ञान (का उपयोग) (असम्मोहः) मोहीत न होना (क्षमा) क्षमा करना (सत्यम्) सत्य मार्ग पर चलना (दम्ः) अपने आपको वश (नियंत्रण) में रखना (एवं) तथा (सुखम) सुख (दुःखम) दुःख (भवः) जन्म (अभावः) मृत्यु (भयम्) भय (अभयम्) (साहस) अभय (च) और (अहिंसा) अहिंसा (समता) न्याय करना (तुष्टि) संतुष्ट रहना (तपः) तपः (कष्ट उठाना) (दानम) दान देना (यशः) यशः (च) और (अयशः) अपयश (में संयम बरतना) (एवं) निःसंदेह (यह) (पृथक) अनेक (विधा) प्रकार के (भावाः) भाव (भावनाएँ) हैं (मतः) (जो) मैंने (भवन्ति) रचना की है।

१०.६

महा-ऋषयः सप्त पूर्वे चत्वारः मनवः तथा। मत् भावाः मानसाः जाता येषाम् लोके इमाः प्रजाः।।६।।

प्राचीन काल के सात बड़े ऋषि और मनु की पीढ़ी (सन्तानों) से भेजे जाने वाले चौदह ऋषि विचार करते हुए मेरी इच्छा पर चलने वाले थे। इस संसार में यह सारी मानवजाति सबसे पहले निर्माण किये जाने वाले मनुष्य से और इन ऋषियों की पीढ़ी से ही पैदा हुए हैं।

नोटः- अर्थात मनुष्य जाति का मनुष्य द्वारा उत्पन्न होते रहना यह भी ईश्वर की महानता है। कम्प्युटर, कम्प्युटर को उत्पन्न नहीं करता।

(पूर्व) प्राचीन काल के (सप्त) सात (महा) बड़े (ऋषयः) ऋषि (तथा) और (मानवः) मनु की पीढ़ी (सन्तानों) से भेजे जाने वाले (चत्वार) चौदह (ऋषि) (मानसा) विचार करते हुए (मत्) मेरी (भावा) इच्छा पर चलने वाले थे (लोके) इस संसार में (इमाः) यह सारी मानवजाति (प्रजाः) सबसे पहले निर्माण किये जाने वाले मनुष्य से (येषाम्) और इन (ऋषियों की पीढ़ी) से ही (जाताः) पैदा हुए हैं।

१०.७

एवम् विभूतिम् योगम् च मम यः वेत्ति तत्त्वतः।
सः अविकल्पेन योगेन युज्यते न अत्र संशयः।।७।।

जो (व्यक्ति) इन सब (मेरी) महानता की निशानी में चिंतन करता है। वह मुझे जान लेता है। वह व्यक्ति सत्य को भी पहचान लेता है फिर मेरी प्रार्थना में लग जाता है। इस बात में कोई संशय नहीं है।

"(ईश्वर की महानता की निशानी मनुष्य में बीस प्रकार की भावनाएँ हैं। और मनुष्य का मनुष्य को जन्म देना है। जिनका वर्णन पिछले दो श्लोकों में हुआ है।)"

(यः) जो (व्यक्ति) (एवम्) इन सब (विभूतिम्) (मेरी) महानता की निशानी में (योगम्) चिंतन करता है (मम) (वह) मुझे (वेत्ति) जान लेता है (सः) वह व्यक्ति (तत्त्वतः) सत्य (को भी) (अविकल्पेन) पहचान लेता है (योगम्) (फिर मेरी) प्रार्थना (में) (युज्यते) लग जाता है। (अत्र) इस बात में (संशय) कोई संशय नहीं है।

ईश्वर में श्रद्धा वालों का व्यवहार :-

१०.८

अहम् सर्वस्य प्रभवः मत्तः सर्वम् प्रवर्तते।
इति मत्वा भजन्ते माम् बुधाः भाव-समन्विताः।।८।।

मैं संपूर्ण (प्राणियों का) रचयिता (निर्माता) हूँ। संपूर्ण (प्राणी) मेरे द्वारा ही जीवित है। बुद्धीमान व्यक्ति (जो) मुझे इस प्रकार मानता है, वह पूरे ध्यान के साथ मेरी प्रार्थना करते हैं।

(अहम्) मैं (सर्वस्य) संपूर्ण (प्राणियों का) (प्रभवः) रचयिता (निर्माता) हूँ (सर्वम्) संपूर्ण (प्राणि) (मते) मेरे द्वारा ही (प्रवर्तते) जीवित हैं (बुधाः) बुद्धीमान व्यक्ति (जो) (माम्) मुझे (इति) इस प्रकार (मत्वा) मानता है (भाव-समन्विताः) वह पूरे ध्यान के साथ (भजन्ते) मेरी प्रार्थना करते हैं।

१०.९

मतचित्ताः मत् गत-प्राणाः बोधयन्तः परस्परम्।
कथयन्तः च माम् नित्यम् तुष्यन्ति च रमन्ति च।।९।।

वह जो हमेशा मुझे अपने मन में रखते हैं। और मुझे अपने जीवन का लक्ष्य बनाते हैं। और धार्मिक ज्ञान ग्रहण (प्राप्त करके) वह एक दूसरे से मेरी महानता का कथन करते हैं। ऐसे लोग सदैव सन्तुष्ट और दिव्य आनंद अनुभव करते हैं।

(मत चित्ताः) (वह जो) हमेशा मुझे अपने मन में रखते है। (मत) (और) मुझे (प्राण) अपने जीवन (मत) (का) लक्ष्य बनाते हैं। (च) और (बोधयन्तः) धार्मिक ज्ञान ग्रहण (प्राप्त करके) (परस्परम्) वह एक दूसरे से (माम्) मेरी महानता का (कथयन्तः) कथन करते हैं (नित्यम) (ऐसे लोग) सदैव (तुष्यन्ति) सन्तुष्ट (च) और (रमन्ति) दिव्य आनंद अनुभव करते हैं।

बुद्धि यौगम् :-

१०.१०

तेषाम् सतत-युक्तानाम् भजताम् प्रीति-पूर्वकम।
दुमि बुद्धि-योगम् तम् येन माम् उपयान्ति ते।।१०।।

उन मुनि/पवित्र व्यक्तियों को जो प्रेमपूर्वक सदैव मेरी प्रार्थना में लगे हुए हैं। उनको मैं मुझसे जुड़ी रहने वाली बुद्धि देता हूँ, जिससे वह मुझे पा लेते हैं।

(तेषाम्) उन (मुनि/पवित्र व्यक्तियों को) जो (प्रीति-पूर्वकम्) प्रेमपूर्वक (सतत) सदैव (भजताम्) मेरी प्रार्थना म(बुद्धि-योगम्) (मुक्तानाम्) लगे हुए हैं। (तम्) उनको (मैं) मुझसे जुड़ी रहने वाली बुद्धि (ददामि) देता हूँ (येन) जिससे (ते) वह (माम्) मुझे (उपयान्ति) पा लेते है।

१०.११

तेषाम् एव अनुकम्पा-अर्थम् अहम् अज्ञान-जम् तमः।
नाशयामि आत्म-भाव स्थः ज्ञान दीपेन भास्वता।।११।।

नि:संदेह, उन पवित्र व्यक्तियों पर अपना विशेष कृपा करने के लिए मैं उनके हृदय के अन्दर ज्ञान का दीपन स्थापित कर देता हूँ। जिसके प्रकाश में जो अंधकार अज्ञानता के कारण हृदय में जन्म लेते हैं वह नष्ट हो जाते हैं।

(ए वं) नि:संदेह (तेषाम्) उन (पवित्र व्यक्तियों) पर (अनुकम्पा-अर्थम) अपना विशेष कृपा करने के लिए (अहम) मैं (आत्म-भाव) उनके हृदय के अन्दर (ज्ञान दीपेन) ज्ञान का दीपन (स्थः) स्थापित कर देता हूँ। (भास्वता) जिसके प्रकाश में (तम्) जो अंधकार (अज्ञान-जम्) अज्ञानता के कारण हृदय में जन्म लेते हैं। (नाशयामि) वह नष्ट हो जाते हैं।

नोट १०.११ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, (हे पैगंबर) तुम जिसे चाहो मार्ग पर नहीं ला सकते, परन्तु ईश्वर जिसे चाहता है मार्ग पर लाता है। और वह मार्ग पाने वालों को भली-भांति जानता है। (सुरे-अल-कसस (२८) आयत (५६))

(अर्थात, जो ईश्वर के सत्य मार्ग पर चलना चाहता है। ईश्वर उसे जानता है और उसे सत्य के मार्ग पर चलने के लिए बुद्धियोगम देता है। पैगम्बर चाहें की समाज का कोई धनवान या शक्तिशाली व्यक्ति पैगम्बर का धर्म ग्रहण कर ले तो ऐसा नहीं हो सकता। क्योंकि बुद्धियोगम (या ईमान) ईश्वर के हाथ में है और यह ईश्वर उसी को देता है जो मन से धर्म का अनुसरण करना चाहता है।)

नोट १०.१० पवित्र कुरआन में लिखा है कि ईश्वर उन लोगों को, ''जो उसमें श्रद्धा रखते हैं,'' सत्य वचन (सही और पक्की बात पर) सांसारिक जीवन में भी दृढ़ता से स्थित रखता है। और अन्य लोक में भी रखेगा। (सुरे-इबराहीम (१४) आयत (२७))

(इसका अर्थ है कि जो एक ईश्वर में श्रद्धा रखते हैं तो मृत्यु के समय जो कि बहुत कठिन समय होता है, वह व्यक्ति ईश्वर का नाम लेगा। और मृत्यु के बाद भी जब फरिश्ते उससे ईश्वर, उसके धर्म और पैगम्बर के बारे में पुछेंगे तो ईश्वर उसे सत्य कहने की सद्बुद्धि देगा। (उसे सत्य पर दृढ़ता से स्थित रखेगा। जो कि मृत्यु के बाद स्वर्ग मिलने के लिए अतिआवश्यक है।)

अर्जुन द्वारा ईश्वर की प्रशंसा :-

१०.१२

अर्जुन उवाच
परम् ब्रह्म परम् धाम पवित्रम् परमम् भवान् ।
पुरुषम् शाश्वतम् दिव्यम् आदि-देवम् अजम् विभुम् ।।१२।।

अर्जुन ने, (श्री कृष्ण जी के माध्यम से ईश्वर से कहा) हे प्रभु, आप महान ईश्वर हो। सबसे श्रेष्ठ शरण देने वाले हो। दोष रहित (पवित्र) हो। आपका व्यक्तित्व सदैव रहने वाला है। आपका अस्तित्व देवताओं के अस्तित्व से भी प्राचीन है। आप जन्म नहीं लेते हो। आप हर जगह हो। (सर्व व्यापक हो)।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने (श्री कृष्ण जी के माध्यम से ईश्वर से कहा) (परम ब्रह्म) आप महान ईश्वर हो (परम् धाम) सबसे श्रेष्ठ शरण देने वाले हो (पवित्रम्) दोष रहित (पवित्र) (भवान्) हो (पुरुष् शाश्वतम्) आपका व्यक्तित्व सदैव रहने वाला है। (आदि देवम्) आपका अस्तित्व देवताओं के अस्तित्व से भी प्राचीन है (अजम्) आप जन्म नहीं लेते हो (विभुम्) आप हर जगह हो। (सर्व व्यापक हो)

१०.१३

आहुः त्वाम् ऋषयः सर्वे देव-ऋषिः नारदः तथा।
असितः देवलः व्यासः स्वयम् च एव ब्रवीषि मे।।१३।।

(हे ईश्वर) आपको सभी ऋषि, देव ऋषि नारद मुनि, और असित, देवल, अर्थात महा ऋषि वेद व्यास जी (भी) आपको (इन्हीं गुणों वाला) कहते हैं। और निःसंदेह, आप स्वयं भी अपने बारे में मुझे यही कहते हैं।

(त्वाम्) (हे ईश्वर) आपको (ऋषय सर्वे) सभी ऋषि (देव-ऋषि नारद) देव ऋषि नारद मुनि (तथा) और (असितः) असित (देवलः) देवल (व्यासः) महा ऋषि वेद व्यास जी (भी) (आहुः) आपको (इन्हीं गुणों वाला) कहते हैं। (च) और (एव) निःसंदेह (स्वयम्) आप स्वयं भी (अपने बारे में) (मे) मुझे (ब्रवीषि) (यही) कहते हैं।

१०.१४

सर्वम् एतत् ऋतम् मन्ये यत् माम् वदसि केशव।
न हि ते भगवन् व्यक्तिम् विदुः देवाः न दानवाः।।१४।।

जो कुछ भी श्री कृष्ण जी मुझे आपके बारे में कह रहे हैं उन सबको मैं सत्य मानता हूँ। हे ईश्वर न देवता और न ही दानव आपकी व्यक्तित्व को समझ सकते हैं।

(यत्) जो कुछ भी (केशव) श्री कृष्ण जी (माम) मुझे (वदसि) (आपके बारे में) कह रहे हैं (एतत) उन (सर्वम्) सबको (ऋतम्) (में) सत्य (मन्ये) मानता हूँ (भगवान) हे ईश्वर (न) न (ही) (देवाः) देवता (न) (और) (न ही) (दानवाः) दानव (ते) आपकी (व्यकितम्) व्यक्तित्व को (विदुः) समझ सकते हैं।

नोट १०.१३ ईश्वर ने गवाही दी (ईश्वर ने कहा) कि उसके सिवा कोई पूज्य नहीं, और फरिश्तों ने और ज्ञानी लोगों ने भी जो न्याय और संतुलन स्थापित करने वाली एक सत्ता (अर्थात ईश्वर) को जानते हैं। उस प्रभुत्वशाली, तत्त्वदर्शी के सिवा कोई पूज्य नहीं। (सूरे आल-इमरान-३ आयत-१८)

१०.१५

स्वयम् एव आत्मना आत्मानम् वेत्थ त्वम् पुरुष-उत्तम।
भूत-भावन भूत-ईश देव-देव जगत-पते।।१५।।

निःसंदेह! हे ईश्वर आप ही अपने आपको स्वयम ही सबसे अच्छी तरह जानते हैं। हे ईश्वर! आप महान व्यक्तित्व वाले हैं। सारे प्राणियों के ईश्वर हैं। देवताओं के ईश्वर हैं। ब्रह्माण्ड के शासक हैं।

(एरां) निःसंदेह (हे ईश्वर) (आत्मना) आप (ही) अपने (आत्मानम्) आपको (स्वयम्) स्वयम ही (वेत्थ) (सबसे अच्छी तरह) जानते हैं (त्वम्) (हे ईश्वर) आप (पुरुष-उत्तम) महान व्यक्तित्व वाले हैं। (भूत-भावन) सारे प्राणियों के ईश्वर हैं। (देव-देव) देवताओं के ईश्वर हैं (जगत पते) ब्रह्माण्ड के शासक हैं।

अर्जुन की ईश्वर से विनती :-

१०.१६

वक्तुम् अर्हसि अशेषेण दिव्याः हि आत्म विभूतयः
याभिः विभूतिभिः लोकान् इमान् त्वम् व्याप्त तिष्ठसि।।१६।।

हे ईश्वर, कृपा करके विस्तार से वर्णन कीजिए आपकी उन दिव्य रचनाओं का जिन्हें आपने निर्माण करके इस ब्रह्माण्ड में फैला दिया है, और स्थापित किया है।

(अर्हसि) (हे ईश्वर), कृपा करके (अशेषेणा) विस्तार से (वक्तुम्) वर्णन कीजिए (आत्म) आपकी उन (दिव्याः) दिव्य (विभूतयः) रचनाओं (निर्णमाण) का (याभिः) जिन्हें (त्वम्) आपने (विभूतिभिः) निर्माण करके (इमाम) इस (लोकान्) ब्रह्माण्ड में (व्याप्त) फैला दिया है (तिष्ठसि) और स्थापित किया है।

१०.१७

कथम् विद्याम् अहम् योगिन् त्वाम् सदा परिचिन्तयन्।
केषु केषु च भावेषु चिन्त्यः असि भगवन् मया।।१७।।

हे ईश्वर मैं (आपके) किन-किन रचनाओं के बारे में विचार करुँ? किस तरह से मैं विचार करते हुऐ आपसे सदा जुड़ा रहने को जान सकता हूँ?

(भगवान) हे ईश्वर (मया) मैं (आपके) (केषु केषु) किन-किन (भावेषु) रचनाओं (चिन्त्यः असि) के बारे में विचार करुँ (कथम्) किस तरह से (अहम्) मैं (परिचिन्तयन) विचार करते हुऐ (अहम्) आपसे (सदा) सदा (योगिन) जुड़ा रहने, को (विद्याम्) जान सकता हूँ।

१०.१८

विस्तरेण आत्मनः योगम् विभूतिम् च जन-अर्दन।
भूयः कथय तृप्तिः हि शृण्वतः न अस्ति मे अमृतम्।।१८।।

(जन-अर्दन) हे ईश्वर (भूयः) फिर से (कथय) कहिये (विस्तरेण) विस्तार से (आत्मनः) आपकी (विभूतिम्) दिव्य रचनाओं को (च) और (योगम्) आपसे जुड़ने वाली प्रार्थना को

हे ईश्वर! फिर से कहिये विस्तार से आप की दिव्य रचनाओं को और आपसे जोड़ने वाली प्रार्थना को। नि:संदेह मैं कभी तृप्त नहीं होता (आपकी बातें) सुनने (से)। (जो कि मेरे लिए) अमृत के समान हैं।

(अध्याय ७ में ईश्वर की कुछ रचनाओं का वर्णन था। अर्जुन और जानना चाहते है।)

(हि) नि:संदेह (मे) मैं (तृप्ती) कभी तृप्त (न) नहीं होता (शृण्वतः) (आपकी बातें) सुनने (से) (अमृतम्) (जो कि मेरे लिए) अमृत (के समान हैं)।

१०.१९

श्री भगवान उवाच, हन्त ते कथयिष्यामि दिव्याः हि आत्म-विभूतमयः।
प्राधान्यतः कुरुश्रेष्ठ न अस्ति अन्तः विस्तरस्य मे।।१९।।

ईश्वर ने कहा, हे कौरवों में श्रेष्ठ (अर्जुन), मेरे रचना के वर्णन की कोई सीमा नहीं है। हाँ फिर भी तुम्हें, नि:संदेह जो मेरी विशेष, दिव्य और अति उत्तम रचनाऐं हैं, उनके विषय में कुछ कहूँगा।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (कुरुश्रेष्ठ) हे कौरवों में श्रेष्ठ (अर्जुन) (मे) मेरे (विस्तरस्य) रचना के वर्णन की (अन्तः) कोई सीमा (न अस्ति) नहीं है (हन्त) हाँ (फिर भी) (ते) तुम्हें (हि) नि:संदेह (जो) (आत्म) मेरी (प्राधान्यतः) विशेष (दिव्या) दिव्य (विभूतमयः) अति उत्तम रचनाऐं है (कथयिष्यामि) (उनके विषय में कुछ) कहूँगा।

ईश्वर की दिव्य रचनाएँ ईश्वर की महानता दर्शाती है। :-

१०.२०

अहम् आत्मा गुडाकेश सर्व-भूत आशय-स्थितः।
अहम् आदिः च मध्यम् च भूतानाम् अन्तः एव च।।२०।।

हे अर्जुन! सारे मनुष्यों के हृदय में स्थित रहने वाली आत्मा मैं हूँ। और नि:संदेह मनुष्यों का आरम्भ (जन्म) और बीच जीवन और अन्त करने वाला मैं हूँ।

(गुडाकेश) हे अर्जुन (सर्व) सारे (भूत) मनुष्यों के (आशय) हृदय में (स्थितः) स्थित रहने वाली (आत्मा) आत्मा (अहम) मैं हूँ (च) और (एवं) नि:संदेह (भूतानाम्) मनुष्यों का (आदिः) आरम्भ (जन्म) (च) और (मध्यम्) बीच (जीवन) (च) और (अन्त) अन्त (करने वाला) (अहम) मैं हूँ।

नोट १०.२० इस श्लोक का अर्थ यह है की ईश्वर मानवजाति से कहते हैं कि मनुष्य के अन्दर जो आत्मा है उस पर विचार करो। कोई वैज्ञानिक मिट्टी की मूर्ती बनाकर उसमें आत्मा नहीं डाल सकता। आत्मा देखो मेरी कैसी महान रचना है। इसका अहसास करो तो मेरी महानता का तुम्हें एहसास होगा। इसी प्रकार मैंने जन्म, जीवन, और मृत्यु का जो चक्कर बनाया है यह भी मेरी महानता दर्शाती है।

१०.२१

आदित्यानाम् अहम् विष्णुः ज्योतिषाम् रविः अंशुमान।
मरीचिः मरुताम् अस्मि नक्षत्राणम् अहम् शशी।।२१।।

आरम्भ में (जन्म लेने वालो में) विष्णु मैं हूँ। प्रकाश देने वाली वस्तुओं में किरणों वाला सूर्य (मैं हूँ)। रेगिस्तान में मृगतृष्णा (मैं) हूँ। तारों में चंद्रमा मैं हूँ।

(आदित्यानाम्) आरम्भ में (जन्म लेने वालो में) (विष्णु) विष्णु (अहम) मैं हूँ (ज्योतिषाम्) प्रकाश देने वाली वस्तुओं में (अंशुमान्) किरणों वाला (रविः) सूर्य (मैं हूँ) (मरुताम्) रेगिस्तान में (मरीचिः) मृगतृष्णा (अस्मि) (मैं) हूँ (नक्षत्राणम्) तारों में (शशी) चंद्रमा (अहम) मैं हूँ।

१०.२२

वेदानाम् साम-वेदः अस्मि देवानाम् अस्मि वासवः।
इन्द्रियाणाम् मनः च अस्मि भूतानाम् अस्मि चेतना।।२२।।

वेदों में सामवेद हूँ। देवताओं (फरिश्तों) में वासव हूँ। इच्छाओं में मन हूँ और मनुष्यों की बुद्धि हूँ।

(वेदानाम्) वेदों में (साम-वेदः) सामवेद (अस्मि) हूँ। (देवानाम) देवताओं (फरिश्तों) में (वासवः) वासव (अस्मि) हूँ। (इन्द्रियाणाम्) इच्छाओं में (मनः) मन (अस्मि) हूँ (च) और (भूतानाम्) मनुष्यों की (चेतना) बुद्धि (अस्मि) हूँ।

१०.२३

रुद्राणाम् शङ्करः च अस्मि वित्त-ईशः यक्ष-रक्षसाम।
वसूनाम् पावकः च अस्मि मेरुः शिखरिणाम् अहम् ।।२३।।

रुद्रा में शंकर हूँ। हर तरह के जल में पवित्र करने वाला जल हूँ। और देवताओं के रक्षक यक्ष का रक्षक मैं हूँ। और सारे पर्वतों में मेरु मैं हूँ।

(रुद्राणाम्) रुद्रा में (शङ्कर) शंकर (अस्मि) हूँ। (वसूनाम) हर तरह के जल में, (पावकः) पवित्र करने वाला जल (अस्मि) हूँ (च) और (वित्त-ईश) देवताओं के रक्षक (यक्ष) यक्ष का (रक्षसाम्) रक्षक मैं हूँ (च) और (शिखरिणाम्) सारे पर्वतों में (मेरुः) मेरु (अहम्) मैं हूँ।

१०.२४

पुरोधसाम् च मुख्यम् माम् विद्धि पार्थ बृहस्पतिम्
सेनानीनाम् अहम् स्कन्दः सरसाम् अस्मि सागरः।।२४।।

हे पार्थ (अर्जुन)! पुरोहितों में सबसे मुख्य बृहस्पति मुझको ही समझो। सेनापतियों में मैं कार्तिकेय हूँ और जलाशयों में समुद्र हूँ।

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन)! (पुरोधसाम्) पुरोहितों में (मुख्यम्) सबसे मुख्य (बृहस्पतिम्) बृहस्पति (माम्) मुझको ही (विद्धि) समझो। (सेनानीनाम्) सेनापतियों में (अहम्) मैं (स्कन्दः) कार्तिकेय हूँ (च) और (सरसाम्) जलाशयों में (सागरः) समुद्र (अस्मि) हूँ।

१०.२५

महा-ऋषीणाम् भृगुः अहम् गिराम् अस्मि एकम् अक्षरम्।
यज्ञानाम् जप-यज्ञः अस्मि स्थावराणाम् हिमालयः।।२५।।

बड़े और महान ऋषियों में भृगु मैं हूँ। शब्दों में एक ईश्वर के नाम को बताने वाले शब्द (अ-उ-म अर्थात ओम) हूँ। सारे भलाई के कर्मों में धीमी आवाज में या मन में वेदों को याद करना (पढ़ना) हूँ। जड़ पदार्थो में हिमालय हूँ।

(महा) बड़े और महान (ऋषिणम्) ऋषियों में (भृगुः) भृगु (अहम्) मैं हूँ। (गिराम्) शब्दों में (एकम्) एक (ईश्वर के नाम को बताने वाले) (अक्षरम्) शब्द (अ-उ-म अर्थात ओम) (अस्मि) हूँ। (यज्ञानाम्) सारे भलाई के कर्मों में (जप-यज्ञः) धीमी आवाज में या मन में वेदों को याद करना (पढ़ना) (अस्मि) हूँ (स्थावराणाम्) जड़ पदार्थो में (हिमालयः) हिमालय हूँ।

१०.२६

अश्वत्थः सर्व-वृक्षाणाम् देव-ऋषीणाम् च नारदः।
गन्धर्वाणाम् चित्ररथः सिद्धानाम् कपिलः मुनि।।२६।।

सारे वृक्षों में पीपल का वृक्ष हूँ। देव-ऋषियों में नारद मुनि हूँ। और गन्धर्व में चित्ररथ हूँ। सिद्धि प्राप्त करने वाले मुनियों में कपिल हूँ।

(सर्व) सारे (वृक्षाणाम्) वृक्षों में (अश्वत्थः) पीपल का वृक्ष हूँ। (देव) (ऋषिणाम्) देव-ऋषियों में (नारद) नारद मुनी हूँ (च) और (गन्धर्वाणाम्) गन्धर्व में (चित्ररथः) चित्ररथः हूँ। (सिद्धानाम्) सिद्धि प्राप्त करने वाले मुनियों में (कपिलः) कपिल (मुनिः) हूँ।

१०.२७

उच्चैः श्रवसम् अश्वानाम् विद्धि माम् अमृत-उद्भवम्।
ऐरावतम् गज-इन्द्राणाम् नराणाम् च नर-अधिपम्।।२७।।

स्वर्ग में निर्माण किया गया घोडों में सबसे श्रेष्ठ धन और सम्मान के तौर पर मिलने वाला घोड़ा मुझे जानो। हाथियों में ऐरावत हूँ और मनुष्यों में राजा और शासक हूँ।

(अमृत) स्वर्ग में (उद्भवम्) निर्माण किया गया (अश्वानाम्) घोडों में (उच्चैः) सबसे श्रेष्ठ (श्रवासम्) धन और सम्मान (के तौर पर मिलने वाला घोड़ा) (माम) मुझे (विद्धि) जानो। (गज-इन्द्राणाम्) हाथियों में (ऐरावतम्) ऐरावत हूँ (च) और (नराणाम्) मनुष्यों में (नर-अधिपम्) राजा और शासक हूँ।

१०.२८

आयुधानाम् अहम वज्रम् धेनूनाम् अस्मि काम-धुक्।
प्रजनः च अस्मि कन्दर्पः सर्पाणाम् अस्मि वासुकिः।।२८।।

हथियारों में वज्र में हूँ। गायों में कामधेनू गाय हूँ। संतान के जन्म के कार्य में लगाए गए देवताओं में कामदेव हूँ। और साँपों में वासूकि: हूँ।

(आयुधानाम्) हथियारों में (वज्रम्) वज्र (अहम्) में हूँ। (धेनूनाम्) गायों में (काम-धुक) कामधेनू गाय (अस्मि) हूँ (प्रजनः) संतान के जन्म के कार्य में लगाए गए देवताओं में (कन्दर्पः) कामदेव (अस्मि) हूँ (च) और (सर्पाणाम्) साँपों में (वासुकिः) वासूकिः (अस्मि) हूँ।

१०.२९

अनन्तः च अस्मि नागानाम् वरुणः यादसाम् अहम्।
पितृणाम् अर्यमा च अस्मि यमः संयमताम् अहम् ।।२९।।

नागों में अनन्त हूँ और जल के कार्यों में लगाए गए देवताओं में वरुण, मैं हूँ। और पितरों में अर्यमा हूँ। नियमों का पालन कराने वाले देवताओं में मौत का देवता (यम) मैं हूँ।

(नागानाम) नागों में (अनन्त) अनन्त (अस्मि) हूँ (च) और (यादसाम्) जल के कार्यों में लगाए गए देवताओं में (वरुणः) वरुण (अहम्) मैं हूँ। (च) और (पितृणाम्) पितरों में (अर्यमा) अर्यमा (अस्मि) हूँ। (संयमतान्) नियमों का पालन कराने वाले देवताओं में (यमः) मौत का देवता (अहम्) मैं हूँ।

१०.३०

प्रल्हादः च अस्मि दैत्यानाम् कालः कलयताम् अहम।
मृगानाम् च मृग-इन्द्रः अहम् वैनतेयः च पक्षिणाम् ।।३०।।

देवताओं में शान्ति, सुख और आनंद देने वाला देवता प्रहलाद हूँ और गणना और हिसाब रखने वालों में काल, मैं हूँ। और पशुओं में सिंह मैं हूँ, और पक्षियों में गरुड़ हूँ।

(दैत्यानाम) देवताओं में (प्रल्हादः) शान्ति, सुख और आनंद देने वाला देवता प्रहलाद (अस्मि) हूँ (च) और (कलयताम्) गणना और हिसाब रखने वालों में (कालः) काल (अहम्) मैं हूँ (च) और (मृगानाम्) पशुओं में (मृग-इन्द्र) सिंह (अहम) मैं हूँ (च) और (पक्षिणाम्) पक्षियों में (वैनतेयः) गरुड़ हूँ।

१०.३१

पवनः पवताम् अस्मि रामः शस्त्र-भृताम् अहम।
झषाणाम् मकरः च अस्मि स्त्रोतसाम् अस्मि जाह्नवी।।३१।।

पवित्र करनेवालों में वायु हूँ। हथियार चलाने वालों में, ''राम, मैं हूँ।'' मछलियों में मगर हूँ और नदियों में गंगा नदी हूँ।''

(पवताम्) पवित्र करनेवालों में (पवनः) वायु (अस्मि) हूँ (शस्त्र) हथियार (भृताम्) चलाने वालों में (रामः) राम (अहम्) मैं हूँ। (झषाणाम्) मछलियों में (मकरः) मगर हूँ (अस्मि) हूँ (च) और (स्त्रोतसाम्) नदियों में (जान्हवी) गंगा नदी (अस्मि) हूँ।

१०.३२

सर्गाणाम् आदिः अन्तःच मध्यम् च एव अहम् अर्जुन।
अध्यात्म-विद्या विद्यानाम् वादः प्रवदताम् अहम् ।।३२।।

हे अर्जुन! ''सारी निर्मित वस्तुओं का आरम्भ और अन्त मैं हूँ। ''निःसंदेह, सारे ज्ञानों में, मैं आध्यात्मिक ज्ञान हूँ।'' सारे विवादों का सही निर्णय, मैं हूँ।''

(अर्जुन) हे अर्जुन (सर्गाणाम्) सारी निर्मित वस्तुओं का (आदिः) आरम्भ (च) और (अन्त) अन्त मैं हूँ। (एवं) निःसंदेह, (विद्यानाम्) सारे ज्ञानों में (अहम्) मैं (अध्यात्म) आध्यात्मिव (विद्या) ज्ञान हूँ। (प्रवदताम्) सारे विवादों का (वादः) सही निर्णय (अहम्) मैं हूँ।

१०.३३

अक्षराणाम् अ-कारः अस्मि द्वन्द्वः सामासिकस्य च।
अहम् एव अक्षयः कालः धाता अहम् विश्वतः-मुखः ।।३३।।

हे अर्जुन! सारे शब्दों में 'अ' का पहला शब्द हूँ। शब्दों के जोड़ में द्वन्द्व समास, 'मैं हूँ।' और निःसंदेह सदैव स्थित रहने वाला काल मैं हूँ। पालने वाला (ईश्वर मैं हूँ।) ब्रह्माण्ड में सब ओर अपना मुख रखने वाला, 'मैं हूँ।'

(अर्जुन) हे अर्जुन! (अक्षराणाम्) सारे शब्दों में (अ) 'अ' (कारः) का पहला शब्द (अस्मि) हूँ। (सामासिकस्य) शब्दों के जोड़ में (द्वन्द्व) द्वन्द्व समास (अहम्) मैं (अस्मि) हूँ (च) और (ए व) निःसंदेह (अक्षयः) सदैव स्थित रहने वाला (कालः) काल (मैं हूँ।) (धाता) पालने वाला (ईश्वर मैं हूँ।) (विश्वतः) ब्रह्माण्ड में सब ओर (मुखः) अपना मुख रखने वाला (अहम्) मैं हूँ।

नोट १०.३५ श्लोक नं. १०.३५ में मार्गशीष महीने को ईश्वर ने अपनी महान रचना कहा है। इसका कारण समझने के लिए आप रमजान महीने को समझने का प्रयास करें।

जैसे मोटरकार कुछ निर्धारित समय तक चलने के बाद सर्विसिंग के लिए गॅरेज में भेजी जाती है। इसी प्रकार साल भर में एक बार एक महीना मनुष्य को शारीरिक और अध्यात्मिक सर्विसिंग की आवश्यकता है और यह सर्विसिंग का महीना रमजान है।

मानवजाति को प्रेरित करने के लिए ईश्वर ने इस महीने में पुण्य का भाव बढा दिया है। इस महीने जो एक पुण्य करेगा उसे ७० गुना अधिक पुण्य मिलेगा। इस कारण लोग इस महीने दान (जकात) बहुत देते हैं।

फिर इस महीने में उपवास को अनिवार्य किया गया है और इसका कारण ईश्वर ने बताया कि मनुष्य में अतिति गुण (मुत्तकी गुण) जो सात्विक गुण से अधिक पवित्र है, वह उत्पन्न हो। इसका वर्णन सूरे-अल-बकराह (२) आयत (१८३) में है। अतीत गुण का वर्णन आध्याय न.-१४ में श्लोक न.२१से २६ तक है

फिर इसमें रात को फर्ज़ ईशा नमाज़ के पश्चात तरावी की अतिरिक्त २० रकात नमाज पढ़ने को कहा हैं। इस से मनुष्य को तप का अनुभव होता है। पूरे दिन उपवास करने के बाद रात में एक घंटा खड़े होकर नमाज़ पढ़ना बहुत कठिन है। इस कठिनाई को सहन करने से मनुष्य तपस्वी हो जाता है।

जब मनुष्य एक महिने उपवास रखता है, रोज रात एक घंटा तरावी की नमाज़ पढ़ता है, तो महीने के अन्त में ईद की नमाज़ के समय ईश्वर उस व्यक्ति को सब पापों से मुक्त कर देता है। इस प्रकार उपवास से शरीर भी स्वस्थ हो जाता है और आत्मबल भी बढ़ता है और मनुष्य पापों से भी मुक्त हो जाता है और गुण भी पवित्रता की ओर बढ़ते है।

इस्लामी महीने चांद के अनुसार होते हैं। रमजान वर्ष का नवाँ (९) महीना है। सनातन धर्म में भी महीने चांद के अनुसार होते हैं और मार्गशीष यही नवाँ महीना है जो मानवजाति के लिए ईश्वर की ओर से एक महान उपहार है।

चाँद, सूर्य और तारों के कारण जो महीने, दिन या समय शुभ होता है वह धर्म के अनुसार किसी एक समुदाय के लिए नहीं बल्कि सारी मानवजाति के लिए शुभ होता है। इस कारण यह मार्गशीष या रमजान का महीना सारे मानवजाति के लिए शुभ महीना है। इस महीने में तप, यज्ञ और दान अधिक करना चाहिए। दुसरे शब्दों में उपवास, ईश्वर की बहुत प्रार्थना और जकात (दान) देना चाहिए।

१०.३४

मृत्युः सर्व-हर च अहम् उद्भवः च भविष्याताम् ।
कीर्तिः श्रीः वाक च नारीणाम् स्मृतिः मेधा धृतिः क्षमा।।३४।।

सारे मनुष्यों को मौत की ओर ले जाने वाला और भविष्य में प्रलय के दिन (दुबारा) जीवित करने वाला मैं हूँ और स्त्रियों से प्राप्त होने वाला यश, आनंद व सुख और उनकी बातचीत, (मैं हूँ।) स्मरणशक्ति, बुद्धि, धैर्य और क्षमा भी मैं हूँ।

(सर्व) सारे मनुष्यों को (मृत्युः) मौत की ओर (हरः) ले जाने वाला (च) और (भविष्याताम्) भविष्य में (प्रलय के दिन) (उद्भवः) (दुबारा) जीवित करने वाला (अहम) मैं हूँ (च) और (नारीणाम्) स्त्रियों से प्राप्त होने वाला (कीर्ति) यश, (श्री) आनंद व सुख (च) और (वाक) उनकी बातचीत, (मैं हूँ।) (स्मृति) स्मरणशक्ति (मेधा) बुद्धि (धृतिः) धैर्य या सब्र (क्षमा) और क्षमा भी, मैं हूँ।

१०.३५

बृहत साम तथा साम्नाम् गायत्री छन्दसाम् अहम्
मासानाम् मार्ग-शीर्षः अहम ऋतूनाम् कुसुम-आकरः।।३५।।

सामवेद के गीतों में बृहतसाम और सारे छन्दों में गायत्री मंत्र मैं हूँ। महीनों में, मौसमों में मार्गशीष हूँ, बसन्त का मौसम मैं हूँ।

(साम्नाम्) सामवेद के गीतों में (बृहत-साम) बृहतसाम (तथा) और (छन्दसाम्) सारे छन्दों में (गायत्री) गायत्री मंत्र (अहम्) मैं हूँ। (मासानाम्) महीनों में (मार्ग-शीर्षः) मार्गशीर्षः हूँ (ऋतूनाम्) मौसमों में (कुसुम-आकरः) बसन्त का मौसम (अहम्) मैं हूँ।

१०.३६

द्यूतम् छलयताम् अस्मि तेजः तेजस्विनाम् अहम्
जयः अस्मि व्यवसायः अस्मि सत्वम् सत्व-वताम् अहम् ।।३६।।

धोखा देने वालों की चाल मैं हूँ। प्रकाश देने वालों का प्रकाश मैं हूँ। दृढ़ श्रद्धा वालों के मनपर विजय मैं हूँ। भलाई करने वालों और सच्चे लोगों की भलाई और सच्चाई मैं हूँ।

(छलयताम्) धोखा देने वालों की (द्यूतम्) चाल (अस्मि) (मैं) हूँ। (तेजस्विनाम्) प्रकाश देने वालों का (तेजः) प्रकाश (अहम) मैं हूँ। (व्यवसायः) दृढ़ श्रद्धा वालों की (जयः) (मनपर) विजय (अस्मि) मैं हूँ। (सत्व-वताम्) भलाई करने वालों और सच्चे लोगों की (सत्वम्) भलाई और सच्चाई (अहम्) मैं (अस्मि) हूँ।

१०.३७

वृष्णीनाम् वासुदेवः अस्मि पाण्डवानाम् धनज्जयः।
मुनीनाम् अपि अहम् व्यासः कवीनाम् उशना कविः।।३७।।

वृष्णी की पीढ़ी में वासुदेव अर्थात कृष्ण हूँ। पाण्डवों में अर्जुन हूँ। मुनि लोगों में व्यास भी मैं हूँ। कवियों में उशना कवि हूँ।

(वृष्णीनाम्) वृष्णी की पीढ़ी में (वासुदेवः) वासुदेव यानी कृष्ण (अस्मि) हूँ। (पाण्डवानाम्) पाण्डवों में (धनञ्जयः) अर्जुन हूँ। (मुनीनाम्) मुनि लोगों में (व्यासः) व्यास (अपी) भी (अहम्) मैं हूँ। (कवीनाम्) कवियों में (उशना) उशना (कवि) कवि हूँ।

१०.३८

दण्डः दमयताम् अस्मि नीतिः अस्मि जिगीषताम।
मौनम् च एव अस्मि गुह्यानाम् ज्ञानम् ज्ञान-वताम् अहम् ।।३८।।

अपराध रोकने के समस्त साधनों में दण्ड हूँ। विजय की आकांक्षा करने वालों की नीति हूँ। और निःसंदेह रहस्यों में चुप्पी हूँ। ज्ञानियों का ज्ञान मैं हूँ।

(दमयताम्) अपराध रोकने के समस्त साधनों में (दण्डः) दण्ड (अस्मि) हूँ। (जिगीषताम्) विजय की आकांक्षा करने वालों की (नीतिः) नीति (अस्मि) हूँ (च) और (एवं) निःसंदेह (गुह्यानाम्) रहस्यों में (मौनम्) चुप्पी (अस्मि) हूँ। (ज्ञान-वताम्) ज्ञानियों का (ज्ञानम्) ज्ञान (अहम्) मैं हूँ।

१०.३९

यत च अपि सर्व-भुतानाम् बीजम् तत् अहम् अर्जुन।
न तत् अस्ति विना यत् स्यात् मया भूतम् चर-अचरम् ।।३९।।

अर्जुन सारी निर्मित वस्तुओं का जो भी बीज है वह मैं हूँ। सारी बातों का तात्पर्य यह है कि बेजान और जानदार जो भी निर्मित वस्तु है वह मेरे बिना निर्माण नहीं हो सकती है।

(अर्जुन) अर्जुन (सर्व) सारी (भूतानाम्) निर्मित वस्तुओं का (यत्) जो (अपि) भी (बीजम्) बीज है (तत्) वह (अहम्) मैं हूँ। (सारी बातों का तात्पर्य यह है कि) (चर) बेजान (च) और (अचरम्) जानदार (यत्) जो भी (भूतम्) निर्मित वस्तु (तत्) है वह (मया) मेरे (विना) बिना (न) (निर्माण) नहीं हो सकती (अस्ति) है।

१०.४०

न अन्तः अस्ति मम दिव्यानाम् विभूतीनाम् परन्तप।
एषः तु उद्देशतः प्रोक्तः विभूतेः विस्तरः मया।।४०।।

हे अर्जुन! मेरी दिव्य रचनाओं का कोई अन्त नहीं है। मैंने तुम्हारे सामने जो अपनी दिव्य रचनाओं का विस्तार से वर्णन किया है यह तो केवल संक्षेप में उदाहरण है।

(परन्तप) हे अर्जुन (मम्) मेरी (दिव्यानाम्) दिव्य (विभूतीनाम्) रचनाओं का (अन्तः) कोई अन्त (न) नहीं (अस्ति) है। (मया) मैंने (तुम्हारे सामने जो अपनी) (विभूतेः) दिव्य रचनाओं का (विस्तरः) विस्तार से (प्रोक्तः) वर्णन किया है (एषः) यह (तु) तो (केवल) (उद्देशतः) संक्षेप में उदाहरण है।

नोट १०.४० ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, 'यकीनन रात और दिन के उलट-फेर में और हर उस चीज़ में जो ईश्वर ने ज़मीन और आसमानों में पैदा की है', निशानियाँ हैं उन लोगों के लिए जो (असत्य देखने और असत्य कार्य करने से) बचना चाहते हैं। (पवित्र कुरआन, सूरह यूनुस-१०, आयत-६)

१०.४१

यत् यत् विभूति मत् सत्वम् श्री-मत् उर्जितम् एव वा।
तत् तत् एव अवगच्छ त्वम् मम तेजः अंश सम्भवम् ।।४१।।

संसार में जो जो दिव्य रचनाऐं या समृद्धि, ऊर्जा (या ज्ञान) या सुख शान्ति (और) मानवता सच्चाई मानी जाती है। नि:संदेह उन सबको तुम मेरे तेज के अंश से उत्पन्न हुई है ऐसा समझो।

(यत्-यत्) (संसार में) जो जो (विभूति मत्) दिव्य रचनाऐं या समृद्धि (ऊर्जितम्) ऊर्जा (या ज्ञान) (वा) या (श्री मत्) सुख शान्ति (और) (सत्त्वम्) मानवता (सच्चाई) (मत्) मानी जाती है। (एवं) नि:संदेह (तत् तत्) उन सबको (त्वम्) तुम (मम) मेरे (तेजः अंश) तेज के अंश से (सम्भवम्) उत्पन्न हुई है ऐसा (अवगच्छ) समझो।

१०.४२

अथवा बहुना एतेन किम् ज्ञातेन तव अर्जुन।
विष्टभ्य अहम् इदम् कृत्सनम् एक अंशेन स्थितः जगत् ।।४२।।

किन्तु हे अर्जुन! तुम्हें इस प्रकार बहुत सी बातें जानने की क्या आवश्यकता है? मैंने इस सम्पूर्ण जगत को अपने केवल एक तेज के अंश से स्थित और फैला रखा है।

(अथवा) किन्तु (अर्जुन) हे अर्जुन (तव) तुम्हें (एतेन) इस प्रकार (बहुना) बहुत सी बातें (ज्ञातेन) जानने की (किम्) क्या आवश्यकता है? (अहम्) मैंने (इदम्) इस (कृत्सनम्) सम्पूर्ण (जगत्) जगत को (एक अंशेन) अपने केवल एक तेज के अंश से (स्थितः) स्थित और (विष्टभ्य) फैला रखा है।

नोट १०.४२ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ईश्वर धरती और आकाश का प्रकाश (तेज़) है। (सूरे अलनूर २४, आयत ३५)

अध्याय नं.११

विश्वरुप दर्शन योग

अर्जुन उवाच
मदनुग्रहाय परमं गुह्यमध्यात्मसञ्ज्ञितम्।
यत्त्वयोक्तं वचस्तेन मोहोऽयं विगतो मम ॥1॥

भवाप्ययौ हि भूतानां श्रुतौ विस्तरशो मया।
त्वतः कमलपत्राक्ष माहात्म्यमपि चाव्ययम् ॥2॥

एवमेतद्यथात्थ त्वमात्मानं परमेश्वर।
द्रष्टुमिच्छामि ते रूपमैश्वरं पुरुषोत्तम ॥3॥

मन्यसे यदि तच्छक्यं मया द्रष्टुमिति प्रभो।
योगेश्वर ततो मे त्वं दर्शयात्मानमव्ययम् ॥4॥

श्रीभगवानुवाच
पश्य मे पार्थ रूपाणि शतशोऽथ सहस्रशः।
नानाविधानि दिव्यानि नानावर्णाकृतीनि च ॥5॥

पश्यादित्यान्वसून्रुद्रानश्विनौ मरुतस्तथा।
बहून्यदृष्टपूर्वाणि पश्याश्चर्याणि भारत ॥6॥

इहैकस्थं जगत्कृत्स्नं पश्याद्य सचराचरम्।
मम देहे गुडाकेश यच्चान्यद्द्रष्टमिच्छसि ॥7॥

न तु मां शक्यसे द्रष्टमनेनैव स्वचक्षुषा।
दिव्यं ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगमैश्वरम् ॥8॥

संजय उवाच
एवमुक्त्वा ततो राजन्महायोगेश्वरो हरिः।
दर्शयामास पार्थाय परमं रूपमैश्वरम् ॥9॥

अनेकवक्त्रनयनमनेकाद्भुतदर्शनम्।
अनेकदिव्याभरणं दिव्यानेकोद्यतायुधम् ॥10॥

दिव्यमाल्याम्बरधरं दिव्यगन्धानुलेपनम्।
सर्वाश्चर्यमयं देवमनन्तं विश्वतोमुखम् ॥11॥

दिवि सूर्यसहस्रस्य भवेद्युगपदुत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्याद्भासस्तस्य महात्मनः ॥12॥

तत्रैकस्थं जगत्कृत्स्नं प्रविभक्तमनेकधा।
अपश्यद्देवदेवस्य शरीरे पाण्डवस्तदा ॥13॥

ततः स विस्मयाविष्टो हृष्टरोमा धनञ्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवं कृताञ्जलिरभाषत ॥14॥

अर्जुन उवाच
पश्यामि देवांस्तव देव देहे सर्वांस्तथा भूतविशेषसङ्घान्।
ब्रह्माणमीशं कमलासनस्थमृषींश्च सर्वानुरगांश्च दिव्यान् ॥15॥

अनेकबाहूदरवक्त्रनेत्रंपश्यामि त्वां सर्वतोऽनन्तरूपम्।
नान्तं न मध्यं न पुनस्तवादिंपश्यामि विश्वेश्वर विश्वरूप ॥16॥

किरीटिनं गदिनं चक्रिणं च तेजोराशिं सर्वतो दीप्तिमन्तम्।
पश्यामि त्वां दुर्निरीक्ष्यं समन्ताद्दीप्तानलार्कद्युतिमप्रमेयम् ॥17॥

त्वमक्षरं परमं वेदितव्यंत्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
त्वमव्ययः शाश्वतधर्मगोप्ता सनातनस्त्वं पुरुषो मतो मे ॥18॥

अनादिमध्यान्तमनन्तवीर्यमनन्तबाहुं शशिसूर्यनेत्रम्।
पश्यामि त्वां दीप्तहुताशवक्त्रंस्वतेजसा विश्वमिदं तपन्तम्॥19॥

द्यावापृथिव्योरिदमन्तरं हि व्याप्तं त्वयैकेन दिशश्च सर्वाः।
दृष्ट्वाद्भुतं रूपमुग्रं तवेदंलोकत्रयं प्रव्यथितं महात्मन् ॥20॥

अमी हि त्वां सुरसङ्घा विशन्ति केचिद्भीताः प्राञ्जलयो गृणन्ति।
स्वस्तीत्युक्त्वा महर्षिसिद्धसङ्घाः स्तुवन्ति त्वां स्तुतिभिः पुष्कलाभिः॥21॥

रुद्रादित्या वसवो ये च साध्याविश्वेऽश्विनौ मरुतश्चोष्मपाश्च।
गंधर्वयक्षासुरसिद्धसङ्घावीक्षन्ते त्वां विस्मिताश्चैव सर्वे॥22॥

रूपं महत्ते बहुवक्त्रनेत्रंमहाबाहो बहुबाहूरूपादम्।
बहूदरं बहुदंष्ट्राकरालंदृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथितास्तथाहम्॥23॥

नभःस्पृशं दीप्तमनेकवर्णंव्यात्ताननं दीप्तविशालनेत्रम्।
दृष्टवा हि त्वां प्रव्यथितान्तरात्मा धृतिं न विन्दामि शमं च विष्णो॥24॥

दंष्ट्राकरालानि च ते मुखानिदृष्टैव कालानलसन्निभानि।
दिशो न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देवेश जगन्निवास ॥25॥

अमी च त्वां धृतराष्ट्रस्य पुत्राः सर्वे सहैवावनिपालसंघैः।
भीष्मो द्रोणः सूतपुत्रस्तथासौ सहास्मदीयैरपि योधमुख्यैः॥26॥

वक्त्राणि ते त्वरमाणा विशन्ति दंष्ट्राकरालानि भयानकानि।
केचिद्विलग्ना दशनान्तरेषु सन्दृश्यन्ते चूर्णितैरुत्तमाङ्गै॥27॥

यथा नदीनां बहवोऽम्बुवेगाः समुद्रमेवाभिमुखा द्रवन्ति।
तथा तवामी नरलोकवीराविशन्ति वक्त्राण्यभिविज्वलन्ति॥28॥

यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतंगाविशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः॥29॥

लेलिह्यसे ग्रसमानः समन्ताल्लोकान्समग्रान्वदनैर्ज्वलद्भिः।
तेजोभिरापूर्य जगत्समग्रंभासस्तवोग्राः प्रतपन्ति विष्णो॥30॥

आख्याहि मे को भवानुग्ररूपोनमोऽस्तु ते देववर प्रसीद।
विज्ञातुमिच्छामि भवन्तमाद्यंन हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम्॥31॥

श्रीभगवानुवाच
कालोऽस्मि लोकक्षयकृत्प्रवृद्धोलोकान्समाहर्तुमिह प्रवृत्तः।
ऋतेऽपि त्वां न भविष्यन्ति सर्वे येऽवस्थिताः प्रत्यनीकेषु योधाः॥32॥

तस्मात्त्वमुक्तिष्ठ यशो लभस्व जित्वा शत्रून्भुङ्क्ष्व राज्यं समृद्धम्।
मयैवैते निहताः पूर्वमेव निमित्तमात्रं भव सव्यसाचिन् ॥33॥

द्रोणं च भीष्मं च जयद्रथं च कर्णं तथान्यानपि योधवीरान्।
मया हतांस्त्वं जहि मा व्यथिष्ठायुध्यस्व जेतासि रणे सपत्नान्॥34॥

संजय उवाच
एतच्छ्रुत्वा वचनं केशवस्य कृतांजलिर्वेपमानः किरीटी।
नमस्कृत्वा भूय एवाह कृष्णंसगद्गदं भीतभीतः प्रणम्य ॥35॥

अर्जुन उवाच
स्थाने हृषीकेश तव प्रकीर्त्या जगत्प्रहृष्यत्यनुरज्यते च
रक्षांसि भीतानि दिशो द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्धसङ्घाः॥36॥

कस्माच्च ते न नमेरन्महात्मन् गरीयसे ब्रह्मणोऽप्यादिकर्त्रे।
अनन्त देवेश जगन्निवास त्वमक्षरं सदसत्तत्परं यत् ॥37॥

त्वमादिदेवः पुरुषः पुराणस्त्वमस्य विश्वस्य परं निधानम्।
वेत्तासि वेद्यं च परं च धाम त्वया ततं विश्वमनन्तरूप। ।38॥

वायुर्यमोऽग्निर्वरुणः शशाङ्कः प्रजापतिस्त्वं प्रपितामहश्च।
नमो नमस्तेऽस्तु सहस्रकृत्वः पुनश्च भूयोऽपि नमो नमस्ते॥39॥

नमः पुरस्तादथ पृष्ठतस्ते नमोऽस्तु ते सर्वत एव सर्व।
अनन्तवीर्यामितविक्रमस्त्वंसर्वं समाप्नोषि ततोऽसि सर्वः॥40॥

सखेति मत्वा प्रसभं यदुक्तं हे कृष्ण हे यादव हे सखेति।
अजानता महिमानं तवेदंमया प्रमादात्प्रणयेन वापि ॥41॥

यच्चावहासार्थमसत्कृतोऽसि
विहारशय्यासनभोजनेषु।
एकोऽथवाप्यच्युत तत्समक्षंतत्क्षामये
त्वामहमप्रमेयम्॥42॥

पितासि लोकस्य चराचरस्य त्वमस्य पूज्यश्च गुरुर्गरीयान्।
न त्वत्समोऽस्त्यभ्यधिकः
कुतोऽन्योलोकत्रयेऽप्यप्रतिमप्रभाव॥43॥

तस्मात्प्रणम्य प्रणिधाय कायंप्रसादये त्वामहमीशमीड्यम्।
पितेव पुत्रस्य सखेव सख्युः प्रियः प्रियायार्हसि देव सोढुम्॥44॥

अदृष्टपूर्वं हृषितोऽस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितं मनो मे।
तदेव मे दर्शय देवरूपंप्रसीद देवेश जगन्निवास॥45॥

किरीटिनं गदिनं चक्रहस्तमिच्छामि त्वां द्रष्टुमहं तथैव।
तेनैव रूपेण चतुर्भुजेनसहस्रबाहो भव विश्वमूर्ते॥46॥

श्रीभगवानुवाच
मया प्रसन्नेन तवार्जुनेदंरूपं परं दर्शितमात्मयोगात्।
तेजोमयं विश्वमनन्तमाद्यंयन्मे त्वदन्येन न दृष्टपूर्वम् ॥47॥

न वेदयज्ञाध्ययनैर्न दानैर्न च क्रियाभिर्न तपोभिरुग्रैः।
एवं रूपः शक्य अहं नृलोके द्रष्टुं त्वदन्येन कुरुप्रवीर
॥48॥

मा ते व्यथा मा च विमूढभावोदृष्ट्वा रूपं घोरमीदृङ्ममेदम्।
व्यतेपभीः प्रीतमनाः पुनस्त्वंतदेव मे रूपमिदं प्रपश्य
॥49॥

संजय उवाच
इत्यर्जुनं वासुदेवस्तथोक्त्वा स्वकं रूपं दर्शयामास भूयः।
आश्वासयामास च भीतमेनंभूत्वा पुनः सौम्यवपुर्महात्मा॥50॥

अर्जुन उवाच
दृष्ट्वेदं मानुषं रूपं तव सौम्यं जनार्दन।
इदानीमस्मि संवृत्तः सचेताः प्रकृतिं गतः॥51॥

अर्जुन उवाच
सुदुर्दर्शमिदं रूपं दृष्टवानसि यन्मम।
देवा अप्यस्य रूपस्य नित्यं दर्शनकाङ्क्षिणः॥52॥

नाहं वेदैर्न तपसा न दानेन न चेज्यया।
शक्य एवं विधो द्रष्टुं दृष्ट्वानसि मां यथा॥53॥

भक्त्या त्वनन्यया शक्य अहमेवंविधोऽर्जुन।
ज्ञातुं द्रष्टुं च तत्वेन प्रवेष्टुं च परन्तप॥54॥

मत्कर्मकृन्मत्परमो मद्भक्तः सङ्गवर्जितः।
निर्वैरः सर्वभूतेषु यः स मामेति पाण्डव॥55॥

अध्याय का परिचय

आस्तिक का विश्वास है कि ईश्वर, स्वर्ग, नरक, (फरिश्ते) इन सबका अस्तित्व है किन्तु जब नास्तिक कहेगा कि यह सब काल्पनिक बातें हैं। इनके होने का कोई प्रमाण नहीं है तो आस्तिक चुप हो जाता है, क्योंकि ईश्वर, स्वर्ग, नरक और फरिश्तों के अस्तित्व का प्रमाण देना एक साधारण व्यक्ति के लिए बहुत कठिन है। किन्तु इस अध्याय द्वारा कोई भी श्रद्धालु नास्तिक को चुप कर सकता है।

इस अध्याय में, जो कुछ लिखा है। उसके सच होने का प्रमाण इस प्रकार है।

दिसंबर ३०, १९२४ को Edwin Hubble ने यह खोज निकाला कि Spiral nebula Andromeda एक आकाशगंगा है और १९९० में Hubble space Telescope के द्वारा पहली बार आकाशगंगा को साफ तौर से देखा गया। अर्थात सन१९०० के पहले किसी को घूमती आकाशगंगा की कल्पना तक न थी। किन्तु अर्जुन ने द्वापर युग में अपनी आँखों से मुकुट की तरह चमकते हुए धुमकेतु को घूमती आकाशगंगा और सितारों को देखा। (भगवद् गीता ११.७)

'तो जिसने द्वापरयुग में ही घूमती आकाशगंगा को देखा, जो आज सच साबित हुआ, तो अर्जुन ने ईश्वर के तेज और अनेक प्रकार के देवताओं (फरिश्तों) का जो वर्णन किया गया है, ''क्या वह केवल कल्पना हो सकता है?'' कभी नहीं, वह भी सत्य है। ईश्वर का अस्तित्व है, और उसका तेज हजारों सूर्य से अधिक है। देवताओं (फरिश्तों) का अस्तित्व है और इन्हीं को सच मानना अन्य लोक में श्रद्धा रखना है। हम मृत्यु के बाद इसी लोक में जाएंगे और इसी लोक में स्वर्ग और नरक है जहाँ हमें सदैव रहना है।

अध्याय का सारांश

- श्लोक नं. ११.१-११.४ में अर्जुन ने श्रीकृष्ण से ईश्वर के दिव्य रचना को देखने के लिए विनती किया है।
- श्लोक नं. ११.५-११.७ में ईश्वर ने अर्जुन की विनती को स्वीकार करके कुछ दिव्य रचनाएं दिखाई।
- श्लोक नं. ११.८-११.९ में ईश्वर ने कहा कि और रचनाएं तुम साधारण आँखों से नहीं देख सकते हो, इस कारण ईश्वर ने अर्जुन को दिव्य दृष्टी प्रदान की थी।
- श्लोक नं. ११.१०-११.११ में अर्जुन ने अनेक प्रकार के देवता (फरिश्तों) को देखा।
- श्लोक नं. ११.१२ में अर्जुन द्वारा ईश्वर के तेज को देखने का वर्णन है।
- श्लोक नं. ११.१३ से ११.२२ तक अर्जुन द्वारा ईश्वर की प्रशंसा किए जाने का वर्णन है।
- श्लोक नं. ११.२३ में अर्जुन द्वारा यमराज को देखे जाने का वर्णन है।
- श्लोक नं. ११.२४ से ११.३१ तक यमराज के भयानक व्यक्तित्व का वर्णन है।
- श्लोक नं. ११.३२ में यमराज ने अपना परिचय दिया और अर्जुन को युद्ध लड़ने के लिए प्रेरित किया।
- श्लोक नं. ११.३५ से ११.४० तक अर्जुन द्वारा ईश्वर की प्रशंसा किए जाने का वर्णन है।

● श्लोक नं. ११.४१ से ११.४४ अर्जुन ने ईश्वर से उन बातों के लिए क्षमा मांगा जो भूलचूक उनसे श्री कृष्ण के प्रति हुई थी।

● श्लोक नं. ११.४५ से ११.४७ में अर्जुन फिर ईश्वर की दिव्य रचनाओं को देखने की विनती करते है।

● श्लोक नं. ११.४७ से ११.५० में ईश्वर द्वारा अर्जुन को (सांत्वना) दिये जाने का वर्णन है।

● श्लोक नं. ११.५४-११.५५ में ईश्वर द्वारा अर्जुन को महत्त्वपूर्ण उपदेश का वर्णन है।

अध्याय

ईश्वर की दिव्य रचनाएं देखने के लिए अर्जुन की विनती :-

११:१

अर्जुन उवाच
मत-अनुग्रहाय परमम् गुह्यम् अधात्म संज्ञितम्।
यत् त्वया उक्तम् वचः तेन मोहः अयम् विगतः मम।।१।।

अर्जुन ने (श्री कृष्ण से कहा), मुझ पर कृपा करते हुए, महान गुप्त और दिव्य ज्ञान जो आपके द्वारा (मुझे) कही गई। उनसे मेरे वह सब भ्रम दूर हो गए।

(अर्जुन उवाच्) अर्जुन ने (श्री कृष्ण से कहा) (मत) मुझ पर (अनुग्रहाय) कृपा करते हुए (परमम्) महान (गुह्यम्) गुप्त (और) (अधात्म संज्ञितम्) दिव्य ज्ञान (यत्) जो (त्वया) आपके द्वारा (उक्तम्) (मुझे) कही गई (तेन) उनसे (मम) मेरे (अयम्) वह सब (मोहः) भ्रम (विगतः) दूर हो गए।

११:२

भव अप्ययौ हि भूतानाम् श्रुतौ विस्तरशः मया।
त्वत्तः कमल-पत्र-अक्ष माहात्म्यम् अपि च अव्ययम् ।।२।।

हे कमल के पत्तों के समान आँखो वाले (कृष्ण)। निःसंदेह! मैंने तुमसे प्राणियों के जीवन और मृत्यु के बारे में विस्तार से सुना, और अविनाशी और महान ईश्वर के बारे में भी।.

(कमल) हे कमल के (पत्र) पत्तों के समान (अक्ष) आँखो वाले (कृष्ण) (हि) निःसंदेह (मया) मैंने (त्वत्तः) तुमसे (भुतानाम्) प्राणियों के (भव) जीवन (अप्ययौ) (और) मृत्यु के (बारे में) (विस्तरशः) विस्तार से (श्रुतौ) सुना (च) और (अव्ययम्) अविनाशी (और) (महात्म्यम्) महान ईश्वर (के बारे में) (अपि) भी।

११:३

एराम् एतत् यथा आत्थ त्वम् आत्मानाम् परम-ईश्वर।
द्रष्टुम् इच्छामि ते रुपम् ऐश्वरम् पुरुष-उत्तम।।३।।

हे महापुरुष श्री कृष्ण! जिस तरह स्वयम् आपने ईश्वर (की) महानता का प्रमाण देने इन ईश्वर की दिव्य सांसारिक निर्माण के बारे में कहा, इसी तरह (मैं) आपसे ईश्वर (की) आध्यात्मिक रचना को देखने का इच्छुक हूँ।

(उत्तम पुरुष) हे महापुरुष (श्री कृष्ण) (यथा) जिस तरह (आत्मानम्) स्वयम् (त्वम्) आपने (ऐश्वरम्) ईश्वर (की) (परम) महानता (का प्रमाण देने) (एतत्) इन (ईश्वर की दिव्य सांसारिक निर्माण के) (आत्थ) (बारे में) कहा (एवम्) इसी तरह (मैं) (ते) आपसे (ऐश्वरम्) ईश्वर (की) (रुपम्) आध्यात्मिक रचना को (द्रष्टुम्) देखने का (इच्छामि) इच्छुक हूँ।

११:४

मन्यसे यदि तत् शक्यम् मया द्रष्टुम् इति प्रभो।
योग-ईश्वर ततः मे त्वम् दर्शय आत्मानाम् अव्ययम् ।।४।।

हे योगेश्वर, यदि आप सोचते हैं कि मेरे लिए ईश्वर की आध्यात्मिक रचना को देखना सम्भव है, तो स्वयम् आप मुझे उस अविनाशी (ईश्वर की महान आध्यात्मिक रचनाओं को) दिखाऐं।

(योग ईश्वर) हे योगेश्वर (यदि) यदि (मन्यसे) आप सोचते हैं कि (मया) मेरे (लिए) (प्रभो) ईश्वर (की आध्यात्मिक रचना को) (द्रष्टुम्) देखना (शक्यम्) सम्भव है तो (आत्मानाम्) स्वयम् (त्वम्) आप (मे) मुझे (तत्) उस (अव्ययम्) अविनाशी (ईश्वर की महान आध्यात्मिक रचनाओं को) (दर्शय) दिखाऐ।

ईश्वर ने अपनी दिव्य रचनाए अर्जुन को दिखाई :-

११:५

पश्य मे पार्थ रुपाणि शतशः अथ सहस्त्रशः।
नाना-विधानि दिव्यानि नाना वर्ण आकृतीनि च।।५।।

ईश्वर ने (श्री कृष्णजी के माध्यम से) कहा, हे अर्जुन, अब मेरे अलग अलग रंग और अलग-अलग प्रकार की दिव्य आकार के सैंकडों (और) हजारों महान रचनाओं को देखो।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने (श्री कृष्णजी के माध्यम से) कहा (पार्थ) हे अर्जुन (अथ) अब (मे) मेरे (नाना) अलग-अलग (वर्ण) रंग (च) और (नाना) अलग-अलग (विधानि) प्रकार की (दिव्यानि) दिव्य (आकृतीनि) आकार के (शतशः) सैंकडों (सहस्त्रशः) (और) हजारों (रुपाणि) महान रचनाओं को (परम) देखो।

नोट ११.३ 'रुप' का अर्थ हिन्दी भाषा में आकार है। किन्तु www.shabdkosh.com इस वेबसाईट पर रुप के ४५ अर्थ बताए गए है, तो इसका अर्थ आकार के अतिरिक्त भी और बहुत कुछ होता है। ईश्वरचंद ने अपने शब्दकोश के पेज नं. ७८८ पर रुपम का अर्थ अलंकारिक वर्णन लिखा है। श्लोक नं. ११.४३ में ईश्वर को अप्रतिम कहा गया है अर्थात जिसकी कोई प्रतिमा नहीं या आकार नहीं। और श्लोक नं. ११.६ में ईश्वर ने अपने आपको दिखाने के बदले अपने दिव्य रचनाओं को दिखाया। इस कारण हम इस शब्द का अर्थ दिव्य रचना ही लेंगे।

११:६

पश्य आदित्यान् वसून रुद्रान अश्विनौ मरुतः तथा।
बहूनि अदृष्ट पूर्वाणि पश्य आश्र्यर्याणि भारत।।६।।

हे भारत (अर्जुन)! देखो, सूर्य को नियंत्रण करने वाले देवता आदित्य को। जल को नियंत्रण करने वाले देवता वसून। घोडों के देवता अश्विन को। वायु को नियंत्रण करने वाले देवता मारुत को। रुद्र (तथा), देखो बहुत सारे आश्चर्यजनक चीज़ें, (जिन्हें पहले कभी नहीं) देखा गया।

(भारत) हे भारत (अर्जुन)! (पश्य) देखो, (आदित्यान) सूर्य को नियंत्रण करने वाले देवता आदित्य को (वसून्) जल को नियंत्रण करने वाले देवता वसून (अश्विनौ) घोडों के देवता अश्विन को (मरुतः) वायु को नियंत्रण करने वाले देवता मारुत को (रुद्रान) रुद्र (तथा) (पश्य) देखो (बहुनि) बहुत सारे (आश्चर्याणि) आश्चर्यजनक चीज़ें (पूर्वाणि) (जिन्हें पहले कभी नहीं) देखा गया।

११:७

इह एक-स्थम् जगत् कृत्स्नम् पश्य अद्य स चर अचरम्।
मम देहे गुडाकेश यत् च अन्यत् द्रष्टुम् इच्छसि।।७।।

हे अर्जुन! अब इस एक स्थान से सारे जगत को, जीवित प्राणी, (और) अजीवित के साथ देखो। और मेरे तेज (के द्वारा) जो कुछ दूसरी (वस्तूऐं देखने की) इच्छा है (उन सबको भी) देखो।

(गुडाकेश) हे अर्जुन (अद्य) अब (इह) इस (एक) एक (स्थम्) स्थान से (कृत्स्नम्) सारे (जगत) जगत को (चर) जीवित प्राणी (अचरम्) (और) अजीवित (स) के साथ (पश्य) देखो (च) और (मम देहे) मेरे तेज (के द्वारा) (यत) जो कुछ (अन्यत) दूसरी (इच्छसि) (वस्तूऐं देखने की) इच्छा है (दृष्टम्) (उन सबको भी) देखो।

ईश्वर ने अर्जुन को दिव्य दृष्टी प्रदान किया :-

११:८

न तु माम् शक्यसे द्रष्टुम् अनेन एव स्व-चक्षुषा।
दिव्यम् ददामि ते चक्षुः पश्य मे योगम् ऐश्वरम् ।।८।।

किन्तु, निःसंदेह मुझको इन (तुम्हारी) अपनी (साधारण) आँखों से देखना संभव नहीं है। मुझसे जुड़ी दिव्य रचनाओं को देखने के लिए (मैं) तुम्हें दिव्य आँखे दे रहा हूँ।

(तु) किन्तु (एव) निःसंदेह (माम) मुझको (अनेन) इन (स्व) (तुम्हारी) अपनी (चक्षुषा) (साधारण) आँखों से (द्रष्टम) देखना (शक्यसे) संभव (न) नहीं है। (मे) मुझ (योग) से जुड़ी (ऐश्वरम्) दिव्य रचनाओं को (पश्य) देखने के लिए (ते) तुम्हें (दिव्यम्) दिव्य (चक्षुः) आँखे (ददामि) दे रहा हूँ।

नोट ११.७ ईश्वरचंद ने अपने शब्दकोश में देह का अर्थ १.शरीर २.रुप ३.ज्योति ४. लगन का स्थान लिखा है। श्लोक नं. ११.४३ के अनुसार ईश्वर अप्रतिम है। इस कारण देह का अर्थ हम इस श्लोक में ज्योति या तेज लेंगे।

११:९

एराम् उक्तवा ततः राजन् महा-योग-ईश्वर हरिः।
दर्शयामास पार्थाय परमम् रुपम् ऐश्वरम् ।।९।।

संजय ने कहा, हे राजन (धृतराष्ट्र)! इस तरह कहते हुए योग-ईश्वर महान श्री कृष्ण के स्थान से उस ईश्वर ने पार्थ (अर्जुन को) ईश्वर द्वारा निर्माण की गई महान रचनाओं को दिखाया।

(संजय उवाच) संजय ने कहा (राजन) हे राजन (धृतराष्ट्र) (एवम्) इस तरह (उक्त्वा) कहते हुए (योग-ईश्वर) योग-ईश्वर (महा) महान (हरिः) श्री कृष्ण (आस) के स्थान से (ततः) उस (ईश्वर ने) (पार्थाय) पार्थ (अर्जुन को) (ऐश्वरम्) ईश्वर द्वारा निर्माण कि गई। (परमम्) महान (रुपम्) रचनाओं को (दर्शयामास) दिखाया।

११:१०

अनेक वक्त्र नयनम् अनेक अद्भूत दर्शनम् ।
अनेक दिव्य आभरणम् दिव्य अनेक उद्यत आयुधम् ।।१०।।

अर्जुन ने देवताओं को देखा अनेक चेहरे वाले, अनेक आँखो वाले, अदभुत दृश्य था। अनेक (देवता) दिव्य वस्त्र पहने हुए थे। अनेक देवता दिव्य शस्त्र लिए हुए थे।

(अर्जुन ने देवताओं को देखा) (अनेक) अनेक (वक्त्र) चेहरे वाले (अनेक) अनेक (नयनम्) आँखो वाले (अदभुत दर्शनम्) अदभुत दृश्य था (अनेक) अनेक (देवता) (दिव्य आभरणम्) दिव्य वस्त्र पहने हुए थे (अनेक) अनेक देवता (दिव्य) दिव्य (आयुधम्) शस्त्र (उद्यत) लिए हुए थे।

११:११

दिव्य माल्य अम्बर धरम् दिव्य गन्ध अनुलेपनम् ।
सर्व आश्चर्य-मयम् देवम् अनन्तम् विश्वतः-मुखम् ।।११।।

(अनेक देवता) अंबर की माला धारण किए हुए थे। (बहुत से देवता) दिव्य सुगंध लगाए हुए थे। हर तरफ अनन्त देवता थे। हर वस्तु अद्‌भुत थी।

(अनेक देवता) (अम्बर) अम्बर की (माल्य) माला (धरम्) धारण किए हुए थे (दिव्य गन्ध) (बहुत से देवता) दिव्य सुगंध (अनुलेपनम्) लगाए हुए थे (विश्वतः मुखम) हर तरफ (अनन्तम्) अनन्त (देवता थे) (सर्व आश्चर्य-मयम्) हर वस्तु अद्‌भुत थी।

ईश्वर का तेज :-

११:१२

दिवि सूर्य सहस्त्रस्य भवेत् युगपत् उत्थिता।
यदि भाः सदृशी सा स्यात भासः तस्य महात्मनः ।।१२।।

(उस समय अर्जुन ने ईश्वर के तेज को देखा। वह ऐसा था कि) (यदि) यदि (दिवि) आकाश में (सहस्त्रस्य) हज़ारो (सूर्य) सूर्य (युगपत्) एक

नोट ११.१० पवित्र कुरआन में फरिश्तों के बारे में निम्नलिखित आयत है। ''सब प्रशंसा ईश्वर के लिए है जो आकाशों और धरती का पैदा करने वाला, फरिश्तों को सन्देशवाहक नियुक्त करने वाला है। जिनके दो-दो और तीन-तीन और चार चार पंख है। वह सृष्टी रचना में जो चीज़ चाहता है बढ़ा देता (रचना करता) है। निस्संदेह! ईश्वर को हर चीज़ का सामर्थ्य प्राप्त है।'' (सूरह फातिर-३५, आयत-१)

उस समय अर्जुन ने ईश्वर के तेज को देखा। वह ऐसा था कि ''यदि आकाश में हज़ारों सूर्य एक साथ उदय हो तो उनका तेज उस महान ईश्वर के तेज के बराबर हो पाए।''

साथ (उत्थिता) उदय हो तो उनका (भाः) तेज (तस्य) उस (महात्मनः) महान ईश्वर के (भासः) तेज के (सदृशी) बराबर (स्यात्) हो पाए।

अर्जुन ने ईश्वर की प्रशंसा की :-

११:१३

तत्र एक-स्थम् जगत् कृत्स्नम् प्रविभक्तम् अनेकधा।
अपश्यत् देव-देवस्य शरीरे पाण्डवः तदा।।१३।।

उस समय अर्जुन ने ऐसा देखा कि वहाँ (एक स्थान पर) सारा जग विभाजित हो रहा है (निर्माण हो रहा है) अनेक प्रकार में। देवताओं के ईश्वर की दैहिक शक्ति और संघटक तत्त्व से।

(तदा) उस समय (पाण्डवः) अर्जुन (ने) (अपश्यत्) ऐसा देखा कि (तत्र) वहाँ (एक-स्थम्) (एक स्थान पर) (कृत्स्नम्) सारा (जगत) जग (प्रविभक्तम्) विभाजित हो रहा है (निर्माण हो रहा है) (अनेकधा) अनेक प्रकार में। (देव-देवस्य) देवताओं के ईश्वर (कि) (शरीरे) दैहिक शक्ति और संघटक तत्त्व से।

नोट नं. ११.१२ पैगंबर मूसा ने जो ईश्वर के तेज को देखा था, उसका वर्णन पवित्र कुरआन में इस प्रकार है, ''और जब मूसा हमारे (ईश्वर के) निश्चित किए हुए समय पर (पर्वत के शिखर पर) पहुँचे और उसके ईश्वर ने उससे बातचीत की, तो वह (मूसा) कहने लगे, हे ईश्वर! मुझे (अपना जलवा) दिखा, मैं तुझे देखूँ। ईश्वर ने कहा तुम मुझे नही देख सकते, हाँ (उस) पर्वत की ओर देखो। यदि वह अपने स्थान पर स्थिर रहा, तो तुम मुझे देख लोगे। फिर जब ईश्वर (का तेज) पर्वत पर आलोकित हुआ तो उसे चकनाचूर कर दिया। और मूसा मूर्च्छित होकर गिर पड़े। जब होश आया तो कहा महिमा तेरी। मैं तेरे आगे तौबा करता हूँ और सबसे पहला इमान लाने वाला मैं हूँ।'' (सूरे अल-आराफ -७ आयत -१४३)

एक और आयत इस प्रकार है:-

(हे यहूदी समुदाय) याद करो जब तुमने मूसा से कहा था कि हम तुम्हारे कहने का हरगिज़ विश्वास न करेंगे, जब तक कि अपनी आँखो से खुले तौर पर ईश्वर को न देख लें। उस समय तुम्हारे देखते-देखते एक जबरदस्त कड़के ने तुमको आ पकड़ लिया। तुम बेजान होकर गिर चुके थे, मगर फिर हमने तुम को जिंदा उठाया। शायद कि इस उपकार के बाद तुम शुक्रगुज़ार बन जाओ। (सूरे अल-बकर-२ आयत -५५-५६)

(अर्थात ईश्वर का तेज इतना अधिक शक्तिशाली है कि मनुष्य उसको बरदाश्त (सहन) नहीं कर सकता है।)

नोट ११.१३ ईश्वरचंद ने अपने संस्कृत शब्दकोश में शरीर का अर्थ निम्नलिखित लिखा है।

१. संघटक तत्त्व (Constituent Elements)

२. दैहिक शक्ति (Internal power)

इस कारण हमने इन अर्थ को श्लोक नं. ११.१३ के अनुवाद में लिया है।

११:१४

ततः सः विस्मय-आविष्ट इष्ट-रोमा धनज्जयः।
प्रणम्य शिरसा देवम् कृत-अज्जलिः अभाषत ।।१४।।

आश्चर्य के साथ, आनंद (खुशी) से भरे हुए, रोमांचित अर्जुन ने उस ईश्वर को प्रणाम किया, और हाथ जोड़कर कहने लगे।.

(विस्मय) आश्चर्य के (सः) साथ (आविष्ट) आनंद (खुशी) से भरे हुए (दृष्ट रोमा) रोमांचित (धनंज्जय) अर्जुन ने (तत) उस (देवम्) ईश्वर को (प्रणम्य) प्रणाम किया (और) (कृत-अज्जलिः) हाथ जोड़कर (अभाषत) कहने लगे।

११:१५

पश्यानि देवान् तव देव देहे सर्वान् तथा भूत विशेष-सड् घान् ।
ब्रह्माणम् ईशम् कमल-आसन-स्थम् ऋषीन् च सर्वान् उरगान् च दिव्याम् ।।१५।।

अर्जुन ने कहा, हे ईश्वर, आपके तेज में (मैं) सारे देवताओं को और प्राणियों को और विशेष रुप से ब्रह्माजी (और) शंकरजी (को) एक साथ कमल के फूल पर बैठे देख रहा हूँ। और सभी ऋषियों को, और दिव्य सांपों को भी देख रहा हूँ।

नोटः- देह का अर्थ वर्णन श्लोक नं. ११.७ के नोट में है।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (देव) हे ईश्वर (तव) आपके (देहे) तेज में (सर्वांन) (मैं) सारे (देवान) देवताओं को (तथा) और (भुत) प्राणियों को (विशेष) खास तौर से (ब्रह्माणम्) ब्रह्माजी (और) (ईशम्) शंकरजी (को) (सड्घान) एक साथ (कमल-आसन स्थम्) कमल के फूल पर बैठे (पश्यानि) देख रहा हूँ (च) और (सर्वम्) सभी (ऋषीन्) ऋषियों को (च) और (दिव्याम्) दिव्य (उरगान्) सांपो को (भी देख रहा हूँ)

११:१६

अनेक बाहु उदर वक्त्र नेत्रम् पश्यामि त्वाम् सर्वतः अनन्त-रुपम् ।
न अन्तम् न मध्यम् न पुनः तव आदिम् पश्यामि विश्व-ईश्वर विश्वरुप।।१६।।

हे ईश्वर आपकी अनन्त दिव्य रचनाओं को देख

(त्वाम्) (हे ईश्वर) आपकी (अनन्त-रुपम्) अनन्त दिव्य रचनाओं को (पश्यामि) देख रहा हूँ (सर्वतः) (और) सभी (देवताओं को देख रहा हूँ जिनके) (अनेक) बहुत सारे (बाहु) बाहु हैं (उदर) पेट है (वक्त्र) चेहरे हैं (नेत्रम्) आँखे

नोट ११.१५ पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) जब धरती से स्वर्ग की यात्रा के लिए गए थे तो उन्होंने भी स्वर्ग में पैगंबर इब्राहीम और पैगंबर आदम को देखा था।

अथर्वा वेद (पुरुषमेधा-१०-२-२६) में पैगंबर इब्राहीम को ब्रह्मा कहा है (ब्रह्मा यह एक पद है)। और शंकरजी और पैगंबर आदम में बहुत समानताएं है जो आप youtube पर इस लिंक पर देख लीजिए।

(https://youtu.be/ff-J4R-Hkwy) (Similarity between Shankarji & prophet Adam)

रहा हूँ। (और) सभी देवताओं को देख रहा हूँ जिनके बहुत सारे बाँह हैं, पेट है, चेहरे है, आँखे है। हे जगत के ईश्वर, जिसने इस ब्रह्मांड को रुप प्रदान किया, न (मैं आपके) आरंभ (को) न मध्य (को) न अंत को देख रहा हूँ।

हैं (विश्व ईश्वर) हे जगत के ईश्वर (विश्व रुप) जिसने इस ब्रह्मांड को रुप प्रदान किया (न) न (मैं आपके) (आदिम) आरंभ (को) (न मध्यम) न मध्य (को) (न अन्तम) न अंत को (पश्चाम्) देख रहा हूँ।

११:१७

किरीटिनम् गदिनम् चक्रिणम् च तेजः राशिम् सर्वतः दीप्ति-मन्तम।
पश्यामि त्वाम् दुर्निरीक्ष्यम् समन्तात् दीप्त-अनल अर्क द्युतिम् अप्रमेयम् ।।१७।।

हे ईश्वर मैं मुकुट के समान चमकते हुए धूमकेतु, घूमती हुई आकाशगंगा, और सितारों को हर तरफ देख रहा हूँ। हे ईश्वर मैं आपके अनंत तेज को हर दिशा में देख रहा हूँ। जैस भड़कती आग, जिसे सूर्य के तेज की तरह देखना कठिन है।

(हे ईश्वर में) (किरीटिनम्) मुकुट (के समान) (दीप्ति-मन्तम्) चमकते हुए (गदिनम्) धूमकेतु (चक्रिणम्) घूमती हुई आकाशगंगा (राशिम्) (और) सितारों (को) (सर्वतः) हर तरफ (देख रहा हूँ) (त्वाम्) (हे ईश्वर मैं) आपके (अप्रमेयम्) अनंत (तेजः) तेज को (समन्तात्) हर दिशा में (पश्यामि) देख रहा हूँ (जैसे) (दीप्त-अनल) भड़कती आग (अर्क द्युतिम्) (जिसे) सूर्य के तेज (की तरह) (दुर्निरीक्ष्यम्) देखना कठिन है।

शाश्वत धर्म (सनातन धर्म) :-

११:१८

त्वम् अक्षरम् परमम् वेदितव्यम् त्वम् अस्य विश्वस्य परम् निधानम् ।
त्वम् अव्ययः शाश्वत-धर्म-गोप्ता सनातनः त्वम् पुरुषः मतः मे।।१८।।

हे ईश्वर आप अविनाशी हैं, सबसे महान हैं, (और) जानने के योग्य हैं। (हे ईश्वर) आप ही इस ब्रह्मांड के सबसे महान आश्रय हैं। (हे ईश्वर) आप हमेशा रहने वाले हैं। शाश्वत-धर्म (सनातन धर्म के) रक्षक हैं। आपका व्यक्तित्व सनातन (न बदलने वाला है), ऐसी मेरी श्रद्धा है।

(एराम्) (हे ईश्वर) आप (अक्षरम्) अविनाशी हैं (परमम्) सबसे महान हैं (और) (वेदितव्यम्) जानने के योग्य है (त्वम्) (हे ईश्वर) आप ही (अस्य) इस (विश्वस्य) ब्रह्मांड के (परम् विधानम्) सबसे महान आश्रय हैं। (त्वम्) (हे ईश्वर) आप (अव्ययः) हमेशा रहने वाले हैं (शाश्वत-धर्म) शाश्वत-धर्म (सनातन धर्म के) (गोप्ता) रक्षक हैं। (पुरुषः) आपका व्यक्तित्व (सनातन्) सनातन (न बदलने वाला है) (मतः मे) ऐसी मेरी श्रद्धा है।

नोट ११.१७ इस श्लोक में अर्जुन का घूमती हुई आकाशगंगा देखने का वर्णन है। द्वापरयुग में अपनी आंखों से घूमती आकाशगंगा को देखना एक चमत्कार है और इस पुस्तक का ईश्वर की ओर से अवतरित होने का प्रमाण है।

ईश्वर की महानता का वर्णन :-

११:१९

अनादि मध्य अन्तत वीर्यम् अनन्त बाहुम् शशि सूर्य नेत्रम।
पश्यामि त्वाम् दीप्त हुताश-वक्त्रम् स्व-तेजसा विश्वम् इदम् तपन्तम् ।।१९।।

हे ईश्वर आप बिना आरंभ के, मध्य (और) अन्त के हैं। हे ईश्वर आप सबसे शक्तिशाली हैं। हे ईश्वर सब कुछ आपकी पकड़ में है आपके कंट्रोल में है। सूर्य और चन्द्र आपके आँखों के स्वरुप हैं आप सब कुछ देखते हैं। (हे ईश्वर) मैं देख रहा हूँ यह ब्रह्मांड आपके मुख (अस्तित्व से) निकलने वाली ऊर्जा और तेज से सक्रिय है।

(त्वाम्) (हे ईश्वर) आप (अनादि) बिना आरंभ के (मध्य) मध्य (अनन्त) (और) अन्त (के हैं) (अनन्त वीर्यम्) (हे ईश्वर आप सबसे) शक्तिशाली हैं (अनन्त बाहुम्) (हे ईश्वर) सब कुछ आपकी पकड़ में है (आपके नियंत्रण में है)। (शशि सूर्य नेत्रम्) सूर्य और चन्द्र आपके आँखों के स्वरुप हैं (आप सब कुछ देखते हैं) (पश्यामि) (हे ईश्वर) मैं देख रहा हूँ (इदम) यह ब्रह्मांड (स्व) आपके (दिप्त हुताश-वक्त्रम्) मुख (अस्तित्व से) निकलने वाली ऊर्जा (तेजसा) तेज से (तपन्तम्) सक्रिय है।

नोट ११.१८ वह समुदाय जिनको अवतरित ग्रंथ दिए गये थे (अर्थात इसाई और यहुदी) और शिर्क (संगम) करने वाले, यह लोग ईश्वर को मानने वाले नहीं थे जब तक उनके पास स्पष्ट प्रमाण न आ जाता। अर्थात ईश्वर के पैगंबर जो पवित्र (ग्रंथ के) पन्ने (पेज) पढ़ते हैं। जिनमें (स्पष्ट) आयातें (ईश्वर के आदेश) लिखे हैं। (और जब पैगंबर और स्पष्ट प्रमाण अर्थात ईश्वर के आदेश आ गए तो इसके बाद) वह समुदाय जिनको अवतरित ग्रंथ दिए गए हैं, वह विवाद में (फूट में) पड़ गऐ। (ईश्वर ने उनको) यही आदेश दिया था कि नि:स्वार्थ होकर ईश्वर की प्रार्थना करो और एकाग्र होकर नमाज़ पढ़ो और जकात (दान) दें। और यही शाश्वत (सनातन) धर्म है। (पवित्र कुरआन ९८:१-५)

(नोट: आयत में 'दीने काइयमा' लिखा है। जिसका अर्थ है, वह सच्चा धर्म जो पहले से था, है और सदा रहेगा। इसलिए हमने इसका अनुवाद शाश्वत या सनातन धर्म किया है।)

नोट ११.१९ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि ''यदि हमने इस कुरआन को किसी पर्वत पर भी उतार दिया होता तो तुम अवश्य देखते कि ईश्वर के भय से वह दबा और फटा जाता है। यह उदाहरण लोगों के लिए हम इसलिए देते हैं कि वे सोच-विचार करें।

ईश्वर वही है, जिसके सिवा कोई पूज्य-प्रभु नहीं। जो बाते छुपी हुई हैं और जो सामने हैं सबको जानता है। वह बड़ा कृपाशील, अत्यंत दयावान है।

ईश्वर वही है, जिसके सिवा कोई पूज्य नहीं है। बादशाह है, अत्यन्त पवित्र, सर्वथा (सलामती), निश्चिन्तता प्रदान करने वाला, संरक्षक, प्रभुत्वशाली, प्रभावशाली (टूटे हुए को जोड़ने वाला) अपनी महानता प्रकट करने वाला। ईश्वर उस संगम (शिर्क) से महान और उच्च है जो वे लोग करते हैं।

ईश्वर वही है, जो संरचना का प्रारुपक है। अस्तित्व प्रदान करने वाला, रुप देने वाला है। उसी के लिए अच्छे नाम हैं। जो चीज़ भी आकाशों और धरती में है, उसी के नाम का जाप कर रही है और वह प्रभुत्वशाली तत्त्वदर्शी है।''
(सूरे अल हशर-५९, आयत-२२-२४)

११:२०

द्यौ आ-पृथिव्योः इदम् अन्तरम् हि व्याप्तम् त्वया एकेन दिशः च सर्वाः।
दृष्ट्वा अद्भुतम् रुपम् इदम् तव उग्रम् लोक त्रयम् प्रव्यथितम् महा-आत्मन् ।।२०।।

हे महान ईश्वर, निःसंदेह आकाश से धरती तक, और इन दोनों के बीच में और हर दिशा में एक अकेले आप ही का अस्तित्व छाया हुआ है। आपकी इन तीव्र और अद्भुत स्थिती को देखकर तीनों लोक व्याकुल हैं।

(महा आत्मन) हे महान ईश्वर (हि) निःसंदेह (द्यौ आ पृथिव्योः) आकाश से धरती तक (इदम् अन्तरम्) और इन दोनों के बीच में (च) और (सर्वाः) हर दिशा में (त्वया एकेन) एक अकेले आप ही का (व्याप्तम्) अस्तित्व छाया हुआ है। (तव) आपकी (इदम) इन (उग्रम) तीव्र (और) (अभुतम् रुपम्) अद्भुत स्थिती (दृष्ट्वा) को देखकर (लोक त्रयम्) तीनों लोक (प्रव्यथितम्) व्याकुल है।

११:२१

अमी हि त्वाम् सुर-सङ्घाः विशन्ति केचित् भीताः प्राञ्जलयः गृणन्ति।
स्वस्ति इति उक्त्वा महा-ऋषि सिद्ध सङ्घाः स्तुवन्ति त्वाम् स्तुतिभि पुष्कलाभिः।।२१।।

निःसंदेह! वह सभी देवताओं के समूह आपकी शरण चाह रहे हैं कुछ ड़रे हुए हैं। और हाथ जोड़कर विनती कर रहे हैं आपसे सुरक्षा की। इसी प्रकार महाऋषियों और सिद्धों के समूह (आपकी) प्रार्थना कर रहे हैं। (और) वेदों के श्लोकों द्वारा आपकी प्रशंसा कर रहें हैं।

(हि) निःसंदेह (अमी) वह सभी (सूर-सड्घाः) देवताओं के समूह (त्वाम्) आपकी (विशन्ति) शरण (चाह रहे हैं) (केचित) कुछ (भीताः) डरे हुए हैं। (प्राज्जलयः) (और) हाथ जोड़कर (गृणन्ति) विनती कर रहे है। (स्वस्ति) (आपसे) सुरक्षा की (इति) इसी प्रकार (महा-ऋषि) महाऋषियों (और) (सिद्ध-सड्घाः) सिद्धों के समूह (स्तुतिभि) (आपकी) प्रार्थना कर रहे हैं (और) (पुष्कलाभिः) वेदों के श्लोकों द्वारा (त्वाम) आपकी (स्तुवन्ति) प्रशंसा कर रहें हैं।

११:२२

रुद्र आदित्याः वसवः ये च साध्याः विश्वे अश्विनौ मरुतः च उष्म-पाः च।
गन्धर्व यक्ष असुर सिद्ध सडघाः वीक्षन्ते त्वाम् विस्मिताः च एव सर्वे।।२२।।

(एरा) (हे ईश्वर) निःसंदेह (रुद्र, आदित्याः, वसवः) रुद्र, आदित्य, वसु (च) और (उष्मपाः) पितृगण (च) और (गन्धर्व, यक्ष, असुर, सिद्ध-सडघाः) गंधर्व, यक्ष, असुर,

नोट ११.२१ पवित्र कुरआन में लिखा है कि, सातों आकाश और धरती और जो कोई भी उनमें है सब उसके (नाम का जाप) तसबीह (महिमागान) करते है और ऐसी कोई चीज़ नहीं जो उसका गुणगान न करता हो किन्तु तुम उनकी तसबीह को समझते नहीं। निश्चय ही वह (ईश्वर) अत्यंत सहनशील क्षमावान है। (पवित्र कुरआन सूरह बनी इस्राईल (१७)आयत:४४)

नोट ११.२२ आकाशों और धरती में जो कुछ भी हैं (मनुष्य और फरिश्ते) वह उसी के है। प्रत्येक उसी के निष्ठावान आज्ञाकारी हैं। (पवित्र कुरआन ३०.२६)

हे ईश्वर निःसंदेह रुद्र, आदित्य, वसु और पितृगण और गंधर्व, यक्ष, असुर, और सिद्धी के समुदाय भी आपको चकित होकर देख रहे है।

और सिद्धी के समुदाय (च) भी (त्वाम) आपको (विस्मिताः) चकित होकर (वीक्षन्ते) देख रहें है।

यमराज का अर्जुन के सामने आना :-

११:२३

रुपम् महत् ते बहु वक्त्र नेत्रम् महा-बाहो बहु बाहो उरु पादम।
बहु उरम् बहु-द्रष्टा करालम् दृष्ट्वा लोकाः प्रव्यथिताः तथा अहम् ।।२३।।

(इस श्लोक में यमराज का वर्णन है)

अर्जुन ने कहा हे महाबाहो! आप (के) महान रुप को जिसमें बहुत सारे मुख और आँखें, बहुत सारे हाथ, जंघे, चरण, बहुत सारे पेट, बहुत सारे दांतों की भयानकता देखकर सारा जगत और मैं भी भयभीत हूँ।

(महाबाहो) (अर्जुन ने कहा) हे महाबाहो (ते) आप (की) (महत) महान (रुपम्) रुप को (जिसमें) (बहु) बहुत सारे (वक्त्र नेत्रम्) मुख और आँखे (बहु) बहुत सारे (बाहो) हाथ (ऊरम्) जंघे (पादम्) चरण (बहु) बहुत सारे (उदरम्) पेट (बहु) बहुत सारे (द्रष्टा) दांतों की (करालम) भयानकता (द्रष्टवा) देखकर (लोकाः) सारा जगत (तथा) और (अहम) मैं (भी) (प्रव्यथिताः) भयभीत हूँ।

११:२४

नभः स्पृशम् दीप्तम् अनेक वर्णम् व्याप्त आननम् दीप्त विशाल नेत्रम् ।
दष्ट्वा हि त्वाम् प्रव्यथितः अन्तः आत्मा धृतिम् न विन्दामि शमम् च विष्णो।।२४।।

हे विष्णु, आपका आकाश को छूता हुआ उज्जवल कई रंगो वाला खिला हुआ चेहरा और प्रकाशित बड़ी आँखें देखकर निःसंदेह (मेरा) मन अंदर से भयभीत है और मैं धैर्य और शांति प्राप्त नहीं कर पा रहा हूँ।

(विष्णो) हे विष्णो, (त्वाम) आपका (नभः) आकाश को (स्पृशम्) छूता हुआ (दीप्तम्) उज्जवल (अनेक) कई (वर्णम्) रंगो वाला (व्याप्त) खिला हुआ (आननम्) चेहरा (मुख) और (दीप्त) प्रकाशित (विशाल) बड़ी (नेत्रम्) आँखें (दृष्ट्वा) देखकर (हि) निःसंदेह (आत्मा) (मेरा) मन (अन्तः) अंदर से (प्रव्यथितः) भयभीत है (च) और (धृतिम्) (मैं) धैर्य (और) (शमम्) शांति (विन्दामि) प्राप्त (न) नहीं (कर पा रहा हूँ)।

नोट ११.२३ श्लोक नं. ११.१२ में अर्जुन का ईश्वर के तेज को देखने का वर्णन है। उसके बाद अर्जुन ने और बहुत सारे दृश्य देखे और आप चकीत और प्रसन्न थे। किन्तु ११.२३ मे यमराज को देखकर भयभीत हो जाते हैं। इस श्लोक में ईश्वर के बाद तुरन्त यमराज के महान रुप का वर्णन है। इस कारण अधिकतर लोग यमराज को भी ईश्वर ही समझते हैं। किन्तु श्लोक नं. ११.३२ में इसका वर्णन है कि महान आकार वाले यमराज हैं। और ईश्वर का कोई आकार नहीं केवल हज़ारों सूर्यों से अधिक तेज है।

यमराज के भयानक रुप का वर्णन :-

११ : २५

दष्टा करालनि च ते मुखानि दृष्टव एव काल-अनल सन्नि-भानि।
दिशः न जाने न लभे च शर्म प्रसीद देव-ईश जगत-निवास।।२५।।

आपके भयंकर दांत और प्रलय काल की अग्नि के समान मुख को देखकर न (मैं) दिशा जान पा रहा हूँ और न शांति पा रहा हूँ। हे देवताओं के देवता, हे जगत् निवास मुझ पर कृपा करो।

(ते) आपके (करालानि) भयंकर (द्रष्टव) दांत (च) और (काल-अनल) प्रलय काल की अग्नि (सन्नि-भानि) के समान (मुखानि) मुख को (दृष्टव) देखकर (न) न (मैं) (दिशः) दिशा (जाने) जान पा रहा हूँ (च) और (न) न (शर्म) शांति (लभे) पा रहा हूँ (देव-ईश) देवताओं के देवता (जगत् निवास) हे जगत् निवास (प्रसीद) मुझ पर कृपा करो।

११ : २६ - २७

अमी च त्वाम् धृतराष्टस्य पुत्राः सर्वे सह एव अवनि-पाल सडघैः।
भीष्मः द्रोणः सूत-पुत्रः तथा असौ सह अस्मदीयैः अपि योध-मुख्यैः ।।२६।।
वक्त्राणि ते त्वरमाणाः विशन्ति दंष्टा करालानि भयानकानि।
केचित् विलग्नाः दशन-अन्तेरेषु सन्दश्यन्ते चूर्णितेः उत्तम-अडैः।।२७।।

नि:संदेह आपकी शक्ति मापी नहीं जा सकती (असीम है)। धृतराष्ट्र के सारे पुत्र, सहायक राजाओं के समूह के साथ, और भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण, और हमारे साथ के यह विशेष योद्धा भी।

भयंकर दांतो वाले आपके भयानक मुंह में तेजी से प्रवेश कर रहे हैं। कुछ दांतो के बीच लटके हुए दिखाई दे रहे हैं और कुछ के सर कुचल गए हैं।

(एरां) नि:संदेह (त्वम) आप (की शक्ति) मापी नहीं जा सकती (असीम है) (धृतराष्ट्रस्य) धृतराष्ट्र के (सर्व) सारे (पुत्र) पुत्र (अवनिपाल) सहायक राजाओं के (सडघैः) समूह के (सह) साथ (च) और (भीष्मः, द्रोण, सुत-पुत्र) भीष्म पितामह, द्रोणाचार्य, कर्ण (तथा) और (अस्मदीयैः) हमारे (सह) साथ के (असौ) यह (योध-मुख्यैः) विशेष योद्धा (अपि) भी।
(करालानि) भयंकर (दृष्ट्रम) दांतो वाले (ते) आपके (भयानकानि) भयानक (वक्त्राणि) मुंह में (त्वरमाणाः) तेजी से (विशन्ति) प्रवेश कर रहे हैं। (केचित्) कुछ (दशन-अन्तेरेषु) दांतो के बीच (विलग्नाः) लटके हुए (सन्दश्यन्ते) दिखाई दे रहे हैं (उत्तम-अडैः) (और कुछ के) सर (चुर्णितैः) कुचल गए हैं।

११ : २८ - २९

यथा नदीनाम् बहवः अम्बु-वेगाः समुद्रम् एव अभिमुखाः द्रवन्ति।
तथा तव अमी नर-लोक-वीराः विशन्ति वक्त्राणि अभिविज्वलन्ति।।२८।।

(यथा) जिस प्रकार (बहवः) बहुत सारी (नदीनाम्) नदियाँ (अम्बु) पूरी (वेगाः) गति से (समुद्रम्) समुद्र (अभिमुखाः) की तरफ

यथा प्रदीप्तम् ज्वलनम् पतङ्ग विशन्ति नाशाय समृद्ध वेगाः।
तथा एव नाशाय विशन्ति लोकाः तव अपि वक्त्राणि समृद्ध-वेगाः।।२९।।

जिस प्रकार बहुत सारी नदियाँ पूरी गति से समुद्र की तरफ दौड़ती हैं; (तेज़ी से बहती हैं)। निःसंदेह इसी तरह आपके मापे न जाने वाले और भड़कते हुए मुंह में संसार के शूरवीर मनुष्य प्रवेश कर रहे हैं।

जिस प्रकार जलती हुई अग्नि में पतिंगे विनाश के लिए पूरी गति से प्रवेश करते हैं। निःसंदेह उसी तरह सारे लोग भी विनाश के लिए आपके मुख में पूरी गति से प्रवेश कर रहे हैं।

(द्रवन्ति) दौड़ती हैं (तेज़ी से बहती हैं) (एवं) निःसंदेह (तथा) इसी तरह (तत) आपके (अमी) मापे न जाने वाले (असीम) और (अभिविज्वलन्ति) भड़कते हुए (वक्त्राणि) मुंह में (लोक) संसार के (वीराः) शूरवीर (नर) मनुष्य (विशन्ति) प्रवेश कर रहे हैं।
(यथा) जिस प्रकार (प्रदीप्तम्) जलती हुई (ज्वलनम्) अग्नि में (नाशाय) (पतिंगे) विनाश के लिए (समृद्ध) पूरी (वेगा) गति से (विशन्ति) प्रवेश करते हैं (एव) निःसंदेह (तथा) उसी तरह (लोकाः) सारे लोग (अपि) भी (नाशाय) विनाश के लिए (तव) आपके (वक्त्राणि) मुख में (समृद्ध) पूरी (वेगा) गति से (विशन्ति) प्रवेश कर रहे हैं।

११:३०

लेलिह्वसे ग्रसमानः समन्तात् लोकान् समग्रान् वदनैः ज्वलद्भिः।
तेजोभिः आपूर्य जगत् समग्रम् भासः तव उग्राः प्रतपन्ति विष्णो।।३०।।

हे विष्णो, आपके जलते हुए मुख की आग संसार के सभी लोगों को हर तरफ से चाट कर खा रही है। यह संसार आपकी भड़कती भयंकर आग की किरणों से (गर्मी से) भरा हुआ है।

(विष्णो) हे विष्णो (ज्वलद्भिः) (आपके) जलते हुए (मुख की) (वदनैः) आग (लोकान्) संसार के (समग्रान्) सभी लोगों को (समन्तात्) हर तरफ से (लेलिह्वसे) चाट कर (ग्रसमानः) खा रही है। (जगत्) यह संसार (तव) आपकी (प्रतपन्ति) भड़कती (उग्राः) भयंकर (तेजोभिः) आग की (भासः) किरणो से (गर्मी से) (आपुर्य) भरा हुआ है।

११:३१

आख्याहि मे कः भवान् उग्र-रुपः नमः अस्तु ते देव-वर प्रसीद।
विज्ञातुम् इच्छामि भवन्तम् आद्यम् न हि प्रजानामि तव प्रवृत्तिम् ।।३१।।

हे उग्र, तीव्र रुप वाले, मुझे बताऐं आप कौन हैं? हे देवताओं से महान आपको मैं नमस्कार करता हूँ मुझ पर कृपा कीजिए। आपको जानने का मैं इच्छुक हूँ। हे आदिरुप, निःसंदेह! मैं नहीं समझ पा रहा हूँ आपके काम को।

(उग्र-रुप) हे उग्र (तीव्र) रुप वाले (मे) मुझे (आख्याहि) बताऐं (भवान्) आप (कः) कौन हैं (देव-वर) हे देवताओं से महान (ते) आपको (मैं) (नमःअस्तु) नमस्कार करता हूँ (प्रसीद) (मुझ पर) कृपा कीजिए (भवन्तम्) आपको (विज्ञातुम्) जानने का (इच्छति) (मैं) इच्छुक हूँ (आद्यम्) (हे) आदिरुप (हि) निःसंदेह (न) (मैं) नहीं (प्रजानानि) समझ पा रहा हूँ (तव) आपके (प्रकृतिम्) काम को।

यमराज ने अपना परिचय दिया :-

११:३२

कालः अस्मि लोक क्षय-कृत् प्रवृद्धः लोकान् समाहर्तुम् इह प्रवृत्तः।
ऋते अपि त्वाम् न भविष्यन्ति सर्वे ये अवस्थिताः प्रति-अनीकेषु योधा।।३२।।

आदरणीय यमराज बोले, मैं यमराज हूँ। संसार के लोगों को मृत्यु देना मेरा काम है। इस संसार को सुरक्षित रखने के लिए मैं संसार के अहंकारी लोगों का विनाश करता हूँ। तुम्हारे बिना भी भविष्य में यह सारे सैनिक जो प्रतिपक्ष में खड़े हैं नहीं रहेंगे।

नोटः- भगवान शब्द का अर्थ जानने के लिए नोट नं. N-10 पढ़िये।

(श्री भगवान उवाच) आदरणीय यमराज बोले (कालः अस्मि) मैं यमराज हूँ (लोक) संसार (के लोगों को) (क्षयन्कृत) मृत्यु देना मेरा काम है (इह) इस संसार को (प्रवृत्तः) सुरक्षित (रखने के लिए) (लोकाम्) (मैं) संसार के (प्रवृद्ध) अहंकारी (लोगों का) (समाहर्तुम) विनाश (करता हूँ) (त्वाम) तुम्हारे (कृत) बिना (अपि) भी (भविष्यान्ति) भविष्य में (ये) यह (सर्व) सारे (योधाः) सैनिक (जो) (प्रति-अनीकेषु) प्रतिपक्ष में (अवस्थिताः) खड़े हैं (न) नहीं (रहेंगे)

११:३३

तस्मात् त्वम् उत्तिष्ठ यशः लभस्व जित्वा शत्रून् भुङ्क्ष्व राज्यम् समृद्धम।
मया एव एते निहताः पूर्वम् एव निमित्त-मात्रम् भव सव्य-साचिन् ।।३३।।

इस कारण हे दोनों हाथों से बाण चलाने वाले अर्जुन तुम उठो, शत्रु पर विजय पाओ और उससे लाभ प्राप्त करो, (और प्राप्त होने वाले) राज्य से यशः और समृद्धि भोगो। तुम केवल कारण बनो, निःसंदेह! वह सब मेरे (द्वारा ही) मार दिए जाएंगे।

(तस्मात्) इस कारण (सव्य-साचिन्) हे दोनों हाथों से बाण चलाने वाले (अर्जुन) (त्वम्) तुम (उत्तिष्ठ) उठो (शत्रून) शत्रु पर (जित्वा) विजय पाओ (लभस्व) और उससे लाभ प्राप्त करो (राज्यम्) (और प्राप्त होने वाले) राज्य से (यशः) यशः (और) (समृद्धम्) समृद्धि (भुङ्क्ष्व) भोगो (मात्रम्) (तुम) केवल (निमित्त) कारण (भव) बनो (एवं) निःसंदेह (एते) वह सब (मया) मेरे (द्वारा ही) (निहताः) मार (पूर्वम्) दिए जाएंगे।

११:३४

द्रोणम् च भीष्मम् च जयद्रथम् च कर्णम् तथा अन्यान् अपि योध-वीरान।
मया हतान् त्वम् जहि मा व्यथिष्ठाः युध्यस्व जेता असि रणे सपत्नान् ।।३४।।

द्रोणाचार्य और भीष्म पितामह और जयद्रथ और कर्ण और दुसरे वीर योद्धा का भी मैं ही वध

(द्रोणम्) द्रोणाचार्य (च) और (भीष्मम्) भीष्म पितामह (च) और (जयद्रथम्) जयद्रथ (च) और (कर्णम) कर्ण (तथा) और (अन्यान्) दुसरे (योद्ध-वीरान्) वीर योद्धा का भी (मया) मैं ही (हतान) वध करुँगा (त्वम्) तुम (मा व्यथिष्ठाः) घबराओ मत (रणे) युद्ध में

करुंगा। तुम घबराओ मत, युद्ध में शत्रु से लड़ो और उन्हें मारो। तुम ही यशस्वी रहोगे।

(सपत्नान्) शत्रु (से) (युद्धस्व) लड़ो (यदि) (और) उन्हें मारो (जेता असि) (तुम ही) यशस्वी रहोगे।

११:३५

एतत् श्रुत्वा वचनम् केशवस्य कृत-अज्जलिः वेपमानः किरीटी।
नमस्कृत्वा भूयः एव आह कृष्णम् स गुद्गदम् भीत-भीतः प्रणम्य।।३५।।

संजय ने कहा, श्री कृष्ण के द्वारा कहे गए यमराज के इन शब्दों को सुनकर कांपते हुए हाथ जोड़कर अर्जुन ने नमस्कार करके डरते हुए फिर प्रणाम किया। और धीमी वाणी से श्री कृष्ण द्वारा ईश्वर से कहा।

(संजय उवाच) संजय ने कहा (केशवस्य) श्री कृष्ण के (द्वारा कहे गए यमराज के) (एतत) इन (वचनम्) शब्दों को (श्रुत्वा) सुनकर (वेपमानः) कांपते हुए (कृत-अजल्लिः) हाथ जोड़कर (किरीटी) अर्जुन ने (नमस्कृत्वा) नमस्कार करके (भीत-भीतः) डरते हुए (एवं) भी (भूय) फिर (प्रणम्य) प्रणाम किया (और) (स-गुद्गदम्) धीमी वाणी से (कृष्णम्) श्री कृष्ण (द्वारा ईश्वर से) (आह) कहा।

११:३६

स्थाने हृषीक-ईश तव प्रकीर्त्या जगत् प्रहृष्यति अनुरज्यते च।
रक्षांसि भीतानि दिशः द्रवन्ति सर्वे नमस्यन्ति च सिद्ध-सड्घाः।।३६।।

श्री कृष्ण के स्थान से (अपना तेज दिखाने वाले) हे ईश्वर, आपकी महिमा से सारा जगत खुश हो रहा है, और आनंदित हो रहा है और राक्षस अलग अलग दिशाओं में भाग रहे हैं, और सारे सिद्ध पुरुषों के समुदाय नमस्कार कर रहे हैं।

(हृषीकेश) श्री कृष्ण के (स्थाने) स्थान से (ईश) (अपना तेज दिखाने वाले) हे ईश्वर (तव) आपकी (प्रकीर्त्या) महिमा से (जगत) सारा जगत (अनुरज्यते) खुश हो रहा है (प्रहृष्यति) और आनंदित हो रहा है। (च) और (रक्षांसि) राक्षस (भीतानि) अलग अलग (दिशः) दिशाओं में (द्रवन्ति) भाग रहे हैं (च) और (सर्वे) सारे (सिद्ध) सिद्ध पुरुषों के (सड्घाः) समुदाय (नमस्यन्ति) नमस्कार कर रहे हैं।

११:३७

कस्मात् च ते न नेमरन् महा-आत्मन् गरीयसे ब्रह्मणः अपि आदि-कर्त्रे।
अनन्त देव-ईश जगत-निवास त्वम् अक्षरम् सतअसत् तत-परम् यत।।३७।।

(हे ईश्वर आप), कल्पना से भी परे हो। ब्रह्मा से भी पहले के सृष्टि का निर्माण करने वाले हो। आप अनंत हो। देवताओं के ईश्वर हो। जगत को सहारा देने वाले हो। आप अविनाशी

(गरीयसे) (हे ईश्वर आप) कल्पना से भी परे हो। (ब्राह्मण) ब्रह्मा (अपि) से भी (आदि-कर्त्रे) पहले के सृष्टि का निर्माण करने वाले हो (अनन्त) आप अनंत हो। (देव ईश) देवताओं के ईश्वर हो (जगत् निवास) जगत को सहारा देने वाले हो (अक्षरम्) आप अविनाशी (अमर/शाश्वत) हो (सतअसत) आप उस अविनाशी अन्य लोक और इस नाशवान पृथ्वी

(अमर/शाश्वत) हो। आप उस अविनाशी अन्य लोक और इस नाशवान पृथ्वी लोक और जो कुछ इसके परे है (उन सबके ईश्वर हो)। (तो) क्यों न आपको नमस्कार करे महापुरुष भी।.

लोक (तत-परम-यत) और जो कुछ इसके परे है (उन सबके ईश्वर हो) (कस्मात) (तो) क्यों (न) न (ते) आपको (नेमरन्) नमस्कार करे (महा-आत्मना) महापुरुष (च) भी।

११:३८

त्मव् आदि-देवः पुरुषः पुराणः त्वम् अस्य विश्वस्य परम् निधानम।
वेत्ता असि वेद्यम् च परम् च धाम त्वया ततम् विश्वम् अनन्त-रुप।।३८।।

(हे ईश्वर) आप आरंभ से हैं। आपका अस्तित्व सबसे प्राचीन है। (हे ईश्वर) आप ही इस विश्व का सबसे बड़ा सहारा है। (हे ईश्वर आप) सबकुछ जानने वाले और जानने के योग्य हैं। स्वर्ग लोक और अनंत सृष्टि जो ब्रह्मांड में फैली हुई है। (वह सब) आप (से ही है।)

(त्वम्) (हे ईश्वर) आप (आदि-देव) आरंभ से हो (पुरुषः पुराणः) आपका अस्तित्व सबसे प्राचीन है। (त्वम्) (हे ईश्वर) आप ही (अस्य) इस (विश्वस्य) विश्व का (परम्) सबसे बड़ा (निधानम्) सहारा है (वेत्ता) (हे ईश्वर आप) सबकुछ जानने वाले (च) और (वेद्यम) जानने के योग्य (असि) हैं (परम् धाम) स्वर्ग लोक (च) और (अनन्त) अनंत (रुप) सृष्टि (ततम् विश्वम्) जो ब्रह्मांड में फैली हुई है। (त्वमा) (वह सब) आप (से ही है।)

११:३९

वायुः यमः अग्निः वरुणः शश-अडकः प्रजापतिः त्वम् प्र-पितामहः च।
नमः नमः ते अस्तु सहस्त्र-कृत्वः पुनः च भूयः अपि नमः नमः ते।।३९।।

(हे ईश्वर आप) वायु, यमराज, अग्नि, पानी, चन्द्रमा, और सारे मनुष्यों के स्वामी हैं। (हे

(हे ईश्वर आप) (वायुः) वायु (यमः) यमराज (अग्निः) अग्नि (वरुण) पानी (शश-अड्कः) चन्द्रमा (च) और (प्रजा) सारे मनुष्यों के (पति) स्वामी हैं (त्वम्) (हे ईश्वर) आप (का अस्तित्व) (पितामह) ब्रह्मा (प्र) (से भी) पहले था (नमः) (मैं आपको) नमस्कार करता

नोट ११.३७ ईश्वर वह है जिसके सिवा कोई पूज्य प्रभु नहीं, वह हमेशा जीवित रहने वाला है, सबको सँभालने और कायम रखने वाला है। उसे न ऊँघ लगती है और न निद्रा। उसी का है जो कुछ आकाशों में है और जो कुछ धरती में है। कौन है जो उसके यहाँ उसकी अनुमति के बिना सिफारिश कर सके? वह जानता है जो कुछ उनके आगे है और जो कुछ उनके पीछे है। और वे उसके ज्ञान में से किसी चीज़ पर हावी नहीं हो सकते, सिवाय उसके जो उसने चाहा। उसकी कुर्सी (प्रभुता) आकाशों और धरती को व्याप्त है और उनकी सुरक्षा उसके लिए तनिक भी भारी नहीं और वह उच्च, महान है। (पवित्र कुरआन २.२५५)

नोट ११.३८ पवित्र कुरआन में ईश्वर के बारे में लिखा है, ''वही प्रथम भी है और अन्तिम भी, और गोचर (ज़ाहिर) भी है और अगोचर (छिपा) भी, और उसे हर चीज़ का ज्ञान है।'' (पवित्र कुरआन ५७:३)

ईश्वर) आप (का अस्तित्व) ब्रह्मा (से भी) पहले था। (मैं आपको) नमस्कार करता हूँ। आपको हजार बार नमस्कार करता हूँ। और बार-बार (मैं) आपको नमस्कार (करता हूँ)।

हूँ। (ते) आप (सहस्त्र) को हजार बार (नमः) नमस्कार (कृत्वः) करता हूँ (पुनःच भूयः) और बार बार (नमः ते) (मैं) आपको नमस्कार (करता हूँ)।

११:४०

नमः परस्तात अथ पृष्ठतः ते नमः अस्तु ते सर्वतः एव सर्व।
अनन्त-वीर्य अमित-विक्रमः त्वम् सर्वम् समाप्नोषि ततः असि सर्व।।४०।।

(हे ईश्वर मैं) आपको सामने से और पीछे से नमस्कार करता हूँ। आपको हर जगह से नमस्कार करता हूँ। (कारण कि आप) सब कुछ हैं। हे अनन्त (शक्ति वाले ईश्वर), निःसंदेह, आप (के) महान शक्ति (से ही) (इस संसार को) सब कुछ प्राप्त हो रहा है और उस (अन्य लोक में भी आपकी शक्ति से) सब कुछ प्राप्त होगा।

(ते) (हे ईश्वर मैं) आपको (परस्तात) सामने से (अथ) और (पृष्ठतः) पिछे से (नमः) नमस्कार करता हूँ (ते) आपको (सर्वतः) हर जगह से (नमः) नमस्कार (अस्तु) करता हूँ (सर्व) (कारण कि आप) सब कुछ हैं (अनन्त वीर्य) हे अनन्त (शक्ति वाले ईश्वर) (एवं) निःसंदेह (त्वम्) आप (के) (अमित) महान (विक्रम) शक्ति (से ही) (सर्वम्) (इस संसार को) सब कुछ (समाप्नोषि) प्राप्त हो रहा है (ततः) और उस (अन्य लोक में भी आपकी शक्ति से) (सर्व) सब कुछ (असि) प्राप्त होगा।

अर्जुन का खेद व्यक्त करना :-

११:४१-४२

सखा इति मत्वा प्रसभम् यत् उक्तम् हे कृष्णा हे यादव हे सखा इति।
अजानता महिमानम् तव इदम् मया प्रमादात् प्रणयेन वा अपि।।४१।।
यत् च अवहास-अर्थम् असत कृतः असि विहार शय्या आसन भोजनेषु।
एकः अथवा अपि अच्युत तत् समक्षम् तत् क्षामये त्वाम् अहम् अप्रमेयम् ।।४२।।

हे ईश्वर आपकी बड़ाई और गुणों को न जानते हुए, जल्दी में, बिना सोचे समझे मुर्खतावश या तो प्रेम से इस तरह (योग-ईश्वर श्री कृष्ण को) अपना मित्र समझकर हे कृष्ण, हे यादव! हे मित्र! यह इस तरह जो भी मेरे द्वारा कहा गया।

और अकेले में या मित्रों के बीच, हंसी के लिए,

(तव) (हे ईश्वर) आपकी (महिमानम्) बड़ाई और गुणों को (अजानत) न जानते हुए, (प्रसभम) जल्दी में, बिना सोचे समझे (प्रमादात्) मुर्खतावश (वा अपि) या तो (प्रणयेन) प्रेम से (इति) इस तरह (सखा) (योग-ईश्वर श्री कृष्ण को) अपना मित्र (मत्वा) समझकर (हे कृष्ण) हे कृष्ण (हे यादव) हे यादव! (हे सखा) हे मित्र! (इदम) यह (इति) इस तरह (यत) जो भी (मया) मेरे द्वारा (उत्कम्) कहा गया।

(च) और (एकः) अकेले में (अथवा) या (तत्-समक्षम्) मित्रों के बीच (अवहास) हंसी (अर्थम्) के लिए (विहार) आराम करते

आराम करते समय, लेटे रहने पर, बैठे हुए, खाते हुए, अच्युत अर्थात कृष्ण कहने जैसा जो भी अपमान किया गया हो, उन सभी के लिए हे असीम ईश्वर! मैं आपसे क्षमा चाहता हूँ।

समय, (शय्या) लेटे रहने पर (आसन) बैठे हुए (भोजनेषु) खाते हुए (अच्युत) अच्युत अर्थात कृष्ण (यत्) (कहने जैसा) जो (अपि) भी (असत) अपमान (कृतः) किया गया (असि) हो, (अपमानों) उन सभी (तत्) के लिए (अप्रमेयम्) हे असीम ईश्वर! (अहम्) मैं (त्वाम्) आपसे (क्षामय) क्षमा चाहता हूँ।

११:४३

पिता असि लोकस्य चर अचरस्य त्वम् अस्य पूज्यः च गुरुः गरीयान् ।
न त्वत् समः अस्ति अभ्यधिकः कुतः अन्यः लोक-त्रये अपि अप्रितम प्रभाव।।४३।।

हे ईश्वर! आप इस ब्रह्माण्ड के जीवित और अजीवित प्राणी और वस्तुओं की रचना (निर्माण) करने वाले हो। आप ही प्रार्थना के योग्य हो, और आप ही ज्ञान प्रदान करते हैं। आप की महिमा महान है। आपके समान कोई नहीं। आपकी कोई मूर्ति नही, और न आपको समझा जा सकता है। तीनों लोकों में दूसरा कोई आपसे बढ़कर कैसे हो सकता है?

(त्वम्) (हे ईश्वर) आप (लोकस्य) इस ब्रह्माण्ड के (चर अचरस्य) जीवित और अजीवित (प्राणी और वस्तुओं) (पिता) (कि) रचना (निर्माण) करने वाले (अपि) हो (अस्य पूज्यः) (आप ही) प्रार्थना के योग्य हो (च) और (गुरुः) (आप ही) ज्ञान प्रदान करते है। (गरीयान्) आप की महिमा महान है (न त्वत् समः) आपके समान कोई नहीं (अप्रतिम प्रभाव) <u>आपकी कोई मूर्ति नहीं और न आपको समझा जा सकता है।</u> (लोक-त्रये) तीनों लोकों में (अन्यः) दूसरा कोई (अभ्यधिकः) आपसे बढ़कर (कुतः) कैसे (हो सकता) (अस्ति) है?

११:४४

तस्मात् प्रणम्य प्रणिधाय कायम् प्रसादये त्वाम् अहम् ईशम् ईड्यम् ।
पिता इव पुत्रस्य सखा इव सख्युः प्रियः प्रियायाः अर्हसि देव सोढुम् ।।४४।।

इसलिए (हे ईश्वर!) मैं आपकी कृपादृष्टि पा सकूँ इसके लिए अपने शरीर को झुका कर (सजदे करके) आपको प्रणाम करता हूँ। हे स्तुति करने योग्य ईश्वर, पिता जैसे पुत्र को। मित्र जैसे मित्र को। प्रेम करने वाला जैसे अपने प्रेमी को क्षमा करता है। हे ईश्वर आपको भी ऐसे ही मुझे क्षमा करना चाहिए।

(तस्मात्) इसलिए (अहम्) (हे ईश्वर) मैं (त्वाम्) आपकी (प्रसादये) कृपादृष्टि पा सकूँ इसके लिए (कायम्) अपने शरीर को (प्रणिधाय) झुका कर (सजदे करके) (प्रणम्य) आपको प्रणाम करता हूँ (ईड्यम) हे स्तुति करने योग्य (ईशम्) ईश्वर (पिता इव पुत्रस्य) पिता जैसे पुत्र को (सखाः इव सख्यु) मित्र जैसे मित्र को (प्रियः प्रिययाः) प्रेम करने वाला जैसे अपने प्रेमी को (सोढूम्) क्षमा करता है। (अर्हसि देव) हे ईश्वर आपको भी (ऐसे ही मुझे क्षमा करना) चाहिए।

अर्जुन की दिव्य रचनाओं को फिर से देखने की विनती :-

११:४५

अदृष्ट-पूर्वम् हृषितः अस्मि दृष्ट्वा भयेन च प्रव्यथितम् मनः मे।
तत् एरा मे दर्शय देव रुपम् प्रसीद देव-ईश जगत् निवास।।४५।।

पहले जो कभी नहीं देखा गया उन्हें देखकर (मैं) प्रसन्न हूँ और (यम-राज के) भय से मेरा मन व्याकुल भी है। हे देवताओं के ईश्वर, सारे जग का सहारा, मुझ पर कृपा करो और उस दिव्य रचनाओं को मुझे फिर से दिखाइए।

(उदृष्ट पूर्वम्) पहले जो कभी नहीं देखा गया (दुष्ट्वा) उन्हें देखकर (हृषितः) (मैं) प्रसन्न (अस्मि) हूँ (च) और (भयेन) (यम-राज के) भय से (मनः मे) मेरा मन (प्रव्यथितम्) व्याकुल भी है। (देव ईश) हे देवताओं के ईश्वर (जगत् निवास) सारे जग का सहारा (प्रसीद) मुझ पर कृपा करो (तत एवं) और उस (देव रुपम्) दिव्य रचनाओं को (मे) मुझे (फिर से) (दर्शय) दिखाइए।

११:४६

किरीटिनम् गदिनम् चक्रहस्तम् इच्छामि त्वाम् द्रष्टुम् अहम् तथा एव।
तेन-एव रुपेण चतुःभुजेन सहस्त्र बाहो भव विश्व-मूर्ते।।४६।।

(हे ईश्वर) मैं आप की मुकुट के समान चमकदार धूमकेतु, घूमती आकाशगंगा और आपकी महान रचनाएँ, जैसे कि चार बाहों वाले देवता हजार बाहों वाले देवताओं को (भी देखना चाहता हूँ। हे ब्रह्माण्ड को अस्तित्व और रुप देने वाले (ईश्वर मुझ पर कृपा करें)।

(अहम) (हे ईश्वर) मैं (त्वम्) आपकी (किरीटिनम्) मुकुट के समान चमकदार (गदिनम्) धूमकेतु (चक्रहस्तम्) घूमती (आकाशगंगा) (तथा) और (तेन) आपकी (रुपेण) महान रचनाएँ (एवं) जैसे कि (चतुःभुजेन) चार बाहों वाले देवता (सहस्त्र-बाहो) हजार बाहों वाले देवता (भी देखना चाहता) (विश्व) (हे) ब्रह्माण्ड को (भव) अस्तित्व और (भूतों) रुप देने वाले (ईश्वर मुझ पर कृपा करें)।

ईश्वर का इन्कार :-

११:४७

श्री भगवान उवाच मया प्रसन्नेन तव अर्जुन इदम् रुपम् परम् दर्शितम् आत्मयोगात।
तेजः मयम् विश्वम् अनन्तम् आद्यम् यत मे त्वत् अन्येन न दृष्ट-पूर्वम् ।।४७।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन, तुम्हें प्रसन्न करने के लिए मेरे द्वारा यह मुझसे जुड़ी हुई दिव्य रचनाएँ (तुम्हें) दिखाई गयी। मेरा यह तेज अनंत है और विश्व में फैला हुआ है (और) मूल या आदिम (अति प्राचीन) है। मेरे इस (तेज को) तुमसे पहले किसी ने नही देखा।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (अर्जुन) हे अर्जुन (तव) तुम्हें (प्रसन्नेन) प्रसन्न करने के लिए (मया) मेरे द्वारा (इदम्) यह (आत्म योगात्) मुझसे जुड़ी हुई (रुपम् परम्) दिव्य रचनाएँ (दर्शितम्) (तुम्हें) दिखाई गयी (तेजः मयम्) मेरा यह तेज (अनन्तम्) अनंत (विश्वम्) है और विश्व में फैली हुई है (आद्यम्) (और) मूल या आदिम (अति प्राचीन) है। (मे) मेरे (यत्) इस (तेज को) तुमसे (पूर्वम्) पहले (अन्येन) किसी ने (न) नहीं (दृष्ट) देखा।

११:४८

न वेद-यज्ञ अध्ययनैः न दानैः न च क्रियाभिः न तपोभिः उग्रैः।
एराम् रुपः शक्यः अहम् नृ-लोके द्रष्टुम् त्वत् अन्येन कुरु-प्रवीर।।४८।।

हे कुरुश्रेष्ठ (अर्जुन), मनुष्य लोक में मेरे इस प्रकार के दिव्य रचनाओं को देखना तुम्हारे सिवा किसी और के लिए सम्भव (नहीं) है। न वेद के अभ्यास से। न यज्ञ और दान से। न किसी क्रिया से। और न घोर तपस्या से।

(कुरु प्रवीर) हे कुरुश्रेष्ठ (अर्जुन) (नृ-लोके) मनुष्य लोक में (अहम्) मेरे (एवम् रुपः) इस प्रकार के दिव्य रचनाओं को (द्रष्ट्म) देखना (त्वत् अन्येन) तुम्हारे सिवा किसी और के लिए (शक्यः) सम्भव (नहीं) है (न वेद यज्ञ अध्ययन) न वेद के अभ्यास से न यज्ञ (च) और (न दानैः) न दान से (न क्रियाभिः) न किसी क्रिया से (न तपोभिः उग्रैः) और न घोर तपस्या से।

११:४९

माते व्यथा माच विमूढ-भावः दृष्टवा रुपम् घोरम् ईदृक मम इदम्।
व्यपेत-भीः प्रीत-मनाः पुनः त्वम् तत् एव मे रुपम् इदम् प्रपश्य।।४९।।

(हे अर्जुन) न तुम भयभीत हो जाओ और न उलझन में पड़ो, देखकर मेरी इन भयानक रचनाओं (निर्माण) को (यमराज को)। निःसंदेह भय से मुक्त होने और मन की शांति के लिए फिर से देखो मेरे इस महान रचना को।

(मन्ते) (हे अर्जुन) न तुम (व्यथा) भयभीत हो जाओ (माच) और न (विमुढ भाव) उलझन में पड़ो (दृष्टवा) देखकर (मम्) मेरी (इदम्) इन (घोरम्) भयानक (रुपम) रचनाओं (निर्माण) को (यमराज को) (एव) निःसंदेह (व्यपेत भीः) भय से मुक्त होने (प्रीत-मनाः) और मन की शांति के लिए (पुनः) फिर से (प्रपश्य) देखो (मे) मेरे (तत) इस (रुपम्) महान रचना को।

११:५०

इति अर्जुनम् वासुदेवः तथा उक्त्वा स्वकम् रुपम् दर्शयाम् आस भूयः।
आश्वासयाम् आस च भीतम् एनम् भूत्वा पुनः सौम्य वपुः महा-आत्मा।।५०।।

इस तरह कहते हुए अपने प्राकृतिक शक्ति से (ईश्वर ने) फिर से अपनी (महान रचना) को श्री कृष्ण के स्थान पर दिखाया। और भयभीत अर्जुन को दिलासा देने (उनके) मित्र (और) महान आत्मा (श्री कृष्ण) का शरीर दोबारा प्रकट हो गया।

(इति) इस तरह (उक्त्वा) कहते हुए (स्वकम्) अपने प्राकृतिक शक्ति से (ईश्वर ने) (भूयः) फिर से (रुपम्) अपनी (महान रचना) को (वासुदेव) श्री कृष्ण (सः) के स्थान पर (दर्शयाम्) दिखाया (तथा) और (भीतम्) भयभीत (अर्जुन) अर्जुन को (आश्वासयाम् आस) दिलासा देने (उनके) (सौम्य) मित्र (और) (महा-आत्मा) महान आत्मा (श्री कृष्ण) का (वपुः) शरीर (पुनः) दोबारा (भूत्वा) प्रकट हो गया।

११:५१

दृष्टवा इदम् मानुषम् रुपम् तव सौम्यम् जनार्दन।
इदानीम् अस्मि संवृत्तः स-चेताः प्रकृतिम् गतः।।५१।।

(हे ईश्वर) आपके इस मनुष्य रचना, मेरे प्रिय श्री कृष्ण (को) देखकर अब मैं शांत (हूँ) और मेरा मन भी अपनी मूल अवस्था में आ गया है।

(तव) (हे ईश्वर) आपके (इदम्) इस (मनुष्यम्) मनुष्य (रुपम्) रचना (सौम्यम्) मेरे प्रिय (जनार्दन्) श्री कृष्ण (दृष्ट्वा) (को) देखकर (इदानीम्) अब (अस्मि) मैं (संवृत्तः) शांत (हूँ) (स चेता) और मेरा मन भी (प्रकृतिम् गतः) अपनी मूल अवस्था में आ गया है।

११:५२-५३

श्री भगवान उवाच सु-दुर्दशम् इदम् रुपम् दृष्टवान् असि यत् मम।
देवाः अस्य रुपस्य नित्यम् दर्शन-कांक्षिणः।।५२।।
न अहम् वेदैः न तपसा न दानेन न च इज्यजा।
शक्यः एवम् विधः द्रुष्टम् दृष्टवान् असि माम् यथा।।५३।।

ईश्वर ने कहा मेरे इन रचनाओं को या मेरे तेज को जिसे (तुमने) देखा है, देखना बहुत कठिन है। देवता भी सदैव (मेरे) इन रचनाओं को या तेज को देखने की इच्छा करते हैं। न वेदों के अभ्यास से न तपस्या से न दान देने से और न (घोर) प्रार्थना करने से मुझे इस तरह देखना सम्भव है। जिस तरह तुमने देखा।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा (मम) मेरे (इदम् रुपम्) इन रचनाओं को या मेरे तेज को (यत्) जिसे (दृष्टवान असि) (तुमने) देखा है। (ऐसे) (सु-दुदर्श) देखना बहुत कठिन है। (देवा) देवता (अपि) भी (नित्यम्) सदैव (अस्य रुपस्य) (मेरे) इन रचनाओं को या तेज को (दर्शन कांक्षिणः) देखने की इच्छा करते हैं। (न वेदै) न वेदों के अभ्यास से (न तपसा) न तपस्या से (न दानेन) न दान देने से (च) और (न इज्यजा) न (घोर) प्रार्थना करने से (माम्) मुझे (एवम् विधः) इस तरह (दृष्टुम्) देखना (शक्य) सम्भव है। (यथा) जिस तरह (दृष्टवान असि) तुमने देखा।

महत्त्वपूर्ण उपदेश :-

११:५४

भक्त्या तु अनन्यया शक्यः अहम् एवम विधः अर्जुन।
ज्ञातुम् द्रष्टुम् च तत्त्वेन प्रवेष्टम् च परन्तप।।५४।।

हे अर्जुन, किन्तु (जो मनुष्य) अन्य शक्तियों की प्रार्थना नहीं करते (उनके लिए यह) सम्भव है कि जिस तरह से (तुमने मेरे) ज्ञान और तत्त्व को (सत्य को) (अपनी आंखों) देखकर श्रद्धा अपनाया। मैं (इसी प्रकार की श्रद्धा उनके हृदय में) प्रवेश करा दूँ (उनकी हृदय में ईश्वर की दृढ श्रद्धा उत्पन्न कर दूँ)

(अर्जुन) हे अर्जुन (तु) किन्तु (भक्त्या अनन्यया) (जो मनुष्य) अन्य शक्तियों की प्रार्थना नहीं करते (शक्यः) (उनके लिए यह) सम्भव है कि (एवम-विधः) जिस तरह से (तुमने मेरे) (ज्ञातुम्) ज्ञान (च) और (तत्त्वेन) तत्त्व को (सत्य को) (द्रष्टुम्) (अपनी आंखों) देखकर श्रद्धा अपनाया (अहम्) मैं (इसी प्रकार की श्रद्धा उनके हृदय में) (प्रवेष्टुम्) प्रवेश करा दूँ (उनकी हृदय में ईश्वर की दृढ श्रद्धा उत्पन्न कर दूँ)

११:५५

मत् कर्म कृत् मत् परमः मत् भक्तः सङ-वर्जितः।
निवैरः सर्व-भूतेषु यः माम् एति पाण्डव ।।५५।।

हे अर्जुन, जो (व्यक्ति केवल) मेरे लिए कर्म करता है मुझे सबसे महान मानता है। केवल मेरी प्रार्थना करता है। संगम (शिर्क) को छोड़ देता है। सारे प्राणियों से दुश्मनी नहीं रखता वह व्यक्ति मुझे पा लेता है (मेरा स्वर्ग प्राप्त कर लेता है)

(पाण्डवः) हे अर्जुन (यः) जो (व्यक्ति केवल) (मत् कर्म कृत) मेरे लिए कर्म करता है (मत् परमः) मुझे सबसे महान मानता है। (मत् भक्तः) केवल मेरी प्रार्थना करता है। (सङ-वर्जितः) संगम (शिर्क) को छोड़ देता है। (सर्व भूतेषु) सारे प्राणियों से (निवैरः) दुश्मनी नहीं रखता (सः) वह व्यक्ति (माम् एति) मुझे पा लेता है (मेरा स्वर्ग प्राप्त कर लेता है)

अध्याय- १ २

भक्ती योग

अर्जुन उवाच
एवं सततयुक्ता ये भक्तास्त्वां पर्युपासते ।
ये चाप्यक्षरमव्यक्तं तेषां के योगवित्तमाः ॥

श्रीभगवानुवाच
मय्यावेश्य मनो ये मां नित्ययुक्ता उपासते ।
श्रद्धया परयोपेतास्ते मे युक्ततमा मताः ॥

ये त्वक्षरमनिर्देश्यमव्यक्तं पर्युपासते।
सर्वत्रगमचिन्त्यं च कूटस्थमचलं ध्रुवम् ॥

सन्नियम्येन्द्रियग्रामं सर्वत्र समबुद्धयः ।
ते प्राप्नुवन्ति मामेव सर्वभूतहिते रताः ॥

क्लेशोऽधिकतरस्तेषामव्यक्तासक्तचेतसाम् ।
अव्यक्ता हि गतिर्दुःखं देहवद्भिरवाप्यते ॥

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि सन्नयस्य मत्पराः ।
अनन्येनैव योगेन मां ध्यायन्त उपासते ॥

तेषामहं समुद्धर्ता मृत्युसंसारसागरात् ।
भवामि नचिरात्पार्थ मय्यावेशितचेतसाम् ॥

मय्येव मन आधत्स्व मयि बुद्धिं निवेशय ।
निवसिष्यसि मय्येव अत ऊर्ध्वं न संशयः ॥

अथ चित्तं समाधातुं न शक्नोषि मयि स्थिरम् ।
अभ्यासयोगेन ततो मामिच्छाप्तुं धनञ्जय ॥

अभ्यासेऽप्यसमर्थोऽसि मत्कर्मपरमो भव ।
मदर्थमपि कर्माणि कुर्वन्सिद्धिमवाप्स्यसि ॥

अथैतदप्यशक्तोऽसि कर्तुं मद्योगमाश्रितः ।
सर्वकर्मफलत्यागं ततः कुरु यतात्मवान् ॥

श्रेयो हि ज्ञानमभ्यासाज्ज्ञानाद्धयानं विशिष्यते ।
ध्यानात्कर्मफलत्यागस्त्यागाच्छान्तिरनन्तरम् ॥

अर्जुन उवाच
अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्रः करुण एव च ।
निर्ममो निरहङ्कारः समदुःखसुखः क्षमी ॥

संतुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चयः।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥

श्रीभगवानुवाच
यस्मान्नोद्विजते लोको लोकान्नोद्विजते च यः।
हर्षामर्षभयोद्वेगैर्मुक्तो यः स च मे प्रियः॥

अनपेक्षः शुचिर्दक्ष उदासीनो गतव्यथः।
सर्वारम्भपरित्यागी यो मद्भक्तः स मे प्रियः॥

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न काङ्क्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः॥

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मानापमानयोः।
शीतोष्णसुखदुःखेषु समः सङ्गविवर्जितः॥

तुल्यनिन्दास्तुतिर्मौनी सन्तुष्टो येन केनचित्।
अनिकेतः स्थिरमतिर्भक्तिमान्मे प्रियो नरः॥

ये तु धर्म्यामृतमिदं यथोक्तं पर्युपासते।
श्रद्धाना मत्परमा भक्तास्तेऽतीव मे प्रियाः॥

अध्याय का परिचय

● अध्याय ९ का श्लोक नं. २३ इस प्रकार है।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन), नि:संदेह जो दूसरे देवताओं की भक्ति करते हैं और श्रद्धा के साथ उनकी भक्ति में लगे रहते हैं। नि:संदेह, वह भी मेरी ही भक्ति करना चाहते हैं (किन्तु ज्ञान न होने के कारण) नियमों का उल्लघंन करते हैं।

अज्ञानता के कारण नियमों का उल्लघंन न हो यही इस अध्याय का मुख्य ज्ञान है।

अध्याय का सारांश

● इस अध्याय के पहले श्लोक में अर्जुन ईश्वर से प्रश्न करते हैं कि ''जो लोग ईश्वर को निराकार मानकर प्रार्थना करते हैं और जो लोग ईश्वर को किसी आकार में मानकर प्रार्थना करते हैं, इनमें अज्ञानी कौन हैं?

ईश्वर ने इसका स्पष्टीकरण इन शब्दों में किया कि ''जो मेरी इस श्रद्धा के साथ प्रार्थना करते हैं कि मैं किसी पर निर्भर करता हूँ, वह अज्ञानी है।''

● श्लोक नं. ११.४३ में ईश्वर को अप्रतिम कहा गया है, अर्थात बिना आकार के। श्लोक नं. १३.१५ में ईश्वर को निगुर्ण कहा गया है। अर्थात उसमें मनुष्य के समान सीमित गुण नहीं है। श्लोक नं. १२.३ में ईश्वर को अविनाशी, न दिखाई देने वाला, हर स्थान पर उपस्थित और कल्पना से उच्चतर कहा है।

तो जो ईश्वर को इस प्रकार कल्पना करके प्रार्थना करेगा वही ज्ञानी है।

● इसके बाद दयालु ईश्वर ने मानवजाती को स्वयम् बताया कि उसकी प्रार्थना कैसे करें? इसका वर्णन श्लोक नं. १२.५ से १२.१२ तक है।

● इसके बाद मानवजाति को प्रेरित करने, उत्साहित करने और उत्तेजित करने हेतु ईश्वर ने वह गुण बताए जिन्हें अपनाकर मनुष्य ईश्वर का प्रिय हो जाता है। इन गुणों का वर्णन श्लोक नं. १२.१३ से १२.२० तक है।

● इस प्रकार यह अध्याय ईश्वर में श्रद्धा को शुद्ध करता है और मनुष्य को कर्म योग और कर्म सन्यास के लिए तैयार करता है।

अध्याय

मूर्ति पूजा का निषेध :-

१२:१

अर्जुन उवाच,
एवम् सतत युक्ताः ये भक्ताः त्वाम् पर्युपासते।
ये च अपि अक्षरम् अव्यक्तम् तेषाम् के योगवित् -
तमाः।।१।।

अर्जुन ने कहा,
''(हे ईश्वर) वह (जो) सदैव आपकी प्रार्थना में लगा रहता है। (किन्तु) इस तरह (कि वह आपको कोई मूर्ति में या आकार वाला मानता है)। और वह जो निःसंदेह (आपको) अविनाशी, न दिखाई देने वाला मानता है। उन (दोनों में) कौन (आपसे) जुड़ने वाली प्रार्थना के ज्ञान से अज्ञान है।''

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा,
(ये) (हे ईश्वर) वह (जो) (सतत) सदैव (त्वाम्) आपकी (पर्युपासते) प्रार्थना में (भक्त) लगा रहता है (एवम्) (किन्तु) इस तरह (कि वह आपको कोई मूर्ति में या आकार वाला मानता है) (च) और (ये) वह जो (अपि) निःसंदेह (आपको) (अक्षरम) अविनाशी (अव्यक्तम्) न दिखाई देने वाला मानता है। (तेषाम्) उन (दोनों में) (के) कौन (योग) (आपसे) जुड़ने वाली प्रार्थना के (वित्) ज्ञान में (तमाः) अज्ञान (से) है।

१२:२

मयि आवेश्य मनः ये माम् नित्य युक्ताः उपासते।
श्रद्धया परया उपेताः ते मे युक्त-तमाः मताः।।२।।

ईश्वर ने कहा, जो मुझे स्थित करते हैं मन में, (और) सदैव लगे रहते हैं मेरी उपासना में,

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (ये) जो (मयि) मुझे (आवेश्य) स्थित करते हैं (मन) मन में (और) (नित्य) सदैव (युत्काः) लगे रहता है (माम्) मेरी (उपासते) उपासना में (मे) (और)

नोटः (निर्भर होने का अर्थ है मनुष्य या कोई प्राणी होना। कारण कि जीवित रहने के लिए मनुष्य और प्राणी दूसरों पर निर्भर करते हैं।)

नोट १२.१ नालन्दा विशाल शब्द सागर कोश में तम और वित के निम्नलिखित अर्थ बताए हैं।

तम= अन्धकार, अंधेरा, पाप, अज्ञान (पेज नं. ४९९)
वित = जानकार, ज्ञाता, चतुर, निपुण (पेज नं. १२६४)

नोट १२.२ मोनीयर विलीयम शब्द कोश में परया और उपेता के निम्नलिखित अर्थ बताए है।

परया= दूसरों पर निर्भर करना।
उपेता= संबोधित करना, मुखातिब होना।
श्लोक नं. ११:४३ में ईश्वर को अप्रतिम कहा है। १३.१५ में ईश्वर को निर्गुण कहा है।
१२.३ में न दिखाई देने वाला कहा है।
इन शब्दों के आधार पर हमने श्लोक नं. १२.२ का अनुवाद किया है।

नोट १२.२ पवित्र कुरआन में अज्ञानियों के बारे में लिखा है, ''उन्होंने ईश्वर की कद्र (महत्त्व, अहमियत) न पहचानी जैसा कि उसके पहचानने का हक है। निःसंदेह ईश्वर ताकतवर और प्रभुत्वशाली है।''
(सूरह अल-हज-२२, आयत-७४)

(और) मेरी (तरफ) ध्यान लगाते हैं इस श्रद्धा के साथ कि मैं दूसरों पर निर्भर हूँ। वह अज्ञान में युक्त हैं (ऐसा) मेरा निर्णय है।

मेरी (तरफ) (उपेताः) ध्यान लगाते हैं (श्रद्धया) इस श्रद्धा के साथ कि (परया) मैं दूसरों पर निर्भर हूँ (ते) वह (तमा) अज्ञान (युक्त) में युक्त हैं (मताः) (ऐसा) मेरा निर्णय है।

ईश्वर में श्रद्धा वाले स्वर्ग कैसे प्राप्त करते हैं। :-

१२.३

ये तु अक्षरम् अनिर्देश्यम् अव्यक्तम् पर्युपासते।
सर्वत्र-गम् अचिन्त्यम् च कूट-स्थम् अचलम् ध्रुवम् ।।३।।

किन्तु वह जो ध्यान को बिना भटकाए पर्वत के समान जमकर बैठते हैं, और अपने नाक के छोर पर ध्यान लगाते है (अर्थात ईश्वर की याद में एकाग्र होते है), और (मेरी) प्रार्थना करते हैं, (और मुझे) अविनाशी, न दिखाई देने वाला (बिना मूर्ति का), हर स्थान पर उपस्थित सर्वव्यापी और कल्पना से उच्चतर (मानते हैं)।

(तु) किन्तु (ये) वह जो (अचलम्) ध्यान को बिना भटकाए (कूट-स्थम्) पर्वत के समान जमकर बैठते हैं (ध्रुवम्) और अपने नाक के छोर पर ध्यान लगाते हैं (अर्थात ईश्वर की याद में एकाग्र होते हैं) (च) और (पर्युपासते) (मेरी) प्रार्थना करते हैं (और मुझे) (अक्षरम्) अविनाशी (अव्यक्तम्) न दिखाई देने वाला (बिना मूर्ति का) (सर्वत्र गम्) हर स्थान पर उपस्थित (अचिन्त्यम्) और कल्पना से उच्चतर (मानते हैं)।

१२.४

सन्नियम्य इन्द्रिय-ग्रामम् सर्वत्र सम-बुद्धयः।
ते प्राप्युवन्ति माम् एव सर्व भूत-हिते रताः।।४।।

वह जो नियंत्रण करते हैं हर तरफ से (और हर प्रकार से) अपने इन्द्रियों को, और एक ही जैसा रहते हैं (सुख दुःख में), और सदैव प्राणियों की हित (कल्याण) में व्यस्त रहते हैं, नि:संदेह (वह) मुझे पा लेते हैं।

(ते) वह जो (सन्नियम्य) नियंत्रण करते हैं (सर्वत्र) हर तरफ से (और हर प्रकार से) (इन्द्रिय-ग्रामम्) अपने इन्द्रियों को (सम-बुद्धयः) और एक ही जैसा रहते हैं (सुख दुःख में) और (सर्व) सदैव (भूत) प्राणियों की (हिते) हित (कल्याण) (रताः) में व्यस्त रहते हैं (एवं) नि:संदेह (वह) (माम्) मुझे (प्राप्युवन्ति) पा लेते हैं।

निराकार ईश्वर पर ध्यान केंद्रित न हो तो क्या करें। :-

१२.५

क्लेशः अधिकतरः तेषाम् अव्यक्त आसक्त चेतसाम्।
अव्यक्ता हि गतिः दुःखम् देह-वद्भिः अवाप्यते।।५।।

न दिखाई देने वाले (ईश्वर की याद में) मन को

(अव्यक्त) न दिखाई देने वाले (ईश्वर की याद में) (चेतसाम्) मन को (आसक्त) लगाना (अधिकतरः) बहुत ही (क्लेशः) कठिन काम है (तेषाम्) इन (वद्भिः) शरीर वाले मनुष्यों के लिए (हि) नि:संदेह (अव्यक्ता) न दिखाई देने

लगाना बहुत ही कठिन काम है इन शरीर वाले मनुष्यों के लिए। निःसंदेह, न दिखाई देने वाले ईश्वर के सत्य मार्ग को जानना (भी) बहुत कठिन है।

वाले ईश्वर के (गतिः) सत्य मार्ग को (अवाप्यते) जानना (भी) (दुःखम्) बहुत कठिन है।

१२.६

ये तु सर्वाणि कर्माणि मयि संन्यस्य मत-पराः।
अनन्येन एव योगेन माम् ध्यायन्तः उपासते।।६।।

किन्तु वह जो सारे कर्म (केवल) मेरे लिए (करता है)। अन्य (देवताओं की) प्रार्थना त्याग देता है, और मुझे अपने मन में रखते हुए प्रार्थना करता है। (और) मुझे प्राप्त करना अपने जीवन का लक्ष्य बनाता है।

नोट: जिनके लिए यह सरल है उनका उल्लेख अगले श्लोक में है।

(तु) किन्तु (ये) वह जो (सर्वाणि) सारे (कर्माणि) कर्म (मयि) (केवल) मेरे लिए (करता है) (अनन्येन) अन्य (देवताओं की) (योगेन) प्रार्थना (संन्यस्य) त्याग देता है (एव) और (माम) मुझे (ध्यायन्त) अपने मन में रखते हुए (उपासते) प्रार्थना करता है (मत-पराः) (और) मुझे प्राप्त करना अपने जीवन का लक्ष्य बनाता है।

१२.७

तेषाम् अहम् समुद्धर्ता मृत्यु संसार सागरात्।
भवामि न चिरात पार्थ मयि आवेशित चेतसाम्
।।७।।

हे पार्थ (अर्जुन), (जो लोग) मुझमें अपनी सोच को स्थित रखने वाले हैं, उन लोगों को मैं मृत्यु वाले (कष्टवाले) सांसारिक जीवन के समुद्र में अधिक समय तक नहीं (रहने देता)। और बहुत जल्द मुक्ति दे देता हूँ (कष्ट से, और जीवन में सुख शान्ति प्रदान करता हूँ)।

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (मयि) (जो लोग) मुझमें (चेतसाम्) अपनी सोच को (आवेशित) स्थित रखने वाले हैं (तेषाम्) उन लोगों को (अहम्) में (मृत्युसंसार) मृत्यु वाले (कष्टवाले) सांसारिक जीवन के (सागरात्) समुद्र में (चिरात्) अधिक समय तक (न) नही (रहने देता) और (समुद्धर्ता) बहुत जल्द (भवामि) मुक्ति दे देता हूँ (कष्ट से और जीवन में सुख शान्ति प्रदान करता हूँ)।

१२.८

मयि एव मनः आधत्स्व मयि बुद्धिम् निवेशय।
निवसिष्यसि मयि एव अतःउर्ध्वम् न संशयः।।८।।

अपने मन में केवल मुझे स्थित करो। अपनी बुद्धि को मेरी शरण में दो। निःसंदेह उसके बाद (तुम) मुझ (में) तल्लीन (मग्न) रहने लगोगे। इस बात में कोई संदेह नहीं है।

(मनः) अपने मन में (एव) केवल (माम) मुझे (आधत्स्व) स्थित करो (बुद्धिम्) अपनी बुद्धि को (मयि) मेरी (निवेशय) शरण में दो (एव) निःसंदेह (अतःउर्ध्वम्) उसके बाद (तुम) (मयि) मुझ (में) (निवसिष्यसि) तल्लीन (मग्न) रहने लगोगे (संशयः) इस बात में कोई संदेह (न) नहीं है।

१२.९

अथ चित्तम् समाधातुम् न शक्नोषि मयि स्थिरम्
अभ्यास-योगेन ततः माम् इच्छ आप्तुम्
धनंजय।।९।।

हे अर्जुन, अगर मुझमें दृढता के साथ अपने मन को स्थित रखना (एकाग्र रखना) सम्भव न (हो) तो मुझे प्राप्त करने की इच्छा से वेदों के अभ्यास (सीखने में) जुट जाओ।

(धनंजय) हे अर्जुन, (अथ) अगर (मयि) मुझमें (स्थिरम्) दृढता के साथ (चित्तम्) अपने मन को (समाधातुम्) स्थित रखना (एकाग्र रखना) (शक्नोषि) सम्भव (न) न (हो) (ततः) तो (माम्) मुझे (आप्तुम्) प्राप्त करने की (इच्छा) इच्छा से (अभ्यास) वेदों के अभ्यास (सीखने में) (योगेन) जुट जाओ।

१२.१०

अभ्यासे अपि असमर्थः असि मत-कर्म परमः भव।
मत-अर्थम् अपि कर्माणि कुर्वन् सिद्धिम् अवाप्स्यसि।।१०।।

(यदि तुम) वेदों के सीखने में भी असमर्थ हो (तो फिर मुझ ईश्वर को) सबसे महान मानते हुए मेरे (आदेशों के अनुसार) कर्मों को (केवल) मेरे लिए ही (करने वाले) बनो। इस प्रकार कर्मों को कुशलता से करने से (तुम) (मुझे) पालोगे।

(अभ्यासे) (यदि तुम) वेदों के सीखने में (अपि) भी (असमर्थ) असमर्थ (असि) हो (परम) (तो फिर मुझ ईश्वर को) सबसे महान मानते हुए (मतः) मेरे (आदेश के अनुसार) (कर्म) कर्मों को (मत) (केवल) मेरे (अर्थम्) लिए ही (भव) (करने वाले) बनो (अपि) इस प्रकार (कर्माणि) कर्मों को (सिद्धिम्) कुशलता से (कुर्वन्) करने से (तुम) (अवाप्स्यसि) (मुझे) पालोगे।

१२.११

अथ एतत् अपि अशक्तः असि कर्तुम् मत् योगम् आश्रितः।
सर्व-कर्म फल त्यागम् ततः कुरु यत-आत्मवान् ।।११।।

यदि इस तरह से भी (तुम) असमर्थ हो (मेरी) शरण लेकर मेरी प्रार्थना करने के लिए, तो अपने सभी सत कर्मों के कर्म फल को छोड़ दो। (अर्थात निःस्वार्थ कर्म करो और) अपने मन को वश में रखो।

(अथ) यदि (असि) इस तरह से (अपि) भी (अशक्तः) (तुम) असमर्थ हो (आश्रितः) (मेरी) शरण लेकर (मत्) मेरी (योगम्) प्रार्थना (कर्तुम्) करने के लिए (एतः) तो (सर्व कर्म) अपने सभी सत कर्मों के (फल) कर्म फल को (त्यागम्) छोड़ दो (अर्थात निःस्वार्थ कर्म करो और) (आत्मवान्) अपने मन को (यत) वश में (कुरु) रखो।

नोट १२.११ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, "अपने ईश्वर को पुकारो गिड़गिड़ाते हुए और चुपके चुपके, निःसंदेह वह (धार्मिक) सीमा का उल्लघंन करने वालों को पसन्द नहीं करता।" (सूरह-अल आराफ-७, आयत-५५)

१२.१२

श्रेयः हि ज्ञानम् अभ्यासात् ज्ञानात् ध्यानम् विशिष्यते।
ध्यानात् कर्मफल-त्यागः त्यागात् शान्तिः अनन्तरम्।।१२।।

निःसंदेह (वेदों को) पढ़कर ज्ञान प्राप्त करना श्रेष्ठ है। ज्ञान प्राप्त करने से अधिक श्रेष्ठ है उस ज्ञान को समझना (उसमें ध्यान लगाना)। किन्तु ज्ञान को केवल समझने से श्रेष्ठ है उसके अनुसार निःस्वार्थ कर्म करना। क्योंकि अन्त में अनंत शान्ति केवल कर्म फल त्यागने से या निःस्वार्थ कर्म करने से ही प्राप्त होता है।

(हि) निःसंदेह (अभ्यासात्) (वेदों को) पढ़कर (ज्ञानम्) ज्ञान प्राप्त करना (श्रेयः) श्रेष्ठ है। (ज्ञानात्) ज्ञान प्राप्त करने से (विशिष्यते) अधिक श्रेष्ठ है (ध्यानम्) उस ज्ञान को समझना (उसमें ध्यान लगाना) (ध्यानात्) किन्तु ज्ञान को केवल समझने से श्रेष्ठ है (कर्म फल-त्याग) उसके अनुसार निःस्वार्थ कर्म करना (अनन्तरम्) क्योंकि अन्त में (शान्तिः) अनंत शान्ति केवल (त्यागात्) कर्म फल त्यागने से या निःस्वार्थ कर्म करने से ही प्राप्त होता है।

१२.१३

अद्वेष्टा सर्व-भुतानाम् मैत्रः करुणः एव च।
निर्ममः निरहंकारः सम दुःख सुखः क्षमी।।१३।।

(ईश्वर ने कहा वह व्यक्ति मुझे प्रिय है जो) निःसंदेह सारे प्राणियों से द्वेष नहीं रखता। (उनका) मित्र, दया करने वाला, और कोमल ह्रदय वाला, अहंकार के बिना, क्षमा करने वाला, (और) दुखः सुख में एक समान रहता है।

(ईश्वर ने कहा वह व्यक्ति मुझे प्रिय है जो) (एवं) निःसंदेह (सर्व) सारे (भुतानाम्) प्राणियों से (अद्वेष्टा) द्वेष नहीं रखता (मैत्रः) (उनका) मित्र (करुणः) दया करने वाला (च) और (निर्ममः) कोमल ह्रदय वाला (निरहंकारः) अहंकार के बिना (क्षमी) क्षमा करने वाला (और) (दुःख सुखः) दुखः सुख में (सम) एक समान रहता है।

१२.१४

सन्तुष्टः सततम् योगी यत-आत्मा दृढ-निश्चयः।
मयि अर्पित मनः बुद्धीः यः मत् भक्तः सः मे प्रियः ।।१४।।

वह (व्यक्ति) मुझे प्रिय है (जो) संतुष्ट रहता है। सदैव प्रार्थना में लगा रहता है। अपने मन पर नियंत्रण रखता है। दृढ निश्चय वाला है और जो मन और बुद्धि को मुझे अर्पित कर देता है। (और जो) केवल मेरी प्रार्थना करता है।

(सः) वह (व्यक्ति) (मे) मुझे (प्रियः) प्रिय है (जो) (संतुष्ट) संतुष्ट रहता है (सततम् योगी) सदैव प्रार्थना में लगा रहता है। (यत-आत्मा) अपने मन पर नियंत्रण रखता है। (दृढ-निश्चयः) दृढ निश्चय वाला है (यः) और जो (मनः बुद्धिः) मन और बुद्धि को (मयि) मुझे (अर्पित) अर्पित कर देता है (और जो) (मत् भक्त) केवल मेरी प्रार्थना करता है।

१२.१५

यस्मात् न उद्विजते लोकः लोकात् न उद्विजते च यः।
हर्ष अमर्ष भय उद्वेगैः मुक्तः यः सः च मे प्रियः।।१५।।

(यस्मात) जिससे (लोका) लोगों को (न) न ही (उद्विजते) कष्ट होती है (च) और (न) न ही (लोकात्) लोग (यः) जिसे (उद्विजते) कष्ट देते

जिससे लोगों को न ही कष्ट होता है, और न ही लोग जिसे कष्ट देते हैं और जो आनंद, दुःख, भय (और) चिन्ता से मुक्त है, वह मेरा प्रिय है।

हैं (च) और (यः) जो (हर्ष) आनंद (हर्ष) (अमर्ष) दुःख (भय) भय (और) (उद्वेगै) चिन्ता से (मुक्तः) मुक्त है (सः) वह (मे) मेरा (प्रियः) प्रिय है।

१२.१६

अनपेक्षः शुचिः दक्षः उदासीनः गत-व्यथः।
सर्व-आरम्भ परित्यागी यः मत् भक्तः सः मे प्रियः।।१६।।

जो (ईश्वर के सिवा किसी से) अपेक्षा नहीं रखता। जो स्वच्छ रहने वाला, सत्यवादी (ईमानदार), निर्पेक्ष, भय और शोक से मुक्त है। जिसने सारे व्यर्थ काम त्याग दिए हों, वह भक्त मुझे प्रिय हैं।

(अनपेक्षः) जो (ईश्वर के सिवा किसी से) अपेक्षा नहीं रखता (शुचिः) जो स्वच्छ रहने वाला (दक्षः) सत्यवादी (ईमानदार) (उदासीनः) निर्पेक्ष (गत-व्यथः) भय और शोक से मुक्त है (यः) जिसने (सर्व) सारे (आरम्भ) व्यर्थ काम (परित्यागी) त्याग दिए हो (सः) वह (भक्तः) भक्त (मे) मुझे (प्रियः) प्रिय हैं।

१२.१७

यः न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति।
शुभ अशुभ परित्यागी भक्ति-मान् यः सः मे प्रियः।।१७।।

वह (जो) न बहुत खुशी मनाता है। (और) न बहुत शोक मनाता है। न विलाप करता है, (और) न और अधिक की इच्छा रखता है। वह (जिसने) शुभ-अशुभ (की आस्था को) त्याग दिया है। जो मेरी भक्ति में गर्व अनुभव करता है। वह मुझे प्रिय है।

(यः) वह (जो) (न) न (हृष्यति) बहुत खुशी मनाता है। (न) (और) न (द्वेष्टि) बहुत शोक मनाता है। (न) न (शोचति) विलाप (मातंम) करता है (न) (और) न (कांक्षति) और अधिक की इच्छा रखता है (यः) वह (जिसने) (शुभ-अशुभ) शुभ-अशुभ (की आस्था को) (परित्यागी) त्याग दिया है (भक्ति-मान्) जो मेरी भक्ति में गर्व अनुभव करता है। (सः) वह (मे) मुझे (प्रियः) प्रिय है।

नोट नं. १२.१६ इस श्लोक नं. १२.१६ में एक शब्द है आरम्भ। यह शब्द आगे भी कई बार आएगा। स्वामी मुकुन्दानन्द ने इसका अर्थ undertaking और स्वामी राम सुखदास जी ने 'नए कर्म' लिखा है। कुरआन के प्रकाश में मेरे शोध के अनुसार यह वह कर्म है जिनके करने से न पाप होता है और न पुण्य मिलता है, केवल समय नष्ट होता है। कुरआन में इसे व्यर्थ काम कहा है। और एक आयत में कहा है कि ''ईश्वर के पवित्र भक्त (मोमीन) व्यर्थ काम से दूर रहते है''। (सूरे अल मोमिनून (२३) आयत (३))

ऐसे काम के कुछ उदाहरण है, ताश खेलना, कॅरम खेलना इत्यादी। इन खेलों से न शारीरिक और मानसिक स्वास्थ अच्छा होता और न ही कोई ज्ञान प्राप्त होता है। केवल समय नष्ट होता है। समय ईश्वर का वरदान है। उसे नष्ट करना भी ईश्वर के उपहार का अपमान करना है।

नोट नं. १२.१६ नालंदा विशाल शब्द सागर कोश में 'उदास' शब्द का एक अर्थ निर्पेक्ष लिखा है। (पेज नं.१५६)

१२.१८

समः शत्रौ च मित्रे च तथा मान अपमानयोः।
शीत उष्ण सुख दुःखेषु समः सडविवर्जितः।।१८।।

(वह जो) मित्र और शत्रु से एक समान (उचित न्यायपूर्वक) बर्ताव करनेवाला है। और (जो) सम्मान, अपमान, सर्दी (गरीबी), गर्मी (अमीरी), सुख और दुःख में एक समान रहता है। और जो संगम (शिर्क) को छोड़ने वाला है, (वह मुझे प्रिय है)।

(मित्रे) (वह जो) मित्र (च) और (क्षत्रौ) शत्रु से (समः) एक समान (उचित न्यायपूर्वक) बर्ताव करने वाला है। (तथा) और (जो) (मान) सम्मान (अपमानयोः) अपमान (शीत) सर्दी (गरीबी) (उष्ण) गर्मी (अमीरी) (सुख) सुख (च) और (दुःखेषु) दुःख में (समः) एक समान रहता है। (सडग) और जो संगम को (विवर्जितः) छोड़ने वाला है (वह मुझे प्रिय है)।

(नोट : संगम का साधारण अर्थ शिर्क है।)

१२.१९

तुल्य निन्दा स्तुतिः मौनी सन्तुष्टः येन केनचित् ।
अनिकेतः स्थिरः मतिः भक्तिमान् मे प्रियः नरः।।१९।।

(जिसके लिए) निन्दा (और) प्रशंसा एक समान है। खामोश रहने वाला। सब प्रकार के परिस्थिति में सन्तुष्ट रहने वाला। बेघर (* किसी स्थान से जुड़ा नहीं, सम्पूर्ण पृथ्वी जिसके लिए एक समान हैं, वह देश और प्रान्त के नाम पर नफरत नहीं करता) दृढ श्रद्धा वाला, मेरी भक्ति में सम्मान अनुभव करने वाला, ऐसा मनुष्य मुझे प्रिय है।

(निन्दा) (जिसके लिए) निन्दा (स्तुतिः) (और) प्रशंसा (तुल्य) एक समान है (मौनी) खामोश (मौन) रहने वाला (येन केनचित्) सब प्रकार के परस्थिति में (सन्तुष्ट) सन्तुष्ट रहने वाला (अनिकेतः) बेघर (*किसी स्थान से जुड़ा नहीं, सम्पूर्ण पृथ्वी जिसके लिए एक समान हैं वह देश और प्रान्त के नाम पर नफरत नहीं करता) दृढ श्रद्धा वाला, मेरी भक्ति में सम्मान अनुभव करने वाला, ऐसा मनुष्य मुझे प्रिय है।

अध्याय का सारांश :-

१२.२०

ये तु धर्म अमृतम् इदम् यथा उक्तम् पर्युपासते।
श्रद्धधानाः मत परमाः भक्ताः ते अतीव मे प्रियाः।।२०।।

जो व्यक्ति इस धर्म (और) स्वर्ग (के बारे में) जिस तरह कहा गया है (उस पर) पूर्णतया श्रद्धा रखते हुए, मुझे सबसे महान ईश्वर की भक्ति में (लगा हुआ है), वह मुझे सबसे अधिक प्रिय है।

(च) जो व्यक्ति (इदम्) इस (धर्म) धर्म (और) (अमृतम्) स्वर्ग (के बारे में) (यथा) जिस तरह (उक्तम्) कहा गया है (पर्युपासते) (उस पर) पूर्णतया (श्रद्धधानाः) श्रद्धा रखते हुए (मत) मुझे (परमा) सबसे महान ईश्वर की (भक्ताः) भक्ति में (लगा हुआ है) (ते) वह (मे) मुझे (अतीव) सबसे अधिक (प्रियाः) प्रिय है।

अध्याय-१३

क्षेत्र क्षेत्रज्ञ विभाग योग

अर्जुन उवाच
प्रकृतिं पुरुषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च।
एतद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव ॥1॥

श्रीभगवानुवाच
इदं शरीरं कौन्तेय क्षेत्रमित्यभिधीयते।
एतद्यो वेत्ति तं प्राहुः क्षेत्रज्ञ इति तद्विदः॥2॥

श्रीभगवानुवाच
क्षेत्रज्ञं चापि मां विद्धि सर्वक्षेत्रेषु भारत।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोर्ज्ञानं यत्तज्ज्ञानं मतं मम॥3॥

तत्क्षेत्रं यच्च यादृक्च यद्विकारि यतश्च यत्।
स च यो यत्प्रभावश्च तत्समासेन मे श्रृणु॥4॥

ऋषिभिर्बहुधा गीतं छन्दोभिर्विविधैः पृथक्।
ब्रह्मसूत्रपदैश्चैव हेतुमद्भिर्विनिश्चितैः॥5॥

महाभूतान्यहङ्कारो बुद्धिरव्यक्तमेव च।
इन्द्रियाणि दशैकं च पञ्च चेन्द्रियगोचराः॥6॥

इच्छा द्वेषः सुखं दुःखं सङ्घातश्चेतना धृतिः।
एतत्क्षेत्रं समासेन सविकारमुदाहृतम्॥7॥

अमानित्वमदम्भित्वमहिंसा क्षान्तिरार्जवम्।
आचार्योपासनं शौचं स्थैर्यमात्मविनिग्रहः॥8॥

इन्द्रियार्थेषु वैराग्यमनहङ्कार एव च।
जन्ममृत्युजराव्याधिदुःखदोषानुदर्शनम्॥9॥

असक्तिरनभिष्वङ्गः पुत्रदारगृहादिषु।
नित्यं च समचित्तत्वमिष्टानिष्टोपपत्तिषु॥10॥

मयि चानन्ययोगेन भक्तिरव्यभिचारिणी।
विविक्तदेशसेवित्वमरतिर्जनसंसदि॥11॥

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वं तत्वज्ञानार्थदर्शनम्।
एतज्ज्ञानमिति प्रोक्तमज्ञानं यदतोऽन्यथा॥12॥

ज्ञेयं यत्तत्वप्रवक्ष्यामि यज्ज्ञात्वामृतमश्नुते।
अनादिमत्परं ब्रह्म न सत्तन्नासदुच्यते॥13॥

सर्वतः पाणिपादं तत्सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्।
सर्वतः श्रुतिमल्लोके सर्वमावृत्य तिष्ठति॥14॥

सर्वेन्द्रियगुणाभासं सर्वेन्द्रियविवर्जितम्।
असक्तं सर्वभृच्चैव निर्गुणं गुणभोक्तृ च॥15॥

बहिरन्तश्च भूतानामचरं चरमेव च।
सूक्ष्मत्वात्तदविज्ञयं दूरस्थं चान्तिके च तत्॥16॥

अविभक्तं च भूतेषु विभक्तमिव च स्थितम्।
भूतभर्तृ च तज्ज्ञेयं ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च॥17॥

ज्योतिषामपि तज्ज्योतिस्तमसः परमुच्यते।
ज्ञानं ज्ञेयं ज्ञानगम्यं हृदि सर्वस्य विष्ठितम्॥18॥

इति क्षेत्रं तथा ज्ञानं ज्ञेयं चोक्तं समासतः।
मद्भक्त एतद्विज्ञाय मद्भावायोपपद्यते॥19॥

श्रीभगवानुवाच
प्रकृतिं पुरुषं चैव विद्ध्यनादी उभावपि।
विकारांश्च गुणांश्चैव विद्धि प्रकृतिसम्भवान्॥20॥

श्रीभगवानुवाच
कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते॥21॥

पुरुषः प्रकृतिस्थो हि भुङ्क्ते प्रकृतिजान्गुणान्।
कारणं गुणसंगोऽस्य सदसद्योनिजन्मसु॥22॥

उपद्रष्टानुमन्ता च भर्ता भोक्ता महेश्वरः।
परमात्मेति चाप्युक्तो देहेऽस्मिन्पुरुषः परः॥23॥

य एवं वेत्ति पुरुषं प्रकृतिं च गुणैः सह।
सर्वथा वर्तमानोऽपि न स भूयोऽभिजायते॥24॥

ध्यानेनात्मनि पश्यन्ति केचिदात्मानमात्मना।
अन्ये साङ्ख्येन योगेन कर्मयोगेन चापरे॥25॥

अन्ये त्वेवमजानन्तः श्रुत्वान्येभ्य उपासते।
तेऽपि चातितरन्त्येव मृत्युं श्रुतिपरायणाः॥26॥

यावत्सञ्जायते किञ्चित्सत्त्वं स्थावरजङ्गमम्।
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्तद्विद्धि भरतर्षभ॥27॥

समं सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तं परमेश्वरम्।
विनश्यत्स्वविनश्यन्तं यः पश्यति स पश्यति॥28॥

समं पश्यन्हि सर्वत्र समवस्थितमीश्वरम्।
न हिनस्त्यात्मनात्मानं ततो याति परां गतिम्॥29॥

प्रकृत्यैव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथात्मानमकर्तारं स पश्यति॥30॥

यदा भूतपृथग्भावमेकस्थमनुपश्यति।
तत एव च विस्तारं ब्रह्म सम्पद्यते तदा॥31॥

अनादित्वान्निर्गुणत्वात्परमात्मायमव्ययः।
शरीरस्थोऽपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते॥32॥

यथा सर्वगतं सौक्ष्म्यादाकाशं नोपलिप्यते।
सर्वत्रावस्थितो देहे तथात्मा नोपलिप्यते॥33॥

यथा प्रकाशयत्येकः कृत्स्नं लोकमिमं रविः।
क्षेत्रं क्षेत्री तथा कृत्स्नं प्रकाशयति भारत॥34॥

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोरेवमन्तरं ज्ञानचक्षुषा।
भूतप्रकृतिमोक्षं च ये विदुर्यान्ति ते परम्॥35॥

अध्याय का परिचय

अध्याय नं. ७, १०, और ११ में ईश्वर ने अपनी महान रचनाओं का वर्णन किया, ताकि मनुष्य उनको देखे, सोच-विचार करे, और ईश्वर की महानता को दिल से मान ले।
किन्तु यह सारी बाहरी वस्तुऐं थी। जिनसे कोई अच्छी तरह परिचित होता है, और कोई नहीं होता है। इस कारण ईश्वर अब अपनी उन महान रचनाओं का वर्णन कर रहे हैं, जो मनुष्य के शरीर के अंदर है। जो भी अपने अन्दर ध्यान लगाएगा वह इनका अवश्य अनुभव करेगा।

ईश्वर ने मिट्टी की एक मूर्ति बनाई, फिर इस मिट्टी की मूर्ति को अपने तेज के अंश से प्राण दिया। जिससे उसका हृदय धड़कने लगा। अपनी रुह में से उसमें रुह फूँकी, जिससे वह बुद्धिमान हो गया। उसने एक आध्यात्मिक आत्मा इस शरीर में रखा, जिसमें तीन प्रकार के स्वभाव रखे (सत्व, रजो और तमो गुण), काम, क्रोध और लालच की भावनाएँ रखी, छह प्रकार की इच्छाएँ रखी, जिसके कारण मनुष्य निरन्तर काम करता रहता है। इनके अतिरिक्त १९ ऐसे भावनाएं रखी जो मनुष्य को महान और सर्वश्रेष्ठ प्राणी बना देता है। ईश्वर ने मनुष्य को इतना उत्तम बनाया कि कोई वैज्ञानिक ऐसा रोबोर्ट नहीं बना सकता है। तेज अंश, प्राण, रुह, आत्मा को हम नोट नं. N-१ और N-२ में पढ़ चुके हैं। अब इस अध्याय में १९ ऐसे गुणों का वर्णन श्लोक नं. १३.६ से श्लोक नं. १३.९ तक है जो ईश्वर की महानता का प्रमाण है।

इस अध्याय का लक्ष्य यही है कि मनुष्य अपने आप में ध्यान लगाए, चिन्तन करे अपने आप को पहचाने। अपने आपको पहचानेगा तो महान ईश्वर को पहचानेगा, जिसकी वह महान रचना है। इस प्रकार उसकी ईश्वर में श्रद्धा और दृढ होगी, और वह ऐसा महापुरुष बनेगा जो ईश्वर चाहते हैं।

अध्याय का सारांश

- श्लोक नं.१३.१ से १३.४ में ईश्वर ने अपना परिचय मानवजाति को निर्माण करने वाला और ज्ञान प्रदान करने वाला कहकर दिया।

- श्लोक नं. १३.५ में ईश्वर ने ब्रह्म सूत्र को सबसे सत्य कहा, और ब्रह्म सूत्र में कहा गया है कि ईश्वर एक है।

- श्लोक नं. १३.६ से १३.११ में ईश्वर ने उन गुणों का वर्णन किया है जो उसकी महान रचना है और इन गुणों से मनुष्य भी महानता के उच्च स्तर तक पहुंचता है।

- श्लोक नं. १३.१३ से १३.१९ में ईश्वर ने अपने उन गुणों का वर्णन किया जो ईश्वर के अतिरिक्त किसी में हो ही नहीं सकते।

यदि कोई मनुष्य ईश्वर होने का या उसका अवतार होने का दावा करे तो देखो कि उसमें वह गुण जो ईश्वर ने इन श्लोकों में अपने बारे में बताए हैं वह उसमें हैं या नही। और यदि नहीं हैं तो वह ईश्वर नहीं हो सकता।

- जब ईश्वर ने इस ब्रह्माण्ड की रचना की थी उसी समय ब्रह्माण्ड के जन्म से प्रलय तक जो होना है वह सब कुछ लिख दिया था। इसे भाग्य कहते हैं।

कई बार जीवन में हमारी गलती न होने के बावजूद हमें बहुत कुछ नुकसान, या कष्ट उठाना पड़ता है। यह भाग्य से होता है। यदि हम इस ज्ञान से परिचित रहे तो शान्त रहेंगे और ईश्वर से सुख-शान्ति की प्रार्थना करते रहेंगे। और यदि हमारा भाग्य पर विश्वास न रहा तो वह नुकसान या कष्ट जो हमें हमारी गलती न होने के बावजूद मिलता है, हम उसे ईश्वर का अन्याय मानेंगे। हमारा धर्म और मानवता से विश्वास उठ जाएगा। और हम स्वयम् अन्याय और अधर्म के मार्ग पर चलकर नरक में जा गिरेंगे।

इस कारण ईश्वर ने श्लोक नं. १३.२० से १३.२४ में भाग्य का वर्णन किया है ताकि हमारा सदैव ईश्वर पर विश्वास और श्रद्धा बनी रहे।

● श्लोक नं. १३.२५ से १३.३५ तक ईश्वर ने उदाहरण द्वारा समझाया है कि अब तक जो ज्ञान दिया गया उसके आधार पर यह दृष्टिकोण बना लो कि जो कुछ इस संसार में है और जो हो रहा है सब महान ईश्वर के कारण है।

अध्याय
ईश्वर और उसकी महान रचना मनुष्य को इसके भाव के साथ समझने का प्रयास:-

अर्जुन उवाच,
प्रकृतिं पुरूषं चैव क्षेत्रं क्षेत्रज्ञमेव च।
एतृद्वेदितुमिच्छामि ज्ञानं ज्ञेयं च केशव।।१३।।

हे कृष्ण! निसंदेह (मैं) भाग्य मनुष्य,क्षेत्र और क्षेत्र को जानने वाला और ज्ञान और ज्ञान को जानने के उपदेश, इन सभी के जानने का इच्छुक हूँ।

(केशव) हे कृष्ण!(एव) निसंदेह (मैं) (प्रकृतिंम) भाग्य (पुरूषम) मनुष्य (क्षेत्रम) क्षेत्र (च) और (क्षेत्रज्ञम) क्षेत्र को जानने वाला (एव च) और (ज्ञानम) ज्ञान (च) और (ज्ञेयम) ज्ञान को जानने के उपदेश (एतत) इन सभी के (वेदितुम) जानने का (इच्छिमि) इच्छुक हूँ।

बहुत से भगवत गीता ग्रंथो में यह श्लोक नही है। स्वामी रामसुखदास जी ने भी साधक-संजीवनी में भी इस श्लोक का उल्लेख नहीं किया है इस लिए हम ने इस श्लोक को कोइ श्लोक नम्बर नही दिया है।

१३.१

श्री भगवान उवाच,
इदम् शरीरम् कौन्तेय क्षेत्रम् इति अभिधीयते।
एतत् यः वेत्ति तम् प्राहुः क्षेत्र-ज्ञः इति तत् विदः ।।१।।

ईश्वर ने (श्री कृष्ण के माध्यम से) कहा, हे कुन्तिपुत्र (अर्जुन)! सत्य को जानने वालों के अनुसार यह शरीर क्षेत्र कहलाता है। इसी प्रकार इस (शरीर को) जो जानता है उसे क्षेत्र को जानने वाला कहा जाता है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने (श्री कृष्ण के माध्यम) से कहा (कौन्तेय) हे कुन्तिपुत्र (अर्जुन) (तत) सत्य को (विदः) जानने वालो के (इति) अनुसार (इदम्) यह (शरीरम्) शरीर (क्षेत्रम्) क्षेत्र (अभिधीयते) कहलाता है। (इति) इसी प्रकार (एतत्) इस (शरीर को) (यः) जो (वेत्ति) जानता है (तम्) उसे (क्षेत्र-ज्ञः) क्षेत्र को जानने वाला (प्राहुः) कहा जाता है।

१३.२

क्षेत्र-ज्ञम् च अपि माम् विद्धि सर्व क्षेत्रेषु भारत।
क्षेत्रक्षेत्र-ज्ञयोः ज्ञानम् यत तत् ज्ञानम् मतम् मम।।२।।

हे भारत (अर्जुन)! निःसंदेह सारे शरीरों (का निर्माता), और शरीर को जानने वाला मुझे (ही) जानो। मेरे आदेश के अनुसार शरीर (मनुष्य) (और) शरीर को जानने वाले (ईश्वर का)

(भारत) हे भारत (अर्जुन) (अपि) निःसंदेह (सर्व) सारे (क्षेत्रेषु) शरीरों (का निर्माता) (च) और (क्षेत्र) शरीर को (ज्ञान्) जानने वाला (माम्) मुझे (ही) (विद्धि) जानो (मम्) मेरे (मतम्) आदेश के अनुसार (क्षेत्र) शरीर (मनुष्य) (क्षेत्र-ज्ञयोः) (और) शरीर को जानने वाले (ईश्वर का) (यत्) (अवतारित किया हुआ) जो (ज्ञानम्) ज्ञान

मनुष्य में बुद्धी और भावना ईश्वर की महानता का प्रतिक हैः-

१३.३

तत् क्षेत्रम् यत् च यादृक च यत् विकारि यतः च यत।
सः च यः यत् प्रभावः च तत् समासेन मे शृणु।।३।।

(ईश्वर ने कहा,) और वह जो शरीर (है वह क्या है) और उसके गुण (क्या है?) उनमें किन कारणों से बदलाव होता है और क्या होता है?और वह कौन है जिसका इन पर प्रभाव होता है। यह मुझसे सुनो और संक्षिप्त में।

(ईश्वर ने कहा,) (तत क्षेत्रम् यत् च) और वह जो शरीर (है वह क्या है) (यादृक च यत्) और उसके गुण (क्या है?) (विकारि यत च यत उन) उनमें किन कारणों से बदलाव होता है और क्या होता है? (सः च यः यत् प्रभावः) और वह कौन है जिसका इन पर प्रभाव होता है। (च तत् समासेन मे शृणु) यह मुझसे सुनो और संक्षिप्त में।

१ ३ . ४

ऋषिभिः बहुधा गीतम् छन्दोभिः विविधैः पृथक।
ब्रह्म-सूत्र पदैः च एव हेतु-मद्भिः विनिश्चितैः।।४।।

मानवजाति के कल्याण के लक्ष्य से ऋषियों ने बहुत विस्तार से वेदों की ऋचाओं द्वारा (ईश्वर की प्रशंसा) बहुत प्रकार से विभाग पूर्वक कहा है। ब्रह्मसूत्र (के) पदों द्वारा यह बात सबसे निश्चित (स्पष्ट) तरीके से कही गई है।

ब्रह्म सूत्र इस प्रकार है।

ईश्वर एक है। दूसरा नहीं है। नहीं है नहीं है। जरा सा भी नहीं है।

(हेतु मद्भिः) मानवजाति के कल्याण के लक्ष्य से (ऋषिभिः) ऋषियों ने (बहुधा) बहुत विस्तार से (छन्दोभिः) वेदों की ऋचाओं द्वारा (ईश्वर की प्रशंसा) (विविधै) बहुत प्रकार से (पृथक) विभाग पूर्वक (गीतम्) कहा है। (ब्रह्म-सूत्र) ब्रह्मसूत्र (के) (पदैः) पदों द्वारा (विनिश्चितैः) यह बात सबसे निश्चित (स्पष्ट) तरीके से कही गई है।

ब्रह्म सूत्र इस प्रकार है।

एकम् ब्रह्म द्वितीये नास्ते नहे ना नास्ते किंचन
ब्रह्म: ईश्वर
एकम: एक है
द्वितीये: दूसरा
नास्ते: नहीं है
नेह ना: नहीं है नहीं (है)
नास्ते किंचन: जरा सा भी नहीं है।

१ ३ . ५

महा-भूतानि अहकारः बुद्धिः अव्यक्तम् एव च।
इन्द्रियाणि दश-एकम् च पन्च च इन्द्रिय-गो-चराः।।५।।

(मनुष्य की विशेषताएं यह है कि) निःसंदेह वह प्राणियों में श्रेष्ठ है। उसमें अपने श्रेष्ठ होने की भावना है। वह बुद्धिमान है। उसमें बहुत से छुपे हुए गुण हैं (जो और किसी प्राणी में नहीं)। उसमें ग्यारह इच्छाएं हैं। और पांच संवेदी अंग (Sensory organs) हैं।

(मनुष्य की विशेषताएं यह है कि) (एव) निःसंदेह (महा-भूतानि) वह प्राणियों में श्रेष्ठ है (अहकारः) उसमें अपने श्रेष्ठ होने की भावना है। (बुद्धिः) वह बुद्धिमान है (अव्यक्तम्) उसमें बहुत से छुपे हुए गुण हैं (जो और किसी प्राणी में नहीं) (इन्द्रियाणि दश-एकम्) उसमें ग्यारह इच्छाएं हैं। (च) और (पन्च च इन्द्रिय-गो-चराः) और पांच संवेदी अंग (Sensory organs) हैं।

१ ३ . ६

इच्छा द्वेषः सुखम् दुःखम् सङ्घातः चेतना धृतिः।
एतत् क्षेत्रम् समासेन स-विकारम् उदाहृतम् ।।६।।

सुख (समृद्धि) के साथ रहने की इच्छा। दुःख (से) घृणा, विवेक और बुद्धि का होना। धीरज का होना। इन सब मनुष्य शरीर के गुणों के बारे में, और भावनाओं के बारे में उदाहरण के साथ संक्षिप्त में (यहाँ वर्णन किया जा रहा है)।

(सुखम्) सुख (समृद्धि) (सडघातः) के साथ रहने की (इच्छा) इच्छा (दुःखम्) दुःख (से) (द्वेषः) घृणा (चेतना) विवेक और बुद्धि का होना (धृतिः) धीरज का होना (एतत्) इन सब (क्षेत्रम्) मनुष्य शरीर के गुणों के बारे में (स-विकारम्) और भावनाओं के बारे में (उदाहृतम्) उदाहरण के साथ (समासेन) संक्षिप्त में (यहाँ वर्णन किया जा रहा है)।

१३.७

अमानित्वम् अदम्भित्वम् अहिंसा क्षान्ति आर्जवम।
आचार्य-उपासनम् शौचम् स्थैर्यम् आत्मविनिग्रहः।।७।।

विनम्र स्वभाव का होना, दिखावटीपन न होना, अहिंसा को पसंद करना, क्षमा करने वाला होना, स्वभाव में सरलता का होना, गुरु की सेवा करना, स्वच्छता को पसंद करना, स्वभाव में दृढ़ता का होना, मन को वश में रखना।

(अमानित्वम्) विनम्र स्वभाव का होना (अदम्भित्वम्) दिखावटीपन न होना (अहिंसा) अहिंसा को पसंद करना (क्षान्तिः) क्षमा करने वाला होना (आर्जवम्) स्वभाव में सरलता का होना (आचार्य उपासनम्) गुरु की सेवा करना (शौचम्) स्वच्छता को पसंद करना (स्थैर्यम्) स्वभाव में दृढ़ता का होना (आत्म विनिग्रहः) मन को वश में रखना।

१३.८

इन्द्रिय-अर्थेषु वैराग्यम् अनहङ्कारः एव च।
जन्म मृत्यु जरा व्याधि दुःख दोष अनुदर्शनम।।८।।

मन को आनंद देने वाले वस्तुओं को छोड़ देना (इच्छा न रखना)। अहंकार की भावना को वश में रखना और निःसंदेह, जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था, बिमारी, दुःख, दोष (अपूर्णता) (के कारण और अवस्था को) सदैव नजर में रखना।

(इन्द्रिय अर्येषु) मन को आनंद देने वाले वस्तुओं को (वैराग्यम्) छोड़ देना (इच्छा न रखना) (अनहङ्कारः) अहंकार की भावना को वश में रखना (एव च) और निःसंदेह (जन्म) जन्म (मृत्यु) मृत्यु (जरा) वृद्धावस्था (व्याधि) बिमारी (दुःख) दुःख (दोष) दोष (अपूर्णता) (अनुदर्शनम्) (के कारण और अवस्था को) सदैव नजर में रखना।

१३.९

असक्तिः अनभिष्वङः पुत्र दार गृह-आदिषु।
नित्यम् च सम-चित्तत्वम् इष्ट अनिष्ट उपपत्तिषु।।९।।

संसार में अधिक रुचि न रखना। पत्नी, पुत्र, घर-गृहस्थी (के प्रेम में) न जकड़ना। अच्छे और कठिन परिस्थितियों का सामना हो तो सदैव धीरज रखना (एक समान रहना)।

(अनभिष्वङ्ग) संसार में अधिक रुचि न रखना (दार) पत्नी (पुत्र) पुत्र (गृह-आदिषु) घर-गृहस्थी (के प्रेम में) (असक्तिः) न जकड़ना (इष्ट अनिष्ट) अच्छे और कठिन परिस्थितियों (उपपत्तिषु) का सामना हो तो (नित्यम्) सदैव (सम-चित्तत्वम्) धीरज रखना (एक समान रहना)।

नोट १३.८ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, यह परलोक का घर (स्वर्ग का स्थान) तो हम उन लोगों को देंगे जो धरती पर अपनी बड़ाई नहीं चाहते, और न बिगाड (फसाद/दंगे) पैदा करना चाहते हैं। और अच्छा अनजाम (अन्त) तो ईश्वर से डरने वालों के लिए है। (सूरह-अल कसस-२८, आयत-८३)

१३.१०

मयि च अनन्य-योगेन भक्तिः अव्यभिचारिणी।
विविक्त देश सेवित्वम् अरतिः जन-संसदि।।१०।।

और निरंतर मेरी बिना संगम (शिर्क) के प्रार्थना करना। एकांत स्थान (पर रहने की) इच्छा रखना। आम लोगों के समूह से दूर रहना।

(च) और (अव्यभिचारिणी) निरंतर (मयि) मेरी (अनन्य-योगेन) बिना संगम के (भक्तिः) प्रार्थना करना (विविक्त देश) एकांत स्थान (पर रहने की) (सेवितम्) इच्छा रखना (जन-संसदि) आम लोगों (जनसाधारण) के समूह से (अरतिः) दूर रहना।

(यह वह गुण है जो ईश्वर की महानता को दर्शाते हैं। ऐसी भावना या गुण कोई वैज्ञानिक किसी रोबोर्ट में नही रख सकता है।)

ईश्वर के वह विशेष गुण जो किसी और में नही हो सकतेः-

१३.११

अध्यात्म ज्ञान नित्यत्वम् तत्त्वज्ञान अर्थ दर्शनम।
एतत् ज्ञानम् इति प्रोक्तम् अज्ञानम् यत् अतः अन्यथा।।११।।

ईश्वर यह घोषणा करता है कि, (धर्म का जो) ज्ञान है, वही सत्य ज्ञान है और इसी उद्देश्य से यह सब ज्ञान (हे अर्जुन) आपको दिखाया गया है। इसलिए इसके अतिरिक्त जो कुछ (ज्ञान है) उन्हें अज्ञानता समझो।

(अध्यात्म) ईश्वर (प्रोक्तम्) यह घोषणा करता है कि (ज्ञान) (धर्म का जो) ज्ञान है (तत्त्वज्ञान) वही सत्य ज्ञान है (अर्थ) और इसी उद्देश्य से (एतत्) यह सब (ज्ञानम्) ज्ञान (दर्शनम्) (हे अर्जुन) आपको दिखाया गया है (इति) इस लिए (अतः अन्यथा) इसके अतिरिक्त (यत्) जो कुछ (ज्ञान है) (अज्ञानम्) उन्हें अज्ञानता समझो।

१३.१२

ज्ञेयम् यत् तत् प्रवक्ष्यामि यत् ज्ञात्वा अमृतम् अश्नुते।
अनादि मत् परम् ब्रह्म न सत् सत् न असत् उच्यते।।१३।।

वह जो जानने के योग्य है उस (के बारे में अब मैं बताउंगा। जिसे जानकर स्वर्ग मिलता है। (जो) मेरा सबसे महान दिव्य स्थान है। ईश्वर न अध्यात्मिक (रुहानी/Spiritual) है। न वह भौतिक (माद्दी/Materialistic है) कहते हैं, (वह ईश्वर) बिना आरंभ के है (अजन्मा है)।

(यत) वह जो (ज्ञेयम्) जानने के योग्य है (तत) उस (के बारे में अब मैं) (प्रवक्ष्यामि) बताउंगा (यत) जिसे (ज्ञात्वा) जानकर (अमृतम्) स्वर्ग (अश्नुते) मिलता है (मत् परम्) (जो) मेरा सब से महान दिव्य स्थान है (ब्रह्म) ईश्वर (न) न (सत) आध्यात्मिक (रुहानी/ Spiritual है) (न) न (तत्) वह (असत्) भौतिक (माद्दी/ Materialistic है) (उच्यते) कहते हैं (वह ईश्वर) (अनादि) बिना आरंभ के है (अजन्मा है)।

नोटः यक्ष और देवता Spiritual या आध्यात्मिक है। मनुष्य भौतिक है। पदार्थ से बना है। ईश्वर इन दोनों जैसा नहीं है।

१३.१३

सर्वतः पाणि पादम् तत् सर्वतः अक्षि शिरः मुखम।
सर्वतः श्रुति-मत् लोके सर्वम् आवृत्य तिष्ठति।।१४।।

उस (ईश्वर के) हाथ पैर हर दिशा में हैं (अर्थात उसकी पकड़ हर स्थान पर है)। हर तरफ (उस ईश्वर की) आँखे, सिर और मुख है (अर्थात हर वस्तु पर उसकी नज़र है)। हर तरफ ब्रह्मांण्ड में उसके कान है, (अर्थात वह हर एक की सुनता है)। सबकी रचना करके (निर्माण करके) वह स्थित है। (हर चीज़ उसके नियंत्रण में है)

(तत) उस (ईश्वर के) (पाणि) हाथ (पादम्) पैर (सर्वतः) हर दिशा में हैं (अर्थात उसकी पकड़ हर स्थान पर है) (अक्षि) आँखे (शिरः) सिर (मुखम्) और मुख है (अर्थात हर वस्तू पर उसकी नज़र है) (सतते) हर तरफ (लोके) ब्रह्मांण्ड में (श्रृति-मत्) उसके कान है (अर्थात वह हर एक कि सुनता है) (सर्वम्) सबकी (आवृत्य) रचना करके (निर्माण करके) (तिष्ठति) वह स्थित है। (हर चिज़ उसके नियंत्रण में है)

१३.१४

सर्व इन्द्रिय गुण आभासम् सर्व इन्द्रिय विवर्जितम् ।
असक्तम् सर्वभृत् च एव निर्गुणम् गुण-भोक्तृ च।।१४।।

(वह ईश्वर) सभी इन्द्रियों (Sensory organ) (और) गुणों (को) प्रकाशित करने वाला है, (उनमें जान ड़ालने वाला है)। (किन्तु वह) सभी इन्द्रियों के बिना है और वह सबको पालता है, किन्तु वह किसी पर निर्भर नहीं (किसी की सहायता से जुड़ा नहीं है)। निःसंदेह (वह ईश्वर) (मनुष्यों में) गुणों का रचयिता है, किन्तु वह (स्वयम) निर्गुण है।

(सर्व) (वह ईश्वर) सभी (इन्द्रिय) इन्द्रियों (Sensory organ) (और) (गुण) गुणों (को) (आभासम्) प्रकाशित करने वाला है (उनमें जान ड़ालने वाला है) (सर्व) (किन्तु वह) सभी (इन्द्रिय) इन्द्रियों (विवर्जितम्) के बिना है (च) और (सर्वभृत्) वह सबको पालता है (असक्तम्) किन्तु वह किसी पर निर्भर नहीं (किसी की सहायता से जुड़ा नहीं है) (एवं) निःसंदेह (वह ईश्वर) (गुण-भोक्तृ) (मनुष्यों में) गुणों का रचयिता है (च) किन्तु (निर्गुणम्) वह निर्गुण है।

नोट १३.१४ पवित्र कुरआन में ईश्वर कहता है, "और तुम जिस हाल में होते हो, या कुरआन में कुछ पढ़ते हो, या तुम लोग कोई और काम करते हो, जब तुम उसमें व्यस्त होते हो हम तुम्हारे सामने होते हैं। और कोई रत्ती भर चीज़(बहुत छोटी चीज) आकाश में और धरती पर ऐसी नहीं है, न छोटी न बड़ी जो तेरे ईश्वर की दृष्टी से छिपी हो, और जो एक स्पष्ट पुस्तक में अंकित न हो।" (सूरह युनूस-१०, आयत-६१) (अनुवाद फतह मोहम्मद साहब)

१३.१५

बहिः अन्तः च भूतानाम् अचरम् चरम् एव च।
सूक्ष्मत्वाम् तत् अविज्ञेयम् दूर-स्थम् च अन्तिके च तत।।१५।।

नि:संदेह, वह (ईश्वर) जीवित और अजीवित प्राणियों के बाहर और भीतर है और वह अत्यंत सूक्ष्म होने के कारण जानने में नहीं आता और (वह ईश्वर) दूर से दूर तथा नजदीक से नज़दीक भी है।

(एरां) नि:संदेह (तत्) वह (ईश्वर) चरम् (हर) जीवित (च) और (अचरम्) अजीवित (भुतानाम्) प्राणियों के (बहिः) बाहर (च) और (अन्त) भीतर है (च) और (तत्) वह (सूक्ष्मत्वाम्) अत्यंत सूक्ष्म होने से (अविज्ञेयम्) जानने में नहीं आता (च) और (वह ईश्वर) (दूर-स्थम्) दूर से दूर (च) तथा (अन्तिके) नजदीक से नज़दीक भी है।

१३.१६

अविभक्तम् च भूतेषु विभक्तम् इव च स्थितम् ।
भूत-भर्तृ च तत् ज्ञेयम् ग्रसिष्णु प्रभविष्णु च ।।१६।।

(वह ईश्वर) अविभाजित (undivided) है (बंटा हुआ नहीं है)। और (उसने) सभी प्राणियों को विभाजित किया है और स्थित किया है और (वह ही) सभी प्राणियों को पालने वाला और वह (ईश्वर) सम्पूर्ण प्राणियों को उत्पन्न करने वाला (और) संहार (मारने) वाला है।

(वह ईश्वर) (अविभक्तम्) अविभाजित (undivided) है (बटा हुआ नहीं है) (च) और (उसने) (भूतेषु) सभी प्राणियों (विभक्तम्) विभाजित किया है (इव च स्थितम्) और स्थित किया है (च) और (वह ही) (भूत भर्तृ) सभी प्राणियों को पालने वाला (च) और (तत) वह (ईश्वर) (प्रभविष्णु) सम्पूर्ण प्राणियों को उत्पन्न करने वाला (ग्रसिष्णु) (और) संहार (मारने) वाला है।

नोट १३.१६ श्लोक नं. ११.१३ में कहा गया है कि अर्जुन ने ईश्वर के तेज़ को देखा वह ऐसा था कि आकाश में हजारों सूर्य एक साथ हों। ईश्वर का यह अत्याधिक तीव्र तेज मनुष्य के सहनशक्ति से अधिक है। ईश्वर का यह तेज स्वर्ग से भी परे हमसे बहुत दूर है।

जैसे सोलार घड़ी या केलक्युलेटर सूर्य के प्रकाश से सक्रिय हो जाते हैं और काम करने लगते हैं इसी प्रकार इस ब्रह्माण्ड की प्रत्येक जीवित वस्तु ईश्वर के तेज के एक अंश से सक्रिय है और जीवित है। हमारा हृदय ईश्वर के तेज़ के कारण धडकता है। इस कारण ईश्वर हमसे बहुत निकट है। उसका तेज बहुत सूक्ष्म है इस कारण हम अपने इद्रीयों से उसका आभास नहीं कर पाते हैं। ध्यान लगाकर, शान्त रहकर, ईश्वर की प्रार्थना करते हुए सुबह ब्रह्म मुहुर्त से पहले या उस समय ईश्वर के अस्तित्व का आभास किया जा सकता है। जब ईश्वर के अस्तित्व का आभास होता है तो मन और भी शान्त और बिना कारण भी प्रसन्न हो जाता है।

नोट १३.१६ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा कि, हमने इंसान को पैदा किया और हम जानते है उन बातों को जो उसके दिल में आते हैं। हम उसकी गर्दन की रग (Vein) से भी ज्यादा उससे करीब है। (सूरह काफ-५०, आयत-१६)

१३.१७

ज्योतिषाम् अपि तत् ज्योतिः तमसः परम् उच्यते। ज्ञानम् ज्ञेयम् ज्ञान-गम्यम् हृदि सर्वस्य विष्ठितम् ।।१७।।

कहा जाता है, कि वह ईश्वर प्रकाश देने वालों का (ज्ञानियों का) प्रकाश है (ज्ञान हैं)। वह (ईश्वर) सभी दोषों से मुक्त है (ईश्वर को केवल) ज्ञान के द्वारा ही जाना जा सकता है। (उस ईश्वर को) हर चिज़ का ज्ञान है। (कारण के) वह हर एक के हृदय में रहता है।

(उच्यते) कहा जाता है की (तत) वह ईश्वर (ज्योतिषाम्) प्रकाश देने वालों की (ज्ञानियों का) (ज्योतिः) प्रकाश है (ज्ञान हैं) (तमसः परमः) वह (ईश्वर) सभी दोषों से मुक्त है (ज्ञानम्) (ईश्वर को केवल) ज्ञान के द्वारा ही (ज्ञेयम्) जाना जा सकता है। (ज्ञान-गम्यम्) (उस ईश्वर को) हर चिज़ का ज्ञान है (कारण के) (सर्वस्य) वह हर एक के (हृदि) हृदय में (विष्ठितम्) रहता है।

भाग्य क्या है?

१३.१८

इति क्षेत्र तथा ज्ञान ज्ञेय चोक्त समासतः। मत-भक्तः एतत् विज्ञाय मतभावाय उपपद्यते।।१८।।

इस तरह मनुष्य का शरीर (और उसके गुण) और धार्मिक ज्ञान और जानने के योग्य (ईश्वर के बारे में तुम्हें) संक्षिप्त में कहा गया। (ईश्वर ने कहा कि) यह सब जानकर मेरी भक्ति करने वाले (भक्त) मेरी इच्छा पर चलाने वाला स्वभाव पर लेते है।

(इति) इस तरह (क्षेत्रम्) मनुष्य का शरीर (और उसके गुण) (तथा) और (ज्ञानम्) धार्मिक ज्ञान (च) और (ज्ञेय) जानने के योग्य (ईश्वर के बारे में तुम्हें) (समासतः) संक्षिप्त में (उत्क्तम्) कहा गया (ईश्वर ने कहा कि) (एतत्) यह सब (विज्ञाय) जानकर (मत) मेरी (भक्तः) भक्ति करने वाले (भक्त) (मत) मेरी (भावाय) इच्छा पर चलाने वाला स्वभाव (उपपद्यते) पर लेते हैं।

नोट १३.१७ समाज में ऐसी विचारधारा है कि प्राणियों को ब्रह्माजी उत्पन्न करते हैं। विष्णु जी पालते हैं और शंकरजी अन्त करते हैं। किन्तु ईश्वर ने इस श्लोक में इस विश्वास का खंडन किया है। (ईश्वर अविभाजित है, अर्थात उत्पन्न करने वाला, पालने वाला और मारने वाला है। यह तीन काम तीन ईश्वर नहीं करते, बल्कि एक ही ईश्वर तीनों काम करता है।) प्राणियों को विभाजित किया है का अर्थ है सभी प्राणी को अलग अलग काम पर लगाया है। कुत्ता सुरक्षा करता है, बैल खेत में काम करता है। घोडा सवारी के काम आता है इत्यादि।

समाज में ऐसी विचारधारा है की प्राणीयों को ब्रह्माजी उत्पन्न करते है। विष्णु जी पालते है और शंकरजी अन्त करते हैं। किन्तु ईश्वर ने इस श्लोक में इस विश्वास का खंडन किया है। और कहा है की तीनों कर्म ईश्वर स्वयम् करते है।

नोट १३.१७ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''ईश्वर ने किसी को अपनी औलाद (संतान) नहीं बनाया है। और कोई दूसरा खुदा उसके साथ नहीं है। अगर ऐसा होता तो हर खुदा अपनी सृष्टि को लेकर अलग हो जाता और फिर वे एक-दूसरे पर (लड़ने के लिए) चढ दोड़ते। पाक है ईश्वर उन बातों से जो ये लोग बनाते है।'' (सूरे अल मोमिनून-२३, आयत-९१)

१३.१९

प्रकृतिम् पुरुषम् च एव विद्धि अनादी उभौ अपि।
विकारान् च गुणान् च एव विद्धि प्रकृति सम्भवान् ।।१९।।

नि:संदेह भाग्य और मनुष्य दोनों भी (eternal) अनादि ईश्वर से जानो। मनुष्य के शरीर में जो बदलाव होता है और मनुष्य में जो गुण हैं, नि:संदेह (ईश्वर की) प्राकृतिक शक्ति से उत्पन्न किए जाते हैं ऐसा जानो।

(एरां) नि:संदेह (प्रकृतिम्) भाग्य (च) और (पुरुषम्) मनुष्य (उभौ) दोनों भी (अनादि) (eternal) ईश्वर से (विद्धि) जानो (विकारान्) मनुष्य के शरीर में जो बदलाव होता है (च) और (गुणान्) मनुष्य में जो गुण हैं (च) नि:संदेह (प्रकृति) (ईश्वर की) प्राकृतिक शक्ति से (सम्भवान्) उत्पन्न किए जाते हैं (विद्धि) ऐसा जानो।

१३.२०

कार्य कारण कर्तुत्वे हेतु: प्रकृति: उच्यते।
पुरुष: सुख दु:खानाम् भोक्तृत्वे हेतु: उच्यते।।२०।।

ईश्वर ने कहा, कर्म करने के कारण, कर्मों को करने वाला (यह सब) भाग्य के कारण होते है। ईश्वर यह भी कह रहा है कि मनुष्य सुख-दु:ख का जो अनुभव करता है उसका कारण भी भाग्य है।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा (कर्म) कर्म (कारण) कर्म करने के कारण (कर्तृत्वे) कर्मों को करने वाला (प्रकृति:) (यह सब) भाग्य (हेतु) के कारण होते हैं। (उच्यते) ईश्वर यह भी कह रहा है कि (पुरुष:) मनुष्य (सुख) सुख (दुखानाम्) दु:ख (भोक्तृत्वे) का जो अनुभव करता है (हेतु:) उसका कारण भी भाग्य है।

नोट १३.२० पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''क्या जिस चीज़ की मनुष्य कामना (इच्छा) करता है वह उसे अवश्य मिलती है? यह संसार और परलोक (मृत्यु के बाद का लोक) तो ईश्वर के ही हाथ में है।'' (सूरह अन नजम-५३, आयत-२४-२५) (अनुवाद फतेह मोहम्मद साहब) (अर्थात दोनों लोकों में जो मिलेगा ईश्वर के आदेश के अनुसार मिलेगा। हमारी इच्छाओं के अनुसार नहीं)

भाग्य, ईश्वर और ईश्वर के शासन को पहचानीए:-

१३.२१

पुरुषः प्रकृतिस्थः हि भुङक्ते प्रकृति-जान् गुणान्।
कारणम् गुण-सङ्‌ः अस्य सत् असत् योनि जन्मसु।।२१।।

भाग्य में विश्वास रखने वाला मनुष्य अनुभव करते हैं कि मनुष्य के गुण, और कर्म करने के कारण, भाग्य से ही उत्पन्न होते हैं और मनुष्य वीर्य स्थिती से ही (सत्य) अच्छे और बुरे गुणों के साथ जन्म लेता है।

(प्रकृतिस्थः) भाग्य में विश्वास रखने वाला (पुरुष) मनुष्य (भुङ्क्ते) अनुभव करते हैं की (गुणान्) मनुष्य के गुण (कारणम्) (और) कर्म करने के कारण (प्रकृति) भाग्य से ही उत्पन्न होते है। (अस्य) (और) मनुष्य (योनि) वीर्य स्थिती से ही (सत्) अच्छे (असत्) असत्य बुरे (गुण) गुणों (सडग) के साथ (जन्मसु) जन्म लेता है।

नोट नं. १३.२१ पंडित ईश्वरचंद ने अपने संस्कृत हिन्दी शब्दकोश में पेज नं. ५७७ पर प्रकृति के दो अर्थ लिखे हैं।

१. माया
२. सृष्टि रचना में परमात्मा की इच्छा

माया यह ईश्वर की मनुष्य की परीक्षा लेने की एक प्रणाली है। ईश्वर ने मनुष्य का भाग्य भी उसके परीक्षा लेने के अनुसार बनाया है।
इसी प्रकार परमात्मा ने जो सृष्टि रची है मनुष्य भी सृष्टि का एक भाग है।
जब संसार में वर्षा होती है। या मौसम बदलता है तो हम कहते है यह सृष्टि का नियम है। और जब मनुष्य के जीवन में हालात बदलते हैं,तो हम कहते हैं, यह मनुष्य का भाग्य है किन्तु दोनों ही परमात्मा की इच्छा है। इस कारण जब सृष्टि शब्द किसी श्लोक में संसार के लिए उपयोग होगा तो हम उसे सृष्टि ही कहेंगे और जब मनुष्य के लिए सृष्टि शब्द का उपयोग होगा तो हम उसे मनुष्य का भाग्य समझेंगे।
श्लोक नं. १३.२१ में इसी लिए हमने सृष्टि का अनुवाद 'भाग्य' किया है और इससे श्लोक का अर्थ भी अच्छी तरह समझ में आता है।

नोट १३.२१ (ईश्वर को न मानने वालों से) कहों, हमें हरगिज़ कोई (बुराई या भलाई या हानि और लाभ) नहीं पहुंचती मगर वह जो ईश्वर ने हमारे लिए लिख दी है। ईश्वर ही हमारा संरक्षक मित्र है, और इमान वालों को (ईश्वर में श्रद्धा रखने वालों को) उसी पर भरोसा करना चाहिए। (सूरह अत तौबा-९, आयत-५१)

१३.२२

उपद्रष्टा अनुमन्ता भर्ता भोक्ता महा-ईश्वरः।
परम् आत्मा इति च अपि उक्तः देहे अस्मिन्
पुरुषः परः।।२२।।

ईश्वर साक्षी है (अर्थात सृष्टि में आरम्भ से अन्त तक जो हो चुका और होगा वह उसे देख रहा है।) ब्रह्माण्ड में जो कुछ होता है वह उसके आदेश से होता है और (वह) प्राणियों का पालन पोषण करता है। सारी प्रार्थनाएं उसी ईश्वर के लिए की जाती हैं। वह ईश्वर सबसे महान है और (ईश्वर) कह रहा है कि, निःसंदेह वह इस शरीर वाले मनुष्य होने से परे है (महान है), और आत्मा से भी महान है।

(अदृष्टा) ईश्वर साक्षी है (अर्थात सृष्टि में आरम्भ से अन्त तक जो हो चुका और होगा वह उसे देख रहा है।) (अनुमन्ता) ब्रह्माण्ड में जो कुछ होता है वह उसके आदेश से होता है। (च) और (वह) (भर्ता) प्राणियों का पालन पोषण करता है (भोक्ता) सारी प्रार्थनाएं उसी ईश्वर के लिए की जाती हैं। (महा-ईश्वरः) वह ईश्वर सबसे महान है। (च) और (उक्तः) (ईश्वर) कह रहा है की (इति अपि) निःसंदेह वह (अस्मिन) इस (देहे) शरीर वाले (पुरुषः) मनुष्य होने से (परः) परे है (महान है) (परम् आत्मा) और आत्मा से भी महान है।

नोट : ईश्वर शरीर और आत्मा दोनों से परे है, उच्चतम है, महान है। इस कारण वह शरीर या आत्मा के रुप कभी नहीं आएगा और आत्मा भी उसमें नहीं समाएगी।

१३.२३

य एवम् वेत्ति पुरुषम् प्रकृतिम् च गुणैः सह।
सर्वथा वर्तमानः अपि न सः भूयः
अभिजायते।।२३।।

इस तरह जो व्यक्ति भाग्य को, और मनुष्य को गुणों के साथ जान लेता है, और हर तरफ जो कुछ हो रहा है (अर्थ जो कुछ हो रहा है वह भाग्य और ईश्वर के आदेश से हो रहा है ऐसा मान लेता है तो) निःसंदेह वह (नरक में) बार बार जन्म नहीं लेता है।

(एराम्) इस तरह (यः) जो व्यक्ति (प्रकृतिम्) भाग्य को (च) और (पुरुषम्) मनुष्य को (गुणैःसह) गुणों के साथ (वेत्ति) जान लेता है (सर्वथा) और हर तरफ (वर्तमानः) जो कुछ हो रहा है (अर्थ जो कुछ हो रहा है वह भाग्य और ईश्वर के आदेश से हो रहा है ऐसा मान लेता है तो) (अपि) निःसंदेह (सः) वह (भूयः) बार बार जन्म नहीं लेता है।

नोट १३.२२ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, कोई मुसीबत ऐसी नहीं जो ज़मीन में या तुम्हारे अपने ऊपर उतरती हो और हमने उसको पैदा करने से पहले एक किताब (अर्थात भाग्य-पत्रिका) में लिख न रखा हो। ऐसा करना ईश्वर के लिए बहुत आसान काम है। (सूरह-अल हदीद-५७, आयत-२२)
(अर्थात जो कुछ भाग्य पत्रिका में लिखा है वैसा ही सुख-दुःख मनुष्य के जीवन में और संसार में ईश्वर भेजता है।)

१३.२४

ध्यानेन आत्मनि पश्यन्ति केचित् आत्मानम् आत्मना।
अन्ये साड्ख्येन योगेन कर्म-योगेन च अपरे।।२४।।

कुछ लोग स्वयं से (स्वयम्) विचार करके। दूसरे (कुछ लोग) अपने मन और बुद्धि को वेदों के ज्ञान से जोड़कर (अर्थात ज्ञान द्वारा)। कुछ दूसरे लोग अपने कर्मों को (ईश्वर के आदेश से) जोड़कर (अर्थात सत्यकर्म करके), ईश्वर को पहचानते हैं (ईश्वर का अनुभव करते हैं। विवेक प्राप्त करते हैं)

(केचित्) कुछ लोग (आत्मनि) स्वयं से (स्वयम) (ध्यानेन) विचार करके (अन्ये) दूसरे (कुछ लोग) (आत्मना) अपने मन और बुद्धि को (साड्ख्येन) वेदों के ज्ञान से (योगित) जोड़कर (अर्थात ज्ञान द्वारा) (अन्ये) कुछ दुसरे लोग (कर्म) अपने कर्मो को (योगेन) (ईश्वर के आदेश से) जोड़कर (अर्थात सत्यकर्म करके) (आत्मानाम्) ईश्वर को (पश्यान्ति) पहचानते हैं (ईश्वर का अनुभव करते हैं। विवेक प्राप्त करते हैं)

१३.२५

अन्ये तु एवम् अजानन्तः श्रुत्वा अन्येभ्यः उपासते।
ते अपि च अतितरन्ति एव मृत्युम् श्रुति-परायणाः।।२५।।

इस तरह (इन तीनों प्रकार से) (ईश्वर को) न जानते हुए कुछ लोग दूसरों से (ईश्वर के बारे में) सुनकर ईश्वर की प्रार्थना करते हैं और यह सुनकर कर्म करने वाले भी निःसंदेह मृत्यु स्थान (नर्क) पार कर जाते हैं (स्वर्ग प्राप्त करते हैं)।

(तु एवम्) इस तरह (इन तीनों प्रकार से) (अजानन्तः) (ईश्वर को) न जानते हुए (अन्ये) कुछ लोग (अन्येभ्यः) दुसरों से (ईश्वर के बारे में) (श्रुत्वा) सुनकर (उपासते) ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। (च) और (त) यह (श्रुति) सुनकर (परायणाः) कर्म करने वाले (अपि) भी (एवं) निःसंदेह (मृत्युम्) मृत्यु स्थान (नर्क) (अतितरन्ति) पार कर जाते हैं (स्वर्ग प्राप्त करते हैं)।

इस संसार को किस दृष्टी से देखना चाहिएः-

१३.२६

यावत् सज्जायते किन्वित् सत्वम् स्थावर जडमम्।
क्षेत्र क्षेत्र-ज्ञ संयोगात् तत् विद्धि भरत-ऋषभ।।२६।।

जो कुछ भी अस्तित्व में आ रहा है, इस ब्रह्माण्ड में, रुकी हुई (अजीवित) (या) गतिशील (जीवित), हे भरत वंशियो में श्रेष्ठ (अर्जुन)! इस सत्य को जान लो कि वह मनुष्य और ईश्वर के संयोग से (एक साथ मिलने से है)

(यावत्) जो (किन्वित्) कुछ भी (सज्जायते) अस्तित्व में आ रहा है (सत्वम्) इस ब्रह्माण्ड में (स्थावर) रुकी हुई (अजीवित) (जडमम्) (या) गतिशील (जीवित) (भरतः ऋषभ) हे भरत वंशियो में श्रेष्ठ (अर्जुन) (विद्धि) इस सत्य को जान लो कि (तत) वह (क्षेत्र) मनुष्य (क्षेत्र-ज्ञ) और ईश्वर के (संयोगात) संयोग से (एक साथ मिलने से है)

(**नोट :** ईश्वर को मनुष्य की रचना करना था तो ब्रह्माण्ड बनाया। अन्न देना था तो पृथ्वी पर वर्षा की, पेड पौधा उगाए। मारना होता है तो भुकंप आता है। इस तरह इस ब्रह्माण्ड में जो कुछ होता है वह ईश्वर द्वारा मनुष्य के लिए ही किया जाता है।)

१ ३ . २ ७

समम् सर्वेषु भूतेषु तिष्ठन्तम् परम-ईश्वरम।
विनश्यत्सु अविनश्यन्तम् यः पश्यति सः पश्यति।।२७।।

(वह) जो सम्पूर्ण प्राणियों को महान ईश्वर के समान नियम के अनुसार स्थित देखता है। (अर्थात नाशवान प्राणियों को) अविनाशी ईश्वर (से स्थित देखता है) (तो) वह (वास्तव में सही) देखता है।

(यः) (वह) जो (सर्वेषु) सम्पूर्ण (भुतेषु) प्राणियों को (परम-ईश्वरम्) महान ईश्वर के (समम्) समान नियम के अनुसार (तिष्ठतम्) स्थित (पश्यति) देखता है। (विनश्यत्सु) (अर्थात नाशवान प्राणियों को) (अविनश्यन्तम्) अविनाशी ईश्वर (से स्थित देखता है) (सः) (तो) वह (पश्यति) (वास्तव में सही) देखता है।

१ ३ . २ ८

समम् पश्यन् हि सर्वत्र समवस्थितम् ईश्वरम् ।
न हिनस्ति आत्मना आत्मानम् ततः याति पराम् गतिम् ।।२८।।

(जब कोई व्यक्ति) ईश्वर के समान प्राकृतिक नियमों को हर जगह समान रुप से लागू देखता है, तब नि:संदेह (वह) न अपने मन को (और न) अपनी आत्मा को नष्ट करता है। (और वह जीवन के) सबसे महान लक्ष्य (अर्थात स्वर्ग को भी) पा लेता है।

(ईश्वरम्) (जब कोई व्यक्ति) ईश्वर के (समम्) समान प्राकृतिक नियमों को (सर्वत्र) हर जगह (समवस्थितम्) समान रुप से लागू (पश्यन्) देखता है (तत) तब (हि) नि:संदेह (न) न (वह) (आत्मना) अपने मन को (आत्मानम्) (और न) अपनी आत्मा को (हिनस्ति) नष्ट करता है (पराम् गतिम्) (और वह जीवन के) सबसे महान लक्ष्य (अर्थात स्वर्ग को भी) (याति) पा लेता है।

१ ३ . २ ९

प्रकृत्या एव च कर्माणि क्रियमाणानि सर्वशः।
यः पश्यति तथा आत्मनम् अकर्तारम् सः पश्यति।।२९।।

वह जो यह देखता है कि सारे कर्म भाग्य से (ईश्वर के आदेश से ही) किए जाते हैं और (वह अनुभव करता है कि) वह स्वयम कुछ नहीं करता है। तब नि:संदेह, वह विवेक वाला है। (ईश्वर को पहचानने वाला है)

(यः) वह जो (पश्यति) यह देखता है कि (सर्वश) सारे (कर्माणि) काम या कर्म (प्रकृत्या) भाग्य से (ईश्वर के आदेश से ही) (क्रियमाणानि) किए जाते हैं (तथा) और (वह अनुभव करता है कि) (आत्मनम्) वह स्वयम् (अकर्तारम्) कुछ नहीं करता है (एव च) तब नि:संदेह (सः) वह (पश्यति) विवेक वाला है। (ईश्वर को पहचानने वाला है)

प्राणियों में जिवन का स्त्रोत ईश्वर है:-

१३.३०

यदा भूत पृथक भावम् एक-स्थम् अनुपश्यति।
ततः एव च विस्तारम् ब्रह्म सम्पद्यते तदा।।३०।।

जब कोई अलग अलग स्वभाव के प्राणियों को और इस फैलते हुए ब्रह्माण्ड को एक (ईश्वर से) स्थित देखता है, तब वह नि:संदेह ईश्वर को पा लेता है।

नोट= वैज्ञानिकों के अनुसार ब्रह्माण्ड फैल रहा है।

(यदा) जब कोई (पृथक भावम्) अलग अलग स्वभाव के (भूत) प्राणियों को (च) और (विस्तारम्) इस फैलते हुए ब्रह्माण्ड को (एक) एक (ईश्वर से) (स्थम्) स्थित (अनुपश्यति) देखता है (तदा) तब (ततः) वह (एव) नि:संदेह (ब्रह्म) ईश्वर को (सम्पद्यते) पा लेता है।

१३.३१

अनादित्वात् निर्गुणत्वात् परम आत्मा अयम् अव्ययः।
शरीर-स्थः अपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते।।३१।।

हे कुन्ति पुत्र (अर्जुन)। वह (ईश्वर) आरंभ के बिना है (अजन्म है)। (उसमें मनुष्य जैसे) गुण नहीं, ईश्वर महान है, अविनाशी है। वह हृदय में स्थित है, (किन्तु) (वह न) कुछ करता है (और) न (ही) किसी से जुड़ा है।

(कौन्तेय) हे कुन्ति पुत्र (अर्जुन) (अयम्) वह (ईश्वर) (अनादित्वात) आरंभ के बिना है (अजन्म है) (निर्गुणत्वात्) (उसमें मनुष्य जैसे) गुण नहीं (परम आत्मा) ईश्वर महान है (अव्यय) अविनाशी है (शरीर स्थः) वह शरीर (हृदय) में स्थित है (किन्तु) (करोति) (वह न) कुछ करता है (न) (और) न (ही) (लिप्यते) किसी से जुड़ा है।

१३.३२

यथा सर्व-गतम् सौक्ष्म्यात् आकाशम् न उपलिप्यते।
सर्वत्र अवस्थितः देहे तथा आत्मा न उपलिप्यते।।३२।।

जिस प्रकार सूक्ष्म आकाश सब जगह व्याप्त है, किन्तु किसी से जुड़ा नहीं है। इसी प्रकार ईश्वर (का तेज) सब जगह (और) शरीर में (भी) व्याप्त (फैला है, समाया हुआ है) (किन्तु) किसी से जुड़ा हुआ नहीं है।

(यथा) जिस प्रकार (सौक्ष्म्यात् आकाशम्) सूक्ष्म आकाश (सर्वगतम्) सब जगह व्याप्त है (न उपलिप्यते) किन्तु किसी से जुड़ा नहीं है (तथा) इसी प्रकार (आत्मा) ईश्वर (का तेज) (सर्वत्र) सब जगह (देहे) (और) शरीर में (भी) (अवस्थितः) व्याप्त (फैला है, समाया हुआ है) (उपलिप्यते) (किन्तु) किसी से जुड़ा हुआ नहीं है।

नोट : शरीर में ईश्वर के तेज को समझने के लिए नोट नं.N-१ में प्राण का अध्ययन करें।

वह ज्ञान और श्रद्धा जिसके कारण स्वर्ग प्राप्त होता हैः-

१३.३३

यथा प्रकाशयति एकः कृत्सनम् लोकम् इमम् रविः।
क्षेत्रम् क्षेत्री तथा कृत्स्नम् प्रकाशयति भारत।।३३।।

हे अर्जुन जिस प्रकार एक सूर्य इस (संसार को) प्रकाशित (जीवित) करता है। इसी प्रकार इस शरीर को (केवल एक) ईश्वर (ही) प्रकाशित (जीवित) करता है।

(भारत) हे अर्जुन (यथा) जिस प्रकार (एक) एक (रविः) सूर्य (इनम्) इस (संसार को) (प्रकाशयति) प्रकाशित (जीवित) (कृत्स्नम्) करता है (तथा) इसी प्रकार (क्षेत्रम्) इस शरीर को (क्षेत्री) (केवल एक) ईश्वर (ही) (प्रकाशयति) प्रकाशित (जीवित) (कृत्स्नम्) करता है।

१३.३४

क्षेत्र क्षेत्र-ज्ञयोः एवम् अन्तरम् ज्ञान-चुक्षुषा।
भूत प्रकृति मोक्षम् च ये विदुः यान्ति ते परम् ।।३४।।

जो लोग मनुष्य के शरीर को और मनुष्य को जानने वाले (ईश्वर के) अन्तर को ज्ञान की दृष्टि से देखते हैं। (ज्ञान के प्रकाश में देखते हैं और जानते हैं कि ईश्वर रचयिता है, मनुष्य रचना है। दोनों कभी एक नहीं हो सकते) इसी तरह (वह) प्राणियों को (और) प्रकृति (सृष्टि) को जानता है कि यह ईश्वर की रचना है और ईश्वर से क्षमा मिलने के मार्ग को भी जानता है, तो वह लोग ईश्वर के परमधाम (स्वर्ग) को पा लेते हैं।

(ये) जो लोग (क्षेत्र) मनुष्य के शरीर को (क्षेत्र-ज्ञयो) मनुष्य को जानने वाले (ईश्वर के) (अन्तरम्) अन्तर को (ज्ञान्) ज्ञान की (चक्षुषा) दृष्टि से देखते हैं। (ज्ञान के प्रकाश में देखते हैं और जानते हैं की ईश्वर रचयिता है, मनुष्य रचना है। दोनों कभी एक नहीं हो सकते) (एवम्) इसी तरह (वह) (भुत) प्राणियों को (और) (प्रकृति) प्रकृति (सृष्टि) को जानता है कि यह ईश्वर की रचना है। (च) और (मोक्षम्) ईश्वर से क्षमा मिलने के मार्ग को भी (विदू) जानता है (ते) वह लोग (परम) ईश्वर के परमधाम (स्वर्ग) को (यान्ति) पा लेते हैं।

नोट १३.३२ : ईश्वर के तेज के एक अंश से मनुष्य और यह ब्रह्माण्ड गति में है। मनुष्य इस संसार में परीक्षा दे रहा है। वह लक्ष्य बनाने और प्रयास करने के लिए स्वतंत्र है। केवल परिणाम मनुष्य के वश में नहीं हैं। परिणाम ईश्वर के नियंत्रण में है।

अध्याय- १४

गुण त्रय विभाग योग

श्रीभगवानुवाच
परं भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानं मानमुत्तमम्।
यज्ज्ञात्वा मुनयः सर्वे परां सिद्धिमितो गताः ॥1॥

इदं ज्ञानमुपाश्रित्य मम साधर्म्यमागताः।
सर्गेऽपि नोपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ॥2॥

मम योनिर्महद्ब्रह्म तस्मिन्गर्भं दधाम्यहम्।
सम्भवः सर्वभूतानां ततो भवति भारत ॥3॥

सर्वयोनिषु कौन्तेय मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासां ब्रह्म महद्योनिरहं बीजप्रदः पिता ॥4॥

सत्त्वं रजस्तम इति गुणाः प्रकृतिसम्भवाः।
निबध्नन्ति महाबाहो देहे देहिनमव्ययम् ॥5॥

तत्र सत्त्वं निर्मलत्वात्प्रकाशकमनामयम्।
सुखसङ्गेन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन चानघ ॥6॥

रजो रागात्मकं विद्धि तृष्णासङ्गसमुद्भवम्।
तन्निबध्नाति कौन्तेय कर्मसङ्गेन देहिनम् ॥7॥

तमस्त्वज्ञानजं विद्धि मोहनं सर्वदेहिनाम्।
प्रमादालस्यनिद्राभिस्तन्निबध्नाति भारत ॥8॥

सत्त्वं सुखे सञ्जयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानमावृत्य तु तमः प्रमादे सञ्जयत्युत ॥9॥

रजस्तमश्चाभिभूय सत्त्वं भवति भारत।
रजः सत्त्वं तमश्चैव तमः सत्त्वं रजस्तथा ॥10॥

सर्वद्वारेषु देहेऽस्मिन्प्रकाश उपजायते।
ज्ञानं यदा तदा विद्याद्विवृद्धं सत्त्वमित्युत ॥11॥

लोभः प्रवृत्तिरारम्भः कर्मणामशमः स्पृहा।
रजस्येतानि जायन्ते विवृद्धे भरतर्षभ ॥12॥

अप्रकाशोऽप्रवृत्तिश्च प्रमादो मोह एव च।
तमस्येतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ॥13॥

यदा सत्त्वे प्रवृद्धे तु प्रलयं याति देहभृत्।
तदोत्तमविदां लोकानमलान्प्रतिपद्यते ॥14॥

रजसि प्रलयं गत्वा कर्मसङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनस्तमसि मूढयोनिषु जायते ॥15॥

कर्मणः सुकृतस्याहुः सात्त्विकं निर्मलं फलम्।
रजसस्तु फलं दुःखमज्ञानं तमसः फलम् ॥16॥

सत्त्वात्सञ्जायते ज्ञानं रजसो लोभ एव च।
प्रमादमोहौ तमसो भवतोऽज्ञानमेव च ॥17॥

ऊर्ध्वं गच्छन्ति सत्त्वस्था मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः।
जघन्यगुणवृत्तिस्था अधो गच्छन्ति तामसाः ॥18॥

नान्यं गुणेभ्यः कर्तारं यदा द्रष्टानुपश्यति।
गुणेभ्यश्च परं वेत्ति मद्भावं सोऽधिगच्छति ॥19॥

गुणानेतानतीत्य त्रीन्देही देहसमुद्भवान्।
जन्ममृत्युजरादुःखैर्विमुक्तोऽमृतमश्नुते ॥20॥

अर्जुन उवाच
कैर्लिङ्गैस्त्रीन्गुणानेतानतीतो भवति प्रभो।
किमाचारः कथं चैतांस्त्रीन्गुणानतिवर्तते ॥21॥

श्रीभगवानुवाच
प्रकाशं च प्रवृत्तिं च मोहमेव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति ॥22॥

उदासीनवदासीनो गुणैर्यो न विचाल्यते।
गुणा वर्तन्त इत्येव योऽवतिष्ठति नेङ्गते ॥23॥

समदुःखसुखः स्वस्थः समलोष्टाश्मकाञ्चनः।
तुल्यप्रियाप्रियो धीरस्तुल्यनिन्दात्मसंस्तुतिः ॥24॥

मानापमानयोस्तुल्यस्तुल्यो मित्रारिपक्षयोः।
सर्वारम्भपरित्यागी गुणातीतः सा उच्यते ॥25॥

मां च योऽव्यभिचारेण भक्तियोगेन सेवते।
स गुणान्समतीत्येतान्ब्रह्मभूयाय कल्पते ॥26॥

ब्रह्मणो हि प्रतिष्ठाहममृतस्याव्ययस्य च।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्यैकान्तिकस्य च ॥27॥

अध्याय का परिचय

● अध्याय नं. २ में हमने जाना कि हमारे कुछ अनिवार्य कर्तव्य हैं।

अध्याय नं. ३ में हमने जाना कि धर्म में श्रद्धा और कर्म दोनों महत्त्वपूर्ण हैं।

अध्याय नं. ४ में हमने धार्मिक ज्ञान प्राप्त किया।

अध्याय नं. ५ में कर्म को गहराई से समझा और कर्म योग और कर्म सन्यास को जाना।

अध्याय-६ में हमने ध्यान योग सीखा।

अध्याय-७ से १३ तक हमने ईश्वर को पहचाना और हमारी ईश्वर में दृढ श्रद्धा हो गई।

इसके बाद क्या? क्या अब हमारा जीने का तरीका बदल जाएगा और हम ऋषि मुनि जैसा जीवन गुजारेंगे? कभी नहीं!

● यदि हमारा स्वभाव तमो गुण वाला है तो हम इस पुस्तक को प्रसाद की तरह हाथ में लेंगे। माथे से लगाऐंगे और घर में सबसे ऊपर की अलमारी में रखेंगे कि भूल से किसी का हाथ न लग जाए।

यदि हमारा स्वभाव रजो गुण वाला है तो हम इस दिव्य पुस्तक को अपने टेबल पर रखेंगे। हमारा दृढ संकल्प होगा कि हम इसे पढ़ेंगे और अमल भी करेंगे। किन्तु हाथ में जो काम है इसको खत्म करने के बाद और हमारे काम कभी खत्म नहीं होंगे।

यदि हम सत्वों गुण वाले हैं तो रोज सवेरे हम इसे पढ़ेंगे। प्रेरित होंगे। ईश्वर की प्रार्थना भी करेंगे और फिर सब कुछ घर पर छोड़ कर कारोबार में लग जाऐंगे। अर्थात सवेरे का १ घंटा ईश्वर की इच्छा अनुसार और बाकी २३ घंटे हमारे इच्छा के अनुसार और सवेरे के १ घंटे की प्रार्थना और अर्चना से हम संतुष्ट रहते हैं और अपने आप को धार्मिक समझते हैं।

● ईश्वर जिसने हमारी रचना की है वह हमारे इन स्वभावों से अच्छी तरह अवगत है। इस कारण यह अध्याय अवतरित किया है।

हवाई जहाज का अविष्कार १९०३ में हुआ। पहले विश्व युद्ध में हवाई जहाज का उपयोग हुआ किन्तु वह इतने साधारण थे कि बंदुक की गोली से भी गिराए जाते थे। तो जहाज़ के पायलट हमेशा डरे रहते कि कब कोई बम या गोली लगे और वह धरती पर आ जाएं।

अंग्रेज कई सौ साल से युद्ध कला में सबसे निपुर्ण रहे हैं। उन्होंने अपने पायलटों से कहा की तुम अपने आपको पहले से ही मरा हुआ मान लो और फिर युद्ध करो। पायलटों ने जब इस मानसिकता से युद्ध किया तो बहुत वीरता से लड़े।

● पैगंबर मुहम्मद (स.) ने एक तीस वर्ष के युवक अब्दुला इब्ने उमर से कहा कि तुम अपने आप को मरे हुए लोगों में गिनो।

(मस्नद इमाम अहमद कि हदीस)

वह युवक ८३ वर्ष की आयु तक जीवित रहे और उनकी गिनती इस्लाम के महान विद्वानों में होती है।

● इस अध्याय में यही सबसे महत्त्वपूर्ण उपदेश है। श्लोक नं. १४.२० में ईश्वर ने कहा अतीत व्यक्ति जो छोड़ देता है तीनों गुणों को, वह जन्म, मृत्यु, और बुढ़ापे के दु:ख से मुक्ति पाकर स्वर्ग प्राप्त करता है।

फिर अर्जुन श्लोक नं. १४.२१ में प्रश्न करते हैं कि (अतीत) की पहचान क्या है?

इसके उत्तर में ईश्वर ने १४.२२ से १४.२८ तक अतीत व्यक्ति के गुणों का वर्णन किया है।

- नालन्दा विशाल शब्द कोश (पेज नं. ३४) में अतीत शब्द के बहुत से अर्थ बताए है। उनमें से एक है ''मरा हुआ।''
- श्लोक नं. १४.२४ इस प्रकार है

(अतीत हुआ व्यक्ति) सुख दु:ख (में) एक समान रहता है। वह अपने आपको वश में रखता है। मिट्टी का ढेला, पत्थर, सोने का टुकड़ा (उसके लिए) एक समान है। मित्र और रिश्तेदारों, (और) वह लोग जो उसे पसंद नहीं है सबसे एक समान व्यवहार करता है। उसकी निन्दा करने पर या उसकी प्रशंसा करने पर धीरज रखता है, और एक समान रहता है।

सोचो वह व्यक्ति जो अपने आपको अमर समझता है क्या कभी ऐसी सोच रखेगा? कभी नहीं। हाँ ऐसा व्यक्ति जो यह कल्पना करे कि उसकी मृत्यु हो चुकी है। अब वह जो जीवित है तो यह अधिक जीवन अवधि उसे ईश्वर की ओर से उपहार मिला है। अब इस Extra time में वह ईश्वर की खूब (अधिक) प्रार्थना कर ले, सत्कर्म कर ले, जिससे उसे स्वर्ग में उच्च स्थान मिले तो उसके स्वभाव श्लोक नं. १४.२४ के अनुसार हो सकते हैं और यही इस अध्याय का उद्देश्य है।

अध्याय का सारांश

इस अध्याय में ईश्वर ने श्लोक नं. १४.१ से १४.५ तक अपना परिचय दिया। श्लोक नं. १४.६ से १४.१३ तक तीनों गुणों (सत्व, रजो, तमों गुणों) का वर्णन किया।

श्लोक नं. १४.१४ में सत्व गुण की प्रशंसा है किन्तु १४.१८ में कहा की तीनों गुण वाले नरक में जाऐंगे। (कारण पुण्य कर्म की कमी हो सकती है)

श्लोक नं. १४.२० से १४.२५ तक अतीत गुण का वर्णन है।

श्लोक नं. १४.२६ और १४.२७ में मानवजाति के लिए महत्त्वपूर्ण उपदेश है।

अध्याय

धार्मिक ज्ञान का महत्त्वः-

१४:१

(भगवान उवाच्) परम् भूयः प्रवक्ष्यामि ज्ञानानाम् ज्ञानम् उत्तमम्।
यत् ज्ञात्वा मुनयः सर्वे पराम् सिद्धिम् इतः गताः।।१।।

ईश्वर ने (कृष्ण जी के माध्यम से) कहा,
(अब मैं तुम्हें) दोबारा सब ज्ञानों में सबसे महान और दिव्य ज्ञान को कहूँगा जिसे जानकर सभी मुनियों ने इस (संसार में) ईश्वर की प्रार्थना में (Perfection) पूर्णता सिद्धि प्राप्त की।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने (कृष्ण जी के माध्यम से) कहा,
(भुयः) (अब मैं तुम्हें) दोबारा (ज्ञानानाम्) सब ज्ञानों में (उत्तमम्) सबसे महान और (परम) दिव्य (ज्ञानम्) ज्ञान को (प्रवक्ष्यामि) कहूँगा (यत) जिसे (ज्ञात्वा) जानकर (सर्वे) सभी (मुनयः) मुनियों ने (इतः) इस (संसार में) (पराम्) ईश्वर की प्रार्थना में (सिद्धिम्) (Perfection) पूर्णता सिद्धि (गता) प्राप्त की।

१४:२

इदम् ज्ञानम् उपाश्रित्य मम साधर्म्यम् आगताः।
सर्गे अपि न उपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च ।।२।।

इस ज्ञान के सहारे (जीवन व्यतीत करने से व्यक्ति) मेरी (इच्छा के अनुसार) स्वभाव (को) प्राप्त कर लेता है। और (फिर) न (ही) (इस) संसार में (और) न (ही) प्रलय के दिन फिर से जीवित किए जाने के बाद भी उसे किसी प्रकार की कठिनाई होगी।

(इदम्) इस (ज्ञानम्) ज्ञान के (उपाश्रित्य) सहारे (जीवन व्यतीत करने से व्यक्ति) (मम्) मेरी (साधर्म्यम्) (इच्छा के अनुसार) स्वभाव (को) (आगताः) प्राप्त कर लेता है। (च) और (फिर) (न) न (ही) (सर्गे) (इस) संसार में (न) (और) न (ही) (प्रलये) प्रलय के दिन (उपजायन्ते) फिर से जीवित किए जाने के बाद (अपि) भी (व्यथन्ति) उसे किसी प्रकार की कठिनाई होगी।

(नोटः नालन्दा विशाल शब्द सागर पेज नं. १६१ अनुसार उपजना का अर्थ है उत्पन्न होना। श्लोक नं.१५.८,१५.९ और १५.१० कुरआन के अनुसार, प्रलय के दिन ईश्वर सबको फिर जीवित करके कर्मों का हिसाब लेगा।)

प्राणियों के उत्पन्न होने का वर्णनः-

१४:३

मम् योनिः महत् ब्रह्म तस्मिन् गर्भम् दधामि अहम्।
सम्भवः सर्व-भूतानाम् ततः भवति भारत।।३।।

हे भारत (अर्जुन)! में (सबसे महान ईश्वर) ने ही गर्भ की रचना की है। (और फिर) मेरे निर्मित किए हुए वीर्य की इसमें (मैं परवरिश करता हूँ) और फिर इस तरह सम्पूर्ण प्राणियों का जन्म होता है।

(भारत) हे भारत (अर्जुन) (अहम्) में (महत्) सबसे महान (ब्रह्म) ईश्वर ने ही (गर्भम्) (गर्भ) की (दधामि) रचना की है। (मम्) (और फिर) मेरे (सम्भवः) निर्मित किए हुए (योनिः) वीर्य की (तस्मिन्) इसमें (मैं परवरिश करता हूँ) (ततः) और फिर इस तरह (सर्व) सम्पूर्ण (भूतानाम्) प्राणियों का (भवति) जन्म होता है।

१४:४

सर्व-योनिषु कौन्तेयु मूर्तयः सम्भवन्ति याः।
तासाम् ब्रह्म महत् योनिः अहम् बीजप्रदः पिता।।४।।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! सभी वीर्यों से जो (अलग अलग) आकार वाले शरीर निर्मित होते हैं। उन सभी वीर्य का महान ईश्वर और रचना का स्त्रोत (मूल कारण) और उसका निर्माण करने वाले (निर्माता) मैं हूँ।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) (सर्व) सभी (योनिषु) वीर्यों से (या) जो (मूर्तयः) (अलग अलग) आकार वाले शरीर (सम्भवन्ति) निर्मित होते हैं। (तासाम्) उन सभी (योनिः) वीर्य का (महत् ब्रह्म) महान ईश्वर (बीज) रचना का स्त्रोत (मूल कारण) (प्रदः) और उसका निर्माण करने वाले (पिता) (निर्माता) (अहम्) मैं हूँ।

१४:५

सत्वम् रजः तमः इति गुणाः प्रकृति सम्भवाः।
निबध्नन्ति महा-बाहो देहे देहिनम् अव्ययम् ।।५।।

हे महान भुजाओं वाले (अर्जुन)! सत्व, रजो, तमो गुण यह (तीन) गुण ईश्वर ने बनाए हैं। अविनाशी (ईश्वर ने) उन्हें शरीर वाले मनुष्य के शरीर से बांध दिया है।

(महा-बाहो) हे महान भुजाओं वाले (अर्जुन) (सत्वम्) सत्व (रजः) रजो (तमः) तमो (इति) यह (तीन) (गुणा) गुण (प्रकृति) ईश्वर ने (सम्भवाः) बनाए हैं। (अव्ययम्) अविनाशी (ईश्वर ने) उन्हें (देहिनम्) शरीर वाले मनुष्य के (देहे) शरीर से (निबध्नन्ति) बांध दिया है।

सत्व गुण की विशेषताएं :-

१४:६

तत्र सत्वम् निर्मलत्वात् प्रकाशकम् अनामयम।
सुख सडेगन बध्नाति ज्ञानसङ्गेन च अनघ।।६।।

हे पापरहित (अर्जुन)! उस (ईश्वर की ओर से प्रदान किए गए गुणों में जो) सत्वगुण है वह पवित्र करने वाला, प्रकाशित करने वाला, (मनुष्य को) पापों से मुक्त रखने वाला (गुण है)। (कारण कि यह) धार्मिक ज्ञान के साथ मनुष्य को बाँधकर सुख-शान्ति से जोड़ देता है।

(अनघ) हे पापरहित (अर्जुन) (तत्र) उस (ईश्वर की ओर से प्रदान किए गए गुणों में जो) (सत्वम्) सत्वगुण है (निर्मलत्वात्) वह पवित्र करने वाला (प्रकाशकम्) प्रकाशित करने वाला (अनामयम्) (मनुष्य को) पापों से मुक्त रखने वाला (गुण है) (ज्ञान) (कारण कि यह) धार्मिक ज्ञान (सङ्गेन) के साथ (बध्नाति) मनुष्य को बाँधकर (सुख) सुख-शान्ति से (सडेन) जोड़ देता है।

रजो गुण की विशेषताएं:-

१४:७

रजो राग-आत्मकम् विद्धि तृष्णा सड् समुद् भवम।
तत् निबध्नाति कौन्तेय कर्मसड्रेन देहिनम् ।।७।।

(रजो) रजो गुण (राग-आत्मकम्) जोश, राग, उत्साह, वासना की भावना उत्पन्न करता है। (विद्धि) (इस बात को अच्छी तरह) समझ लो कि

रजो गुण जोश, राग, उत्साह, वासना की भावना उत्पन्न करता है। (इस बात को अच्छी तरह) समझ लो कि इस गुण से मनुष्य में लोभ (लालच की) भावना पैदा हो जाती है। हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! यह लोभ ही मनुष्य को निरंतर काम करने के साथ बांध देती है।

(इस गुण) से (देहिनम्) मनुष्य में (तृष्णा) लोभ (लालच की) (सङ्ग समुदभवम्) भावना पैदा हो जाती है। (कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! (तत्) यह लोभ ही मनुष्य को (कर्म सङ्गेन) निरंतर काम करने के साथ (निबध्नाति) बांध देती है।

तमो गुण की विशेषताएं :-

१४:८

तमः तु अज्ञान-जम् विद्धि मोहनम् सर्व देहिनाम् प्रमाद आलस्य निद्राभिः तत् निबध्नाति भारत।।८।।

किन्तु तमो गुण अज्ञान से उत्पन्न होती है। हे अर्जुन! (इस बात को) समझ लो कि सम्पूर्ण देहधारी मनुष्य (इसी गुण के कारण) भ्रम में हैं। यह गुण मनुष्य को लापरवाही, आलस (सुस्ती) और निद्रा से बाँध देता है।

(तु) किन्तु (तमः) तमो गुण (अज्ञान) अज्ञान से (जम्) उत्पन्न होती है। (भारत) हे अर्जुन (विद्धि) (इस बात को) समझ लो कि (सर्व) सम्पूर्ण (देहिनाम्) देहधारी मनुष्य (मोहनम्) (इसी गुण के कारण) भ्रम में हैं। (तत) यह (गुण मनुष्य को) (प्रमाद) लापरवाही (आलस्य) आलस (सुस्ती) (निद्रभी) (और) निद्रा से (निबध्नाति) बाँध देता है।

मनुष्य पर गुणों का प्रभाव :-

१४:९

सत्त्वम् सुखे सन्जयति रजः कर्मणि भारत।
ज्ञानम् आवृत्य तु तमः प्रमादे सन्जयति उत।।९।।

ईश्वर ने कहा, हे भारत (अर्जुन)! सत्व गुण सुख शान्ति (से) बाँधता है। रजो गुण (निरंतर) काम में लगाता है। किन्तु तमोगुण ज्ञान को ढक देता है, (और) लापरवाही (से) बाँध देता है।

(उत) ईश्वर ने कहा (भारत) हे भारत (अर्जुन) (सत्त्वम्) सत्व गुण (सुखे) सुख शान्ति (से) (सन्जयति) बाँधता है (रजः) रजो गुण (कर्मणि) (निरंतर) काम में लगाता है (तु) किन्तु (तम) तमोगुण (ज्ञानम् आवृत्य) ज्ञान को ढक देता है (और) (प्रमादे) लापरवाही (से) (सन्जयति) बाँध देता है।

१४:१०

रजः तमः च अभिभूय सत्वम् भवति भारत।
रजः सत्वम् तमः च एव तमः सत्वम् रजः तथा।।१०।।

हे भारत (अर्जुन)। (कभी) सत्वगुण रजो गुण और तमो गुण को दबाकर प्रबल हो जाती है। और इसी तरह कभी रजो गुण सत्व गुण और तमो गुण (से आगे बढ़ जाती है) और इस तरह कभी तमो गुण सत्व गुण और रजो गुण से आगे बढ़ जाती है।

(भारत) हे भारत (अर्जुन) (सत्वम्) (कभी) सत्वगुण (रजः तमः) रजो गुण और तमो गुण (अभिभूय) को दबाकर (प्रमुख/प्रबल) (भवति) हो जाती है। (च) और (इसी तरह कभी) (रजः) रजो गुण (सत्त्वम् तमः) सत्व गुण और तमो गुण (में आगे बढ़ जाती है) (च एवं) और (इस तरह कभी) (तमः) तमो गुण (सत्वम् रजः तथा) सत्व गुण और रजो गुण से आगे बढ़ जाती है।

सत्व गुण प्रबल होने के चिन्हः-

१४:११

सर्व-द्वारेषु देहे अस्मिन् प्रकाशः उपजायते।
ज्ञानम् यदा तदा विद्यात् विवृदधम् सत्वम् इति उत।।११।।

(ईश्वर) इस तरह कह रहा है कि जब इस शरीर के सारे द्वारों में ज्ञान का प्रकाश प्रकट होने लगे, तब यह समझ लो कि सत्व गुण बढ़ा हुआ है।

(शरीर के द्वारों में ज्ञान का प्रकाश प्रकट होने का अर्थ है कि शरीर के अंग धार्मिक ज्ञान के अनुसार ही काम करने लगें।)

(इति) (ईश्वर) इस तरह (उत) कर रहा है कि (यदा) जब (अस्मिन्) इस (देहे) शरीर के (सर्व) सारे (द्वारेषु) द्वारों में (ज्ञानम्) ज्ञान का (प्रकाशः) प्रकाश (उपजायते) प्रकट होने लगे (तदा) तब (विद्यात्) यह समझ लो कि (सत्वम्) सत्व गुण (विवृद्धम्) बढ़ा हुआ है।

रजो गुण प्रबल होने के चिन्ह :-

१४:१२

लोभः प्रवृत्तिः आरम्भः कर्मणाम् अशमः स्पृहा।
रजसि एतानि जायन्ते विवृद्धे भरत-ऋषभ।।१२।।

हे भारत वंशियों में श्रेष्ठ (अर्जुन)! लालच में वृद्धि (बढ़त)। व्यापार के काम में व्यस्त रहना, अशान्ति, (बेकाबू) इच्छाएँ। यह सब उत्पन्न होते हैं रजो गुण के बढ़ने से है।

(भरत-ऋषभ) हे भारत वंशियों में श्रेष्ठ (अर्जुन) (लोभः) लालच में (प्रवृत्तिः) वृद्धि (बढ़त) (आरम्भः कर्मणाम्) व्यापार के काम में व्यस्त रहना। (अशमः) अशान्ति (स्पृहा) (बेकाबू) इच्छाएँ (ऐतानि) यह सब (जायन्ते) उत्पन्न होते हैं (रजसि) रजो गुण (के) (विवृद्धे) वृद्धि (बढ़ने से)।

तमो गुण प्रबल होने के चिन्ह :-

१४:१३

अप्रकाशः अप्रवृत्तिः च प्रमादः मोहः एव च।
तमसि एतानि जायन्ते विवृद्धे कुरुनन्दन ।।१३।।

हे अर्जुन! तमो गुण के बढ़ने से निसंदेह लापरवाही और अज्ञानता और (चरित्र) में गिरावट यह सारे (गुण) उत्पन्न होते हैं।

(कुरुनन्दन) हे अर्जुन (तमसि) तमो गुण के (विवृद्धे) बढ़ने से (एव) निसंदेह (प्रमाद) लापरवाही (च) और (अप्रकाशः) अज्ञानता (च) और (अप्रकृत्तिः) (चरित्र) में गिरावट (एतानि) यह सारे (जायन्ते) (गुण) उत्पन्न होते हैं।

सत्व गुण प्रबल होने का महत्त्व :-

१४:१४

यदा सत्वे प्रवृद्धे तु प्रलयम् याति देह-भृत् ।
तथा उत्तम-विदाम् लोकान् अमलान् प्रतिपद्यते।।१४।।

(किन्तु) जब (जीवन के) अन्त होने तक (मृत्यु के समय तक) शरीर वाले मनुष्य के सत्व गुण (में) बढ़त होती रहे। तब ऐसा मनुष्य मृत्यु के बाद बड़े विद्वानों के पवित्र लोक (स्वर्ग को) प्राप्त करेगा।

(तु) (किन्तु) (यदा) जब (प्रलयम्) (जीवन के) अन्त (याति) होने तक (मृत्यु के समय तक) (देह) शरीर वाले (भृत्) मनुष्य के (सत्वे) सत्व गुण (मे) (प्रवृद्धे) बढ़त होती रहे (तद) तब (ऐसा मनुष्य मृत्यु के बाद) (उत्तम) बड़े (विदाम) विद्वानों के (अमलान्) पवित्र (लोकान्) लोक (स्वर्ग को) (प्रतिपद्यते) प्राप्त करेगा।

नोट १४:१४

पवित्र कुरआन में स्वर्ग में जाने वालो का निम्निलिखीत उल्लेख है।
(स्वर्ग में)सदैव रहने के बाग है,जिनमें वे प्रवेश करेगें। वहाँ उन्हे सोने के कंगनो और मोती से आभूषित क्यिा जाएगा। और वहाँ उनके वस्त्र रेशम के होंगे । और वे कहेगें , ''सब प्रशंसा ईश्वर के लिए है जिसने हम से गम दूर कर दिया। निश्चय ही हमारा ईश्वर अतयंत क्षमाशील ,बडा गुणग्राहक है। जिसने हमें अपने उदार अनुग्रह से रहने के ऐसे घर में उतारा जहाँ न हमें कोई कठिनाई उठानी पडती है और न कोई थकान ही आती है। रहे वे लोग जिन्होने इन्कार किया, उनके लिए नर्क की आग है,न उनका काम तमाम किया जाएगा कि मर जाएँ और न उमसे उनकी यातना ही कुछ हलकी की जाएगी । हम ऐसा ही बदला प्रत्येक अकृतज्ञ को देते हैं। वे वहाँ चिल्लाएँगे की,''हे हमारे ईश्वर हमें नर्क से निकाल ले । हम अच्छा कर्म करेगें,उससे भिन्न जो हम करते रहे''। (ईश्वर कहेगा) क्या हम ने तुम्हे इतनी आयु नही दी की जिसमें कोई होश में आना चाहता तो होश में आ जाता? और तुम्हारे पास सचेतकर्ता भी आया था, तो अब मजा चखते रहो! जालिमो(पापियों) को कोई सहायत नहीं ।
(सूरह फातिर:३५आयत ३३:३७)

रजो और तमो गुण नरक में ले जाएगा :-

१४:१५

रजसि प्रलयम् गत्वा कर्म-सङ्गिषु जायते।
तथा प्रलीनः तमसि मूढयोनिषु जायते।।१५।।

जीवन के अंत के बाद रजो गुण वाले नर्क में नया जीवन पाएंगे उन लोगों में जो जीवन में निंरतर काम में लगे थे। इस तरह जीवन के अंत के बाद तमो गुण वाले नर्क में नया जीवन पाऐंगे मूर्खों के समूह में।

(श्लोक नं. १४.१८ में हे की तीनों गुण वाले नर्क में जाऐंगे। इनमें रजोगुण और तमोगुण वालों का वर्णन निम्नलिखित है।)

(प्रलयम्) जीवन के अंत (के बाद) (रजसि) रजो गुण वाले (जायते) (नर्क में) नया जीवन (गत्वा) पाएंगे (कर्म-सङ्गिषु) उन लोगों में जो जीवन में निंरतर काम में लगे थे। (तथा) इस तरह (प्रलीन:) जीवन के अंत (के बाद) (तमसि) तमो गुण वाले (नर्क में) (जायते) नया जीवन पाऐंगे (मूढयोनिषु) मूर्खों के समूह में।

कर्मों पर गुणों का प्रभाव :-

१४:१६

कर्मणः सु-कृतस्य आहुः सात्विकम् निर्मलम् फलम्।
रजसः तु फलम् दुःखम् अज्ञानम् तमसः फलम् ।।१६।।

ईश्वर ने कहा सत्व गुण के कारण शुभ कर्म होते हैं और उनका फल भी निर्मल पवित्र होता है। रजो गुण के कारण किए गए कर्मों का फल (परिणाम) कष्ट वाला होता है। (और) तमो गुण के कारण (किए गए कर्मों का) फल (परिणाम) अज्ञान ही होता है।

(आहु) ईश्वर ने कहा (सात्विकम्) सत्व गुण के कारण (सु-कर्मण) शुभ कर्म (कृतस्य) होते हैं (फलम्) और उनका फल भी (निर्मलम्) निर्मल (पवित्र होता है) (रजस:) रजो गुण के कारण (किए गए कर्मों का) (फलम्) फल (परिणाम) (दु:खम्) कष्ट वाला होता है। (और) (तमस:) तमो गुण के कारण (किए गए कर्मों का) (फलम्) फल (परिणाम) (अज्ञानम्) अज्ञान (मूर्खता) ही होता है।

सोच-विचार पर गुणों का प्रभाव :-

१४:१७

सत्वात् सन्जायते ज्ञानम् रजसः लोभः एव च।
प्रमाद मोहौ तमसः भवतः अज्ञानम् एव च।।१७।।

सत्वात् सन्जायते ज्ञानम् रजसः लोभः एव च।
प्रमाद मोहौ तमसः भवतः अज्ञानम् एव च।।१७।।

नि:संदेह, सत्वगुण से ज्ञान और रजो गुण से

(एरां) नि:संदेह (सत्वात) सत्वगुण से (ज्ञानम्) ज्ञान (च) और (रजस:) रजो गुण से (लोभ) लोभ (च) और (मोहौ) भ्रम (सन्जायते) उत्पन्न

(एरां) नि:संदेह (सत्वात) सत्वगुण से (ज्ञानम्) ज्ञान (च) और (रजस:) रजो गुण से (लोभ) लोभ (च) और (मोहौ) भ्रम (सन्जायते) उत्पन्न

नरक में तीनों गुण वाले किस प्रकार रखे जाएंगे:-

१४:१८

उर्ध्वम गच्छन्ति सत्व-स्थाः मध्ये तिष्ठन्ति राजसाः। जघन्य गुण वृत्ति-स्थाः अधः गच्छन्ति तामसाः।।१८।।

मृत्यु पाया हुआ व्यक्ति गुणों के आधार पर नर्क में इस तरह जाऐंगे। सत्वगुण में स्थित रहने वाले (नर्क में) ऊपरी भाग में स्थित किए जाऐंगे। रजो गुण वाले (नर्क में) मध्य भाग में स्थित किए जाऐंगे और सबसे निचले भाग में तमो गुण वाले जाऐंगे।

(वृत्ति-स्थाः) मृत्यु पाया हुआ व्यक्ति (गुण) गुणों के आधार पर (अधः) नर्क में (गच्छन्ति) (इस तरह) जाऐंगे (सत्व-स्थाः) सत्वगुण में स्थित रहने वाले (उर्ध्वम्) (नर्क में) उपरी भाग (गच्छन्ति) जाऐंगे (राजसा) रजो गुण वाले (मध्ये) (नर्क में) मध्य भाग में (तिष्ठन्ति) स्थित किए जाऐंगे (जघन्य) और सबसे निचले भाग को (तामसाः) तमो गुण वाले (गच्छन्ति) जाऐंगे।

सत्व गुण वाले तीन कारणों से नर्क में जाऐंगे।

१. सत्कर्मों का कम होना। २. ईश्वर में श्रद्धा न होना। ३. ईश्वर को प्रसन्न करने के बदले पुण्य को अधिक महत्त्व देना।

१४:१९

न अन्यम् गुणेभ्यः कर्तारम् यदा द्रष्टा अनुपश्यति। गुणेभ्यः च परम् वेत्ति मत-भावम् सः अधिगच्छति।।१९।।

तब देखने वाले यह समझते हैं कि प्राकृतिक गुण के अतिरिक्त कोई दूसरी चीज़ सारे कर्मों को नहीं (करती) तब वह सच्चाई को देखता है और जान लेता है कि महान ईश्वर ने इन गुणों को उत्पन्न किया और मनुष्य के शरीर से जोड़ दिया है और (तब वह) मुझमें श्रद्धा वाली भावना (स्वभाव) पा लेता है।

(यदा) तब (द्रष्टा) देखने वाले (यह समझते हैं की) (गुणेभ्यः) प्राकृतिक गुण (अन्यम्) के अतिरिक्त कोई दूसरी चीज़ (कर्तारम्) सारे कर्मों को (न) नहीं (करती तब) (सः) वह (अनुपश्यति) सच्चाई को देखता है। (वेत्ति) और जान लेता है कि (परम) महान ईश्वर ने (गुणेभ्यः) इन गुणों को (उत्पन्न किया और मनुष्य के शरीर से जोड़ दिया है) (च) और (तब वह) (मत-भावम्) मुझमें श्रद्धा वाली भावना (अधिगच्छति) पा लेता है।

तीनों गुणों से ऊपर उठने का महत्त्वः-

१४:२०

गुणान् एतान् अतीत्य त्रीन् देही देह समुद्धवान। जन्म मृत्यु जरा दुःखैः विमुक्तः अमृतम् अश्नुते।।२०।।

(जब कोई व्यक्ति) इन तीनों गुणों को छोड़ देता है (जो) मनुष्य के शरीर से जुड़ी हुई है, तो वह मुक्त हो जाता है जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था (बुढ़ापा), और दुःख से और प्राप्त करता है वह स्थान जहाँ मृत्यु नहीं (अर्थात स्वर्ग)

(एतान्) (जब कोई व्यक्ति) इन (त्रीन्) तीनों (गुणान्) गुणों को (अतीत्य) छोड़ देता है (जो) (देही) मनुष्य के (देह) शरीर से (समुद्धवान) जुड़ी हुई है (विमुक्तः) तो वह मुक्त हो जाता है (जन्म) जन्म (मृत्यु) मृत्यु (जरा) वृद्धावस्था (बुढ़ापा) और (दुःखैः) दुःख से (अश्नुते) और प्राप्त करता है (अमृतम्) वह स्थान जहाँ मृत्यु नहीं (अर्थात स्वर्ग)।

(सत्व गुण क्यों छोडना चाहिए इस बात को समझने के लिए नोट नं.N-५ पढ़ीए।)

अतीत स्वभाव वाले व्यक्ती की विशेषताएं :-

१४:२१

अर्जुन उवाच
कैः लिङैः त्रीन् गुणान् एतान् अतीतः भवति प्रभो।
किम् आचारः कथम् च एतान् त्रीन् गुणान् अतिवर्तते।।२१।।

अर्जुन ने कहा, हे प्रभो, इन तीनों गुणों से बचने वाले अतीत हुआ मनुष्य (मुनी) के क्या लक्षण होते हैं? (और) इन तीनों गुणों से (वह) कैसे बचता है; और उसके आचरण कैसे होते हैं?

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा, (प्रभो) हे प्रभो, (एतान्) इन (त्रीन्) तीनों (गुणान्) गुणों से (बचने वाले) (अतीत:) अतीत हुआ मनुष्य (मुनी) के (कै:) क्या (लिङै:) लक्षण (भवति) होता है (एतान) (और) इन (त्रीन्) तीनों (गुणान्) गुणों से (कथम्) (वह) कैसे (अतिवर्तते) बचता है (च) और (उसके) (आचार) आचरण (किम्) कैसे होते हैं?

१४:२२

श्री भगवान उवाच, प्रकाशम् च प्रवृत्तिम् च मोहम् एव च पाण्डव।
न द्वेष्टि सम्प्रवृत्तानि न निवृत्तानि काङ्क्षति।।२२।।

ईश्वर ने कहा, (अतीत हुआ व्यक्ति) न द्वेष (नफरत) करता है प्रसिद्धि से, और समृद्धी (तरक्की) से, और भ्रम से (धनवान मित्रों और रिश्तेदारों से) जब वह सब अधिक होने लगे। (और) न इच्छा करता है जब (प्रसिद्धि, समृद्धि, मित्र और रिश्तेदार) कम होने लगे।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (अतीत हुआ मनुष्य)

(न द्वेष्टि) न द्वेष (नफरत) करता है (प्रकाशम्) प्रसिद्धि (Fame) से (च) और (प्रवृत्तिम) समृद्धि (तरक्की) से (च) और (मोहम्) भ्रम से (धनवान मित्रों और रिश्तेदारों से) (सम्प्रवृत्तानि) जब वह सब अधिक होने लगे (न) (और) न (काङ्क्षति) इच्छा करता है (निवृत्तानि) जब (प्रसिद्धी, समृद्धि, मित्र और रिश्तेदार) कम होने लगे।

नोट १४.२१ पवित्र कुरआन में अतीत व्यक्ति को मुत्तकी कहा है। अर्थात ईश्वर से ड़रने वाला (तकवा वाला)। अतीत व्यक्ति को पवित्र कुरआन में ईश्वर ने निम्नलिखित आश्वासन दिया:-

“जो कोई (तकवा अपनाए) ईश्वर से डर रखेगा (अर्थात अतीत व्यक्ति), ईश्वर उसके लिए (सभी संकटो से) निकलने का मार्ग पैदा कर देगा। और उसे वहाँ से रोजी (जीविका) देगा जहाँ से उसे गुमान (कल्पना) भी न होगा। और जो कोई ईश्वर पर भरोसा रखे तो वह (ईश्वर) उसके लिए बहुत है (अर्थात ईश्वर उसकी सारी आवश्यकताएँ पूरी करेगा)। नि:स्संदेह ईश्वर अपनी (इच्छा अनुसार) काम पूरा कर लेता है। ईश्वर ने हर चीज़ का एक अन्दाज़ा (भाग्य) ठहरा रखा है। (सूरे अल तलाक-६५, आयत-२-३)

नोट ४.२२ ‘मोहम’ का अर्थ है भ्रम होना। किन्तु हमने इसका अर्थ अमीर मित्र और रिश्तेदार लिया है। क्योंकि इन दोनों से मनुष्य सदैव भ्रम में रहता है और अपने आपको सुरक्षित और भाग्यशाली समझता है। किन्तु मरते ही उसे एहसास होता है कि वह तो बिल्कुल अकेला है और आगे की सारी यात्रा उसे अकेले करना है।

१४:२३

उदासीनवत् आसीनः गुणैः यः न विचाल्यते।
गुणाः वर्तन्ते इति एवम् यः अवतिष्ठति न इङ्ते।।२३।।

(वह) जो निष्पक्ष (Impartial) रहता है (इन तीनों) गुणो से। परेशान नहीं होता (इन) गुणों (के) उकसाने (Provocation) से। इसी तरह वह नि:संदेह दृढता से स्थित रहता है (और) डगमगाता नहीं।

(य) (वह) जो (उदासीनवत्) निष्पक्ष (Impartial) (आसीन) रहता है (गुणै) (इन तिनों) गुणो से (विचाल्यते) परेशान (न) नहीं होता (गुणा) (इन) गुणों (के) (वर्तन्ते) उकसाने (Provocation) से (इति) इसी तरह (एवम्) वह नि:संदेह (अवतिष्ठति) दृढता से स्थित रहता है (और) (इङ्ते) डगमगाता (न) नहीं।

१४:२४

सम दुःख सुखः स्व-स्थः सम लोष्ट अश्म कान्चनः।
तुल्य प्रिय अप्रियः धीरः तुल्य निन्दा आत्म-संतुष्टि।।२४।।

(अतीत हुआ व्यक्ति) सुख-दु:ख (में) एक समान रहता है। वह अपने आपको वश में रखता है। मिट्टी का ढ़ेला, पत्थर, सोने का टुकड़ा (उसके लिए) एक समान है। मित्र और रिश्तेदारों, (और) वह लोग जो उसे पसंद नहीं है सबसे एक समान व्यवहार करता है। उसकी निन्दा करने पर या उसकी प्रशंसा करने पर धीरज रखता है, और एक समान रहता है।

(अतीत हुआ व्यक्ति) (सुखः) सुख (दु:ख) दु:ख (में) (सम) एक समान रहता है। (स्व-स्थ) वह अपने आपको वश में रखता है (लोष्ट) मिट्टी का ठेला (अश्म) पत्थर, (कान्चन) सोने का टुकड़ा (सम) (उसके लिए) एक समान है (प्रिय) मित्र और रिश्तेदारों (और) (अप्रिय:) वह लोग जो उसे पसंद नहीं है (तुल्य) सबसे एक समान व्यवहार करता है। (निन्दा) उसकी निन्दा करने पर (आत्म-संतुष्टि) या उसकी प्रशंसा करने पर (धीर:) धीरज रखता है (तुल्य) और एक समान रहता है।

१४:२५

मान अपमानयोः तुल्यः तुल्यः मित्र अरि पक्षयोः।
सर्व आरम्भ परित्यागी गुण-अतीतः सः उच्यते।।२५।।

ईश्वर ने कहा वह जो तीनों गुणों को छोड़ देता है। ऐसे व्यक्ति के लिए मान अपमान एक समान होते हैं। मित्र (और) शत्रु या कोई और पक्ष से वह एक समान व्यवहार करता है। वह (सारे) व्यर्थ काम (भी) छोड़ देता है।

नोटः- आरम्भ का अर्थ समझने के लिए श्लोक नं. १२.१६ के नोट को पढ़िए।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा (गुण-अतीत) वह जो तीनों गुणों को छोड़ देता है। (स) ऐसे व्यक्ति के लिए (मान) मान (अपमानयो:) अपमान (तुल्य:) एक समान होते हैं (मित्र) मित्र (अरि) (और) शत्रु (पक्षयो:) या कोई और पक्ष से (तुल्य) वह एक समान व्यवहार करता है (सर्व) वह (सारे) (आरम्भ) व्यर्थ काम (भी) (परित्यागी) छोड़ देता है।

१४:२६

माम् च यः अव्यभिचारेण भक्ति-योगेन सेवते।
सः गुणान् समतीत्य एतान् ब्रह्म-भूयाय कल्पते।।२६।।

वह (अतीत व्यक्ति) (ऐसी) प्रार्थना करता है (जो उसे) मुझसे जोड़ दे। और संगम (शिर्क) नहीं करता। वह मेरा दास बन जाता है। वह (व्यक्ति) ऊपर उठ जाता है इन (तीनों) गुणों से (और वह) ईश्वर से बहुत निकट हो जाता है।

(य) वह (अतीत व्यक्ति) (भक्ति) (ऐसी) प्रार्थना करता है (जो उसे) (च मम) मुझसे (योगेन्) जोड़ दे (अव्यभिचारेण) और संगम (शिर्क) नहीं करता (सेवेत) वह मेरा दास बन जाता है (सः) वह (व्यक्ति) (समतीत्य) ऊपर उठ जाता है (एतान) इन (गुणान्) (तीनों) गुणों से (ब्रह्म) (वह) ईश्वर से (भूयाय) बहुत (कल्पते) निकट हो जाता है।

अध्याय का सार :-

१४:२७

ब्रह्मणः हि प्रतिष्ठा अहम् अमृतस्य अव्ययस्य य।
शाश्वतस्य च धर्मस्य सुखस्य ऐकान्तिकस्य च।।२७।।

मैं (ने ही) स्थापना किया है इस ब्रह्मांड का और अमर स्थान (स्वर्ग का) जहाँ मृत्यु नहीं होगी। और सदैव स्थित रहने वाले सनातन धर्म का। और समाज में सुख शांति का और (मैं) एक ईश्वर ही आरम्भ और अन्त हूँ, (मेरे अतिरिक्त और कोई ईश्वर नहीं है।)

(ईश्वर ने कहा), (अहम्) मैं (ने ही) (प्रतिष्ट) स्थापना किया है (ब्रह्मण:) इस ब्रह्मांड का (च) और (अव्ययस्य) अमर स्थान (स्वर्ग) (अमृतस्य) जहाँ मृत्यु नहीं होगी (च) और (शाश्वतस्य) सदैव स्थित रहने वाले (धर्मस्य) सनातन धर्म का (सुखस्य) और समाज में सुख शांति का (च) और (ऐकान्तिकस्य) (मैं) एक ईश्वर ही आरम्भ और अन्त हूँ, (मेरे अतिरिक्त और कोई ईश्वर नहीं है।)

अध्याय-१५

पुरुषोत्तम योग

श्रीभगवानुवाच
ऊर्ध्वमूलमधः शाखमश्वत्थं प्राहुरव्ययम्।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यस्तं वेद स वेदवित्॥1॥

अधश्चोर्ध्वं प्रसृतास्तस्य शाखा गुणप्रवृद्धा विषयप्रवालाः।
अधश्च मूलान्यनुसन्ततानि कर्मानुबन्धीनि मनुष्यलोके ॥2॥

न रूपमस्येह तथोपलभ्यते नान्तो न चादिर्न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थमेनं सुविरूढमूल मसङ्गशस्त्रेण दृढेन छित्वा॥3॥

ततः पदं तत्परिमार्गितव्यं यस्मिन्गता न निवर्तन्ति भूयः।
तमेव चाद्यं पुरुषं प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी॥4॥

निर्मानमोहा जितसङ्गदोषाअध्यात्मनित्या विनिवृत्तकामाः।
द्वन्द्वैर्विमुक्ताः सुखदुःखसञ्ज्ञैर्गच्छन्त्यमूढाः पदमव्ययं तत्॥5॥

न तद्भासयते सूर्यो न शशाङ्को न पावकः।
यद्गत्वा न निवर्तन्ते तद्धाम परमं मम॥6॥

श्रीभगवानुवाच
ममैवांशो जीवलोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानीन्द्रियाणि प्रकृतिस्थानि कर्षति॥7॥

शरीरं यदवाप्नोति यच्चाप्युत्क्रामतीश्वरः।
गृहीत्वैतानि संयाति वायुर्गन्धानिवाशयात्॥8॥

श्रोत्रं चक्षुः स्पर्शनं च रसनं घ्राणमेव च।
अधिष्ठाय मनश्चायं विषयानुपसेवते॥9॥

उत्क्रामन्तं स्थितं वापि भुञ्जानं वा गुणान्वितम्।
विमूढा नानुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञानचक्षुषः॥10॥

यतन्तो योगिनश्चैनं पश्यन्त्यात्मन्यवस्थितम्।
यतन्तोऽप्यकृतात्मानो नैनं पश्यन्त्यचेतसः॥11॥

यदादित्यगतं तेजो जगद्भासयतेऽखिलम्।
यच्चन्द्रमसि यच्चाग्नौ तत्तेजो विद्धि मामकम्॥12॥

गामाविश्य च भूतानि धारयाम्यहमोजसा।
पुष्णामि चौषधीः सर्वाः सोमो भूत्वा रसात्मकः॥13॥

अहं वैश्वानरो भूत्वा प्राणिनां देहमाश्रितः।
प्राणापानसमायुक्तः पचाम्यन्नं चतुर्विधम्॥14॥

सर्वस्य चाहं हृदि सन्निविष्टोमत्तः स्मृतिर्ज्ञानमपोहनं च।
वेदैश्च सर्वैरहमेव वेद्योवेदान्तकृद्वेदविदेव चाहम् ॥15॥

द्वाविमौ पुरुषौ लोके क्षरश्चाक्षर एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थोऽक्षर उच्यते॥16॥
उत्तमः पुरुषस्त्वन्यः परमात्मेत्युदाहृतः।

यो लोकत्रयमाविश्य बिभर्त्यव्यय ईश्वरः॥17॥

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः
पुरुषोत्तमः॥18॥

यो मामेवमसम्मूढो जानाति पुरुषोत्तमम्।
स सर्वविद्भजति मां सर्वभावेन भारत॥19॥

इति गुह्यतमं शास्त्रमिदमुक्तं मयानघ।
एतद्बुद्ध्वा बुद्धिमान्स्यात्कृतकृत्यश्च
भारत॥20॥

अध्याय का परिचय

इस अध्याय में उच्च स्तर पर ईश्वर में श्रद्धा का शुद्धिकरण है।

अध्याय नं. १४ में हमने अतीत गुण के बारे में जानकारी प्राप्त की थी। अर्थात अपने आपको मरा हुआ समझना। अब इस अध्याय में उसके आगे का ज्ञान है या सफलता के सूत्र हैं।

अध्याय का सारांश

- श्लोक नं. १५.२ और १५.३ का अर्थ है की इस संसार को समझना कठिन है। इस संसार के मोह को ईश्वर की श्रद्धा के शस्त्र से काट दो।

- श्लोक नं. १५.४ का अर्थ है कि मनुष्य को अन्य लोक की तलाश करनी चाहिए।

- श्लोक नं. १५.५ में उन गुणों का वर्णन है जिनसे मनुष्य को स्वर्ग प्राप्त होता हे।

- श्लोक नं. १५.६ में स्वर्ग के वातावरण का वर्णन है।

- श्लोक नं. १५.७ का अर्थ है कि मनुष्य, रुह, आत्मा और भाग्य के कारण जीवित है और यह सब ईश्वर के नियंत्रण में है तो मनुष्य को ईश्वर से डरना चाहिए।

- श्लोक नं. १५.८ से १५.११ तक प्रलय के समय मनुष्य को फिर से जीवित किए जाने का वर्णन है।

- श्लोक नं. १५.१२ से १५.१५ में ईश्वर ने मनुष्य के चार भ्रम (गलतफहमी) को दूर किया है।

१. मनुष्य सूर्य की उपासना करता है और यज्ञ में आग के द्वारा अन्य देवताओं की प्रार्थना करता है। ईश्वर ने इस श्लोक में कहा कि सूर्य और अग्नि का प्रकाश मुझसे ही (इस कारण मेरी ही प्रार्थना करो।)

२. मनुष्य धरती माता की पूजा करता है। इस श्लोक में ईश्वर ने कहा मैं ही प्राकृतिक शक्ति से अनाज उगाता हूँ और वनस्पतियों में जो चन्द के प्रकाश से रस उत्पन्न होता है वह भी मेरी ही रचना है। (इस कारण केवल मेरी प्रार्थना करो)

३. मनुष्य भोजन करके शक्ति प्राप्त करता है और फिर ईश्वर के आदेश का उल्लंघन करता है। तो ईश्वर इस श्लोक में याद दिलाते हैं कि भोजन पाचन करने की शक्ति मैं ही प्रदान करता हूँ (इस कारण मेरी ही प्रार्थना करो)

४. मनुष्य ज्ञान प्राप्त करके बड़ा ज्ञानी बन जाता है। फिर सत्य को अच्छी तरह जानने के बावजूद वह बातें कहता है जिससे उसे धन और सम्मान मिले। ईश्वर इस श्लोक में याद दिलाते है कि वेदों को मैंने ही अवतारित किया है। ज्ञान और स्मरणशक्ति मुझसे ही है। (इस कारण मेरी ही प्रार्थना करो और मेरी आज्ञा का पालन करो)।

इस अध्याय के अन्त में ईश्वर ने मनुष्य के एक और बड़ी गलतफहमी को दूर किया।

- ईश्वर ने श्लोक नं. १५.१६, १७, १८ में कहा कि आत्मा अमर है किन्तु ईश्वर आत्मा से (उत्तम) श्रेष्ठ है।

- मनुष्य में प्राण ईश्वर के तेज के अंश से है। मनुष्य में रुह ईश्वर की रुह से है इस कारण वह सदैव पवित्र रहती है, किन्तु आत्मा तमो गुण की हो सकती है ऐसे आत्मा ईश्वर में समाने के योग्य नहीं हैं।

- अन्त में ईश्वर ने श्लोक नं. १५.१९ और १५.२० में कहा कि ईश्वर को पहचानने का ज्ञान ही (सर्व वित) सम्पूर्ण ज्ञान है। इस ज्ञान को प्राप्त करके मनुष्य वह करता है जो उसे करना चाहिए।

अध्याय

बरगद के पेड़ के समान अद्भूत है यह संसार :-

१५.१

उर्ध्व-मूलम् अधः शाखम् अश्वत्थम् प्रा आहुः अव्ययम।
छन्दांसि यस्य पर्णानि यः तम् वेद सः वेदवित् ।।१।।

ईश्वर ने (श्रीकृष्ण के माध्यम से) कहा, (एक) बरगद का पेड़ है जिसे अमर (लम्बी आयुवाला) कहा जाता है। (जिसकी) ज़ड़े ऊपर की तरफ, शाखें नीचे की तरफ, उसकी पत्तियां वेदों के छंद है। (वह) जो इसको जानता है वह वेदों के सत्य और तत्त्व को जानता है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने (श्रीकृष्ण के माध्यम से) कहा (अश्वत्थम्) (एक) बरगद का पेड़ है (अव्ययम्) जिसे अमर (लम्बी आयुवाला) (प्राहु) कहा जाता है (मूलम्) (जिसकी) ज़ड़े (उर्ध्व) ऊपर की तरफ (शाखम्) शाखें (अधः) नीचे की तरफ (यस्य) उसकी (पर्णानि) पत्तियां (छन्दांसि) वेदों के छंद है (यः) (वह) जो (तम्) इसको (वेद) जानता है (सः) वह (वेदवित्) वेदों के सत्य और तत्त्व को जानता है।

१५.२

अधः च उर्ध्वम् प्रसुताः तस्य शाखाः गुण प्रवृद्धाः विषय प्रवालाः।
अधःच मूलानि अनुसन्ततानि कर्म अनुबन्धीनि मनुष्या-लोके।।२।।

उसकी (छोटी) शाखें गुण हैं (जो) ऊपर की ओर और नीचे की ओर बढ़ती है। (उसकी) कोंपले (टेहनियां) मन को आनंद देने वाली वस्तु हैं, (जो) नीचे की ओर बढ़ती हैं और (उसकी शाखाओं से निकलने वाली) जड़ें कर्म हैं जो निरंतर बढ़ती रहती है, (और) मनुष्य को (इस) संसार (से) बाँधे रहती हैं।

(तस्य) उसकी (शाखाः) (छोटी) शाखें (गुण) गुण हैं (जो) (उर्ध्वम्) ऊपर की ओर (च) और (अधः) नीचे की ओर (प्रसृता) बढ़ती है (प्रवालाः) (उसकी) कोंपले (टेहनियां) (विषय) मन को आनंद देने वाली वस्तु हैं (अध) (जो) नीचे की ओर (प्रवृद्धा) बढ़ती है (च) और (मुलानि) (उसकी शाखाओं से निकलने वाली) जड़ें (कर्म) कर्म हैं (अनुसन्ततानि) जो निरंतर बढ़ती रहती हैं (मनुष्य) (और) मनुष्य को (लोके) (इस) संसार (से) (अनुबन्धीनि) बाँधे रहती हैं।

नोट नं. १५.२ बरगद की शाखों से जड़ निकलती हैं और धरती की ओर बढ़ती हैं और धरती पर मज़बूती के साथ जम जाती हैं। इसी प्रकार मनुष्य भी संसार से मज़बूती के साथ बंधा रहता है।

१५.३

न रुपम् अस्य इह तथा उपलभ्यते न अन्तः न च आदिः न च सम्प्रतिष्ठा।
अश्वत्थम् एनम् सु-विरुढ मूलम् असङ-शस्त्रेण दृढेन छित्वा ।।३।।

यह संसार (एक) बरगद के पेड़ (के समान हैं)। न (हम) इसके आकार को, न आरम्भ को, और न अंत को और न बुनियाद को (समझ सकते हैं)। दृढ़ता से (मज़बूती से) एक ईश्वर की श्रद्धा के शस्त्र को (पकड़कर) इस पेड़ की बहुत ही मज़बूत जड़ों को काट दो।

नोटः- असङ का अर्थ समझने के लिए नोट नं. N-6 पढ़िए।

(इह) यह संसार (अश्वत्थम्) (एक) बरगद के पेड़ (के समान हैं) (न) न (हम) (अस्म) इसके (रुपम्) आकार को (न) न (आदि) आरम्भ को (च) और (न) न (अन्त) अंत को (तथा) और (न) न (सम्प्रतिष्ठा) बुनियाद को (समझ सकते हैं) (दृढ़ेन) दृढ़ता से (मज़बूती से) (असङ) एक ईश्वर की श्रद्धा के (शस्त्रेण) शस्त्र को (पकड़कर) (एनम्) इस पेड़ के (सु-विरुढ) बहुत ही मज़बूत (मूलम्) जडों को (छित्वा) काट दो।

अन्य लोक के शोध का महत्त्व :-

१५.४

ततः पदम् तत् परिमार्गितव्यम् यस्मिन् गताः न निवर्तन्ति भूयः।
तम् एव च आद्यम् पुरुषम् प्रपद्ये यतः प्रवृत्तिः प्रसृता पुराणी।।४।।

फिर उस (अन्य लोक) के स्थान को (तलाश) करना चाहिए, जहाँ जाकर दोबारा (कोई भी) (इस संसार में) वापस नहीं आता। (जहाँ जाकर) निःसंदेह उसे (उस) तब से प्रथम परमात्मा (की) शरण मिल जाती है। (यह अन्य लोक वह स्थान है) जिसके के कारण इस प्राचीन पृथ्वी लोक का आरम्भ और फैलाव (अस्तित्व) है।

नोटः- अन्य लोक का वर्णन नोट नं. N-4 में पढ़िए।

(ततः) फिर (तत्) उस (अन्य लोक) (पदम्) के स्थान को (परिमार्गितव्यम्) (तलाश) करना चाहिए (यस्मिन) जहाँ (गताः) जाकर (भूयः) दोबारा (कोई भी) (निवर्तन्ति) (इस संसार में) वापस नहीं आता (एवं) (जहाँ जाकर) निःसंदेह (तम्) उसे (आद्यम्) (उस) तब से प्रथम (प्रदुषम्) परमात्मा (की) (प्रपद्ये) शरण मिल जाती है (यतः) (यह अन्य लोक वह स्थान है) जिसके के कारण (पुराणी) इस प्राचीन पृथ्वी लोक का (प्रकृत्तिः) आरम्भ (प्रसृता) और फैलाव (अस्तित्व) है।

नोट१५.३ बरगद की शाखों से जड़ निकल कर धरती में जम जाती है और शाख को सहारा देती है। इस कारण बरगद की शाखें सभी ओर बढ़ती रहती है। बरगद के पेड़ की आयु भी बहुत होती है। इस कारण प्राचीन पेड़ इतने फैल जाते है कि उनका आरम्भ और अन्त तक दिखाई नहीं देता। कलकत्ता के निकट आचार्य जगदीश बोटेनिक्ल गार्डन में एक बरगद का पेड़ ३.५ ऐकड़ (१५६००० sq.ft) में फैला हुआ है। ऐसे ही बरगद के पेड़ का वर्णन श्लोक नं. १५.३ में है।

स्वर्ग का वर्णन :-

१५.५

निर्माण मोहाः जित सङ दोषाः अध्यात्म नित्याः विनिवृत्त कामाः।
द्वन्दै विमुक्ताः सुख-दुःख सञ्ज्ञैः गच्छन्ति अमूढाः पदम् अव्ययम् तत् ।।५।।

(जो झूठे) सम्मान (और) लालच के बिना (जीता है)। संगम (शिर्क) करने (जैसी) गलती (पर) विजय प्राप्त कर ली है। जो केवल ईश्वर की प्रार्थना में निरंतर लगा रहता है। (जो) मन की इच्छा पूर्ति से रुका हुआ है। (जो) सुख (और) दु:ख जैसे दोहरे (भावनाओं से) मुक्त है (हर परिस्थिति में एक समान रहता है)। (ऐसा) बुद्धिमान ज्ञानी उस (स्वर्ग के) अमर स्थान को प्राप्त कर लेता है।

(मान) (जो झूठे) सम्मान (मोहा:) (और) लालच के (निर) बिना (जीता है) (संडग) संगम (शिर्क) करने (दोषा:) (जैसी) गलती (पर) (जीत) विजय प्राप्त कर ली है। (अध्यात्म) जो केवल ईश्वर की प्रार्थना में (नित्या:) निरंतर (लगा रहता है) (कामा:) (जो) मन की इच्छा पूर्ती से (विनिवृत्त) रुका हुआ है (सुख) (जो) सुख (दु:ख) (और) दु:ख (सञ्ज्ञैः) जैसे (द्वन्दै) दोहरे (भावनाओं से) (विमुक्ता:) मुक्त है (हर परिस्थिति में एक समान रहता है) (अमूढा:) (ऐसा) बुद्धिमान ज्ञानी (तत्) उस (स्वर्ग के) (अव्ययम्) अमर (पदम्) स्थान को (गच्छन्ति) प्राप्त कर लेता है।

१५.६

न तत् भासयते सूर्यः न शशाङ्कः न पावकः।
यत् गत्वा न निवर्तन्ते तत् धाम परमम् मम।।६।।

वह (स्वर्ग) न सूर्य से प्रकाशित है न चांद से (और) न (ही) आग (से)। (यह वह स्थान है) जहाँ जाकर (इस लोक में कोई भी) वापस नहीं (आता)। वह (स्वर्ग का) स्थान (ही) मेरा सर्वश्रेष्ठ और दिव्य स्थान है।

(तत) वह (स्वर्ग) (न) न (सूर्य) सूर्य से (भासयते) प्रकाशित है (न) न (शशाङ्क:) चांद से (न) (और) न (ही) (पावक:) आग (से) (यत:) (यह वह स्थान है) जहाँ (गत्वा) जाकर (निर्वतन्ते) (इस लोक में कोई भी) वापस (न) नहीं (आता) (तत) वह (स्वर्ग का) (धाम) स्थान (ही) (मम) मेरा (परमम्) सर्वश्रेष्ठ और दिव्य स्थान है।

प्राणियों के जीवन का रहस्य :-

१५.७

मम एवं अशः जीव-लोके जीवभूतः सनातनः।
मनः षष्ठानि इन्द्रियाणि प्रकृति स्थानि कर्षति।।७।।

नि:संदेह! प्राणियों के इस जीव लोक के जीवित प्राणि मेरे हमेशा एक जैसा स्थित रहने वाले (तेज के) अंश (से) स्थित (कायम) हैं।

(एरां) निसंदेह (जीव लोक) प्राणियों के इस जीव लोक के (जीवभूत:) जीवित प्राणि (माम) मेरे (सनातन:) हमेशा एक जैसा कायम रहने वाले (अंश) (तेज के) अंश (से) (स्थानि) स्थित (कायम) हैं। (मन:) (और मनुष्य) आत्मा (षष्ठानि) छ (इन्द्रियाणि) इच्छाऐं (प्रकृति) (और) भाग्य

और मनुष्य आत्मा छ इच्छाऐं, (और) भाग्य (के कारण) सारे काम करता है।

कुरआन के अनुसार (सूरह-३ आयत-१६) छ इच्छाए इस प्रकार है। १. पत्नी २.पुत्र ३. धन (सोना चांदी) ४. अच्छी सवारी ५. पशुधन ६. संपत्ति का होना।

(कर्षति) (के कारण) सारे काम करता है।

(जीव लोक, अर्थात यह धरती। स्वर्गलोक, अर्थात देवताओं का लोक। जीव-भूत, अर्थात जीवित प्राणी या मनुष्य का वर्णन, देवताओं या यक्ष का नहीं।)

प्रलय के समय जीवित होने का वर्णन :-

१५.८

शरीयम् यत् अवाप्नोति यत् च अपि उत्क्रामति ईश्वरः।
गृहीत्वा एतानि संयाति वायुः गन्धान् इव आशयात्।।८।।

(मनुष्य) जो शरीर (मृत्यु के समय) छोड़ जाता है, नि:संदेह (प्रलय के दिन उसे) दोबारा प्राप्त करता है। वह (शरीर) जिस (से) (आत्मा) दूर हो जाती है, ईश्वर (उसे) लाता है (कर्मों का हिसाब लेने के स्थान पर इसी तरह) जिस तरह वायु स्थानांतरण करती है सुगंध का।

(यत्) (मनुष्य) जो (शरीरम्) शरीर (उत्क्रामति) (मृत्यु के समय) छोड़ जाता है (अपि) नि:संदेह (अवाप्नोति) (प्रलय के दिन) दोबारा प्राप्त करता है (एतानि) वह (शरीर) (यत्) जिस (से) (संयाति) (आत्मा) दूर हो जाती है (ईश्वर) ईश्वर (गृहीत्वा) (उसे) लाता है (कर्मों का हिसाब लेने के स्थान पर इसी तरह) (इव) जिस तरह (वायुः) वायु (आशयात्) स्थानांतरण करती है (गन्धान्) सुगंध का।

१५.९

श्रोत्रम् चक्षुः स्पर्शनम् च रसनम् घ्राणम् एव च।
अधिष्ठाय मनः च अयम् विषयान् उपसेवते।।९।।

कान, आँख, स्पर्श का एहसास, और जीभ, नाक और मन (बुद्धि)। नि:संदेह! यह सब फिर से जीवित हो जाते हैं। (इस तरह मनुष्य फिर से) मन को अच्छा लगने वाली वस्तुओं का आनंद ले सकता है।

(श्रोत्रम्) कान (चक्षुः) आँख (स्पर्शनम्) स्पर्श का एहसास (च) और (रसनम्) जीभ (घ्राणम्) नाक (च) और (मन) मन (बुद्धि) (एवं) नि:संदेह (अयम्) यह सब (अधिष्ठाय) फिर से जीवित हो जाते हैं (विषयान्) (इस तरह मनुष्य फिर से) मन को अच्छा लगने वाली वस्तुओं का (उपसेवते) आनंद ले सकता है।

नोट१५.८ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''वही (ईश्वर) है जिसने तुम्हें जिंदगी प्रदान की है। वही तुमको मौत देता है और वही फिर तुमको जिन्दा करेगा। सच यह है कि इन्सान बड़ा ही 'सत्य' से मुँह फेरने वाला है।'' (सूरह-अल-हज-२२, आयत-६६)

''कयामत (प्रलय) के दिन सब मनुष्य अकेले अकेले ईश्वर के सामने हाजिर (उपस्थित) होंगे।'' (सूरह मरयम-१९, आयत-९५)

१५.१०

उत्क्रामन्तम् स्थितम् वा अपि भुज्जानम् वा गुण-अन्वितम्।
विमूढाः न अनुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञान-चक्षुष।।१०।।

मरने के बाद (प्रलय के दिन दोबारा) स्थित (जीवित) होना, और (वस्तुओं से) आनंद लेना या (मरे हुए शरीर का सम्बन्ध) गुणों से होना,(यह सारी बातें) मूर्ख और अज्ञानी कभी नहीं समझ सकते। बल्कि इन्हें केवल ज्ञान की आँखे रखने वाले लोग ही देख सकते हैं।

(उत्क्रामन्तम्) मरने के बाद (स्थितम्) (प्रलय के दिन दोबारा) स्थित होना (वा अपि) और (भुज्जानम्) (वस्तुओं से) आनंद लेना (वा) या (गुण-अन्वितम्) (मरे हुए शरीर का सम्बन्ध) गुणों से हो जाना (विमूढा:) (यह सारी बातें) मूर्ख और अज्ञानी (न) कभी नहीं (अनुपश्यन्ति) समझ सकते (ज्ञान) (बल्कि इन्हें केवल) ज्ञान की (चक्षुष) आँखे रखने वाले लोग ही (पश्यन्ति) देख सकते हैं।

१५.११

यतन्तः योगिनः च एनम् पश्यन्ति आत्मनि अवस्थितम्।
यतन्तः अपि अकृत-आत्मानः न एनम् पश्यन्ति अचेतसः।।११।।

अपने आप में (ध्यान लगाने वाले), धर्म की स्थापना के लिए प्रयास करने वाले, और ईश्वर से जुड़ने वाली प्रार्थना के लिए प्रयास करने वाले, इन सब (बातों को) देख सकता है (समझ सकता है)। किन्तु जो अपने आप में (ध्यान) नहीं लगाते, ऐसे मूर्ख इन बातों को नहीं देख सकते (समझ सकते हैं)।

(आत्मनि) अपने आप में (ध्यान लगाने वाले) (अवस्थितम्) धर्म की स्थापना के लिए (यतन्त:) प्रयास करने वाले (च) और (योगिन) ईश्वर से जुड़ने वाली प्रार्थना के लिए (यतन्त) प्रयास करने वाले (एनम्) इन सब (बातों को) (पश्यन्ति) देख सकता है (समझ सकता है) (अपि) किन्तु (आत्मान:) जो अपने आप में (ध्यान) (अकृत) नहीं लगाते (अचेतस:) ऐसे मूर्ख (एनम्) इन बातों को (न) नही (पश्यन्ति) देख सकते (समझ सकते हैं)।

ईश्वर को पहचानने और उसी कि प्रार्थना का आदेश :-

१५.१२

यत् आदित्य-गतम् तेजः जगत् भासयते अखिलम्।
यत् चन्द्रमसि यत् च अग्नौ तत् तेजः विद्धि मामकम्।।१२।।

(अखिलम्) सारे (जगत्) जगत को (भासयते) प्रकाशित करने के लिए (आदित्य) सूर्य (गतम्) के स्थान से (यत) जो (तेज:) प्रकाश

नोट १५.१० ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''और क्या इन लोगों को यह सुनाई नहीं देता कि जिस ईश्वर ने इस धरती और आकाश की रचना की और इनको बनाते हुए वह न थका, वह जरुर इसका सामर्थ्य रखता है कि मुर्दों को जिंदा उठाए? क्यों नहीं। नि:संदेह वह हर चीज़ का सामर्थ्य रखता है।'' (सूरह-अल अहकाफ-४६, आयत-३३)

सारे जगत को प्रकाशित करने के लिए सूर्य के स्थान से जो प्रकाश मिलता है, जो चांदनी चंद्र से मिलती है, और जो प्रकाश अग्नि (से मिलता है) वह (सब) प्रकाश मुझसे जानो।

मिलता है (यत) जो (चांदनी) (चन्द्रमसि) चंद्र से मिलती है (च) और (यत्) जो (तेजः) प्रकाश (अग्नौ) अग्नि (से मिलता है) (तत्) वह (सब) (तेज) प्रकाश (मामकम्) मुझसे (विद्धि) जानो।

१५.१३

गाम् आविश्य च भूतानि धारयामि अहम् ओजसा।
पुष्णामि च औषधीः सर्वाः सोमः भूत्वा रस-आत्मकः।।१३।।

मैं धरती में प्रवेश करके प्राणियों की रक्षा करता हूँ और अपनी शक्तियों से उनका पालन-पोषण करता हूँ और सारी जड़ी-बूटियों को चांद बनकर जीवन का रस प्रदान करने वाला मैं हूँ।

(अहम्) मैं (गाम्) ग्रह (धरती) में (आविश्य) प्रवेश करके (भूतानि) प्राणियों की (धारयामि) रक्षा करता हूँ (च) और (ओजसा) अपनी शक्तीयों से (पुष्णामि) उनका पालन-पोषण करता हूँ (च) और (सर्व) सारे (औषधि) जड़ी-बूटियों को (सोमः) चांद (भूत्वा) बनकर (रस-आत्मकः) जीवन का रस प्रदान करने वाला (अहम्) मैं हूँ।

१५.१४

अहम् वैश्वानरः भूत्वा प्राणिनाम् देहम् आश्रितः
प्राण अपान समायुक्तः पचामि अन्नम् चतुः-र्विधम् ।।१४।।

मैं प्राणियों के शरीर में पाचन शक्ति की अग्नि के रुप में रहता हूँ। अन्दर आने वाली सांस (और) बाहर जाने वाली (का) संतुलन (मुझसे है)। चारों प्रकार के अन्न (मेरे कारण ही) पचते हैं।

(अहम) मैं (प्राणिनाम्) प्राणियों के (देहा) शरीर में (वैश्वानरः) पाचन शक्ति की अग्नि (भुत्वा) के रुप में (आश्रितः) रहता हूँ (प्राण) अन्दर आने वाली सांस (अपान) (और) बाहर जाने वाली (सांसों) (का) (समायुक्त) संतुलन (मुझसे है) (चतु) चारों (र्विधम्) प्रकार के (अन्नम्) अन्न (पचामि) (मेरे कारण ही) पचते हैं।

१५.१५

सर्वस्य च अहम् हृदि सन्निविष्टः मत्तः स्मृतिः ज्ञानम् अपोहनम् च।
वेदैः च सर्वैः अहम् एव वेद्यः वेदान्त-कृत् वेदवित् एव च अहम् ।।१५।।

मैं सारे (मनुष्यों के) हृदय (में) स्थित हूँ। स्मरण शक्ति, ज्ञान और भ्रम का नष्ट होना, शंका का निराकरण होना मुझसे है। और निःसंदेह वेदों को अवतरित करने वाला और वेदों के अर्थ को जानने वाला मैं हूँ।

(अहम्) मैं (सर्वस्य) सारे (मनुष्यों के) (हृदि) हृदय (में) (सन्निविष्टः) स्थित हूँ (स्मृतिः) स्मरण शक्ति (ज्ञानम्) ज्ञान (च) और (अपोहनम्) भ्रम का नष्ट होना, शंका का निराकरण होना (मत) मुझ (से है) (च) और (एवं) निःसंदेह (वेदान्त) वेदों को (कृत) अवतारित करने वाला (च) और (वेदवित्) वेदों के अर्थ को जानने वाला (अहम्) मैं हूँ।

१५.१६

द्वौ इमौ पुरुषौ लोके क्षरः च अक्षरः एव च।
क्षरः सर्वाणि भूतानि कूटस्थः अक्षरः उच्यते।।१६।।

निःसंदेह! संसार में यह दो प्रकार के तत्व हैं। नाशवान शरीर और अविनाशी (आत्मा) और, ईश्वर कह रहा है कि, सारी नाशवान प्राणियों (के शरीर को) अविनाशी (आत्मा ने) मज़बूती से स्थित रखती है।

(एरा) निःसंदेह (लोके) संसार में (इमौ) यह (द्वौ) दो प्रकार के (पुरुषौ) तत्व हैं (क्षरः) नाशवान (शरीर) (च) और (अक्षरः) अविनाशी (आत्मा) (च) और (उच्यते) (ईश्वर) कह रहा है कि (सर्वाणि) सारी (क्षर) नाशवान (भुतानि) प्राणियों (के शरीर को) (अक्षर) अविनाशी (आत्मा ने) (कूट) मज़बूती से (स्थः) स्थित रखती है।

१५.१७

उत्तमः पुरुषः तु अन्य परम आत्मा इति उदाहृतः।
यः लोक त्रयम् आविश्य विभिर्ति अव्ययः ईश्वरः।।१७।।

किन्तु (ईश्वर) कह रहा है कि वह ईश्वर (खुद) दूसरों से महानतम दिव्य व्यक्तित्व है। (वह) आत्मा (से भी) महानतम है, वह अविनाशी है, तीनों लोकों पर छाया हुआ है और उनकी रक्षा करता है।

(तु) किन्तु (उदाहृतः) (ईश्वर) कह रहा है कि (इति) वह (ईश्वर) ईश्वर (खुद) (अन्य) दूसरों से (उत्तमः) महानतम (पुरुष) दिव्य व्यक्तित्व है। (आत्मा) (वह) आत्मा (से भी) (परम) महानतम है (अव्ययः) वह अविनाशी है (लोक त्रयम्) तीनों लोकों पर (आविश्य) छाया हुआ है (विभिर्ति) और उनकी रक्षा करता है।

१५.१८

यस्मात् क्षरम् अतीतः अहम् अक्षरात् अपि च उत्तमः।
अतः अस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुष-उत्तमः।।१८।।

कारण कि मैं नाशवान (शरीर से) परे हूँ, और अविनाशी (आत्मा से) भी महानतम् हूँ इसलिए इस संसार में और वेदों में महानतम दिव्य व्यक्तित्व पुरुषोत्तम के (नाम से) प्रसिद्ध हूँ।

(यस्मात्) कारण कि (अहम) मैं (क्षरम्) नाशवान (शरीर से) (अतीतः) परे हूँ (च) और (अक्षरात्) अविनाशी (आत्मा से) (अपि) भी (उत्तमः) महानतम् हूँ (अतः) इसलिए (लोके) इस संसार में (च) और (वेद) वेदों में (उत्तम पुरुष) महानतम दिव्य व्यक्तित्व पुरुषोत्तम (प्रथितः) के (नाम से) प्रसिद्ध हूँ।

ईश्वर को पहचानना ही तत्त्वज्ञान हैं :-

१५.१९

यः माम् एवम् असम्मूढः जानाति पुरुष-उत्तमम।
सः सर्व-वित् भजति माम् सर्व-भावेन भारत।।१९।।

(भारत) हे भारत (अर्जुन) (यः) जो (असम्मूढः) किसी संदेह के बिना (माम्) मुझको (उत्तमम्) सबसे महान (पुरुष) दिव्य

हे भारत (अर्जुन)! जो किसी संदेह के बिना मुझको सबसे महान दिव्य व्यक्तित्व (अज़ीम हस्ती) जानता है, वह सभी (सत्य को) जानने वाला हो जाता है। (फिर वह) हर तरह से नि:संदेह मेरी ही प्रार्थना में लग जाता है।

नोट:- (पुरुष-उत्तमम को उर्दू में अज़ीम हस्ती कहेंगे।)

व्यक्तित्व (जानति) जानता है (स:) वह (सर्व) सभी (सत्य को) (वित) जानने वाला हो जाता है। (सर्व) (फिर वह) हर (भावेन) तरह से (एवम्) नि:संदेह (माम) मेरी ही (भजति) प्रार्थना में लग जाता है।

१५.२०

इति गुह्य-तमम् शास्त्रम् इदम् उक्तम् मया अनघ।
एतत् बुद्धवा बुद्धिमान् स्यात् कृत-कृत्यः च भारत।।२०।।

हे भारत (अर्जुन)! इस तरह यह सबसे गुप्त धार्मिक ज्ञान मेरे द्वारा (तुम्हें) कहा गया है। हे बेगुनाह (अर्जुन)! इन (धार्मिक ज्ञान को) समझकर मनुष्य बुद्धिमान हो जाता है। और (फिर) वह कर्म करता है जो करना उसके लिए उचित होता है।

(भारत) हे भारत (अर्जुन) (इति) इस तरह (इदम्) यह (गुह्य-तमम्) सबसे गुप्त (शास्त्रम्) धार्मिक ज्ञान (मया) मेरे द्वारा (तुम्हें) (उक्तम्) कही गई (अनघ) हे बेगुनाह (अर्जुन) (एतत) इन (धार्मिक ज्ञान को) (बुद्धवा) समझकर (बुद्धिमान स्यात्) (मनुष्य) बुद्धिमान हो जाता है। (च) और (फिर) (कृत-कृत्य:) वह कर्म करता है जो करना उसके लिए उचित होता है।

अध्याय- १६

दैवासुर संपद विभाग योग

श्रीभगवानुवाच
अभयं सत्त्वसंशुद्धिर्ज्ञानयोगव्यवस्थितिः।
दानं दमश्च यज्ञश्च स्वाध्यायस्तप आर्जवम्॥1॥

अहिंसा सत्यमक्रोधस्त्यागः शान्तिरपैशुनम्।
दया भूतेष्वलोलुप्त्वं मार्दवं ह्रीरचापलम्॥2॥

तेजः क्षमा धृतिः शौचमद्रोहोनातिमानिता।
भवन्ति सम्पदं दैवीमभिजातस्य भारत॥3॥

दम्भो दर्पोऽभिमानश्च क्रोधः पारुष्यमेव च।
अज्ञानं चाभिजातस्य पार्थ सम्पदमासुरीम्॥4॥

दैवी सम्पद्विमोक्षाय निबन्धायासुरी मता।
मा शुचः सम्पदं दैवीमभिजातोऽसि पाण्डव॥5॥

द्वौ भूतसर्गौ लोकऽस्मिन्दैव आसुर एव च।
दैवो विस्तरशः प्रोक्त आसुरं पार्थ में श्रृणु॥6॥

प्रवृत्तिं च निवृत्तिं च जना न विदुरासुराः।
न शौचं नापि चाचारो न सत्यं तेषु विद्यते॥7॥

असत्यमप्रतिष्ठं ते जगदाहुरनीश्वरम्।
अपरस्परसम्भूतं किमन्यत्कामहैतुकम्॥8॥

एतां दृष्टिमवष्टभ्य नष्टात्मानोऽल्पबुद्धयः।
प्रभवन्त्युग्रकर्माणः क्षयाय जगतोऽहिताः॥9॥

काममाश्रित्य दुष्पूरं दम्भमानमदान्विताः।
मोहाद्गृहीत्वासद्ग्राहान्प्रवर्तन्तेऽशुचिव्रताः॥10॥

चिन्तामपरिमेयां च प्रलयान्तामुपाश्रिताः।
कामोपभोगपरमा एतावदिति निश्चिताः॥11॥

आशापाशशतैर्बद्धाः कामक्रोधपरायणाः।
ईहन्ते कामभोगार्थमन्यायेनार्थसञ्चयान्॥12॥

इदमद्य मया लब्धमिमं प्राप्स्ये मनोरथम्।
इदमस्तीदमपि मे भविष्यति पुनर्धनम्॥13॥

असौ मया हतः शत्रुर्हनिष्ये चापरानपि।
ईश्वरोऽहमहं भोगी सिद्धोऽहं बलवान्सुखी॥14॥

आढयोऽभिजनवानस्मि कोऽन्योऽस्ति सदृशो मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्य इत्यज्ञानविमोहिताः॥15॥

अनेकचित्तविभ्रान्ता मोहजालसमावृताः।
प्रसक्ताः कामभोगेषु पतन्ति नरकेऽशुचौ॥16॥

आत्मसम्भाविताः स्तब्धा धनमानमदान्विताः।
यजन्ते नामयज्ञैस्ते दम्भेनाविधिपूर्वकम्॥17॥

अहङ्कारं बलं दर्पं कामं क्रोधं च संश्रिताः।
मामात्मपरदेहेषु प्रद्विषन्तोऽभ्यसूयकाः॥18॥

अध्याय का परिचय

● इस दिव्य ग्रंथ में ईश्वर ने मनुष्य को स्वर्ग प्राप्त करने की सारी बातें समझाई। किन्तु इस संसार में सदैव ऐसे होशियार (Smart) लोग रहे हैं जो हमेशा स्वयं को परिपूर्ण ही समझते हैं और वह सोचते हैं कि हम तो कोई बड़ा पाप नहीं करते हैं। यह धार्मिक बातें तो पापियों के लिए हैं।

● ईश्वर एक माँ से अधिक दयालु है। अपने अतिविश्वास (over-confidence) के कारण कोई व्यक्ति नरक में न चला जाए, इसलिए ईश्वर ने अब यह एकदम सरल (चेकलिस्ट) जांच सूची भी मनुष्य को दे दी, कि कम से कम इसको पढ़ो और इसके अनुसार अपने आपको जांच लो और यदि एक भी असुरी गुण हो तो सुधार लो। कारण कि जिसमें एक भी असुरी गुण होंगे वह नरक में ही जाएगा।

अध्याय का सारांश

● श्लोक नं. १६.१-१६.३ तक ऐसे गुणों का वर्णन है जिनसे स्वर्ग प्राप्त होती है।

● श्लोक नं. १६.४ से १६.२० तक ऐसे गुणों का वर्णन है जिसके कारण मनुष्य नरक में जाएगा।

● श्लोक नं. १६.२१-१६.२७ में काम, क्रोध और लोभ से बचने के लिए कहा है, क्योंकि यह भी नरक के द्वार हैं। इनका अध्याय में वर्णन करने का कारण यह है कि कड़ी मेहनत से यदि कोई अपने स्वभाव को तमस से सात्विक भी कर ले तब भी यह तीन भावनाएं उसमें स्वाभाविक तौर से हमेशा रहेंगी। सात्विक स्वभाव होने से काम, क्रोध और लोभ की भावना समाप्त नहीं हो जाएगी। इस कारण उन पर विशेष रुप से ध्यान देना होता है।

अध्याय

ईश्वर की प्रार्थना से उत्पन्न होने वाले गुण :-

१६.१

श्री भगवान उवाच,
अभयम् सत्व-संशुद्धिः ज्ञान योग व्यवस्थितिः।
दानम् दमः च यज्ञः च स्वाध्यायः तपः आर्जवम्
।।१।।

ईश्वर ने कहा, (कि उसके आदेश का पालन करने से जो अच्छे व्यवहार मनुष्य में उत्पन्न होते हैं वह यह है।)

निडर होना, शरीर और आत्मा की शुद्धि, पवित्र, स्वच्छ होना। ज्ञान के प्रकाश में ईश्वर से निकट होना (ईश्वर के सम्पर्क में रहना) ईश्वर की प्रार्थना में दृढता से स्थित रहना। दान देना। इच्छाओं को वश में रखना और अनिवार्य कर्तव्यों को पूरा करना और वेदों का अध्ययन करना। तप करना, सरल जीवनशैली अपनाना।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा! (अभयम्) निडर (निर्भय) होना (सत्व-संशुद्धिः) शरीर और आत्मा की शुद्धि, पवित्र, स्वच्छ होना। (ज्ञान योग) ज्ञान के प्रकाश में ईश्वर से निकट होना (ईश्वर के सम्पर्क में रहना) (व्यवस्थितिः) ईश्वर की प्रार्थना में दृढता से स्थित रहना (दानम्) दान देना (दम) इच्छाओं को वश में रखना (च) और (यज्ञः) अनिवार्य कर्तव्यों को पूरा करना (च) और (स्वाध्याय) वेदों का अध्ययन करना (तपः) तप करना (आर्जवम्) सरल जीवनशैली अपनाना।

नोटः यज्ञ का अर्थ समझने के लिए नोट नं. N-१३ पढ़िए।

१६.२

अहिंसा सत्यम् अक्रोधः त्यागः शान्तिः अपैशुनम।
दया भूतेषु अलोलुप्तवम् मार्दवम् हीः अचापलम् ।।२।।

हिंसा को त्याग देना, सदैव सत्य बोलना, क्रोध न करना, शानदार जीवन त्याग देना, अपने जीवन में और समाज में शान्ति के लिए प्रयास करना, चुगली न करना, (किसी की निंदा न करना) सारे प्राणियों पर दया करना, लोभ, लालच से दूर रहना, नरम स्वभाव का बनना, बुरे काम करने में शर्म महसूस करना (शील ग्रहण करना), वचन (प्रतिज्ञा) को पूरा करना।

(अहिंसा) हिंसा को त्याग देना (सत्यम्) सदैव सत्य बोलना (अक्रोध:) क्रोध न करना (त्याग:) शानदार जीवन त्याग देना (शान्ति:) अपने जीवन में और समाज में शान्ति के लिए प्रयास करना (अपैशुनम्) चुगली न करना (किसी की निंदा न करना) (दया भूतेषु) सारे प्राणियों पर दया करना (अलोलुप्तवम्) लोभ, लालच से दूर रहना, (मार्दवम्) नरम स्वभाव का बनना बुरे काम करने में शरम महसूस करना (शील ग्रहण करना) (अचापलम्) वचन प्रतिज्ञा को पूरा करना।

नोट १६.२ लुकमान हकीम ने अपने पुत्र को जो उपदेश दिए थे उनका वर्णन पवित्र कुरआन में इस प्रकार है।

''बेटा, नमाज कायम कर, (पढ़ते रहना) सत्कर्म का आदेश दे, बुराई से रोक, और जो मुसीबत भी पड़े उस पर सब्र कर। ये वे बातें है जिनकी बड़ी ताकीद की गई है। और लोगों से मुख फेरकर बात न कर, न धरती पर अकड़कर चल। ईश्वर किसी अहंकारी और डींग मारने वाले को पसंद नहीं करता। अपनी चाल में सन्तुलन बनाए रख, और अपनी आवाज़ तनिक धीमी रख, सब आवाजों में ज्यादा बुरी आवाज गधों की आवाज होती है। (सूरह-लुकमान-३१, आयत-१७-१८-१९)

नोट १६.३ सज्जन पुरुष के गुणों का वर्णन इस प्रकार है।

ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, जो कुछ भी तुम लोगों को दिया गया है वह सिर्फ दुनिया की कुछ दिनों की ज़िन्दगी का सामान है। और जो कुछ ईश्वर के यहाँ है वह अच्छा भी है और बाकी रहने वाला भी। वह उन लोगों के लिए है जो ईमान लाए हैं और अपने रब पर भरोसा करते हैं। जो बड़े-बड़े गुनाहों और अश्लील कर्मों से बचते हैं। और अगर गुस्सा आ जाए तो माफ कर जाते हैं। जो अपने रब का आदेश मानते हैं। नमाज कायम करते हैं। अपने मामले आपस के परामर्श से चलाते हैं। हमने जो कुछ भी रोज़ी उन्हें दी है उसमें से खर्च करते हैं। और जब उन पर ज़्यादती की जाती है तो उसका मुकाबला करते हैं। बुराई का बदला वैसी ही बुराई है, फिर जो कोई माफ कर दे और सुधार करे उसका बदला ईश्वर के ज़िम्मे है। ईश्वर ज़ालिमों को पसन्द नहीं करता। और जो लोग ज़ुल्म होने के बाद बदला लें तो उनकी निन्दा नहीं की जा सकती। निन्दनीय तो वे हैं जो दूसरों पर ज़ुल्म करते हैं और ज़मीन में नाहक ज़्यादतियाँ करते हैं। ऐसे लोगों के लिए दर्दनाक अज़ाब है। किन्तु जिसने धैर्य से काम लिया और क्षमा कर दिया तो निश्चय ही वह उन कामों में से है जो (सफलता के लिए) आवश्यक ठहरा दिए गए हैं। (तो यह हिम्मत के काम हैं) (पवित्र कुरआन ४२:३६-४३)

१६.३

तेजः क्षमा धृतिः शौचम् अद्रोहः न अति-मानिता।
भवन्ति सम्पदम् दैवीम् अभिजातस्य भारत।।३।।

स्वास्थ का अच्छा होना (शक्तिशाली होना)। दुसरों को क्षमा करना, अपने लक्ष्य पर दृढ़ता से स्थित रहना, स्वच्छ रहना, न द्वेष न शत्रुता रखना, दूसरों से आदर की अपेक्षा न रखना। हे अर्जुन, यह सब गुण ईश्वर के आदेश का पालन करने से मनुष्य को प्राप्त होते हैं, या उनमें उत्पन्न होते हैं।

(तेजः) स्वास्थ का अच्छा होना (शक्तिशाली होना) (क्षमा) दुसरों को क्षमा करना (धृतिः) अपने लक्ष्य पर दृढता से स्थित रहना (शौचम्) स्वच्छ रहना (अद्रोहः) न द्वेष न शत्रुता रखना (न अति-मानिता) दूसरों से आदर (सम्मान) की अपेक्षा न रखना (भारत) हे अर्जुन (भवन्ति) यह सब (सम्पदम्) गुण (दैवीम्) ईश्वर के आदेश का पालन करने से (अभिजातस्य) मनुष्य को प्राप्त होते है, या उनमें उत्पन्न होते है।

आसुर के प्रभाव से उत्पन्न होने वाले गुण :-

१६.४

दम्भः दर्पः अभिमानः च क्रोधः पारुष्यम् एव च।
अज्ञानम् च अभिजातस्य पार्थ सम्पदम् आसुरीम्।।४।।

(ईश्वर ने कहा की,)
हे अर्जुन! निःसंदेह यह गुण आसुर (शैतान के प्रभाव से) उत्पन्न होते हैं। धोखा देना (छल करना), अंहकार का होना, घंमड का होना, क्रोध करना, और कठोरता रखना, और ज्ञान और विवेक का न होना।

नोटः आसुर या शैतान को समझने के लिए नोट नं. N-18 पढ़िए।

(पार्थ) हे अर्जुन, (एव) निःसंदेह (सम्पदम्) यह गुण (आसुरीम्) आसुर (शैतान के प्रभाव से) (अभिजातस्य) उत्पन्न होते हैं। (दम्भः) धोखा देना (छल करना) (दर्पः) अहंकार का होना (अभिमान) घमंड का होना (क्रोधः) क्रोध करना (च) और (पारुष्यम्) और कठोरता रखना (अज्ञानम्) ज्ञान और विवेक का न होना।

१६.५

दैवी सम्पत् विमोक्षाय निबन्धाय आसुरी मता।
मा शुचः सम्पदम् दैवीम् अभिजातः असि पाण्डव।।५।।

(ईश्वर ने कहा) यह मेरा निर्णय है कि दिव्य गुण ईश्वर की क्षमा की तरफ ले जाते हैं। आसुरी गुण ईश्वर की पकड़ की तरफ ले जाते हैं। (किन्तु) हे अर्जुन (तुम) चिंता मत करो (कारण कि तुमने) दिव्य गुणों के साथ जन्म लिया है।

(मता) (ईश्वर ने कहा) यह मेरा निर्णय है कि (दैवी) दिव्य (सम्पत्) गुण (विमोक्षाय) ईश्वर की क्षमा की तरफ ले जाते हैं (आसुरी) आसुरी (शैतानी) गुण (निबन्धाय) ईश्वर की पकड़ की तरफ ले जाते हैं (पाण्डव) (किन्तु) हे अर्जुन (शुचः) (तुम) चिंता (मा) मत करो (दैवीम्) (कारण कि तुमने) दिव्य (सम्पदम्) गुणों के साथ (अभिजातः) जन्म लिया (असि) है।

आसुरी गुणों का वर्णन :-

१६.६

द्वौ भूत-सर्गो लोके अस्मिन् दैवः आसुरः एव च।
दैवः विस्तरशः प्रोक्तः आसुरम् पार्थ मे शृणु।।६।।

निःसंदेह, इस पृथ्वी लोक में मनुष्य के अंदर दो प्रकार के गुण होते हैं। दिव्य गुण और आसुरी (शैतानी) गुण। दिव्य गुणों को हे अर्जुन (तुम्हें) विस्तार से बता दिया गया। (अब) आसुरी (शैतानी) गुणों के बारे में मुझसे सुनो।

(एरा) नि:संदेह (अस्मिन) इस (लोके) पृथ्वी लोक में (भूत) मनुष्य के अंदर (द्वौ) दो प्रकार के (सर्गो) गुण होते हैं (दैव:) दिव्य गुण (च) और (आसूर:) आसुरी (शैतानी) गुण (दैव:) दिव्य गुणों को (पार्थ) हे अर्जुन (विस्तरश:) (तुम्हें) विस्तार से (प्रोक्त:) बता दिया गया (आसुरम्) (अब) आसुरी (शैतानी) गुणों के बारे में (मे) मुझसे (शृणु) सुनो।

१६.७

प्रवृत्तिम् च निवृत्तिम् च जनाः न विदुः आसुराः।
न शौचम् न अपि च आचारः न सत्यम् तेषु विद्यते।।७।।

आसुरी गुणों वाले लोग (यह) नहीं जानते कि उचित व्यवहार (क्या है) और अनुचित व्यवहार (क्या है)? और मन और शरीर की स्वच्छता को भी नहीं जानते। और उनके अच्छ चरित्र भी नहीं होते और न उनमें सच्चाई होती है।

(आसुरा:) आसुरी गुणों वाले लोग (न) (यह) नहीं (जना:) जानते कि (प्रवृत्तिम्) उचित व्यवहार (क्या है) (च) और (निवृत्तिम्) अनुचित व्यवहार (क्या है) (च) और (शौचम्) मन और शरीर की स्वच्छता को भी (न) नहीं (विदु:) जानते (च) और (आचार) (उनके अच्छे) चरित्र (अपि) भी (न) नहीं (होते) (च) और (न) न (तेषु) उनमें (सत्यम्) सच्चाई (विद्यते) होती है।

१६.८

असत्यम् अप्रतिष्ठम् ते जगत् आहुः अनीश्वरम्।
अपरस्पर सम्भूतम् किम-अन्यत् काम-हैतुकम् ।।८।।

वह कहते हैं, इस जगत (का) निर्माण बिना किसी उद्देश्य के हुआ है। यह असत्य है (इसकी कोई हकीकत नहीं)। न इसकी कोई बुनियाद है। (और) न ईश्वर का अस्तित्व है। और जीवन का उद्देश्य यौन संतुष्टि (Sexual gratification) के अतिरिक्त और क्या है?

(ते) वह (आहु:) कहते हैं (जगत्) इस जगत (का) (सम्भूतम्) निर्माण (अपरस्पर) बिना किसी उद्देश के हुआ है। (असत्यम्) यह असत्य है (इसकी कोई हकीकत नहीं) (अप्रतिष्ठम्) न इसकी कोई बुनियाद है (अनीश्वरम्) (और) न ईश्वर का अस्तित्व है। (हैतुकम्) और जीवन का उद्देश (काम) यौन संतुष्ठि (Sexual gratification) (अन्यत्) के अतिरिक्त (किम) और क्या है?

१६.९

एताम् दृष्टिम् अवष्टभ्य नष्ट आत्मानः अल्प-बुद्धयः।
प्रभवन्ति उग्र-कर्माणः क्षयाय जगतः अहिताः।।९।।

(अल्प-बुद्धय:) यह मूर्ख लोग (एताम) ऐसा (नष्ट) विनाशकारी (दृष्टिम्) दृष्टिकोण (अत्मान) स्वयम अपनाते है (अहिता:) (और

यह मूर्ख लोग ऐसा विनाशकारी दृष्टिकोण स्वयम अपनाते हैं, और एक शत्रु की तरह यह उठ खड़े होते हैं और ऐसे क्रूरता वाले काम करते हैं जो जगत का विनाश कर दे।

एक) शत्रु (की तरह) (प्रभवन्ति) यह उठ खड़े होते हैं। (उग्र-कर्माण:) और ऐसे क्रूरता वाले काम करते हैं (जगत) (जो) जगत का (क्षयाय) विनाश कर दे।

१६.१०

कामम् आश्रित्य दुष्पूरम् दम्भ मान मद-अन्विताः।
मोहात् गृहीत्वा असत् ग्राहान् प्रवर्तन्ते अशुचि व्रताः।।१०।।

कभी पूरी न होने वाली इच्छाओं के सहारे, छल और घमंड में डूबे हुए, अशुद्ध (नापाक) संकल्प को अपनाते हुए, अस्थायी और सांसारिक मामलों में यह उन्नति करते हैं।

(दुष्पूरम्) कभी पूरी न होने वाली (कामम्) इच्छाओं (आश्रित्य) के सहारे (दम्भ) छल (और) (मान) घमंड (मद-अन्विता:) में डूबे हुए (अशुचि) अशुद्ध (नापाक) (व्रता) संकल्प को (गृहीत्वा) अपनाते हुए (असत् ग्राहान्) अस्थायी और सांसारिक मामलों में यह (प्रवर्तन्ते) उन्नति करते हैं।

१६.११

चिन्ताम् अपरिमेयाम् च प्रलय-अन्ताम् उपाश्रिताः।
काम-उपभोग परमाः एतावत् इति निश्चिताः।।११।।

(असुरी गुणों वाले लोग)
इच्छाओं को पूरा करना (यही) (जीवन का) सबसे बड़ा (उद्देश्य) अपनाते हैं। ''अभी तो मेरे पास केवल इतना ही है'' (मुझे और बहुत कुछ प्राप्त करना है) (इस तरह का उनका) मज़बूत (दृष्टिकोण होता है), और (फिर) जीवन के अंत तक अनंत चिन्ताओं में घिरे रहते हैं।

(काम-उपभोग) इच्छाओं को पूरा करना (यही) (परमा:) (जीवन का) सबसे बड़ा (उद्देश्य) (उपश्रिता) अपनाते हैं। (एतावत् इति) अभी तो मेरे पास केवल इतना ही है (मुझे और बहुत कुछ प्राप्त करना है) (निश्चिता:) (इस तरह का उनका) मज़बूत (दृष्टिकोण होता है) (च) और (फिर) (प्रलय-अन्ताम्) जीवन के अंत तक (उपरिमेयाम्) अनंत (चिन्ताम्) चिन्ताओं में घिरे रहते हैं।

१६.१२

आशा-पाश शतैः बद्धाः काम क्रोध परायणाः।
ईहन्ते काम भोग अर्थम् अन्यायेन अर्थ सन्चयान् ।।१२।।

(असुरी गुणों के लोग)
सैंकडों आशाओं के जाल में फंसे रहते हैं। उनके मन पर सदैव इच्छाएं और क्रोध सवार रहते हैं।

(शतै) सैंकडों (आशा-पाश) आशाओं के जाल में (बद्धा:) फंसे रहते हैं। (परायणा:) (उनके मन पर) सदैव (काम:क्रोध:) इच्छाएं और क्रोध (सवार रहते हैं) (अन्यायेन) (वह) अवैध तरीके से (अर्थ) धन-सम्पत्ती (सन्चयान्) जमा करने में (और) (काम) मनचाही वस्तुओं से (भोग)

(वह) अवैध तरीके से धन-सम्पत्ति जमा करने में और मनचाही वस्तुओं से आनंद लेने के प्रयास में लगे रहते हैं।

आनंद लेने के (इहन्ते) प्रयास में लगे रहते हैं।

१६.१३

इदम् अद् मया लब्धम् इमम् प्राप्स्ये मनः रथम्।
इदम् अस्ति इदम् अपि मे भविष्यति पुनः धनम् ।।१३।।

(असुरी गुणों वाले लोगों का दृष्टिकोण यह होता हैं कि)
आज यह जो कुछ भी मुझे प्राप्त है वह मेरे कारण है। मेरे इस बुद्धिमान मस्तिष्क और प्रयास से है। यह जो कुछ है वह मेरा है। भविष्य में भी यह धन और अधिक होगा।

(अध) आज (इदम) यह (लब्धम्) जो कुछ भी मुझे प्राप्त है (मया) (वह) मेरे (कारण है) (इदम्) (मेरे) इस (मन:रथम्) बुद्धिमान मस्तिष्क और प्रयास से है (इदम्) यह (जो कुछ) (अस्ति) है (मे) (वह) मेरा (है) (भविष्यति) भविष्य में (अपि) भी (इदम) यह (धनम्) धन (पुन:) और (अधिक होगा)।

१६.१४

असौ मया हतः शत्रुः हनिष्ये च अपरान् अपि।
ईश्वरः अहम् भोगी सिद्ध अहम् बलवान् सुखी।।१४।।

(असुरी गुणों के लोग सोचते हैं कि:)
वह शत्रु मेरे द्वारा ही मारा गया है और दूसरों को भी मैं ही मारुंगा। मैं सबसे बड़ा हूँ। सबसे अधिक मौज-मस्ती करने वाला हूँ। मैं हर प्रकार से परिपूर्ण हूँ। मैं शक्तिशाली हूँ (और) सुखी हूँ।

(असौ) वह (शत्रु) शत्रु (मया) मेरे द्वारा ही (हत:) मारा गया है। (च) और (अपरान्) दूसरों का (अपि) भी (हनिष्ये) मैं ही वध करुंगा (ईश्वर अहम्) मैं सबसे बड़ा हूँ (अहम्-भोगी) सबसे अधिक मौज-मस्ती करने वाला हूँ (सिद्ध) मैं हर प्रकार से परिपूर्ण हूँ (आम बलवान) मैं शक्तिशाली हूँ (सुखी) (और) सुखी हूँ।

१६.१५

आढ्यः अभिजन-वान् अस्मि कः अन्यः अस्ति सदृशः मया।
यक्ष्ये दास्यामि मोदिष्ये इति अज्ञान विमोहिताः।।१५।।

अज्ञानता के कारण, गुमराह होकर (वह) इस

(अज्ञान) अज्ञानता (के कारण) (विमोहिता) गुमराह होकर (इति) (वह) इस तरह (विचार करता हैं की) (आढ्य:) (में) धनवान (अभिजन-वान्) सम्बन्धियों से घिरा (अस्मि) हूँ (मया) मेरे द्वारा ही (यक्ष्ये) (बड़े-बडे) ईश्वर की

नोट१६.१३ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''यही इन्सान जब ज़रा-सी मुसीबत इसे छू जाती है तो हमें पुकारता है, और जब हम इसे अपनी ओर से नेअमत देकर तृप्त कर देते हैं तो कहता है कि यह तो मुझे मेरे ज्ञान के कारण दिया गया है! नहीं, बल्कि यह परीक्षा है, मगर इनमें से ज़्यादातर लोग जानते नहीं है।'' (पवित्र कुरआन ३९:४९)

तरह विचार करता है कि, मैं धनवान सम्बन्धियों से घिरा हूँ। मेरे द्वारा ही बड़े-बडे ईश्वर की प्रसन्नता वाले कार्य किये जाते हैं। में बहुत अधिक दान देने वाला हूँ। मैं मौजमस्ती करने वाला हूँ। अब बताओ कि मेरे समान दूसरा कौन है?

प्रसन्नता वाले कार्य किये जाते हैं। (दास्यामि) में बहुत अधिक दान देने वाला हूँ (मोदिष्ये) मैं मौजमस्ती करने वाला हूँ (सदृश:) अब बताओ कि मेरे समान (अन्य:) दूसरा (क:) कौन (अस्ति) है?

१६.१६

अनेक चित्त विभ्रान्ताः मोह जाल समावृताः।
प्रसक्ताः काम-भोगेषु पतन्ति नरके अशुचौ।।१६।।

अनेक चिंताओं और उलझनों (और) भ्रम के जाल में फंसे हुए, मन की इच्छाओं को पूरा करने के आदि (addicted), मरने के बाद गंदे नर्क में उतर जाते हैं।

(अनेक) अनेक (चित्त) चिंताओं (और) (विभ्रान्ता:) उलझनों (मोह) (और) भ्रम (के) (जाल) जाल में (समावृता:) फंसे हुए (काम-भोगेषु) मन की इच्छाओं को पूरा करने के (प्रसक्ता:) आदि (addicted) (अशुचौ) (मरने के बाद) गंदे (नरके) नर्क (में) (पतन्ति) उतर जाते हैं।

१६.१७

आत्म-सम्भाविताः स्तब्धाः धन-मान मद अन्विताः।
यजन्ते नाम यज्ञै ते दम्भेन अविधि-पूर्वकम् ।।१७।।

(असुरी गुणों के लोग)
अपने गलत श्रद्धाओं को सही समझते हैं। इनकी प्रार्थनाएं, धन और सम्मान का दिखावा, घमंड, बेशर्म ढ़िठाई से भरी होती है। यह लोग नाम और दिखावे के लिए प्रार्थनाओं का आयोजन करते हैं। वह भी धार्मिक नियमों का पालन न करते हुए।

(आत्म-सम्भाविता:) अपने गलत श्रद्धाओं को सही समझते हैं (यज्ञै) इनकी प्रार्थनाएं (धन-मान) धन और सम्मान का दिखावा (मद) घमंड (स्तब्धा) बेशर्म ढ़िठाई (अन्विता:) से भरी होती है (ते) यह लोग (नाम) नाम (दम्भेन) और दिखावे के लिए (यजन्ते) प्रार्थनाओं का आयोजन करते हैं। (अविधि-पूर्वकम्) वह भी धार्मिक नियमों का पालन न करते हुए।

नोट १६.१७ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''मुझे पुकारो, मैं तुम्हारी दुआएँ कबूल करुँगा, जो लोग घमण्ड में आकर मेरी बन्दगी से मुँह मोड़ते हैं, जरुर वे अपमानित होकर जहन्नम में प्रवेश करेंगे।'' (पवित्र कुरआन ४०:६०)

१६.१८

अहङ्कारम् बलम् दर्पम् कामम् क्रोधम् च संक्षिताः।
माम् आत्म पर देहेषु प्रद्विषन्तः अभ्यसूयकाः।।१८।।

(ईश्वर ने कहा की) घमंड, शक्ति, गर्व, काम भावना, और क्रोध में डुबे हुए यह लोग, मैं जो आत्मा और शरीर से परे हूँ मुझसे शत्रुता रखता है, और आलोचना करता है।

(अहङ्कारम्) घमंड (बलम्) शक्ति (दर्पम्) गर्व (कामम्) काम भावना (और) (क्रोधम) क्रोध (संक्षिताः) में डुबे हुए (यह लोग) (माम) में (जो) (आत्मा) आत्मा (और) (देहेषु) शरीर से (पर) परे हूँ (अभ्यसूयकाः) (मुझसे) शत्रुता रखता है (प्रद्विषन्त) (और) आलोचना करता है।

आसुरी गुण वाले व्यक्तियों का अनजाम :-

१६.१९

तान् अहम् द्विषतः क्रुरान् संसारेषु नर-अधनाम्।
क्षिपामि अजस्त्रम् अशुभान् आसुरीषु एव योनिषु।।१९।।

मैं (इन) घिनौने, निर्दयी, और मनुष्यों में सबसे नीच लोगों को सदा के लिए गंदे संसार (नर्क में) (जहाँ) असुरों के वंश रखे जाते हैं उसमें फेंक देता हूँ।

(अहम्) मैं (इन) (द्विषत) घिनौने (क्रुरान्) निर्दयी (नर-अधनाम्) और मनुष्यों में सबसे नीच लोगों को (अजस्त्रम्) सदा के लिए (अशुभान) गंदे (संसारेषु) संसार (नर्क में) (आसुरीषु योनिषु) (जहाँ) असुरों के वंश रखे जाते हैं (क्षिपामि) फेंक देता हूँ।

१६.२०

आसुरीम् योनिम् आपन्नाः मूढाः जन्मनि जन्मनि।
माम् अप्राप्य एव कौन्तेय ततः यान्ति अधमाम् गतिम् ।।२०।।

(मूढा) यह मूर्ख लोग (आसूरीम् योनिम्) असुरों के वंश में (जन्मनि जन्मनि) हर मृत्यु के बाद जीवन (आपन्ना) पाते हैं (और) (अधमाम् गतिम्)

नोट १६.१९ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''ये दो फरीक़ (समुदाय) हैं जिनके बीच अपने ईश्वर के विषय में झगड़ा है। इनमें से वे लोग जिन्होंने इन्कार किया उनके लिए आग के वस्त्र काटे जा चुके हैं। उनके सिरों पर खौलता हुआ पानी डाला जाएगा जिससे उनकी खालें ही नहीं पेट के भीतर के भाग तक गल जाएँगे, और उनकी खबर लेने के लिए लोहे के गुर्ज (गदाएँ) होंगे। जब कभी वे घबराकर जहन्नम (नरक) से निकलने की कोशिश करेंगे तो फिर उसी में ढकेल दिए जाएेंगे कि चखो अब जलने की सजा का मज़ा। (पवित्र कुरआन २२:१९-२२)

नोट १६.२० पवित्र कुरआन में लिखा है कि, ''जो ईश्वर से ड़रता है वह ईश्वर के आदेशों का पालन करेगा। जो ईश्वर से नहीं डरता वह अभागा आदेश नहीं मानेगा। यह प्रलय के दिन बड़ी आग में ड़ाला जाएगा। फिर वह वहाँ न मरेगा न जिएगा। निस्संदेह! वह सफल हुआ जो पवित्र हुआ और अपने ईश्वर के नाम का जाप करता रहा और नमाज़ पढ़ता रहा। मगर तुम लोग तो सांसारिक जीवन को महत्त्व देते हो। जबकि अन्य लोक का जीवन अमर जीवन है। यह बात पहले के ग्रंथों में लिखी हुई है। यानी इब्राहीम और मूसा के ग्रन्थों में '' (सूरे अल-आला-८७, आयत-१०-१९)

यह मूर्ख लोग असुरों के वंश में हर मृत्यु के बाद जीवन पाते हैं और नर्क के सबसे निचले भाग तक चले जाते है। इस तरह निःसंदेह, हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! यह मुझे कभी प्राप्त नहीं कर पाते।

नर्क के सबसे निचले भाग तक (यान्ति) चले जाते हैं। (ततः) इस तरह (एव) निःसंदेह (कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) (माम) (यह) मुझे (अप्राप्य) कभी प्राप्त नहीं कर पाते।

कामः, क्रोधः और लोभ भी विनाशक के गुण (या भावनाऐं) है :-

१६.२१

त्रिविधम् नरकस्य इदम् द्वारम् नाशनम् आत्मनः।
कामः क्रोधः तथा लोभः तस्मात् एतत् त्रयम् त्यजेत।।२१।।

तीन भावनाएं भी मनुष्य के लिए विनाश का कारण है (वह है) अपनी इच्छाओं को पूरा करना, लालच और क्रोध। यह तीनों भावनाएं भी नर्क के द्वार हैं। इस कारण इन तीनों भावनाओं को भी त्याग देना चाहिए।

(त्रिविधम) तीन भावनाएं भी (आत्मनः) मनुष्य (के लिए) (नाशनम्) विनाश का कारण है (वह है) (कामः) अपनी इच्छाओं को पूरा करना (लोभः) लालच (क्रोधः) और क्रोध (इदम्) यह (तीनों भावनाएं भी) (नरकस्य) नर्क (के) (द्वारम्) द्वार हैं (तस्मात्) इस कारण (एतत्) इन (त्रयम्) तीनों भावनाओं को भी (त्यजेत) त्याग देना चाहिए।

१६.२२

एतैः विमुक्तः कौन्तेय तमः-द्वारैः त्रिभिः नरः।
आचरति आत्मनः श्रेयः ततः याति पराम् गतिम् ।।२२।।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) (ना) जो मनुष्य (एतैः) इन (त्रिभिः) तीनों (भावनाओं से) (विमुक्तः) मुक्ति पा लेता है (तमः) (जो की

नोट १६.२१ पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा कि, तीन बातें विनाश करने वाली है।

१. लालच और कंजुसी
२. अपनी इच्छाओं के अनुसार जीवन व्यतीत करना (धर्म को छोड़कर)
३. अपने आपको दूसरों से अच्छा समझना। (हदीस-तिबरानी अवसत-५४५२)

नोट १६.२१ पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा कि, निःसंदेह! क्रोध शैतान की तरफ से होता है (आसूरी गुण) (हदीस-अबुदाऊद-४७८४)

नोट १६.२१ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, कोई व्यक्ति दुसरे व्यक्ति के पापों का बोझ नहीं उठाएगा। मनुष्य को वही मिलता है जिसका वह प्रयास करता है। और उसका प्रयास भी देखा जाएगा। फिर उसे पूरा बदला दिया जाएगा। अर्थात अगर स्वर्ग को प्राप्त करने के लिए प्रयास करेगा तो ही उसे स्वर्ग मिलेगा। और पुण्य भी जांचे जाऐंगे की निस्वार्थ किए गए हों। दिखावे के लिए किए गए पुण्य का कुछ बदला नहीं मिलेगा। (सूरे अनजुम-५३ आयत-३८-४१)

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! जो मनुष्य इन तीनों भावनाओं से मुक्ति पा लेता है, जो की अज्ञानता के द्वार हैं, और अपने आचरण को ऊपर उठाता है, वह ईश्वर की शरण प्राप्त कर लेता है। इस तरह वह सबसे महान लक्ष्य अर्थात स्वर्ग प्राप्त कर लेता है।

अज्ञानता के) (द्वारैः) द्वार हैं (आचरति) और अपने आचरण को ऊपर उठाता है (वह) (आत्मनः) ईश्वर की (श्रेयः) शरण (प्राप्त कर लेता है) (ततः) इस तरह (वह) (पराम् गतिम्) सबसे महान लक्ष्य (अर्थात स्वर्ग) (याति) प्राप्त कर लेता है।

१६.२३

यः शास्त्र-विधिम् उत्सृज्य वर्तते काम-कारतः।
न सः सिद्धिम् अवाप्नोति न सुखम् न पराम् गतिम् ।।२३।।

जो व्यक्ति (केवल) अपनी इच्छाओं को पूरा करने का काम करता है। धार्मिक नियमों को छोड़ देता है, वह न प्रार्थनाओं में परिपूर्णता (Perfection) प्राप्त कर पाता है और न जीवन में सुख पाता है और न सबसे श्रेष्ठ जीवन का लक्ष्य अर्थात स्वर्ग प्राप्त कर पाता है।

(यः) जो (व्यक्ति) (काम-कारतः) (केवल) अपनी इच्छाओं को पूरा करने का काम (वर्तत) करता है। (शास्त्र-विधिम्) धार्मिक नियमों को (उत्सृज्य) छोड़ देता है (सः) वह (न) न (सिद्धिम्) प्रार्थनाओं में परिपूर्ण (अवाप्नोति) प्राप्त कर पाता है (न) (और) न (सुखम्) (जीवन में) सुख (पाता है) (न) (और) न (पराम् गतिम्) सबसे श्रेष्ठ जीवन का लक्ष्य (अर्थात) स्वर्ग प्राप्त कर पाता है।

ईश्वर का महत्त्वपूर्ण आदेश :-

१६.२४

तस्मात् शास्त्रम् प्रमाणम् ते कार्य अकार्य व्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्र विधान उक्तम् कर्म कर्तुम् इह अर्हसि।।२४।।

इस कारण तुम्हारे कर्तव्य क्या है? और क्या कार्य आपको नहीं करना है, इसका निर्णय करने के लिए धार्मिक ज्ञान ही तुम्हारा प्रमाण होना चाहिए। इस कारण शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करो, धर्म के नियमों को समझो, ईश्वर के आदेशों को जानो, और इस संसार में इन्हीं के अनुसार अपने कर्तव्य को पूरा करो।

(तस्मात्) इस कारण (ते) तुम्हारे (कार्य) कर्तव्य क्या है (अकार्य) और क्या कार्य आपको नहीं करना है। (व्यवस्थितौ) इसका निर्णय करने के लिए (शास्त्रम् प्रमाणम्) धार्मिक ज्ञान ही तुम्हारा प्रमाण होना चाहिए (ज्ञात्वा शास्त्र) (इस कारण) शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करो (विधान) धर्म के नियमों को समझो (उक्तम्) ईश्वर के आदेशों को जानो (इह) (और) इस संसार में (अर्हसि) (इन्हीं के) अनुसार (कर्म) अपने (अनिवार्य) कर्तव्य को (कर्तुम्) पूरा करो।

अध्याय नं. १७

श्रद्धात्रय विभाग योग

अर्जुन उवाच
ये शास्त्रविधिमुत्सृज्य यजन्ते श्रद्धयान्विताः।
तेषां निष्ठा तु का कृष्ण सत्त्वमाहो रजस्तमः॥1॥

श्रीभगवानुवाच
त्रिविधा भवति श्रद्धा देहिनां सा स्वभावजा।
सात्त्विकी राजसी चैव तामसी चेति तां श्रृणु॥2॥

सत्त्वानुरूपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धामयोऽयं पुरुषो यो यच्छ्रद्धः स एव सः॥3॥

यजन्ते सात्त्विका देवान्यक्षरक्षांसि राजसाः।
प्रेतान्भूतगणांश्चान्ये जयन्ते तामसा जनाः॥4॥

अशास्त्रविहितं घोरं तप्यन्ते ये तपो जनाः।
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः कामरागबलान्विताः॥5॥

कर्शयन्तः शरीरस्थं भूतग्राममचेतसः।
मां चैवान्तःशरीरस्थं तान्विद्ध्यासुरनिश्चयान्॥6॥

आयुः सत्त्वबलारोग्यसुखप्रीतिविवर्धनाः।
रस्याः स्निग्धाः स्थिरा हृद्या आहाराः
सात्त्विकप्रियाः॥7॥

कट्वम्ललवणात्युष्णतीक्ष्णरूक्षविदाहिनः।
आहारा राजसस्येष्टा दुःखशोकामयप्रदाः॥8॥

यातयामं गतरसं पूति पर्युषितं च यत्।
उच्छिष्टमपि चामेध्यं भोजनं तामसप्रियम्॥9॥

अफलाकाङ्क्षिभिर्यज्ञो विधिदृष्टो य इज्यते।
यष्टव्यमेवेति मनः समाधाय स सात्त्विकः॥10॥

अभिसन्धाय तु फलं दम्भार्थमपि चैव यत्।
इज्यते भरतश्रेष्ठ तं यज्ञं विद्धि राजसम्॥11॥

विधिहीनमसृष्टान्नं मन्त्रहीनमदक्षिणम्।
श्रद्धाविरहितं यज्ञं तामसं परिचक्षते॥12॥

देवद्विजगुरुप्राज्ञपूजनं शौचमार्जवम्।
ब्रह्मचर्यमहिंसा च शारीरं तप उच्यते॥13॥

अनुद्वेगकरं वाक्यं सत्यं प्रियहितं च यत्।
स्वाध्यायाभ्यसनं चैव वाङ्मयं तप उच्यते॥14॥

मनः प्रसादः सौम्यत्वं मौनमात्मविनिग्रहः।
भावसंशुद्धिरित्येतत्तपो मानसमुच्यते॥15॥

श्रद्धया परया तप्तं तपस्तत्त्रिविधं नरैः।
अफलाकाङ्क्षिभिर्युक्तैः सात्त्विकं परिचक्षते॥16॥

सत्कारमानपूजार्थं तपो दम्भेन चैव यत्।
क्रियते तदिह प्रोक्तं राजसं चलमध्रुवम्॥17॥

मूढग्राहेणात्मनो यत्पीडया क्रियते तपः।
परस्योत्सादनार्थं वा तत्तामसमुदाहृतम्॥18॥

दातव्यमिति यद्दानं दीयतेऽनुपकारिणे।
देशे काले च पात्रे च तद्दानं सात्त्विकं स्मृतम्॥19॥

यत्तु प्रत्युपकारार्थं फलमुद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टं तद्दानं राजसं स्मृतम्॥20॥

अदेशकाले यद्दानमपात्रेभ्यश्च दीयते।
असत्कृतमवज्ञातं तत्तामसमुदाहृतम्॥21॥

ॐ तत्सदिति निर्देशो ब्रह्मणस्त्रिविधः स्मृतः।
ब्राह्मणास्तेन वेदाश्च यज्ञाश्च विहिताः पुरा॥22॥

तस्मादोमित्युदाहृत्य यज्ञदानतपः क्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधानोक्तः सततं ब्रह्मवादिनाम्॥23॥

तदित्यनभिसन्दाय फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाश्चविविधाःक्रियन्ते क्षकाङ्क्षिभिः॥24॥

सद्भावे साधुभावे च सदित्यतत्प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सच्छब्दः पार्थ युज्यते॥25॥

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सदिति चोच्यते।
कर्म चैव तदर्थीयं सदित्यवाभिधीयते॥26॥

अश्रद्धया हुतं दत्तं तपस्तप्तं कृतं च यत्।
असदित्युच्यते पार्थ न च तत्प्रेत्य नो इह॥27॥

अध्याय का परिचय

किसी कॉलेज में (Final year) अंतिम वर्ष के छात्रों के लिए (Preliminary examinations) प्रारंभिक परीक्षा होती है। इसी प्रकार जो व्यक्ति पूरी तरह से धार्मिक हो गया है। या जो धार्मिक नियमों के पालन का पूरा प्रयास करता है। यह अध्याय उसके लिए प्रारंभिक परीक्षा का पेपर है, (चेक लिस्ट) जांच सूची है।

सबसे बड़ी और महत्त्वपूर्ण शिक्षा जो इस अध्याय में है, वह यह है कि अवतारित ग्रंथ में लिखे आदेशों का पालन करना अनिवार्य है। अवतारीत ग्रंथ है वेद और इस भगवद गीता की शिक्षा। यदि कोई व्यक्ति सुनी-सुनाई बातों के अनुसार धार्मिक है, और इन ग्रंथो को नहीं मानता है, तो उसे श्लोक नं. १७.६ में आसुर कहा है।

अध्याय का सारांश

- श्लोक नं. १७.२ और १७.३ में इस सत्य का वर्णन है कि जैसे मनुष्य में सत्व, रजो, और तमों गुण जन्म से होते हैं, इसी प्रकार ईश्वर में श्रद्धा के गुण भी हर व्यक्ति में जन्म से होते हैं। उसके बाद जब वह समाज और परिवार की संस्कृति के अनुसार जीवन व्यतीत करता है तो उसके गुण और श्रद्धा भी समाज और परिवार के गुणों और श्रद्धा के अनुसार हो जाते हैं।

- श्लोक नं. १७.४ में लिखा है कि तीनों गुण वालों की प्रार्थनाएं भी अलग अलग होती हैं। सत्व गुण वाले ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। रजो गुण वाले यक्ष और राक्षसियों की, और तमो गुण वाले, भूत-प्रेत और दूसरों की प्रार्थना करते हैं। तो मनुष्य जिनकी प्रार्थना करते हैं; (वह) उनसे अपने आपको पहचान लें कि उसका स्वभाव किस गुण का है।

- श्लोक नं. १७.४ से १७.१० में तीनों गुणों वालो के प्रिय भोजन का वर्णन है। मनुष्य अपने पसंद के भोजन से अपने स्वभाव को पहचान सकता है कि वह सात्विक है या रजो है या तमो गुण का है।

- श्लोक नं. १७.११ से १७.१३ में तीनों गुण वाले यज्ञ किस तरह करते हैं इसका वर्णन है। (स्वामी रामसुखदास जी के श्लोक नं. १६.१ की व्याख्या में यज्ञ को अनिवार्य कर्तव्य का पालन करना कहा है)

- श्लोक नं. १७.१४ से १७.१६ में शरीर के, बातचित के और मन (सोच विचार) के तप का वर्णन है।

तप का अर्थ है वह दृढ संकल्प और शारीरिक कृत्य (Act) जो धार्मिक नियमों के अनुसार हो और जिससे शरीर को कष्ट हो और जिसका लक्ष्य मन, शारीरिक अंगो, और आत्मा को वश में रखना हो।

- १७.१७ से १७.२२ तक इसका वर्णन है कि लोग पुण्य के लक्ष्य से तप और दान करते हैं। किन्तु स्वभाव के अनुसार तीनों गुणों वालों के तप और दान भी अलग-अलग प्रकार के होते हैं। तो मनुष्य अपने आप पर ध्यान करे और सात्विक होने का प्रयास करे।

- जितने देवी देवता है, जितने अवतार हैं, उनके बारे में हमें सब कुछ पता है किन्तु आकाशवाणी या ईश्वर या ब्रह्म के बारे में हमे कुछ भी ज्ञान नहीं है। इसी भगवद गीता में ईश्वर ने कहा है कि वेदों का पढ़ना मनुष्य को विष के समान लगता है किन्तु इसका परिणाम अमृत

की तरह है। हम वेद नहीं पढ़ते इस कारण हमें ईश्वर के बारे में कुछ पता नहीं। ऋग्वेद में मुख्य विषय ईश्वर की स्तुति, प्रशंसा और प्रार्थना ही है।

● दयालु ईश्वर ने कृपा किया और इस दिव्य ग्रंथ में भी अपने तीन नाम बताए। उन नामों का महत्त्व इस प्रकार है।

श्लोक नं. १७.२३ में ईश्वर ने अपने तीन नाम ॐ, तत और सत बताए। ॐ नाम का महत्त्व यह है कि ईश्वर ने मानवजाति पर कृपा किया और अपना एक नाम बताया, जिसको किसी भी काम के आरंभ करने के पहले कहने से वह काम सफल होता है। कठिनाईयाँ कम होती हैं। और उससे लाभ प्राप्त होता है। मरते समय कहने से स्वर्ग प्राप्त होता है। इस कारण ईश्वर ने मानवजाति को आदेश दिया कि प्रार्थना और हर काम के पहले ॐ कहा करें।

तो यह नाम मुंह से कहकर आवाज़ से ईश्वर को याद करने वाला नाम है।

● ईश्वर का दूसरा नाम है तत: इसका अर्थ है ''वह।''

जब कोई बड़ी घटना होती है या ऐसा काम होता है जो मनुष्य के नियंत्रण से बाहर होता है तो हम कहते हैं।

''उसकी इच्छा थी।''

हमारे उस कहने का अर्थ होता है कि ईश्वर की इच्छा थी। ईश्वर के इस नाम का महत्त्व यह है कि हम जानते हैं ''वह'' है, जो देख रहा है, सुन रहा है, कृपा करेगा, स्वर्ग देगा। और हम उसे प्रसन्न करने यज्ञ, दान और तप करते हैं। अर्थात शारीरिक कर्म के द्वारा हम उसे प्रसन्न करते हैं। तो इस नाम का महत्त्व यह है कि 'वह' देख रहा है इसे सदैव याद रखो और अच्छे कर्म को।

● ईश्वर का तीसरा नाम है सत (सत्य या सच्चाई या हक)

इसका अर्थ इस प्रकार समझने का प्रयास करें। ईश्वर सत है, ईश्वर हमेशा था, है और रहेगा। अर्थात ईश्वर स्थायी है। पुण्य का परिणाम भी स्थायी होता है। वह सदा रहता है। मरने के बाद आपको स्वर्ग में मिलेगा और सदैव आपके साथ रहेगा।

दान देना पुण्य है। आपने दान दिया किन्तु आपका लक्ष्य प्रसिद्धि प्राप्त करना था। तो इस पुण्य के कर्म से आप केवल प्रसिद्ध होंगे पुण्य नही कमा पाओगे।

तो अंदर की भावना जो कोई न देख सकता है न परख सकता है, कर्मो का फल उस भावना पर निर्भर करता है।

तो जब मनुष्य अंदर से सत होगा सच्चाई पर होगा तब ही वह शारीरिक तौर से जो करता है वह पुण्य कहलाएगा। और उसका परिणाम स्थाई होगा। तो ईश्वर का तीसरा नाम सत है। हम अपने लक्ष्य को, सोच विचार को, मनोदृष्टी को नज़रिये को, सत करके उसको याद करते हैं। तो फिर जैसे ईश्वर स्थायी है हमारे कर्म का पुण्यफल भी स्थायी होगा।

● तो यह श्लोक नं. १७.२३ स्वर्ग दिलाने वाला श्लोक है। हम हमेशा ॐ कहकर किसी भी काम का आरंभ करें। हमेशा याद रखें, कि 'वह' देख रहा है। और हमारे अंदर सदैव सत की भावना हो। कोई दिखावा, कोई स्वार्थ, कोई छल-कपट न हो। केवल शुद्ध सत रहे।

● अन्त में ईश्वर ने श्लोक नं. १७.२८ में कहा कि ईश्वर में श्रद्धा के बिना यज्ञ, दान और तप सब असत है। न इसका इस संसार में और न (प्रेत्य) मृत्यु के बाद कुछ फल मिलेगा।

अध्याय

१७.१

अर्जुन उवाच, ये शास्त्र-विधिम् उत्सृज्य यजन्ते श्रद्धया अन्विताः।
तेषाम् निष्ठा तु का कृष्ण सत्वम् आहो रजः तमः।।१।।

अर्जुन ने कहा, वह जो धार्मिक शास्त्रों के नियमों को नहीं मानते, किन्तु ईश्वर की प्रार्थना करते हैं पूरी श्रद्धा के साथ। हे श्री कृष्ण! उनके श्रद्धा की क्या हकीकत है? क्या वह सत्व गुण वाले हैं या रजो गुण वाले हैं, या तमो गुण वाले हैं?

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (ये) वह जो (शास्त्र-विधिम्) धार्मिक शास्त्रों के नियमों को (उत्सृज्य) नहीं मानते (तु) किन्तु (यजन्ते) ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। (श्रद्धया अन्विता:) पूरी श्रद्धा के साथ (कृष्ण) हे श्री कृष्ण (तेषाम्) उनके (निष्ठा) श्रद्धा की (का) क्या हकीकत है? (सत्वम्) (क्या वह) सत्व गुण (वाले हैं या) (रज:) रजो गुण (वाले हैं) (आहो) या (तम:) तमो गुण (वाले हैं)?

ईश्वर में श्रद्धा जन्म से मनुष्य के स्वभाव में है :-

१७.२

श्री भगवान उवाच त्रि-विधा भवति श्रद्धा देहिनाम् सा।
स्व-भाव-जा सात्विकी राजसी च एव तामसी च इति ताम् शृणु।।२।।

ईश्वर ने (श्री कृष्ण के माध्यम से) कहा, (जिस तरह) तीन गुण सत्व, रजो, तमो गुण शरीर वाले मनुष्य में उत्पन्न किए गए हैं। इसी प्रकार वह एक ईश्वर में श्रद्धा भी जन्म से ही मनुष्य के स्वभाव में उत्पन्न किया गया है। सुनो और अच्छी तरह जान लो कि जिस तरह सत्व गुण, रजो गुण, और तमो गुण (मनुष्य में है), नि:संदेह, वह एक ईश्वर में श्रद्धा भी इसी तरह मनुष्य के स्वभाव में जन्म से है।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने श्री कृष्ण के माध्यम से कहा (त्रि-विधा) (जिस तरह) तीन गुण (सत्व, रजो, तमो गुण) (देहिनाम्) शरीर वाले (मनुष्य में) (भवति) उत्पन्न किए गए हैं। (सा) (इसी प्रकार) वह (श्रद्धा) (एक ईश्वर में) श्रद्धा (जा) जन्म से ही (स्व-भाव) (मनुष्य के) स्वभाव (में उत्पन्न किया गया है) (शृणु) सुनो (और अच्छी तरह जान लो कि जिस तरह) (सात्विकी) सत्व गुण (राजसी) रजो गुण (च) और (तामसी) तमो गुण (मनुष्य में है) (एव) नि:संदेह (ताम्) वह (एक ईश्वर में श्रद्धा भी) (इति) इसी तरह (मनुष्य के स्वभाव में जन्म से है।)

नोट१७.१ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, और (एक ईश्वर को न मानने वालों) में से अधिकतर लोग तो बस कल्पना (अटकल) पर चलते है। इसमें कोई सन्देह नहीं कि कल्पना सत्य के मुकाबले में कुछ भी उपयोगी नहीं। जो कुछ ये कर रहे हैं ईश्वर उसे भली-भांती जानता है। (सूरे युनूस-१०, आयत-३६)

मनुष्य की श्रद्धा कैसे बदलती है :-

१७.३

सत्व-अनुरुपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत।
श्रद्धा मयः अयम् पुरुषः यः यत् श्रद्धः सः एव सः।।३।।

हे भारत (अर्जुन)! सारे लोगों में एक ईश्वर में श्रद्धा जो सत्वगुण की तरह है वह जन्म से ही मनुष्य के अंदर होता है। उसके बाद जो मनुष्य जिस प्रकार के श्रद्धा के साथ इस संसार में जीवन व्यतीत करता है वह नि:संदेह उसी श्रद्धा के साथ होता है जब वह मृत्यु पाता है।

(भारत) हे भारत (अर्जुन) (सर्वस्य) सारे लोगों में (श्रद्धा) (एक ईश्वर में) श्रद्धा (सत्व) सत्वगुण (अनुरुपा) की तरह है (भवति) (वह जन्म से ही मनुष्य के अंदर) होती है (य:) (उसके बाद) जो (पुरुष:) मनुष्य (मय:) जिस प्रकार के (श्रद्धा) श्रद्धा (के साथ) (अयम्) इस संसार में (जीवन व्यतीत करता है) (स:) वह (एव) नि:संदेह (यत्) उसी (श्रद्धा) श्रद्धा (के साथ होता है जब) (स:) वह (मृत्यु पाता है)।

तिनों गुण वाले किसकी उपासना करते हैं :-

१७.४

यजन्ते सात्विकाः देवान् यक्ष-रक्षांसि राजसाः।
प्रेतान् भूत-गणान् च अन्ये यतन्ते तामसाः जनाः।।४।।

(मनुष्य तीन प्रकार की श्रद्धा के साथ जीवन व्यतीत करता है, और उसी श्रद्धा के साथ मृत्यु पाता है)

सत्व गुण वाले ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। रजो गुण वाले यक्ष और राक्षसों की प्रार्थना करते हैं। तमो गुण के लोग मरे हुए लोगों की आत्माओं की और भूतों की और अन्य (शक्तियों की) प्रार्थना करते हैं।

(सात्विका:) सत्व गुण वाले (देवान्) ईश्वर की प्रार्थना करते हैं (राजस:) रजो गुण वाले (यक्ष-रक्षांसि) यक्ष और राक्षस (शैतान) की प्रार्थना करते हैं। (तामसा: जना:) तमो गुण के लोग (प्रेतान्) मरे हुए लोगों की आत्माओं की और (भूत-गणान्) भूतों की (च) और (अन्य) अन्य (शक्तियों की) (यतन्ते) प्रार्थना करते हैं।

(अर्थात- जन्म से सबमें एक ईश्वर की श्रद्धा की भावना ही होती है, किन्तु समाज और परिवार की संस्कृति और शिक्षा के कारण वह जीवन में दूसरों की प्रार्थना करने लगता है।)

नोट १७.३ श्लोक नं. १७.३ में लिखा है कि, आप जिस गुण के अनुसार जीवन गुजारोंगे, आपकी मृत्यु उसी अवस्था में होगी। श्लोक नं. १४.१५ के अनुसार रजो गुण, और तमो गुण वालों का नर्क में जाना अटल है।

दयालु ईश्वर ने इस अध्याय में अपने आपको पहचानने का तरीका बताया है। भोजन, यज्ञ, तप, तथा दान यह तीनों गुण वालो के अलग अलग होते हैं। यह चारों काम हम किस तरह करते हैं इससे हम अपने आपको पहचान सकते हैं। और सत्व गुण अपने में उत्पन्न करने का प्रयास कर सकते हैं।

अवतरित ग्रन्थों को न मानने वाले असुरी गुण के हैं। :-

१७.५

अ-शास्त्र विहितम् घोरम् तप्यन्ते ये तपः जनाः।
दम्भ अहकार संयुक्ताः काम राग बल अन्विताः।।५।।

पाखंड, कपट, अहंकार, अपनी इच्छा पूर्ति में व्यस्त, क्रोध और सत्ता से प्रभावित होकर वह जो शास्त्रों को न मानते हुए जीवन व्यतीत करता है। वह तप: (ईश्वर की प्रार्थना करने वाले) लोगों को घोर यातनाएं देते हैं।

(दम्भ) पाखंड, कपट (अहंकार) अहंकार (संयुक्ता: काम) अपनी इच्छा पूर्ति में व्यस्त (राग बल) क्रोध और सत्ता से (अन्विता:) प्रभावित होकर (ये) वह जो (अशास्त्र विहितम्) शास्त्रों को न मानते हुए जीवन व्यतीत करता है वह (तप: जना:) तप: (ईश्वर की प्रार्थना करने वाले) लोगों को (घोरम् तप्यन्ते) घोर यातनाएं देते हैं।

१७.६

कर्षयन्तः शरीर-स्थम् भृत-ग्रामम् अचेतसः।
माम् च एरा अन्तः शरीरस्थम् तान विद्धी आसुर-निश्चयान् ।।६।।

नि:संदेह, अनेक प्रकार के प्राणियों के शरीर का निर्माण करके, उन्हें स्थित रखने वाले, और शरीर के अंदर हृदय में स्थित मुझ न दिखाई देने वाले ईश्वर को यह लोग हृदय से निकाल देना चाहते हैं। इन लोगों को निश्चय ही असूर समझो।

(जो प्रश्न अर्जुन ने श्लोक नं. १७.१ में किया था उसका उत्तर इस श्लोक में है)

(एरां) नि:संदेह (भृत-ग्रामम्) अनेक प्रकार के प्राणियों के (शरीर) शरीर (का निर्माण करके) (स्थम्) उन्हें स्थित रखने वाले (च) और (शरीर) शरीर के (अन्त) अंदर (हृदय में) (स्थम्) स्थित (माम) मुझ (अचेतस:) न दिखाई देने वाले (ईश्वर को यह लोग हृदय से) (कर्शयन्त:) निकाल देना चाहते हैं। (तम) इन लोगों को (निश्चयान) निश्चय ही (आसुर) असूर (विद्धि) समझो।

नोट १७.५ जो लोग ईश्वर को नहीं मानते और केवल कल्पना के अनुसार धर्म का अनुसरण करते हैं, वे ईश्वर में श्रद्धा रखने वालों पर अत्याचार करते है जिन पर अत्याचार हुआ उनके बारे में निम्नलिखित श्लोक हैं।

''वे (ईश्वर में श्रद्धा रखने वाले) लोग अनुचित रुप और बिना कारण के अपने घरों से निकाल दिए गए, केवल इसलिए कि वे कहते हैं हमारा पालनहार एक ईश्वर है यदि ईश्वर लोगों को एक दूसरे से हटाता न रहता तो संतो, सन्यासियों आदि के आश्रम और ईसाईयों के गिरजे और यहूदियों के उपासना-गृह और मस्जिदें, जिनमें ईश्वर का बहुत नाम लिया जाता है, सब ढा दी जाती। निश्चय ही ईश्वर उसकी सहायता करेगा जो ईश्वर की सहायता करेगा बेसहारा को सहारा देने और समाज में। सुख शांति रखने में निस्सदेह ईश्वर बलवान और प्रभुत्वशाली है।'' (सूरह अल हज्ज-२२, आयत-४०)

अपने प्रिय भोजन से अपने गुणों को पहचानें :-

१७.७

आहारः तु अपि सर्वस्य त्रि-विधः भवति प्रियः।
यज्ञः तपः तथा दानम् तेषाम् भेदम् इमम् शृणु।।७।।

निःसंदेह सारे मनुष्यों की प्रिय आहार, यज्ञ, तप, और दान भी तीन प्रकार के होते हैं। उन सबके इस भेद (अन्तर को) मुझसे सुनो।

(तु) निःसंदेह (सर्वस्य) सारे मनुष्यों की (प्रियः) प्रिय (आहारः) आहार (यज्ञ) यज्ञ (तपः) तप (तथा) और (दानम्) दान (अपि) भी (त्रि) तीन (विधः) प्रकार के (भवति) होते हैं। (तेषान) उन सबके (इमम्) इस (भेदम्) भेद (अन्तर को) (शृणु) (मुझसे) सुनो।

१७.८

आयुः सत्व बल आरोग्य सुख प्रीति विवर्धनाः।
ररुयाः स्निगधाः स्थिराः हृद्याः आहाराः सात्विक प्रियाः।।८।।

सात्विक गुण वाले मनुष्यों के प्रिय आहार भोजन के पदार्थ रस युक्त, चिकने घी युक्त टिवाड (अधिक समय तक शक्ति देने वाले) होते हैं, जो आयु, सत्व गुण, शक्ति, अच्छे स्वास्थ्य को बढ़ाने वाले और हृदय को आनंद और शांति देने वाले होते हैं।

(सात्विक) सात्विक गुण वाले मनुष्यों के (प्रिया) प्रिय (आहाराः) आहार (भोजन के पदार्थ) (ररुयाः) रस युक्त (स्निग्धाः) चिकने (घी युक्त) (स्थिराः) टिवाड (अधिक समय तक शक्ति देने वाले) होते हैं (आयुः) (जो) आयु (सत्व) सत्व गुण (बल) शक्ति (आरोग्य) अच्छे स्वास्थ्य को (विवर्धनाः) बढ़ाने वाले (हृद्याः) और हृदय को (सुख) आनंद और (प्रीति) शांति (देने वाले होते हैं)।

१७.९

कटु अम्ल लवण अति-उष्ण तीक्ष्ण रुक्ष विदाहिनः।
आहाराः राजसस्य इष्टाः दुःख शोक आमय प्रदाः।।९।।

रजो गुण वालों का प्रिय भोजन अति कड़वा, अति खट्टा, अति नमकीन, अति गरम, अति तीखा, अति रुखा, और जलन करने वाला होता है। जो दुःख, शोक और रोगों को उत्पन्न करता है।

(राजसस्य) रजो गुण (वालो का) (इष्टाः) प्रिय (आहाराः) भोजन (कटु) अति कड़वा (अम्ल) अति खट्टा (लवण) अति नमकीन (उष्ण) अति गरम (तीक्ष्ण) अति तीखा (रुक्ष) अति रुखा (विदाहिनः) और जलन करने वाला (दाहकारक) होता है। (दुःख) (जो) दुःख (शोक) शोक (आमय) रोगों को (प्रदाः) उत्पन्न करता है।

१७.१०

यात-यामम् गत-रसम् पूति पर्युषितम् च यत।
उच्छिष्टम् अपि च अमेध्यम् भोजनम् तामस् प्रियम्।।१०।।

(तामस्) तमो गुण (वालो का) (प्रियम) प्रिय (भोजनम्) भोजन (यात-यामम्) सड़ा हुआ (गत-रसम्) रसरहित (पूति) दुर्गन्धित

तमो गुण वालों का प्रिय भोजन सड़ा हुआ, रसरहित, दुर्गन्धित, बासी और जूठा होता है। तथा अपवित्र भी होता है।

(पर्युषितम्) बासी (च) और (यत्) जो (उच्छिष्टम्) जूठा है (च) तथा (अमेध्यम्) अपवित्र (अपि) भी होता है।

गुणों के अनुसार पुण्य करने की पद्धति में अन्तर :-

१७.११

अपल-आकाड्क्षिभिः यज्ञः विधि-दिष्टः यः इज्यते।
यष्टव्यम् एव इति मनः समाधाय सः सात्विकः।।११।।

जो यज्ञ फल की अपेक्षा किए बिना, धार्मिक नियमों के अनुसार, अपना कर्तव्य समझकर, और मन को एकाग्र करके किया जाता है। इसी तरह जो भी पुण्य के कार्य किए जाते है नि:संदेह वह सात्विक गुण से प्रेरित होकर किए जाते हैं।

(य:) जो (यज्ञ:) यज्ञ (अपल-आकाड्क्षिभि:) फल की अपेक्षा किए बिना (विधि-दिष्ट:) धार्मिक नियमों के अनुसार (यष्टव्यम्) अपना कर्तव्य समझकर (और) (मन: समाधाय) मन को एकाग्र करके (इज्यते) किया जाता है। (इति) इसी तरह (जो भी पुण्य के कार्य किए जाते हैं) (एव) नि:संदेह (स:) वह (सात्विक:) सात्विक गुण से प्रेरीत होकर किए जाते हैं।

१७.१२

अभिसन्धाय तु फलम् दम्भ अर्थम् अपि च एव यत।
इज्यते भरत-श्रेष्ठ तम् यज्ञम् विद्धि राजसम् ।।१२।।

किन्तु हे अर्जुन! जो (पुण्यकर्म) किया जाता है फल की अपेक्षा रखते हुए, दिखावे के लिए, सांसारिक लाभ के लिए, तुम उन यज्ञ को नि:संदेह रजो गुण से प्रेरीत समझो।

(तु) किन्तु (भरत-श्रेष्ठ) हे अर्जुन (यत) जो (इज्यते) (पुण्यकर्म) किया जाता है (फलम्) फल की (अभिसन्धाय) अपेक्षा रखते हुए (दम्भ) दिखावे के लिए (अर्थम्) सांसारिक लाभ के लिए (तम) तुम (उन) (यज्ञम्) यज्ञ को (एवं) नि:संदेह (राजसम्) रजो गुण (से प्रेरीत) (विद्धि) समझों।

१७.१३

विधि-हीनम् असृष्ट-अन्नम् मन्त्र-हीनम् अदक्षिणम्।
श्रद्धा विरहितम् यज्ञम् तामसम् परिचक्षते।।१३।।

वह यज्ञ जो धार्मिक नियमों को न मानते हुए, बिना अन्न दान के, बिना मन्त्रों के पढ़े, बिना दक्षिणा दिए (किए जाते हैं) यह कर्म तमो गुण से प्रेरित है, ऐसा माना जाता है।

(यज्ञम्) वह यज्ञ (विधि-हीनम्) जो धार्मिक नियमों को न मानते हुए (असृष्ट-अन्नम्) बिना अन्न दान के (मन्त्र हीनम्) बिना मन्त्रों के पढ़े (अदक्षिणम्) बिना दक्षिणा दिए (किए जाते हैं) (तामसम्) यह कर्म तमो गुण से प्रेरीत है (परिचक्षते) ऐसा माना जाता है।

शरीर के तप का वर्णन :-

१७.१४

देव द्विज गुरु प्राज्ञ पूजनम् शौचम् आर्जवम।
ब्रह्मचर्यम् अहिंसा च शारीरम् तपः उच्यते।।१४।।

ईश्वर कह रहा है कि, ईश्वर (का), गुरु का, ज्ञानियों का आदर करना। स्वच्छ रहना, सरलता के साथ ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करना। हिंसा से दूर रहना यह शरीर का तप है।

(उच्यते) ईश्वर कह रहा है कि (देव) ईश्वर (का) (गुरु) गुरु (का) (प्राज्ञ) ज्ञानियों का (पूजनम्) आदर करना (शौचम्) स्वच्छ रहना (आर्जवम्) सरलता के साथ (ब्रह्मचर्यम्) ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करना (अहिंसा) हिंसा से दूर रहना (शारीरम्) (यह) शरीर का (तपः) तपः है।

बातचीत के तप का वर्णन :-

१७.१५

अनुद्वेग-करम् वाक्यम् सत्यम् प्रिय हितम् च यत।
स्वाध्याय अभ्यसनम् च एवं वाडमयम् तपः उच्यते।।१५।।

वह वाक्य (शब्द), जो किसी को संकट, पीडा, विपत्ती में न डालने वाले हों, सच्चे, प्रिय और लोगों के हित में हों, और जो (शब्द) वेदों में सोच विचार करके और उनको पढ़कर बोले जाते हैं। निःसंदेह ऐसे शब्द का बोलना वाणी सम्बन्धी तप कहा जाता है।

(वाक्यम्) वह वाक्य (शब्द) (अनुद्वेग-करम्) जो किसी को संकट, पीडा, विपत्ती में न डालने वाले हों (सत्यम) सच्चे (प्रिय) प्रिय और (हितम्) लोगों के हित में हों (च) और (यत) जो (शब्द) (स्वाध्याय) वेदों में (सोच विचार करके) (अभ्यसनम्) और उनको पढ़कर (बोले जाते हैं) (एव) निःसंदेह (ऐसे शब्द का बोलना) (वाक-मयम्) वाणी सम्बन्धी (तप) तप (उच्यते) कहा जाता है।

नोट १७.१४ पवित्र कुरआन में हिंसा के विरुद्ध निम्नलिखित आयत है।

ईश्वरने पवित्र कुरआन में कहा है कि, हमने इस्राईल की सन्तानों के लिए (यहूदीयो के लिए) लिख दिया था कि जिसने किसी व्यक्ति को किसी के खून का बदला लेने या धरती में फसाद फैलाने लेने या धरती में फसाद फैलाने के अतिरिक्त किसी और कारण से मार डाला तो मानो सारे ही इन्सानों की हत्या कर डाली। और जिसने उसे जीवन प्रदान किया उसने मानो सारे इन्सानों को जीवन दान किया। उनके पास हमारे रसूल (मुहम्मद साहब) स्पष्ट प्रमाण (पवित्र कुरआन) ला चुके हैं, फिर भी उनमें बहुत से लोग धरती में अत्याचार करने वाले ही हैं। (सूरह अल माएदा-५, आयत-३२)

नोट १७.१५ ईश्वर ने मानवजाति को पवित्र कुरआन में बातचीत के सम्बन्ध में यह उपदेश दिए। "(हे मुहम्मद)! मेरे बन्दों से कह दो, बात वही कहें, जो उत्तम हो। शैतान तो उनके दरमियान फसाद डालता है। (झगडे और दंगे कराता है)। निस्संदेह शैतान मनुष्य का खुला हुआ दुश्मन है। (सूरह बनी इस्राईल-१७, आयत-५३)

ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा है कि, "भलाई और बुराई एक समान नहीं होती। सख्त-कालमी का (कड़वी बात का) ऐसे तरीके से जवाब दो जो बहुत ही अच्छा हो। ऐसा करने से तुम देखोगे कि, जिसमें और तुम में दुश्मनी थी वह तुम्हारा गहरा (घनिष्ठ) दोस्त है। और यह बात उन्हीं लोगों को प्राप्त होती है जो सहनशीलता वाले हैं। और उन्हीं को प्राप्त होती है जो बड़ा नसीब वाला (भाग्यवान) है। (सूरह हा-मीम-सजदा-४१, आयत-३४,३५)

सोच विचार के तप का वर्णन :-

१७.१६

मनःप्रसाद सौम्यत्वम् मौनम् आत्म विनिग्रहः।
भाव संशुद्धिः इति एतत् तपः मानसम् उच्यते।।१६।।

मन का शांत होना, दयालु होना, चुप रहना, अपने आपको वश में रखना, जीवन के उद्देश्य को शुद्ध (पवित्र) रखना। इसी तरह यह सारे मन सम्बन्धी तप कहे जाते हैं।

(मन:प्रसाद) मन का शांत होना (सौम्यत्वम्) दयालु होना (मौनम्) चुप रहना (आत्म विनिग्रह:) अपने आपको वश में रखना (भाव संशुद्धि:) जीवन के उद्देश को शुद्ध (पवित्र) रखना (इति) इसी तरह (एतत्) यह सारे (मानसम्) मन सम्बन्धी (तप:) तप (उच्यते) कहे जाते हैं।

गुणों के अनुसार तप करने की पद्धति में अन्तर :-

१७.१७

श्रद्धया परया तप्तम् तपः ततः त्रि-विधम् नरैः।
अपल-आकाङ् क्षिभि युक्तैः सात्विकम् परिचक्षते।।१७।।

ईश्वर कह रहा है कि एक ईश्वर में श्रद्धा रखने वाले मनुष्य तीन प्रकार से तप करते हैं। वह नि:स्वार्थ कर्म करते हैं। (ईश्वर के अतिरिक्त) किसी से कोई अपेक्षा नहीं रखते। सदैव ईश्वर की याद में डुबे रहते हैं।, यह सारे सात्विक गुण से प्रेरीत गुण के कारण होते हैं।

(परिचक्षते) ईश्वर कह रहा है कि (परया) एक ईश्वर में (श्रद्धा) श्रद्धा रखने वाले (नरै:) मनुष्य (त्रि) तीन (विधम्) प्रकार से (तप:) तप करते हैं (अफल) वह निस्वार्थ (आकाङ्क्षिभि) (ईश्वर के अतिरिक्त) किसी से कोई अपेक्षा नही रखते (युत्कै:) सदैव ईश्वर की याद में डुबे रहते हैं। (तत) यह सारे (सात्विकम्) सात्विक गुण से प्रेरीत गुण के कारण होते हैं।

१७.१८

सत-कार मान पूजा अर्थम् तपः दम्भेन च एव यत।
क्रियते तत् इह प्रोक्तम् राजसम् चलम् अध्रुवम् ।।१८।।

ईश्वर कह रहा है कि यदि कोई ईश्वर में श्रद्धा रखने वाला प्रशंसा पाने, मान सम्मान पाने, दिखावे के लिए, सांसारिक लाभ के लिए जो भी तप करता है, उसे रजो गुण से प्रेरित समझो। नि:संदेह इस संसार में यह अशांति पैदा करता है। और यह कर्म अस्थायी है। इसका पुण्य नहीं मिलेगा।

(प्रोक्तम्) ईश्वर कह रहा है कि (यदि कोई ईश्वर में श्रद्धा रखने वाला) (सत-कार) प्रशंसा पाने (मान पुजा) मान सम्मान पाने (दम्भेन) दिखावे के लिए (अर्थम्) सांसारिक लाभ के लिए (यत) जो भी (तप:) तप (क्रियते) करता है (तव) उसे (राजसम्) रजो गुण से प्रेरीत समझो (एव) नि:संदेह (इह) इस संसार में यह (चलम्) अशांति पैदा करता है (अध्रुवम्) (और यह कर्म) अस्थायी है। (इसका पुण्य नहीं मिलेगा।)

१७.१९

मूढ ग्राहेण आत्मनः यत् पीडया क्रियते तपः।
परस्य उत्सादन-अर्थम् वा तत् तामसम् उदाहृतम् ।।१९।।

जो तप मूर्खता से, अपने आपको पीड़ा देकर, अथवा दूसरों को कष्ट देने के लिये किया जाता है, वह (तप) तमो गुण से प्रेरित कहा गया है।

(यत्) जो (तपः) तप (मूढ ग्राहेण) मूर्खता से (आत्मनः) अपने आपको (पीडया) पीड़ा देकर (वा) अथवा (परस्य) दूसरों को (उत्सादन-अर्थम्) कष्ट देने के लिये (क्रियते) किया जाता है (तत) वह (तपः) (तामसम्) तमो गुण से प्रेरित (उदाहृतम्) कहा गया है।

गुणों के अनुसार दान देने की पद्धति में अन्तर :-

१७.२०

दातव्यम् इति यत् दानम् दीयते अनुपकारिणे।
दिशे काले च पात्रे च तत् दानम् सात्विकम् स्मृतम् ।।२०।।

(अगले तीन श्लोकों में अपने दान देने के स्वभाव से अपने आपको पहचानने की शिक्षा हैं:)

दान जो दिया जाए, वह देने के योग्य हो बेकार वस्तु ना हो। ऐसे को दिया जाए जो उसका बदला नहीं दे सकता अर्थात, असहाय, निर्धन को दिया जाए। उचित स्थान पर दिया जाए। उचित समय पर दिया जाए। और दान पाने के योग्य व्यक्ति को दिया जाए। इस तरह जो दान दिया जाता है वह दान सात्विक गुण से प्रेरित कहा जाता है।

(दानम्) दान (दीयते) जो दिया जाए (दातव्यम्) वह देने के योग्य हो (बेकार वस्तु ना हो) (अनुपकारिणे) (ऐसे को दिया जाए) जो उसका बदला नहीं दे सकता (अर्थात, असहाय, निर्धन को दिया जाए) (दिशे) उचित स्थान पर दिया जाए (काले) उचित समय पर दिया जाए (च) और (पात्र) दान पाने के योग्य व्यक्ति को दिया जाए (इति) इस तरह (यत्) जो (दान दिया जाता है) (तत्) वह (दानम्) दान (सात्विकम्) सात्विक गुण से प्रेरित (स्मृतम्) कहा जाता है।

१७.२१

यत् तु प्रति-उपकार-अर्थम् फलम् उद्दिश्य वा पुनः।
दीयते च परिक्लिष्टम् तत् दानम् राजसम् स्मृतम् ।।२१।।

जो दान वापस मिलने की आशा रखते हुए।

(यत्) जो (दान) (प्रति) वापस मिलने की आशा रखते हुए (उपकार) उपकार जताते हुए (च) और (अर्थम्) अपने लाभ के लिए (पुनः फलम्) लोगों से उसका फल (फायदा) पाने के (उद्दिश्य) उद्देश्य (लक्ष्य) से (वा) या

नोट १७.२० दान के बारे में पवित्र कुरआन में निम्नलिखित आदेश हैं। (हे मुहम्मद (स.)) लोग तुमसे पूछते हैं कि हम किस प्रकार का धन दान करें? कह दो कि जो माल भी तुम खर्च करो वह माता-पिता, अनाथों और मुसाफिरों (यात्रियों) के लिए है। और जो भलाई भी तुम करोगे, ईश्वर उसे भली-भाँति जान लेगा। (सूरह अल बकरह-२, आयत-२१५)

उपकार जताते हुए और अपने लाभ के लिए, लोगों से उसका फल (फायदा) पाने के उद्देश्य (लक्ष्य) से, या पछताते हुए दिया जाए वह दान रजो गुण से प्रेरित समझो।

(परिक्लिष्टम्) पछताते हुए (दीयते) दिया जाए (तत) वह (दानम्) दान (राजसम्) रजो गुण से प्रेरित (स्मृतम्) समझो।

१७.२२

अदेश काले यत् दानम् अपात्रेभ्यः च दीयते।
असत-कृतम् अवज्ञातम् तत् तामसम् उदाहृतम् ।।२२।।

जो दान गलत स्थान पर, गलत समय पर, ऐसा व्यक्ति जो दान लेने के योग्य नहीं ऐसे को दान दिया जाए। या गलत काम के लिए, या निर्धन को अपमानित करते हुए जो दान दिया जाए, वह दान तमो गुण से प्रेरित समझो।

(अदेश) (जो दान) गलत स्थान पर (काले) गलत समय पर (अपात्रेभ्य:) ऐसा व्यक्ति जो दान लेने के योग्य नहीं (ऐसे को दान दिया जाए) या (असत-कृतम्) गलत काम के लिए (च) और (अवज्ञातम्) (निर्धन को) अपमानित करते हुए (यत्) जो (दानम) दान (दीयते) दिया जाए (तत्) वह (दान) (तामसम्) तमो गुण से प्रेरित समझो।

ईश्वर के तिन नाम ॐ, तत और सत का वर्णन :-

१७.२३

ॐ तत् सत् इति निर्देशः ब्रह्मणः त्रि-विधः स्मृतः।
ब्राह्मणाः तेन वेदाः च यज्ञाः च विहिताः पुरा।।२३।।

सामाजिक जीवन के आरंभ में ब्राह्मणों को ईश्वर ने निर्देश दिया कि ईश्वर के तीन नामों से (जो

(पुरा) (सामाजिक जीवन के) आरंभ में (ब्रह्मण:) ब्राह्मणों को (ईश्वर ने) (निर्देश:) निर्देश दिया कि (ईश्वर के) (त्रि) तीन (विध:) नामों से (जो कि) (ॐ) ॐ (तत्) तत (सत्) सत (है) (स्मृत:) (ईश्वर को) याद किया करो (इति) इसी तरह (तेन) इन (नामों से ब्राह्मण)

नोट १७.२१ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''ऐ लोगों जो ईमान लाए हो, जो माल तुमने कमाए हैं और जो कुछ हमने धरती से तुम्हारे लिए निकाला है, उसमें से अच्छा हिस्सा ईश्वर के मार्ग में खर्च करो। और बुरी और अपवित्र देने का प्रयास न करना कि (वह वस्तुए तुम्हें दी जाए तो) (लेते समय) आँख बन्द किए बिना उन्हें कभी न लो। और जान रखो कि ईश्वर निस्पृह और प्रशंसनीय है।'' (सूरे बकरह-२, आयत-२६७)

नोट १७.२२ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने जकात (दान) निम्नलिखित आठ उद्देश के लिए खर्च करने का आदेश इस तरह दिया है। ''जकात (दान) तो वास्तव में गरीबों, मुहताजों के लिए है, और उन कर्मचारियों के वेतन के लिए जो इस (दान को जमा करने और खर्च करने) पर लगे हों, और उनके लिए जिनके हृदय में ईश्वर की श्रद्धा उत्पन्न करना हो, और गुलामों (दासों) को गुलामी से मुक्त कराने के लिए, और जो कर्ज में फंस गया हो उसका कर्ज अदा करने के लिए, और ईश्वर के मार्ग में सत्कर्मों के लिए और यात्रियों की सहायता के लिए है। यह ईश्वर के आदेश हैं। और ईश्वर जानने वाला और तत्त्वदर्शी है।'' (सूरह-अल तौबा-९, आयत-६०)

कि) ॐ, तत, सत (है), ईश्वर को याद किया करो। इसी तरह इन (नामों से ब्राह्मण) यज्ञ और वेदों की शिक्षा का प्रबंध किया करते थे।

(यज्ञ) यज्ञ (च) और (वेदा:) वेदों की शिक्षा का (विहिता:) प्रबंध किया करते थे।

१७.२४

तस्मात् ॐ इति उदाहृत्य यज्ञ दान तपः क्रियाः।
प्रवर्तन्ते विधान-उक्ताः सततम् ब्रह्म-वादिनाम् ।।२४।।

इसलिए ईश्वर के कहे हुए आदेश के अनुसार, एक ईश्वर की प्रार्थना करने वाले, यज्ञ, दान, तप और क्रिया के आरम्भ में सदैव ॐ कहते हैं।

(तस्मात) इसलिए (उक्ता:) (ईश्वर के) कहे हुए (विधान) आदेश के अनुसार (ब्रह्म) एक ईश्वर की (वादिनाम्) प्रार्थना करने वाले (इति) इस तरह (यज्ञ) यज्ञ (दान) दान (तप: क्रिया:) तप: क्रिया के (प्रवर्तन्ते) आरम्भ में (सततम्) सदैव (ॐ) ॐ (उदाहृत्य) कहते है।

१७.२५

तत् इति अनभिसन्धाय फलम् यज्ञ तपः क्रियाः।
दान क्रियाच विविधाः क्रियन्ते मोक्ष-काङ्क्षिभिः।।२५।।

मोक्ष चाहने वाले विभिन्न प्रकार के सत्कर्म करते थे, जैसे कि फल की अपेक्षा किए बिना कर्म करना, यज्ञ, तप-क्रिया और दान-क्रिया। इस तरह (अच्छे कर्म से वह ईश्वर के नाम) तत को याद करते थे।

(मोक्ष) मोक्ष (काङ्क्षिभि:) चाहने वाले (विविधा:) विभिन्न प्रकार के (सत्कर्म) (क्रियन्ते) करते थे (जैसे कि) (अनभिसन्धाय फलम्) फल की अपेक्षा किए बिना कर्म करना (यज्ञ) यज्ञ (तप: क्रिया:) तप क्रिया (च) और (दान क्रिया) दान क्रिया (इति) इस तरह (अच्छे कर्म से वह ईश्वर के नाम) (तत्) तत को याद करते थे।

१७.२६

सत भावे साधु-भावे च सत् इति एतत् प्रयुज्यते।
प्रशस्ते कर्मणि तथा सत-शब्द पार्थ युज्यते।।२६।।

हे पार्थ (अर्जुन), सत शब्द कहा जाता है ईश्वर के अविनाशी गुण सत को याद करने के उद्देश्य

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (सत्-शब्द) सत शब्द (युज्यते) कहा जाता है (सत-भावे) ईश्वर के अविनाशी गुण सत को याद करने के उद्देश्य से (च) और (साधु-भावे) और (ईश्वर के) श्रेष्ठ, शुभ, उपकार वाले गुणों के लिए भी (तथा)

नोट १७.२३ आदीकाल मे मनुष्य को ईश्वर के तीन नाम बताए गए थे।

ॐ = मनुष्य ईश्वर के उस नाम से हर काम का आरम्भ करता था।
तत = मनुष्य हमेशा याद रखता कि वह ईश्वर (ईश्वर/तत) देख रहा है। और बुरे कर्मो से बचाता है।
सत = मनुष्य हृदय की गहराईयों में भी पवित्र और निस्वार्थ होकर मानवजाति की सेवा करके ईश्वर के इस सत नाम को याद करता था।

से और ईश्वर के श्रेष्ठ, शुभ, उपकार वाले गुणों के लिए भी और इसी तरह यह (शब्द) उपयोग होता है, उन कर्मों के लिए जो ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए किए जाते हैं।

और (इति) इसी तरह (एतत्) यह (शब्द) (प्रयुज्यते) उपयोग होता है (कर्मणि) उन कर्मों के लिए (प्रशस्ते) जो ईश्वर को प्रसन्न करने के लिए किए जाते हैं।

१७.२७

यज्ञे तपसि दाने च स्थितिः सत् इति च उच्यते।
कर्म च एव तत् अर्थीयम् सत् एवं अभिधीयते।।२७।।

यज्ञ, तपस्या, दान और ईश्वर की प्रार्थना में स्थित हो जाना और यह सब भी सत कहलाते हैं और नि:संदेह वह कर्म जो इन शुभ उद्देश के लिए किए जाए, नि:संदेह वह भी सत भाव को प्रकट करते हैं।

(यज्ञे) यज्ञ (तपसि) तपस्या (दाने) दान (च) और (स्थिति:) ईश्वर की प्रार्थना में स्थित हो जाना (इति च) और यह सब भी (सत) सत (उच्यते) कहलाते हैं (च) और (एव) नि:संदेह (कर्म) वह कर्म (अर्थीयम्) जो इन (शुभ) उद्देश के लिए किए जाए (इति एवं) नि:संदेह वह भी (सत) सत (अभिधीयते) भाव को प्रकट करते हैं।

ईश्वर में श्रद्धा का महत्त्व :-

१७.२८

अश्रद्धया हुतम् दत्तम तपः तप्तम् कृतम् च यत।
असत् इति उच्यते पार्थ न च तत् प्रेत्य न उ इह।।२८।।

हे पार्थ (अर्जुन)! ईश्वर में श्रद्धा के बिना जो दुआएँ मांगी जाती है, दान किया जाता है और जो भी कर्म किए जाते है, वह सब व्यर्थ है। ऐसा कहा जाता है, उन (सत्कर्मों का) न तो इस संसार में और न मृत्यु के बाद कुछ फल मिलेगा।

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (अश्रद्धया) ईश्वर में श्रद्धा के बिना (हुतम्) जो दुआएँ मांगी जाती है (दत्तम) दान किया जाता है (च यत्) और जो भी (कृतम्) कर्म (तप्तम्) किए जाते है (वह सब) (असत) व्यर्थ है (इति उच्यते) ऐसा कहा जाता है (तत्) उन (सत्कर्मों का) (न) न तो (इह) इस संसार में (न च) और न (प्रेत्य) मृत्यु के बाद (कुछ फल मिलेगा)।

नोट १७.४

ईश्वर ने पवित्र कुरआन में मानव जाति से कहा कि क्या मैने तुम्हें ताकीद नही की थी,ऐ आदम के बेटो!शैतान की बन्दगी न करे। वास्तव में वह तुम्हारा खुला शत्रु है ।और यह की मेरी बंदगी करो, यही सीधा मार्ग है ।

(सूरह यासीन :३६आयत ६०-६१)

अध्याय-१८
मोक्ष सन्यास योग

अर्जुन उवाच
सन्न्यासस्य महाबाहो तत्त्वमिच्छामि वेदितुम्।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक्केशिनिषूदन ॥1॥

श्रीभगवानुवाच
काम्यानां कर्मणा न्यासं सन्न्यासं कवयो विदुः।
सर्वकर्मफलत्यागं प्राहुस्त्यागं विचक्षणाः ॥2॥

त्याज्यं दोषवदित्येके कर्म प्राहुर्मनीषिणः।
यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यमिति चापरे ॥3॥

निश्चयं श्रृणु में तत्र त्यागे भरतसत्तम।
त्यागो हि पुरुषव्याघ्र त्रिविधः सम्प्रकीर्तितः॥4॥

यज्ञदानतपःकर्म न त्याज्यं कार्यमेव तत्।
यज्ञो दानं तपश्चैव पावनानि मनीषिणाम् ॥5॥

एतान्यपि तु कर्माणि सङ्गं त्यक्त्वा फलानि च।
कर्तव्यानीति में पार्थ निश्चितं मतमुत्तमम् ॥6॥

नियतस्य तु सन्न्यासः कर्मणो नोपपद्यते।
मोहात्तस्य परित्यागस्तामसः परिकीर्तितः॥7॥

दुःखमित्येव यत्कर्म कायक्लेशभयात्त्यजेत्।
स कृत्वा राजसं त्यागं नैव त्यागफलं लभेत्॥8॥

कार्यमित्येव यत्कर्म नियतं क्रियतेअर्जुन।
सङ्गं त्यक्त्वा फलं चैव स त्यागः सात्त्विको मतः॥9॥

न द्वेष्ट्यकुशलं कर्म कुशले नानुषज्जते।
त्यागी सत्त्वसमाविष्टो मेधावी छिन्नसंशयः॥10॥
न हि देहभृता शक्यं त्यक्तुं कर्माण्यशेषतः।
यस्तु कर्मफलत्यागी स त्यागीत्यभिधीयते॥11॥

अनिष्टमिष्टं मिश्रं च त्रिविधं कर्मणः फलम्।
भवत्यत्यागिनां प्रेत्य न तु सन्न्यासिनां क्वचित्॥12॥

पञ्चैतानि महाबाहो कारणानि निबोध मे।
साङ्ख्ये कृतान्ते प्रोक्तानि सिद्धये सर्वकर्मणाम्॥13॥

अधिष्ठानं तथा कर्ता करणं च पृथग्विधम्।
विविधाश्च पृथक्चेष्टा दैवं चैवात्र पञ्चमम्॥14॥

शरीरवाङ्मनोभिर्यत्कर्म प्रारभते नरः।
न्याय्यं वा विपरीतं वा पञ्चैते तस्य हेतवः॥15॥

तत्रैवं सति कर्तारमात्मानं केवलं तु यः।
पश्यत्यकृतबुद्धित्वान्न स पश्यति दुर्मतिः॥16॥

यस्य नाहङ्कृतो भावो बुद्धिर्यस्य न लिप्यते।
हत्वापि स इमाँल्लोकान्न हन्ति न निबध्यते॥17॥

ज्ञानं ज्ञेयं परिज्ञाता त्रिविधा कर्मचोदना।
करणं कर्म कर्तेति त्रिविधः कर्मसङ्ग्रहः॥18॥

ज्ञानं कर्म च कर्ता च त्रिधैव गुणभेदतः।
प्रोच्यते गुणसङ्ख्याने यथावच्छणु तान्यपि॥19॥

सर्वभूतेषु येनैकं भावमव्ययमीक्षते।
अविभक्तं विभक्तेषु तज्ज्ञानं विद्धि
सात्त्विकम्॥20॥

पृथक्त्वेन तु यज्ज्ञानं नानाभावान्पृथग्विधान्।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तज्ज्ञानं विद्धि राजसम्
॥21॥
यत्तु कृत्स्नवदेकस्मिन्कार्ये सक्तमहैतुकम्।
अतत्त्वार्थवदल्पंच तत्तामसमुदाहृतम्॥22॥

नियतं सङ्गरहितमरागद्वेषतः कृतम।
अफलप्रेप्सुना कर्म यत्तत्सात्त्विकमुच्यते॥23॥

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहङ्कारेण वा पुनः।
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम्॥24॥

अनुबन्धं क्षयं हिंसामनवेक्ष्य च पौरुषम् ।
मोहादारभ्यते कर्म यत्तत्तामसमुच्यते॥25॥

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्ध्यसिद्ध्योर्निर्विकारः कर्ता सात्त्विक
उच्यते॥26॥

रागी कर्मफलप्रेप्सुर्लुब्धो हिंसात्मकोऽशुचिः।
हर्षशोकान्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः॥27॥

आयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठोनैष्कृतिकोऽलसः।
विषादी दीर्घसूत्री च कर्ता तामस उच्यते॥28॥

बुद्धेर्भेदं धृतेश्चैव गुणतस्त्रिविधं श्रृणु।
प्रोच्यमानमशेषेण पृथक्त्वेन धनंजय॥29॥

प्रवत्तिं च निवृत्तिं च कार्याकार्ये भयाभये।
बन्धं मोक्षं च या वेति बुद्धिः सा पार्थ
सात्त्विकी॥30॥

यया धर्ममधर्मं च कार्यं चाकार्यमेव च।
अयथावत्प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ
राजसी॥31॥

अधर्मं धर्ममिति या मन्यते तमसावृता।
सर्वार्थान्विपरीतांश्च बुद्धिः सा पार्थ
तामसी॥32॥

धृत्या यया धारयते मनःप्राणेन्द्रियक्रियाः।
योगेनाव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्त्विकी
॥33॥

यया तु धर्मकामार्थान्धत्या धारयतेऽर्जुन।
प्रसङ्गेन फलाकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ
राजसी॥34॥

यया स्वप्नं भयं शोकं विषादं मदमेव च।
न विमुञ्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ
तामसी॥35॥

सुखं त्विदानीं त्रिविधं श्रृणु मे भरतर्षभ।
अभ्यासाद्रमते यत्र दुःखान्तं च निगच्छति॥36॥

यत्तदग्रे विषमिव परिणामेऽमृतोपमम्।
तत्सुखं सात्त्विकं प्रोक्तमात्मबुद्धिप्रसादजम्॥37॥

विषयेन्द्रियसंयोगाद्यत्तदग्रेऽमृतोपमम्।
परिणामे विषमिव तत्सुखं राजसं स्मृतम्॥38॥

यदग्रे चानुबन्धे च सुखं मोहनमात्मनः।
निद्रालस्यप्रमादोत्थं तत्तामसमुदाहृतम्॥39॥

न तदस्ति पृथिव्यां वा दिवि देवेषु वा पुनः।
सत्त्वं प्रकृतिजैर्मुक्तं यदेभिःस्यात्त्रिभिर्गुणैः॥40॥

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परन्तप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः॥41॥

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्
॥42॥

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्॥43॥

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्॥44॥

स्वे स्वे कर्मण्यभिरतः संसिद्धिं लभते नरः।
स्वकर्मनिरतः सिद्धिं यथा विन्दति तच्छृणु॥45॥

यतः प्रवृत्तिर्भूतानां येन सर्वमिदं ततम्।
स्वकर्मणा तमभ्यर्च्य सिद्धिं विन्दति मानवः॥46॥

श्रेयान्स्वधर्मो विगुणः परधर्मात्स्वनुष्ठितात्।
स्वभावनियतं कर्म कुर्वन्नाप्नोति किल्बिषम्॥47॥

सहजं कर्म कौन्तेय सदोषमपि न त्यजेत्।
सर्वारम्भा हि दोषेण धूमेनाग्निरिवावृताः॥48॥

असक्तबुद्धिः सर्वत्र जितात्मा विगतस्पृहः।
नैष्कर्म्यसिद्धिं परमां सन्यासेनाधिगच्छति॥49॥

सिद्धिं प्राप्तो यथा ब्रह्म तथाप्नोति निबोध मे।
समासेनैव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा॥50॥

बुद्ध्या विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च।
शब्दादीन्विषयांस्त्यक्त्वा रागद्वेषौ व्युदस्य च॥51॥

विविक्तसेवी लघ्वाशी यतवाक्कायमानस।
ध्यानयोगपरो नित्यं वैराग्यं समुपाश्रितः॥52॥

अहङकारं बलं दर्पं कामं क्रोधं परिग्रहम्।
विमुच्य निर्ममः शान्तो ब्रह्मभूयाय कल्पते॥53॥

ब्रह्मभूतः प्रसन्नात्मा न शोचति न काङ्क्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मद्भक्तिं लभते पराम्॥54॥

भक्त्या मामभिजानाति यावान्यश्चास्मि तत्त्वतः।
ततो मां तत्त्वतो ज्ञात्वा विशते तदनन्तरम्॥55॥

सर्वकर्माण्यपि सदा कुर्वाणो मद्व्यपाश्रयः।
मत्प्रसादादवाप्नोति शाश्वतं पदमव्ययम्॥56॥

चेतसा सर्वकर्माणि मयि सन्न्यस्य मत्परः।
बुद्धियोगमुपाश्रित्य मच्चित्तः सततं भव॥57॥

मच्चित्तः सर्वदुर्गाणि मत्प्रसादात्तरिष्यसि।
अथ चेत्वमहाङ्कारान्न श्रोष्यसि
विनङ्क्ष्यसि॥58॥

यदहङ्कारमाश्रित्य न योत्स्य इति मन्यसे।
मिथ्यैष व्यवसायस्ते प्रकृतिस्त्वां नियोक्ष्यति ॥59॥

स्वभावजेन कौन्तेय निबद्धः स्वेन कर्मणा ।
कर्तुं नेच्छसि यन्मोहात्करिष्यस्यवशोऽपि तत्
॥60॥

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यन्त्रारुढानि मायया॥61॥

तमेव शरणं गच्छ सर्वभावेन भारत।
तत्प्रसादात्परां शान्तिं स्थानं प्राप्स्यसि
शाश्वतम्॥62॥

इति ते ज्ञानमाख्यातं गुह्याद्गुह्यतरं मया।
विमृश्यैतदशेषेण यथेच्छसि तथा कुरु ॥63॥

सर्वगुह्यतमं भूतः श्रृणु मे परमं वचः।
इष्टोऽसि मे दृढमिति ततो वक्ष्यामि ते हितम्
॥64॥

मन्मना भव मद्भक्तो मद्याजी मां नमस्कुरु ।
मामेवैष्यसि सत्यं ते प्रतिजाने प्रियोऽसि मे ॥65॥

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥66॥

इदं ते नातपस्काय नाभक्ताय कदाचन।
न चाशुश्रूषवे वाच्यं न च मां योऽभ्यसूयति ॥67॥

य इमं परमं गुह्यं मद्भक्तेष्वभिधास्यति।
भक्तिं मयि परां कृत्वा मामेवैष्यत्यसंशयः ॥68॥

न च तस्मान्मनुष्येषु कश्चिन्मे प्रियकृत्तमः ।
भविता न च मे तस्मादन्यः प्रियतरो भुवि॥69॥

अध्येष्यते च य इमं धर्म्यं संवादमावयोः।
ज्ञानयज्ञेन तेनाहमिष्टः स्यामिति मे मतिः ॥70॥

श्रद्धावाननसूयश्च श्रृणुयादपि यो नरः।
सोऽपि मुक्तः शुभाँल्लोकान्प्राप्नुयात्पुण्यकर्मणाम् ॥71॥

कच्चिदेतच्छ्रुतं पार्थ त्वयैकाग्रेण चेतसा।
कच्चिदज्ञानसम्मोहः प्रनष्टस्ते धनञ्जय ॥72॥

अर्जुन उवाच
नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वप्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसंदेहः करिष्ये वचनं तव ॥73॥

संजय उवाच
इत्यहं वासुदेवस्य पार्थस्य च महात्मनः।
संवादमिममश्रौषमद्भुतं रोमहर्षणम् ॥74॥

व्यासप्रसादाच्छ्रुतवानेतद्गुह्यमहं परम्।
योगं योगेश्वरात्कृष्णात्साक्षात्कथयतः स्वयम् ॥75॥

राजन्संस्मृत्य संस्मृत्य संवादमिममद्भुतम्।
केशवार्जुनयोः पुण्यं हृष्यामि च मुहुर्मुहुः॥76॥

तच्च संस्मृत्य संस्मृत्य रूपमत्यद्भुतं हरेः।
विस्मयो मे महान् राजन्हृष्यामि च पुनः पुनः ॥77॥

यत्र योगेश्वरः कृष्णो यत्र पार्थो धनुर्धरः।
तत्र श्रीर्विजयो भूतिर्ध्रुवा नीतिर्मतिर्मम॥78॥

अध्याय का परिचय

● इस अध्याय में अर्जुन के लिए और सारी मानवजाति के लिए निर्णय किस तरह लिया जाए इसका ज्ञान है।

सबसे पहले सन्यास और त्याग के अंतर को समझाया गया है और ईश्वर ने त्याग को सन्यास से श्रेष्ठ बताया है। जबकि समाज में सन्यास को श्रेष्ठ समझा जाता है।

सन्यास और त्याग के अंतर को एक साधारण उदाहरण से समझने का प्रयास करते हैं। यदि कोई आपसे कहे कि यह मेरा सारा व्यापार ले लो और सुख से जीवन व्यतीत करो, और आप कहो कि नहीं, मुझे नहीं चाहिए। मैं साधारण जीवन जीना चाहता हूँ। तो यह सन्यास हुआ।

और यदि आप उस व्यापार को ले लेते हो। धन कमाते हो और सब धन पुण्य के काम में खर्च करके स्वयम् साधारण जीवन जीते हो, तो यह त्याग हुआ और ईश्वर ने त्याग को सन्यास से श्रेष्ठ कहा है।

● इस्में अर्जुन के लिए ये सीख या शिक्षा यह है कि उनका यह सोचना कि मेरे लिए इस युद्ध लड़ने से अच्छा है कि भिक्षा मांगकर अपना पेट भरुं, गलत है। (भगवदगीता २.५) अर्जुन को युद्ध करके विजयी होना है। राज मिलने के बाद यदि वह साधारण जीवन बिताते हैं, तो यह अधिक श्रेष्ठ है। यह उनका त्याग हुआ जो सन्यास से श्रेष्ठ है।

अध्याय का सारांश

● श्लोक नं. १८.४ से १८.९ तक त्याग के तीन प्रकार का वर्णन है। इससे मानवजाति अपने कर्म को समझे और पुण्य करे।

● अध्याय नं. २ में हमने पढ़ा कि अर्जुन इस युद्ध के बारे में Confused थे कि यह उचित है या गलत है। और उनका यह भी सोचना था कि इस युद्ध से वह नरक में जा सकते हैं। तो श्लोक नं. १८.१०-१८.११-१८.१२ और १८.१७ में ईश्वर ने कहा कि नि:स्वार्थ कर्म करने वाला कभी नरक में नहीं जाता।

● ईश्वर ने श्लोक नं. १८.१३, १८.१६ में अपने कर्मों को सही है या गलत है इसको जांचने का मापदंड (Standard) बता दिया। इससे अर्जुन और सारी मानवजाति अपने कर्मों को परख सकती है कि वह सही है या गलत है।

● श्लोक नं. १८.१८ में ईश्वर ने कहा कि मानवजाति को सत्कर्म के लिए प्रेरित करने के लिए तीन कारण हैं।

१. धार्मिक ज्ञान
२. अन्य लोक का जीवन
३. ईश्वर

और किसी भी कर्म के तीन अंश (Elements) हैं।

१. कर्म की इच्छा
२. कर्म को करने वाला व्यक्ति
३. कर्म

● श्लोक नं. १८.१९ में ईश्वर ने कहा कि ज्ञान, कर्म और कर्म को करने वाला व्यक्ति भी तीन प्रकार के होते हैं। मनुष्य को इन्हें पहचानना चाहिए और केवल सात्विक गुण से प्रेरीत ज्ञान और कर्म को अपनाना चाहिए।

● श्लोक नं. १८.२० से १८.२२ में तीन

प्रकार के ज्ञान का वर्णन है।

● श्लोक नं. १८.२३ से १८.२५ में तीन प्रकार के कर्म का वर्णन है।

● श्लोक नं. १८.२६ से १८.२८ में तीन प्रकार के कर्म करने वालों का वर्णन है।

मनुष्य कुछ सोचता है और किसी काम का दृढ़ संकल्प करता है। किन्तु ईश्वर उसे उस काम के पुण्य देंगे या पाप। यह कैसे निश्चित किया जाए? दयालु ईश्वर ने श्लोक नं. १८.३० से १८.३५ में इसका मापदंड दिया जिसमें अर्जुन और सारी मानवजाति अपने सोच और संकल्प को जांच सकती है कि वह केवल सात्विक गुण से प्रेरित हो। कारण कि रजो और तमो गुण से प्रेरित कर्म का फल केवल पाप होता है।

● श्लोक नं. १८.२९ से १८.३२ तक सोच समझ परखने का वर्णन है।

● श्लोक नं. १८.३३ से १८.३५ तक अपने संकल्प को परखने का वर्णन है।

● अर्जुन सुख शान्ति के लिए युद्ध नहीं करना चाहते थे। तो ईश्वर ने श्लोक नं. १८.३६ श्लोक नं. १८.३९ में बताया कि स्थायी सुख शान्ति कैसे मिलेगी।

● ईश्वर ने अर्जुन को शास्त्रीय गुणों के साथ बनाया था। किन्तु अर्जुन पंडितों की तरह शान्ति वाला काम करना चाहते थे। तो ईश्वर ने श्लोक नं. १८.४१ से १८.४८ तक विस्तार से समझाया कि ईश्वर ने मानवजाति को चार गुणों के साथ जन्म दिया है। जिसमें जो गुण है वह उसे पहचाने और उन्हीं के अनुसार अपने कर्म करे। इसी में सफलता है।

● जैसे विद्यार्थी की पुस्तकों में अध्याय के अन्त में उस अध्याय का सार होता है। इसी प्रकार श्लोक नं. १५.५१ से १८.५४ तक इस दिव्य ग्रंथ का सार है।

● श्लोक नं. १८.५५ में ईश्वर ने कहा कि ईश्वर की प्रार्थना से व्यक्ति ईश्वर तक direct पहुंच सकता है। ईश्वर तक पहुंचने के लिए मनुष्य को किसी और की आवश्यकता नहीं है।

● अब दिव्य ग्रंथ का अन्त हो रहा है इस कारण ईश्वर अर्जुन को सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य बता रहे हैं जिसे जीवन में कभी भी भूलना नहीं चाहिए, वह निम्नलिखित है।

१. (श्लोक नं. १८.५६) सफलता केवल ईश्वर की (मत प्रसादत) कृपादृष्टि से ही मिली है।

२. (श्लोक नं. १८.५७) सब कुछ ईश्वर के लिए करना चाहिए।

३. (श्लोक नं. १८.५८) कठिनाईयों से केवल ईश्वर की कृपा से निकला जा सकता है।

४. (श्लोक नं. १८.६०) मनुष्य वही करेगा जो उसके भाग्य में होगा।

५. (श्लोक नं. १८.६१) मनुष्य इस संसार में परीक्षा दे रहा है। यह जीवन अस्थाई है। इस कारण स्थायी जीवन जो मृत्यु के बाद होगी उसे सदैव याद रखना चाहिए।

६. (श्लोक नं. १८.६२) अपने आपको ईश्वर की शरण में दे दो तो स्वर्ग मिलेगा।

७. श्लोक नं. १८.६६ चिंता न करते हुए सारे धर्मों को छोड़कर एक ईश्वर की शरण में आ

जाओ वह तुम्हारे सारे पाप क्षमा कर देगा।

● इस श्लोक के साथ ईश्वर के दिव्य आदेश पूर्ण हुए। इसके बाद ईश्वर ने इस ज्ञान के प्रचार के नियम और महत्त्व का वर्णन श्लोक नं. १८.६७-१८.७१ में किया है।

● श्लोक नं. १८.७४ से १८.७८ तक संजय जिसने सब कुछ अपनी आंखों से देखा और कानों से सुना था, अपने विचार व्यक्त करते हैं।

अध्याय

१८.१

अर्जुन उवाच, संन्यासस्य महाबाहो तत्वम् इच्छामि वेदितुम्।
त्यागस्य च हृषीकेश पृथक केशि-निषूदन।।

अर्जुन ने कहा, हे महाबाहो (श्री कृष्ण)! हे हृषीकेश (श्री कृष्ण)! हे केशी को प्रजीत करने वाले (श्री कृष्ण)! सन्यास की वास्तविकता (सत्य, सच्चाई) के बारे में, और त्याग की वास्तविकता (सत्य, सच्चाई) के बारे में अलग अलग जानने की इच्छा रखता हूँ।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा, (महाबाहो) हे महाबाहो (श्री कृष्ण) (हृषीकेश) हे हृषीकेश (श्री कृष्ण) (केशि-निषूदन) हे केशी को प्रजीत करने वाले (श्री कृष्ण) (सन्यासस्य) सन्यास (तत्त्वम्) की वास्तविकता (सत्य, सच्चाई) के बारे में (च) और (त्यागस्य) त्याग की वास्तविकता (सत्य, सच्चाई के बारे में) (पृथक) अलग अलग (वेदितुम) जानने की (इच्छामि) इच्छा रखता हूँ।

सन्यास और त्याग में अन्तर :-

१८.२

श्री भगवान उवाच, काम्यानाम् कर्मणाम् न्यासम् संन्यासम् कवयः विदुः।
सर्व कर्म फल त्यागम् प्राहुः त्यागम् विचक्षणाः।।२।।

ईश्वर ने (श्री कृष्ण के माध्यम से) कहा, मन को आनंद देने वाले कर्मों को छोड़ देने को ज्ञानी सन्यास समझते हैं। सारे कर्मों के फल को त्याग देने को बुद्धिमान लोग त्याग कहते हैं।

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने (श्री कृष्ण के माध्यम से) कहा, (काम्यानाम्) मन को आनंद देने वाले (कर्मनाम्) कर्मों को (न्यासम्) छोड़ देने को (कवयः) ज्ञानी (संन्यासम्) सन्यास (विदु) समझते हैं (सर्व कर्म) सारे कर्मों के (फल) फल को (त्यागम्) त्याग देने को (विचक्षणाः) बुद्धिमान लोग (त्यागम्) त्याग (प्राहुः) कहते हैं।

यज्ञ, दान, तप कभी नहीं छोड़ना चाहिए :-

१८.३

त्याज्यम् दोष-वत् इति एके कर्म प्राहुः मनीषिणः।
यज्ञ दान तपः कर्म न त्याज्यम् इति च

(इति) इसी तरह (च) और (अपरे) दूसरे लोग (प्राहुः) कहते हैं कि (एके) (हर) एक (कर्म) कर्म को करना (दोष-वत्) गलती करना है

अपरे।।३।।

इसी तरह और दूसरे लोग कहते हैं कि हर एक कर्म को करना गलती करना है। इसलिए हर कर्म को छोड़ देना चाहिए। किन्तु ज्ञानी इस तरह कहते हैं कि यज्ञ, दान, तप जैसे कर्म कभी नहीं छोड़ना चाहिए।

नोटः- यज्ञ समझने के लिए नोट नं. N-१३ पढ़िए।

(त्याज्यम्) (इसलिए हर कर्म को) छोड़ देना चाहिए। (मनीषिणः) (किन्तु) ज्ञानी (इति) इस तरह (कहते हैं कि) (यज्ञ) यज्ञ (दान) दान (तपः) तप (कर्म) (जैसे) कर्म (न) (कभी) नहीं (त्याज्यम्) छोड़ना चाहिए।

सत्व, रजो और तमो गुण वालों के त्याग करने की पद्धति :-

१८.४

निश्चयम् शृणु ते तत्र त्यागे भरत-सत् तम।
त्यागः हि पुरुष-व्याघ्र त्रि-विधः सम्प्रकीर्तितः ।।४।।

भारत में सबसे श्रेष्ठ (अर्जुन)! अब त्याग के बारे में मेरा (ईश्वर का) निर्णय सुनों। हे मनुष्यों में सिंह (अर्जुन), निःसंदेह तीन प्रकार के त्याग मेरे द्वारा बताए गए हैं।

(भरत-सत्-तम) भारत में सबसे श्रेष्ठ (अर्जुन) (तत्र) अब (त्यागः) त्याग (के बारे में) (में) मेरा (ईश्वर का) (निश्चयम्) निर्णय (शृणु) सुनों (पुरुष) हे मनुष्यों में (व्याघ्र) सिंह (हि) निःसंदेह (त्रि) तीन (विधः) प्रकार के (त्याग) त्याग (सम्प्रकीर्तितः) (मेरे द्वारा) बताए गए हैं।

१८.५

यज्ञ दान तपः कर्म न त्याज्यम् कार्यम् एव तत।
यज्ञः दानम् तपः च एव पावनानि मनीषिणाम् ।।५।।

यज्ञ, तप, दान जैसे कर्मों को कभी भी छोड़ना नहीं चाहिए। क्योंकि निःसंदेह यह कर्म

(यज्ञ) यज्ञ (तप) तप (दान) दान (कर्म) (जैसे) कर्मों (को) (त्याज्यम्) (कभी भी) छोड़ना (न) नहीं (चाहिए) (एव) (क्योंकि) निःसंदेह (तत्) यह (कर्म) (कार्यम्) अनिवार्य कर्तव्य है (यज्ञ) यज्ञ (तप) तप (दान) दान (एव) निःसंदेह

नोट १८.३ पवित्र कुरआन में वैराग्य का निम्नलिखित वर्णन है। ''और हमने नूह (विवस्वत मनु) और इब्राहीम (अबीराम) को पैगंबर बनाकर भेजा और उनकी संतानों में पैगंबरी और दिव्य ग्रंथों के अवतरित करने का कर्म जारी रखा। तो उनमें से कुछ (समुदाय) तो सत्य मार्ग पर हैं, और अधिकतर ईश्वर की आज्ञा का पालन नहीं करते। फिर उनके पीछे उनके पद-चिन्हों पर हम अपने और पैगंबर भेजते रहे और उनके बाद मरयम के पुत्र ईसा को भेजा और उनको इन्जील (बाईबल) प्रदान किया। और जिन लोगों ने उनका अनुसरण किया उनके हृदयों में हमने करुणा और दयालुता रख दी और संसार त्याग (वैराग्य) की प्रथा उन्होंने स्वयं निकाली, हमने उन्हें इसका आदेश नहीं दिया था। मगर उन्होंने अपनी कल्पना में ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करने के लिए स्वयम ही ऐसा कर लिया था। फिर जैसा उसको निभाना चाहिए था निभा न सके। तो उनमें से जो लोग ईमान लाए उन्हें हमने उनका कर्मफल दिया, और उनमें से अधिकतर अवज्ञाकारी है।'' (सूरह अल-हदीद-५७, आयत-२७)

अनिवार्य कर्तव्य है। यज्ञ, तप, दान, नि:संदेह विचारशील व्यक्तियों को पवित्र करने वाले हैं।

(मनीषिणाम्) विचारशील व्यक्तियों को (पावनानि) पवित्र करने वाले हैं।

१८.६

एतानि अपि तु कर्माणि सङ्म् त्यक्त्वा फलानि च।
कर्तव्यानि इति मे पार्थ निश्चितम् मतम् उत्तमम् ।।६।।

किन्तु हे पार्थ (अर्जुन)! (यज्ञ, तप, दान जैसे) कर्म के साथ संगम (शिर्क को) और इन कर्मों के फल को भी छोड़ देना चाहिए। अर्थात नि:स्वार्थ कर्म करना चाहिए। यज्ञ, तप, दान को करना और संगम को छोड़ना अनिवार्य कर्तव्य समझना चाहिए। इस तरह मेरा आदेश है और सबसे उत्तम निर्णय है।

(तु) किन्तु (पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (कर्माणि) (यज्ञ, तप, दान जैसे) कर्म के साथ (सङ्म्) संगम (शिर्क को और) (फलानि) फल (को भी) (त्यक्त्वा) छोड़ देना चाहिए (अर्थात नि:स्वार्थ कर्म करना चाहिए) (कर्तव्यानि) (यज्ञ, तप, दान को करना और संगम को छोड़ना) अनिवार्य कर्तव्य समझना चाहिए। (इति) इस तरह (मे) मेरा (मतम्) आदेश है (उत्तमम्) (और सबसे) उत्तम (निश्चितम्) निर्णय है।

१८.७

नियतस्य तु संन्यासः कर्मणः न उपपद्यते।
मोहात् तस्य परित्यागः तामसः परिकीर्तितः।।७।।

सत्कर्म (यज्ञ, दान, तप और संगम को छोड़ना) जिसे ईश्वर ने अनिवार्य किया है। (वह) छोड़ देने के योग्य नहीं है। यदि कोई भ्रम के कारण इन्हें छोड़ देता है, तो वह नि:संदेह अज्ञानी तमो गुण वाला कहा जाएगा।

(कर्मण:) सत्कर्म (यज्ञ, दान, तप और संगम को छोड़ना) (नियतस्य) (जिसे ईश्वर ने) अनिवार्य किया है। (संन्यास:) (वह) छोड़ देने के (न उपपद्यते) योग्य नहीं है। (मोहात्) अगर कोई भ्रम (गलतफहमी) के कारण (तस्य) इन्हें (परित्याग:) छोड़ देता है (तो वह) (तु) नि:संदेह (तामस:) अज्ञानी (तमो गुण वाला) (परिकीर्तित:) कहा जाएगा।

१८.८

दुःखम् इति एवं यत् कर्म काय क्लेश भयात् त्यजेत्।
सः कृत्वा राजसम् त्यागम् न एव त्याग फलम् लभेत्।।८।।

नि:संदेह जो कर्म शारीरिक असुविधा या पीड़ा इत्यादि के भय से छोड़ दिया जाए वह त्याग रजो गुण के कारण समझा जाएगा। इस प्रकार के त्याग का फल भी नहीं मिलता है।

(यदि किसी का मन शानदार भोजन खाने का करे और मोटापे और बीमारी के भय से वह इसे त्याग दे और साधारण जीवन शैली अपनाए तो यह उसका त्याग नहीं होगा।)

(एवं) नि:संदेह (यत) जो (कर्म) कर्म (काय क्लेश) शारीरिक असुविधा (दु:खम्) (या) पीड़ा (इति) इत्यादि के (भयात्) भय से (त्यजेत्) छोड़ दिया जाए (स:) वह (त्यागम्) त्याग (राजसम्) रजो गुण (कृत्वा) के कारण (से समझा जाएगा) (एव त्याग) इस प्रकार के त्याग का (फलम्) फल भी (न) नहीं (लभेत) मिलता है।

१८.९

कार्यम् इति एव यत् कर्म नियतम् क्रियते अर्जुन।
सडम् त्यक्त्वा फलम् च एव सः त्यागः सात्विक मतः।।९।।

हे अर्जुन! जो कुछ कर्म किए जाते हैं इस तरह कि वह धार्मिक नियम के अनुसार हो, कर्तव्य समझ के किए जाएं, संगम (शिर्क) और फल की आशा को छोड़कर किए जाते हैं। वह त्याग सात्विक गुण से प्रेरित हैं, ऐसा मेरा निर्णय है।

(अर्जुन) हे अर्जुन (यत्) जो कुछ (कर्म) कर्म (क्रियते) किए जाते हैं (इति एव) इस तरह कि वह (नियतम्) धार्मिक नियम के अनुसार हो (कार्यम्) कर्तव्य समझ के किए जाएं (सडम्) संगम (शिर्क) (च) और (फलम्) फल की आशा को (त्यक्त्वा) छोड़कर किए जाते हैं। (सः) वह (त्यागः) त्याग (सात्विक) सात्विक गुण से प्रेरित हैं (मत्) ऐसा मेरा निर्णय है।

सच्चा त्यागी स्वर्ग प्राप्त करेंगे :-

१८.१०

न द्वेष्टि अकुशलम् कर्म कुशले न अनुषज्जते।
त्यागी सत्व समाविष्टः मेघावी छिन्न संशयः।।१०।।

सत्कर्म को करते समय न नफरत करो कठिन काम से, और न इच्छा करो सरल काम की। जो त्यागी व्यक्ति सत्कर्म करने में लगा हुआ रहता है, वह बुद्धिमान है। इसमें कोई संदेह नहीं।

(कर्म) सत्कर्म (को करते समय) (न) न (द्वेष्टि) नफरत करो (अकुशलम्) कठिन काम से (न) (और) न (अनुषज्जते) इच्छा करो (कुशले) सरल काम की (त्यागी) (जो) त्यागी व्यक्ति (सत्व) सत्कर्म (करने में) (समाविष्ट) लगा हुआ रहता है। (मेधावी) (वह) बुद्धिमान है। (छिन्न संशयः) इस में कोई संदेह नहीं।

१८.११

न देह-भृता शक्यम् त्यक्तुम् कर्माणि अशेषतः।
यः तु कर्म फल त्यागी सः त्यागी इति अभिधीयते।।११।।

निःसंदेह, या सम्भव नहीं है मनुष्य के लिए कि कर्म को पूरी तरह छोड़ दे। फिर भी वह जो अपने कर्म के फल के मिलने की इच्छा को छोड़ देगा (अर्थात-सदैव निःस्वार्थ काम करें) वह निःसंदेह त्यागी कहा जाएगा।

(हि) निःसंदेह (शक्यम्) या सम्भव (न) नहीं है (देह-भृता) मनुष्य (के लिए कि) (कर्माणि) कर्म को (अशेषतः) पूरी तरह (त्यक्तुम्) छोड़ दे (तु) फिर भी (यः) वह जो (कर्म फल) अपने कर्म के फल के मिलने की इच्छा को (त्यागी) छोड़ देगा (अर्थात-सदैव निस्वार्थ काम करें) (सः) वह (इति) निःसंदेह (त्यागी) त्यागी (अभिधीयते) कहा जाएगा।

१८.१२

अनिष्टम् इष्टम् मिश्रम् च त्रि-विधम् कर्मणः फलम्।
भवति अत्यागिनाम् प्रेत्य न तु संन्यासिनाम् क्वचित्।।१२।।

(अत्यागिनाम्) जो लोग निःस्वार्थ काम नहीं करते (उनके लिए) (प्रेत्य) मृत्यु के बाद (त्रि-विधम्) तीन प्रकार के फल (भवति) हैं। (अनिष्टम्) (वह फल जो) नरक की ओर ले

जो लोग नि:स्वार्थ कर्म नहीं करते, उनके लिए मृत्यु के बाद तीन प्रकार के फल हैं। वह फल जो नरक की ओर ले जाए, वह फल जो स्वर्ग की तरफ ले जाए, और मिला-जुला फल। किन्तु वह लोग जो निस्वार्थ कर्म करते हैं उनके लिए कभी भी तीन प्रकार के फल नहीं हैं।

(केवल एक प्रकार का फल है और वह है स्वर्ग।)

जाए (इष्टम) (वह फल जो) स्वर्ग की तरफ ले जाए (च) और (मिश्रम्) मिला-जुला फल (तु) किन्तु (संन्यासिनाम्) (वह लोग जो) नि:स्वार्थ कर्म करते हैं (उनके लिए) (क्वचित) कभी भी (न) (तीन प्रकार के फल) नहीं है।

अपने कर्म को परखने का प्रमाण :-

१८.१३

पन्च एतानि महा-बाहो कारणानि निबोध मे।
साड्ख्ये कृत-अन्ते पश्च प्रोक्तानि सिद्धये सर्व कर्मनाम् ।।१३।।

अर्जुन को अपने युद्ध करने के कर्म पर संदेह था कि वह पुण्य है या पाप, तो ईश्वर ने इन श्लोकों में कोई कर्म पुण्य या पाप है। इसके निर्णय करने का मापदंड बताया है।

हे महाबाहो (अर्जुन)! सारे कर्म के (perfect) सही होने के लिए पांच कारण बताए गए हैं। वेदों में कर्म को प्रोत्साहित करने वाले कारण बताए गए हैं और उन कर्मों के अंत परिणाम का मैं तुमसे वर्णन करता हूँ। इन सबके बारे में मुझसे सुनो।

(महाबाहो) हे महाबाहो (अर्जुन) (सर्व) सारे (कर्मनाम्) कर्म के (सिद्धये) सही होने के लिए (पांच) पांच (कारणानि) कारण (बताऐ गए है) (साडख्ये) वेदों में (कृत-अन्ते) कर्म को प्रोत्साहित करने वाले कारण और उन कर्मों के अंत (परिणाम) का (प्रोक्तानि) (मैं तुमसे) वर्णन करता हूँ। (एतानि) इन सबके बारे में (मे) मुझसे (निबोध) सुनो।

१८.१४

अधिष्ठानम् तथा कर्ता करणम् च पृथक-विधम।
विविधाः च पृथक चेष्टाः दैवम् च एव अत्र पन्चमम् ।।१४।।

स्थान, और कर्म करने वाला व्यक्ति, और विभिन्न प्रकार के कारण (स्थिती/Situation)

(अधिष्ठानम्) स्थान (तथा) और (कर्ता) कर्म करने वाला व्यक्ति (च) और (पृथक-विधम्) विभिन्न प्रकार के (कारण) कारण (स्थिती/Situation) (च) और (विविधा: पृथक) विभिन्न प्रकार के (चेष्टा) प्रयास (च)

नोट १८.१२ जो लोग इसी जीवन में अपना कर्म फल और उन्नति (तरक्की) चाहते हैं। और निस्वार्थ कर्म नहीं करते उनके बारे में पवित्र कुरआन में निम्नलिखित उल्लेख हैं,

"जो लोग इसी सांसारिक जीवन और इसकी शोभा के इच्छुक होते हैं, उन लोगों को उनके कर्मों का बदला (फल) हम इसी संसार में दे देते हैं। और इसमें उनके साथ कोई कमी नहीं की जाती। यही वे लोग हैं, जिनके लिए आखिरत (मृत्यु के बाद के जीवन) में (नरक के) आग के सिवा और कुछ नहीं। और उन्होंने यहाँ जो कुछ कर्म किया सब अकार्य गया और उनका किया धरा व्यर्थ हुआ।" (सूरह हुद-११, आयत-१५-१६)

और विभिन्न प्रकार के प्रयास और ईश्वर की इच्छा (आज्ञा)। नि:संदेह, यह पांच (कर्म के सही होने के कारण हैं)

और (देवम) ईश्वर की इच्छा (आज्ञा) (एवं) नि:संदेह (अत्र पञ्चमम्) यह पांच (कर्म के सही होने के कारण हैं)

१८.१५

शरीर वाक मनोभिः यत् कर्म प्रारभते नरः।
न्याय्यम् वा विपरीतम् वा पन्च एते तस्य हेतवः ।।१५।।

मनुष्य जो कुछ भी शरीर से, जुबान से, या बुद्धि से कर्म करता है, वह (धार्मिक) नियम के अनुसार है या उसके विपरीत है, उनके सही या गलत होने के यही पाँच कारण हैं।

(नर:) मनुष्य (यत्) जो कुछ भी (शरीर) शरीर से (वाक) जबान से (वा) या (मनोभि:) बुद्धि से (कर्म) कर्म (प्रारभते) करता है (न्याय्यम्) वह (धार्मिक) नियम के अनुसार है (वा) या (विपरीतम्) उसके विपरीत है (तस्य) उनके (हेतव) सही या गलत होने के (एते) यही (पन्च) पाँच कारण हैं।

१८.१६

तत्र एवम् सति कर्तारम् आत्मानम् केवलम् तु यः।
पश्यति अकृत-बुद्धित्वात् न सः पश्यति दुर्ततिः ।।१६।।

किन्तु, वह जो कम बुद्धिमान है, (वह) केवल अपने आपको हर चीज का करने वाला देखता है, इन पांच कारणों के बावजूद। तो वह व्यक्ति मूर्ख हैं, और कुछ नहीं देखता समझता।

(तु) किन्तु (य) वह जो (अकृत) कम (बुद्धित्वात्) बुद्धिमान है (केवलम्) (वह) केवल (आत्मानम्) अपने आपको (कर्तारम्) (हर चीज का) करने वाला (पश्यति) देखता है (तत्र) इन (पांच कारणों) (एवम् सति) के बावजूद (स:) (तो) वह (व्यक्ति) (दुर्तति:) मूर्ख है (न) (और कुछ) नहीं (पश्यति) देखता (समझता)।

किन भावनाओं के प्रभाव से कर्म करने पर कर्म पाप नहीं होते :-

१८.१७

यस्य अहङ्कतः भावः बुद्धिः यस्य न लिप्यते।
हत्वा अपि सः इमान् लोकान् न हन्ति न निबध्यते।१७।।

जिसके स्वभाव में अहंकार नहीं है, जिसकी बुद्धि संसार में उन्नति करने में लगी हुई नहीं है। इस धरती पर यदि वह हत्या भी करे तो न उसने हत्या की ऐसा माना जाएगा, और न उसके कर्मों की ईश्वर के पास पकड़ होगी।

(यस्य) जिसके (भाव:) स्वभाव में (अहङ्कत:) अहंकार (न) नहीं है (यस्य) जिसकी (बुद्धि:) बुद्धि: (लिप्यते) (संसार में उन्नती करने में) लगी हुई (न) नहीं है (इमान् लोकान्) इस धरती पर (अपि स:) अगर वह (हत्वा) हत्या भी करे तो (न हन्ति) न उसने हत्या की (ऐसा माना जाएगा) (न) (और) न (निबध्यते) उसके कर्मों की ईश्वर के पास पकड़ होगी।

(नोट: निबध्यते का अर्थ समझने के लिए नोट N-११ पढ़े।)

१८.१८

ज्ञानम् ज्ञेयम् परिज्ञाता त्रि-विधा कर्म चोदना।
करणम् कर्म कर्ता इति त्रि-विधः कर्म सडग्रहः।।१८।।

दिव्य ज्ञान, अन्य लोक जिसका ज्ञान होना चाहिए, ईश्वर जो सब कुछ जानता है। यह तीन कर्म के लिए प्रेरित करने वाले हैं। कर्म की इच्छा, कर्म और कर्म को करने वाला यह तीन कर्म के तत्त्व हैं।

(ज्ञानम्) दिव्य ज्ञान, (ज्ञेयम्) (अन्य लोक) जिसका ज्ञान होना चाहिए (परिज्ञाता) (ईश्वर) जो सब कुछ जानता है (त्रि-विधा) यह तीन (कर्म चोदना) कर्म के लिए प्रेरीत करने वाले हैं (करणम्) कर्म की इच्छा (कर्म) कर्म (कर्ता) (और) कर्म को करने वाला (इति त्रि विधः) यह तीन (कर्म सडग्रहः) कर्म के तत्त्व हैं।

१८.१९

ज्ञानम् कर्म च कर्ता च त्रिधा एव गुण-भेदतः।
प्रोच्यते गुण-सडख्याने यथा-वत् शृणु तानि अपि।।१९।।

ज्ञान, कर्म, और कर्म को करने वाले मनुष्य भी तीन प्रकार के हैं। निःसंदेह जो तीन गुणों के अनुसार पहचाने जाते हैं। गुणों का जिस तरह वेदों में वर्णन हुआ है, वह भी सुनो।

(ज्ञानम्) ज्ञान (कर्म) कर्म (च) और (कर्ता) कर्म को करने वाला (मनुष्य) (च) भी (त्रिधा) तीन प्रकार के हैं (एव) निःसंदेह (जो) (गुण-भेदतः) जो तीन गुणों के अनुसार पहचाने जाते हैं। (गुण) गुणों का (यथा-वत्) जिस तरह (सडख्याने) वेदों में (प्रोच्यते) वर्णन हुआ है (तानि) वह (अपि) भी (शृणु) सुनो।

तीन गुणों के अनुसार ज्ञान के प्रभावित होने का वर्णन :-

१८.२०

सर्व-भूतेषु येन एकम् भावम् अव्ययम् ईक्षते।
अविभक्तम् विभक्तेषु तत् ज्ञानम् विद्धि सात्विकम् ।।२०।।

वह ज्ञान जिसके द्वारा मनुष्य देखता है कि सम्पुर्ण प्राणी एक अविनाशी ईश्वर द्वारा निर्माण किए गए हैं। और वह ईश्वर विभिन्न प्रकार के प्राणियों को निर्माण करने और पालने के लिए बटा हुआ नहीं है, तो समझ लो कि वह ज्ञान सात्विक गुण से प्रेरित है।

(येन) (वह ज्ञान) जिसके द्वारा (ईक्षते) (मनुष्य) देखता है कि (सर्व) सम्पुर्ण (भूतेषु) प्राणी (एवम्) एक (अव्ययम्) अविनाशी (ईश्वर द्वारा) (भावम्) निर्माण किए गए हैं (विभक्तेषु) (और वह ईश्वर) विभिन्न प्रकार के (प्राणियों को निर्माण करने और पालने के लिए) (अविभक्तम्) बटा हुआ नहीं है (विद्धि) तो समझ लो कि (तत्) वह (ज्ञानम्) ज्ञान (सात्विकम्) सात्विक गुण से प्रेरित है।

१८.२१

पृथक्त्वेन तु यत् ज्ञानम् नाना-भावान् पृथक-विधान्।
वेत्ति सर्वेषु भूतेषु तत् ज्ञानम् विद्धि राजसम् ।।२१।।

(तु) परंतु (यत) वह (ज्ञानम्) ज्ञान (जिसके द्वारा) (पृथक) विभिन्न (विधान) प्रकार के (सर्वेषु) सारे (भुतेषु) प्राणी (पृथक्त्वेन) विभिन्न

परंतु वह ज्ञान जिसके द्वारा विभिन्न प्रकार के सारे प्राणी, विभिन्न प्रकार के अलग अलग (ईश्वरों द्वारा) निर्माण किए गए हैं ऐसा समझा जाता है। उस ज्ञान को रजो गुण से प्रेरित समझो।

प्रकार के (तत्) अलग अलग (ईश्वरों द्वारा) (भावान्) निर्माण किए गए हैं (वेत्ति) ऐसा समझा जाता है। (तत) उस (ज्ञानम्) ज्ञान को (राजसम्) रजो गुण से प्रेरित (विद्धि) समझो।

१८.२२

यत् तु कृत्स्नवत् एकस्मिन् कार्ये सक्तम् अहैतुकम्
अतत्व-अर्थ-वत् अल्पम् च तत् तामसम् उदाहृतम।।२२।।

किन्तु ईश्वर कह रहा है कि, जिस ज्ञान द्वारा मनुष्य किसी एक काम में पूरी तरह से लग जाए, और वह किसी उद्देश के बिना हो, और वह वास्तविकता के आधार पर न हो, और वह मामूली या बहुत छोटा सा काम हो। (तो) वह (ज्ञान) तमो गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

(तु) किन्तु (उदाहृतम्) (ईश्वर) कह रहा है कि (यत) जिस ज्ञान द्वारा (मनुष्य) (एकस्मिन्) किसी एक काम में (कृत्स्नवत्) पूरी तरह से (सक्तम्) लग जाए (अहैतुकम्) (और वह किसी) उद्देश के बिना हो (अतत्व-अर्थ-वत्) और वह वास्तविकता के आधार पर न हो (च) और (अल्पम्) वह मामूली या बहुत छोटा सा काम हो। (तत) (तो) वह (ज्ञान) (तामसम्) तमो गुण से प्रेरित (उदाहृतम्) कहा जाएगा।

तिन गुणों के अनुसार सत्कर्म के प्रभावित होने का वर्णन :-

१८.२३

नियतम् सङग-रहितम् अराग-द्वेषतः कृतम।
अफल-प्रेप्सुना कर्म यत् तत् सात्विकम् उच्यते।।२३।।

जो कर्म धार्मिक नियमों के अनुसार किए जाते हैं। संगम (शिर्क) से मुक्त होकर, क्रोध और द्वेष के बिना, नि:स्वार्थ किए जाते हैं, वह सात्विक गुण से प्रेरित कहे जाएंगे।

(अगले तीन श्लोक कर्म के विषय में है)

(यत) जो (कर्म) कर्म (नियतम्) धार्मिक नियमों के अनुसार (कृतम्) किए जाते हैं (सड़ग) संगम (शिर्क) से (रहितम्) मुक्त होकर (अराग द्वेषत:) क्रोध और द्वेष के बिना (अफल) नि:स्वार्थ (प्रेप्सुना) के साथ (किए) जाते है (तत) वह (कर्म) (सात्विकम्) सात्विक गुण से प्रेरित (उच्यते) कहे जाएंगे।

१८.२४

यत् तु काम-ईप्सुना कर्म स अहङ्कारेण वा पुनः।
क्रियते बहुल-आसायम् तत् राजसम् उदाहृतम् ।।२४।।

किन्तु जो कर्म फल की अपेक्षा से, अहंकार के साथ किया जाए, या बार बार किया जाए, बहुत अधिक कष्ट के साथ किया जाए। वह (कर्म) रजो गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

(तु) किन्तु (यत्) जो (कर्म) कर्म (काम-ईप्सुना) फल की अपेक्षा से (सअहङ्कारेण) अहंकार के साथ किया जाए (वा) या (पुन) बार बार (क्रियते) किया जाए (बहुल) बहुत अधिक (आसायम्) कष्ट (के साथ किया जाए) (तत) वह (कर्म) (राजसम्) रजो गुण से प्रेरित (उदाहृतम्) कहा जाएगा।

१८.२५

अनुबन्धम् क्षयम् हिंसाम् अनपेक्ष्य च पौरुषम् ।
मोहात् आरभ्यते कर्म यत् तत् तामसम् उच्यते।।२५।।

जो कर्म बिना धार्मिक नियम के, विनाश और हिंसा के लिए, अपनी क्षमता और परिणाम को नजरअंदाज करके, किसी भ्रम में आकर आरंभ किया जाए, उस (कर्म को) तमो गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

(यत्) जो (कर्म) कर्म (अनुबन्धम्) बिना धार्मिक नियम के (क्षयम्) विनाश (हिंसाम्) (और) हिंसा (के लिए) (पौरुषम्) अपनी क्षमता (च) और (अनवेक्ष्य) परिणाम को नजरअंदाज करके (मोहात्) किसी भ्रम में आकर (आरभ्यते) आरंभ किया जाए (तत्) उस (कर्म को) (तामसम्) तमो गुण से प्रेरित (उच्यते) कहा जाएगा।

तीन गुणों के अनुसार मनुष्य के स्वभाव के बदलने का वर्णन :-

१८.२६

मुक्त-सङ्गः अनहम्-वादी धृति उत्साह समन्वितः।
सिद्धि असिद्धयोः निर्विकारः कर्ता सात्विकः उच्यते।।२६।।

संगम (शिर्क) से मुक्त, अहंकार से मुक्त, दृढ संकल्प वाला, उत्साह वाला, सुख शांती और कठिन समय में एक जैसा रहने की क्षमता वाला, ऐसा कर्म करने वाला व्यक्ति सात्विक गुण वाला कहा जाएगा।

(सङ्ग) संगम (शिर्क) से (मुक्त) मुक्त (अनहम्-वादी) अहंकार से मुक्त (धृति) दृढ संकल्प वाला (उत्साह) उत्साह वाला (सिद्धि) सुख शांती (और) (असिद्धयो:) कठिन समय में (निर्विकार) एक जैसा (समन्वित:) रहने की क्षमता वाला (कर्ता) ऐसा कर्म करने वाला व्यक्ति (सात्विक:) सात्विक गुण वाला (उच्यते) कहा जाएगा।

१८.२७

रागी कर्म-फल प्रेप्सुः लुब्धः हिंसा-आत्मकः अशुचिः।
हर्ष-शोक-अन्वितः कर्ता राजसः परिकीर्तितः ।।२७।।

कर्म करने वाला व्यक्ति (जो) क्रोध करने वाला है, लालची स्वभाव का है, अपने सत्कर्मों के फल की उम्मीद करता है, हिंसक स्वभाव वाला है, स्वच्छ नहीं रहता, अच्छे समय और कठिन समय का (उसपर) प्रभाव होता है। (ऐसा व्यक्ति) रजो गुण (के स्वभाव वाला) कहा जाएगा।

(कर्ता) कर्म करने वाला व्यक्ति (जो) (रागी) क्रोध करने वाला है (लुब्ध:) लालची स्वभाव का है (कर्म-फल) अपने सत्कर्मों के फल की (प्रेप्सु:) उम्मीद करता है (हिंसा-आत्मक:) हिंसक स्वभाव वाला है। (अशुचि:) स्वच्छ नहीं रहता (हर्ष) अच्छे समय (शोक) कठिन समय का (अन्वित:) (जिस पर) प्रभाव होता है (राजस:) (ऐसा व्यक्ति) रजो गुण (के स्वभाव वाला) (परिकीर्तित:) कहा जाएगा।

१८.२८

अयुक्तः प्राकृतः स्तब्धः शठः नैकृतिकः अलसः।
विषादी दीर्घ-सूत्री च कर्ता तामसः उच्यते।।२८।।

कर्म करने वाला व्यक्ति जो ईश्वर की प्रार्थना में नहीं लगा रहता, भौतिकवादी (Materialistic) है, जिद्दी है, छल कपट स्वभाव का है, दूसरों का अपमान करने वाला है, आलसी है, दु:खी रहने वाला है, और टालमटोल और विलंब करने वाला है, (ऐसा व्यक्ति) तमो गुण के स्वभाव वाला कहा जाएगा।

(कर्ता) कर्म करने वाला व्यक्ति (जो) (अयुक्तः) (ईश्वर की प्रार्थना में नहीं) लगा रहता (प्राकृतः) भौतिकवादी (Materialistic) है (स्तब्ध) जिद्दी है (शठः) छल कपट स्वभाव का है (नैकृतिकः) दूसरों का अपमान करने वाला है (अलसः) आलसी है (विषादी) दु:खी रहने वाला है (च) और (दीर्घ सूत्री) टालमटोल और विलंब करने वाला है (तामसः) (ऐसा व्यक्ति) तमो गुण के स्वभाव वाला (उच्यते) कहा जाएगा।

१८.२९

बुद्धैः भेदम् धृतेः च एव गुणतः त्रि-विधम् शृणु।
प्रोच्यमानम् अशेषण पृथक्त्वेन धनन्जय।।२९।।

हे अर्जुन गुणों के अनुसार नि:संदेह बुद्धि (सोच समझ) (Intelligence), और दृढ निश्चय (Determination) (भी) तीन प्रकार के हैं। इनके अंतर को अलग से (और) विस्तार से सुनो (जो मैं तुमसे) कह रहा हूँ।

(धनन्जय) हे अर्जुन (गुणतः) गुणों के अनुसार (एवं) नि:संदेह (बुद्धैः) बुद्धि (सोच समझ) (Intelligence) (एव) और (धृतेः) दृढ निश्चय (Determination) (भी) (त्रि-विधम्) तीन प्रकार के हैं (भेदम) इनके अंतर को (पृथक्त्वेन) अलग से (अशेषण) (और) विस्तार से (शृणु) सुनो (प्रोच्यमानम्) (जो मैं तुमसे) कह रहा हूँ।

तीन गुणों के अनुसार सोच-समझ के बदलने का वर्णन-

१८.३०

प्रवृत्तिम् च निवृत्तिम् च कार्य अकार्ये भय अभये।
बन्धम् मोक्षम् च या वेत्ति बुद्धिः सा पार्थ सात्विकी।३०।।

हे अर्जुन, जो बुद्धि जानती है कि आचरण और कर्मों की प्रवृत्ति उन्नति क्या है? और गिरावट

(पार्थ) हे अर्जुन (च) जो (बुद्धिः) बुद्धि (वेत्ति) जानती है कि (प्रकृतिम्) (आचरण और कर्मों की) प्रवृत्ति (उन्नति) क्या है? (च) और (निवृत्तिम्) गिरावट क्या है। (कार्य) सत्कर्म क्या है? (और) (अकार्ये) वह कर्म क्या है जो नहीं करना चाहिए (भय) (किस से और किन

नोट १८.३० पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''अत: मेरे उन बन्दों को शुभ सूचना दे दो जो बात को ध्यान से सुनते हैं, फिर उस अच्छी बात का अनुपालन करते हैं। वही हैं जिन्हें ईश्वर ने मार्ग दिखाया है, और वही बुद्धि और समझ वाले हैं।'' (सूरे अज़-जुमर-३९, आयत-१८)

क्या है। सत्कर्म क्या है? और वह कर्म क्या है जो नहीं करना चाहिए। किससे और किन बातों से डरना चाहिए। किससे और किन बातों से नहीं डरना चाहिए। ईश्वर के सामने प्रलय के दिन कौन से कर्म निरीक्षण के समय बांध देंगे और कौन से कर्म के आधार पर ईश्वर क्षमा करेगा मुक्ति देगा। ऐसी वह बुद्धि सात्विक गुण से प्रेरित कही जाएगी।

बातों से) ड़रना चाहिए। (अभये) (किससे और किन बातों से) नहीं डरना चाहिए। (बन्धम्) (ईश्वर के सामने प्रलय के दिन कौन से कर्म निरीक्षण के समय बांध देंगे) (मोक्षम्) और कौन से कर्म के आधार पर ईश्वर क्षमा करेगा (मुक्ति देगा) (सः) वह (बुद्धि) (सात्विक) सात्विक गुण से प्रेरित कही जाएगी।

१८.३१

यया धर्मम् अधर्मम् च कार्यम् च अकार्यम् एरा च।
अयथा-वत् प्रजानाति बुद्धिः सा पार्थ राजसी।।३१।।

बुद्धि जो ठीक तरह से नहीं जानता धर्म और अधर्म (को), और कर्तव्य और अकर्तव्य को, वह (बुद्धि) रजो गुण से प्रेरित कही जाएगी।

(बुद्धि) बुद्धि (यया) जो (अयथा वतः) ठीक तरह से नहीं (प्रजानाति) जानता (धर्मम) धर्म और (अधमर्म) अधर्म (को) (च) और (कार्यम) कर्तव्य (च) और (अकार्यम्) अकर्तव्य को (सा) वह (बुद्धि) (राजसी) रजो गुण से प्रेरित कही जाएगी।

१८.३२

अधर्मम् धर्मम् इति या मन्यते तमसा आवृता।
सर्व-अर्थान् विपरीतान् च बुद्धिः सा पार्थ तामसी।।३२।।

हे पार्थ (अर्जुन), जो बुद्धि अधर्म को धर्म समझे, और सम्पूर्ण चीज़ों को उसके उद्देश्य के विपरीत या उल्टा मानते हैं या समझते हैं या इस्तेमाल करते हैं वह बुद्धि तमो गुण से प्रेरित मानी जाएगी।

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (या) जो (बुद्धिः) बुद्धि (अधर्मम्) अधर्म को (धर्मम्) धर्म समझे (च) और (सर्व-अर्थान्) सम्पूर्ण चीज़ों को (विपरीतान्) उल्टा (मानते हैं या समझते हैं या इस्तेमाल करते हैं) (सा) वह (बुद्धिः) (तामसी) तमो गुण से प्रेरित मानी जाएगी।

तीन गुणों के अनुसार लोगों के संकल्प के बदलने का वर्णन

१८.३३

धृत्या यया धारयते मनः प्राण इन्द्रिय क्रियाः।
योगेन अव्यभिचारिण्या धृतिः सा पार्थ सात्विकी।।३३।।

हे पार्थ (अर्जुन)! दृढ निश्चय जो दृढ़ता से वश में रखे मन को अपने प्राण की सुरक्षा के लिए,

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (धृत्या) दृढ निश्चय (यया) जो (अव्यभिचारिण्या) दृढ़ता से वश में रखे (मनः) मन (को) (प्राण) अपने प्राण की सुरक्षा के लिए (इन्द्रिय) अपनी इच्छाओं के अनुसार (क्रियाः) (आनंद का अनुभव देने

अपनी इच्छाओं के अनुसार आनंद का अनुभव देने वाले कर्म से बचने के लिए, ईश्वर से जोड़ने वाली प्रार्थना में संयम के साथ लगे रहने के लिए, वह दृढ निश्चय सात्विक गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

वाले) कर्म से बचने के लिए (योगेन) ईश्वर से जोड़ने वाली प्रार्थना में (धारयते) संयम के साथ लगे रहने के लिए (सा) वह (धृतिः) दृढ निश्चय (सात्विकी) सात्विक गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

१८.३४

यया तु धर्म काम अर्थान् धृत्या धारयते अर्जुन।
प्रसडेन् फल-अकाङ्क्षी धृतिः सा पार्थ राजसी।।३४।।

हे अर्जुन यदि (कोई) दृढ़ संकल्प अपनाता है धार्मिक काम को करने का, अपने मन की इच्छा को पूरा करने के काम को करने का, या संसारी काम को करने का। किन्तु फल की आशा के साथ, तो उसका वह दृढ़ संकल्प रजो गुण से प्रेरित माना जाएगा।

(अर्जुन) हे अर्जुन (यथा) अगर (कोई) (धृत्या) दृढ़ संकल्प (धारयते) अपनाता है (धर्म) धार्मिक काम को करने का (काम) अपने मन की इच्छा को पूरा करने के काम को करने का (अर्थान्) या संसारी काम को करने का (तु) किन्तु (फल) फल की (अकाङ्क्षी) आशा (के साथ) (सः) (तो उसका) वह (धृतिः) दृढ़ संकल्प (राजसी) रजो गुण से प्रेरित माना जाएगा।

१८.३५

यया स्वप्नम् भयम् शोकम् विषादम् मदम् एव च।
न विमुन्चति दुर्मेधा धृतिः सा पार्थ तामसी।।३५।।

हे पार्थ (अर्जुन), मूर्ख लोग, जिस दृढ़ संकल्प के साथ से बेबुनियाद कल्पना करना, भय करना, शोक करना, परेशान होना, और भ्रम में रहना नहीं छोडते। निःसंदेह वह दृढ़ संकल्प तमो गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (दुर्मेधाः) मूर्ख लोग (यया) जिस (दृढ संकल्प से) (स्वप्नम) बेबुनियाद कल्पना करना (भयम्) भय करना (शोकम्) शोक करना (विषादम्) परेशान होना (च) और (मदम्) भ्रम में रहना (न) नहीं (विमुन्चति) छोडते। (एव) निःसंदेह (सा) वह (धृति) दृढ़ संकल्प (तामसी) तमो गुण से प्रेरित कहा जाएगा।

तीन प्रकार के सुख शांति का वर्णन :-

१८.३६

सुखम् तु इदानीम् त्रि-विधम् शृणु मे भरत-ऋषभ।
अभ्यासात् रमते यत्र दुःख अन्तम् च निगच्छति।।३६।।

(भरत-ऋषभ) हे भरत श्रेष्ठ (अर्जुन) (इदानीम्) अब (मे) मुझसे (त्रि) तीन (विधम्) प्रकार के (सुखम्) सुख (के बारे में) (शृणु) सुनो (यत्र)

हे भरत श्रेष्ठ (अर्जुन)! अब मुझसे तीन प्रकार के सुख के बारे में सुनो। सबसे पहला यह वेदों का अध्ययन और उनमें सोच विचार है, जिसके कारण प्रसन्नता मिलती है, और दुखों का अंत होता है।

(सबसे पहला) यह (अभ्यासात्) वेदों का अध्ययन और उनमें सोच विचार (रमते) (जिसके कारण) प्रसन्नता (निगच्छति) मिलती है (च) और (दुःख) दुखों का (अन्तम) अंत होता है।

१८.३७

यत् यत् अग्रे विषम इव परिणामे अमृत उपमम्
तत् सुखम् सात्विकम् प्रोक्तम् आत्म बुद्धिप्रसाद-
जम् ।।३७।।

यह वेदों का अध्ययन वह सुख है जो आरंभ में विष की तरह लगता है। किन्तु परिणाम में अमृत के बराबर है। (अच्छी तरह जान लो कि) ईश्वर की याद से मन में सुख शान्ति जन्म लेती है। यह वह सुख शान्ति है जो सात्विक गुण से कहा गया है।

(तत्) यह (वेदों का अध्ययन वह सुख है) (यत) जो (अग्रे) आरंभ में (विषम् इव) विष की तरह लगता है (परिणामे) (किन्तु) परिणाम में (अमृत) अमृत (उपमम्) के बराबर है। (आत्म) (अच्छी तरह जान लो कि) ईश्वर (की याद से) (बुद्धि) मन (में) (प्रसाद) सुख शान्ति (जम्) जन्म लेती है (तत) (यह) वह (सुखम्) सुख शान्ति है (जो) (सात्विकम्) सात्विक गुण से (प्रोक्तम्) कहा गया है।

१८.३८

विषय इन्द्रिय संयोगात् यत तत् अग्रे अमृत-
उपमम् ।
परिणामे विषम् इव तत् सुखम् राजसम् स्मृतम्
।।३८।।

याद रखो, जो सुख मन को आनंद देने वाले वस्तुओं के उपयोग से मिलता है। वह आरंभ में अमृत के समान महसूस होता है। किन्तु परिणाम विष की तरह होता है। ऐसा सुख रजो गुण के कारण है।

(स्मृतम्) याद रखो (यत्) जो (सुख) (इन्द्रिय) मन को आनंद देने वाले (विषय) वस्तुओं (संयोगात) के उपयोग से मिलता है। (तत) वह (अग्रे) आरंभ में (अमृत) अमृत (उपमम) के समान महसूस होता है (परिणामे) (किन्तु) परिणाम (विषय) विष (इव) की तरह होता है। (तत) ऐसा (सुखम्) सुख (राजसम्) रजो गुण के कारण है।

१८.३९

यत् अग्रे च अनुबन्धे च सुखम् मोहमम् आत्मनः।
निद्रा आलस्य प्रमाद उत्थम् तत् तामसम्
उदाहृतम् ।।३९।।

जो सुख मनुष्य को आरंभ से भ्रम में फसा दे। और नींद (गफलत), आलस और लापरवाही उत्पन्न करे, वह तमो गुण से कहा जाएगा।

(यत्) जो (सुखम्) सुख (आत्मनः) मनुष्य को (अग्रे) आरंभ से (मोहमम्) भ्रम में (अनुबन्धे) फसा दे (च) और (निद्रा) नींद (गफलत) (आलस्य) आलस (च) और (प्रमाद) लापरवाही (उत्थम्) उत्पन्न करे (तत) वह (तामसम्) तमो गुण से (उदहृत्तम) कहा जाएगा।

१८.४०

न तत् अस्ति पृथिव्याम् वा दिवि देवेषु वा।
पुनः सत्त्वम् प्रकृति-जैः मुक्तम् यत् एभिः स्यात् त्रिभिःगुणैः।।४०।।

वह (मनुष्य) जो पृथ्वी पर हैं, और आध्यात्मिक प्राणी, जिन्न, यक्ष, इत्यादी, और बार बार सत्कर्म करने वाले ऋषि मुनि (वली), (जिस किसी को ईश्वर ने अपनी) प्राकृतिक शक्ति से जन्म दिया है, वह तीन प्रकार के गुणों के प्रभाव से मुक्त नहीं हैं।

(तत्) वह (मनुष्य) (पृथिव्याम्) जो पृथ्वी पर (अस्ति) हैं (दिवि देवेषु) और आध्यात्मिक प्राणी (जिन्न, यक्ष, इत्यादी) (वा) और (पुन: सत्वम्) बार बार सत्कर्म करने वाले ऋषि मुनि (वली) (प्रकृति) (जिस किसी को ईश्वर ने अपनी) प्राकृतिक शक्ति (जैः) जन्म दिया है (यत्) वह (त्रिभि: गुणैः) तीन प्रकार के गुणों के (एभिः) प्रभाव से (मुक्तम्) मुक्त (न) नहीं (स्यात्) हैं।

ईश्वर ने मनुष्य में जन्म से जो व्यवसायिक गुण रखे है उसी के अनुसार व्यक्ति को व्यवसाय अपनाना चाहिए :-

१८.४१

ब्राह्मण क्षत्रिय विशाम् शूद्राणाम् च परन्तप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभाव प्रभवैः गुणैः।।४१।।

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र, हे अर्जुन, यह काम बांटे गए हैं; स्वभाव, प्रभाव, गुणों के आधार पर। (न कि जन्म के आधार पर)।

(ब्राह्मण) ब्राह्मण (क्षत्रिय) क्षत्रि (विशाम्) वैश्य (च) और (शूद्राणाम्) शूद्र (परन्तप) हे अर्जुन (कर्माणि) यह काम (प्रविभक्तानि) बांटे गए हैं। (स्वभाव) स्वभाव (प्रभवैः) प्रभाव (गुणै) गुणों के आधार पर (न कि जन्म के आधार पर)।

Note:- Swami Mukundada translated this shlok as follow,
Tranquitly, restraint, ansterily, punly, patience, integrily, knowledge, <u>wisdom and belief in hereafter</u>, these are the intrinsic qualities of world for Brahmins. (www.holy-bhagavad-gita-org).

१८.४२

शमः दमः तपः शौचम् क्षान्तिः आर्जवम् एव च।
ज्ञानम् विज्ञानम् आस्तिक्यम् ब्रह्म कर्म स्वभावजम् ।।४२।।

मन का शान्त होना, इन्द्रियों को वश में करना, धर्मपालन के लिए कष्ट सहना, बाहर भीतर से स्वच्छ रहना, दूसरों को क्षमा करना, सरल जीवन व्यतीत करना, वेद और दिव्य ग्रंथों का ज्ञान होना, (Wisdom) बुद्धिमत्ता का होना, (अन्य लोक) मृत्यु के बाद के जीवन में विश्वास रखना, (belief in a hereafter) नि:संदेह यह ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म हैं।

(शम) मन का शान्त होना (दमः) इन्द्रियो को वश में करना (तपः) धर्मपालन के लिए कष्ट सहना (शौचम्) बाहर भीतर से स्वच्छ रहना (क्षान्ति) दूसरों को क्षमा करना (आजिवम्) सरल जीवन व्यतीत करना (ज्ञानम्) वेद और दिव्य ग्रंथों का ज्ञान होना (विज्ञानम्) (Wisdom) बुद्धिमत्ता का होना (अस्तिक्यम्) <u>(अन्य लोक) मृत्यु के बाद के जीवन में विश्वास रखना</u> <u>(belief in a hereafter)</u> (एवं) नि:संदेह (यह) (ब्रह्मकर्म स्वभावजम्) ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म हैं।

१८.४३

शौर्यम् तेजः धृतिः दाक्ष्यम् युद्धे च अपि अपलायनम् ।
दानम् ईश्वर भावः च क्षात्रम् कर्म स्वभाव-जम् ।।४३।।

शूरवीरता, तेज, दृढ संकल्प, प्रजा के संचालन में चतुरता (Good administration ability), और युद्ध में पीठ न दिखाना, दान करना, शासन करने का स्वभाव, नि:संदेह क्षत्रिय के (यह) स्वभाविक कर्म हैं।

(शौर्यम्) शूरवीरता (तेज:) तेज (धृति:) दृढ संकल्प (दाक्ष्यम्) प्रजा के संचालन में चतुरता (Good administration ability) (च) और (युद्धे अपलायनम्) युद्ध में पीठ न दिखाना (दानम्) दान करना (ईश्वर भाव:) शासन करने का स्वभाव (एव) नि:संदेह (क्षात्रम्) क्षत्रिय के (यह) (स्वभाव-जम्) स्वभाविक (कर्म) कर्म हैं।

१८.४४

कृषि गो रक्ष्य वाणिज्यम् वैश्य कर्म स्वभाव-जम।
परिचर्या आत्मकम् कर्म क्षुद्रस्य अपि स्वभाव-जम् ।।४४।।

खेती-बाडी करना, गाय की रक्षा करना, और व्यापार करना वैश्य के कर्म हैं। और यह गुण उनमें जन्म से होते हैं। और इसी तरह सेवा से संबंधित कर्म शुद्र के हैं। यह स्वाभाविक गुण भी (शुद्र में) जन्म से होते हैं।

(कृषी) खेती-बाडी करना (गो) गाय की (रक्ष्य) रक्षा करना (और) (वाणिज्यम्) व्यापार करना (वैश्य कर्म) वैश्य के कर्म हैं (स्वभाव-जम्) और यह गुण उनमें जन्म से होते हैं। (परिचर्या आत्मकम्) (और इसी तरह) सेवा, (आत्मकम् कर्म) से संबंधित कर्म (शुद्रस्य) शुद्र के हैं (अपि स्वभाव जम्) यह स्वाभाविक गुण भी (शुद्र में) जन्म से होते हैं।

१८.४५

स्वे स्वे कर्मणि अभिरतः संसिद्धिम् लभते नरः।
स्व-कर्म निरतः सिद्धिम् यथा विन्दति तत् शृणु।।४५।।

अपने-अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम में लगे हुए मनुष्य ही सफलता प्राप्त करते हैं। अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम करने वाले जिस प्रकार सफलता प्राप्त करते हैं वह मुझसे सुनो।

(स्वे स्वे) अपने-अपने (कर्मणि) (स्वाभाविक गुणों के अनुसार) काम में (अभिरत:) लगे हुए (नर:) मनुष्य (ही) (संसिद्धिम्) सफलता (लभते) प्राप्त करते हैं (स्व-कर्म) अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम (निरत:) करने वाले (यथा) जिस प्रकार (सिद्धिम) सफलता (विन्दति) प्राप्त करते हैं (तत्) वह (शृणु) (मुझसे सुनो)।

नोट १८.४४ :- ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, सांसारिक जीवन में मनुष्य के जीवन-यापन के साधन (economy and status) हमने उनके बीच बाँटे है, और हमने उनमें से कुछ लोगों को दूसरे कुछ लोगों से श्रेणियों की दृष्टि से उच्च रखा है। ताकि उनमें से वे एक-दूसरे से काम लें। और तुम्हारे रब की दयालुता उससे कहीं उत्तम है जिसे वे समेट रहे हैं। (सूरे अज़-ज़ूखरुफ-४३, आयत-३२)

१८.४६

यतः प्रवृत्तिः भूतानाम् येन सर्वम् इदम् ततम् ।
स्व-कर्मणा तम् अभ्यर्च्य सिद्धिम् विन्दति मानवः ।।४६।।

वह ईश्वर जिसने सम्पूर्ण प्राणियों को उत्पन्न किया, जिसने इस सम्पूर्ण ब्रह्मांड को स्थापित किया, उस ईश्वर की प्रार्थना करते हुए अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम करने से ही मनुष्य सफलता प्राप्त करता है।

(यत:) (वह ईश्वर) जिसने (भूतानाम्) सम्पूर्ण प्राणियों को (प्रवृत्ति) उत्पन्न किया (येन) जिसने (इदम्) इस (सर्वम्) सम्पूर्ण (ब्रह्मांड को) (ततम्) स्थापित किया (तम्) उस (ईश्वर की) (अभ्यर्च्य) प्रार्थना करते हुए (स्व-कर्मणा) अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम करने से ही (मानव:) मनुष्य (सिद्धिम्) सफलता (विन्दति) प्राप्त करता है।

१८.४७

श्रेयान् स्व-धर्मः विगुणः परधर्मात् सु-अनुष्ठितात्
स्वभाव-नियतम् कर्म कुर्वन् न आप्नोति किल्बिषम् ।।४७।।

दूसरों के स्वाभाविक गुणों वाले कर्तव्यों कर्मों को अच्छी तरह करने से अधिक उत्तम है कि कम स्वाभाविक गुण होते हुए भी मनुष्य अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम करे। क्योंकि अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम करने से असफलता नहीं मिलती।

(पर) दूसरों के स्वाभाविक गुणों वाले (धर्मात) कर्तव्यों (कर्मों को) (सु-अनुष्ठितात्) अच्छी तरह करने से (श्रेयान्) अधिक उत्तम है कि (विगुण:) कम स्वाभाविक गुण होते हुए भी (स्व-धर्म:) (मनुष्य) अपने स्वाभाविक गुणों के अनुसार काम करे (क्योंकि) (स्वभाव) अपने स्वाभाविक गुणों (नियतम्) के अनुसार (कर्म) काम (कुर्वन) करने से (किल्बिषम्) असफलता (न) नहीं (आप्नोति) मिलती।

१८.४८

सहजम् कर्म कौन्तेय स-दोषम् अपि न त्यज्येत।
सर्व-आरम्भाः हि दोषेण घूमेन अग्निः इव आवृताः।।४८।।

नि:संदेह सारे प्रयास, काम में कमी होती है। सारे काम दोषी (Imperfect) होते हैं और यह दोष का होना ऐसा स्वाभाविक है जैसे अग्नि का धुएँ से पुर होना स्वाभाविक है। नि:संदेह हे अर्जुन सारे स्वाभाविक गुण दोष के साथ (ही मनुष्य के

(हि) नि:संदेह (सर्व) सारे (आरम्भा:) प्रयास, काम (दोषेण) (में) कमी होती है (सारे काम दोषी (Imperfect) होते है) (इव) (और यह दोष का होना ऐसा स्वाभाविक है) जैसे (अग्नि:) अग्नि का (घूमेन) धुएँ से (आवृता:) पुर (होना स्वाभाविक है) (अपि) नि:संदेह (कौन्तेय) हे अर्जुन (दोषम्) (सारे स्वाभाविक गुण) दोष (स) के साथ (सहजम्) (ही मनुष्य के

नोट नं. १८.४६ पैगंबर मुहम्मद (स.) ने कहा, ''ईश्वर ने कुछ मनुष्यों को लोगों की आवश्यकताएं पूरी करने के लिए पैदा किया है। लोग इनके पास अपनी आवश्यकताऐं लेकर जाते हैं और वे उसे पूरी करते हैं। लोगों की आवश्यकताएं को पूरा करने वाले यह लोग ईश्वर के प्रकोप से सुरक्षित रहेंगे।''
(तबरानी कबीर १३३३४ अन अब्दुल्ला-बिन-उमर)

साथ) निर्माण किया गया है। इस कारण अपनी स्वाभाविक गुणों के अनुसार कर्मों को कभी त्यागना नहीं चाहिए।

साथ) निर्माण किया गया है (कर्म) (इस कारण अपनी स्वाभाविक गुणों के अनुसार कर्मों को) (त्यजेत्) कभी त्यागना (न) नहीं चाहिए।

१८.४९

असक्त-बुद्धिः सर्वत्र जित-आत्मा विगत-स्पृहः।
नैष्कर्म्य-सिद्धिम् परमाम् संन्यासेन अधिगच्छति।।४९।।

जिसने सबसे अपने बुद्धि को (expectation) को हटा लिया है। (जिसने) अपने आपको जीत लिया है। जिसने अपनी इच्छाओं को पूरा करना छोड़ दिया है। जिसने कर्मफल पाने की इच्छा को पूरी तरह छोड़ दिया है। वह महान ईश्वर को पा लेता है।

(सर्वत्र) जिसने सबसे (बुद्धिः) अपने बुद्धि को (expectation) को (असक्तः) हटा लिया है (आत्मा) (जिसने) अपने आपको (जित) जीत लिया है (स्पृहः) जिसने अपनी इच्छाओं को (विगत) (पूरा करना) छोड़ दिया है (नैष्कर्म्य-सिद्धिम्) जिसने कर्मफल पाने की इच्छा को पूरी तरह (संन्यासेन) छोड़ दिया है (परमाम्) वह महान ईश्वर को (अधिगच्छति) पा लेता है।

१८.५०

सिद्धिम् प्राप्तः यथा ब्रह्म तथा आप्नोति निबोध मे।
समासेन एव कौन्तेय निष्ठा ज्ञानस्य या परा।।५०।।

दिव्य ज्ञान जिसके द्वारा मनुष्य ईश्वर में श्रद्धा प्राप्त करता है, और ईश्वर की याद में (Perfection) पूर्णता प्राप्त करता है, उस ज्ञान को संक्षिप्त में मुझसे समझने का प्रयास करो।

(परा) दिव्य ज्ञान (या) जिसके द्वारा (मनुष्य) (निष्ठा) ईश्वर में श्रद्धा (प्राप्त) प्राप्त करता है (तथा) और (ब्रह्म) ईश्वर की (याद में) (सिद्धिम्) (Perfection) पूर्णता (आप्नोति) प्राप्त करता है (यथा) उस (ज्ञान को) (समासेन) संक्षिप्त में (मे) मुझसे (निबोध) समझने का प्रयास करो।

ईश्वर को पहचानने के लिए अनिवार्य गुण और कर्म :-

१८.५१

बुद्धया विशुद्धया युक्तो धृत्यात्मानं नियम्य च।
शब्द-आदीन् विषयान् त्यक्त्वा राग द्वैषौ व्युदस्य च।।५१।।

(निम्नलिखित कर्म करने से मनुष्य ईश्वर की कृपादृष्टि प्राप्त करता है)

अपने मन को संगम (शिर्क) से शुद्ध रखो और ईश्वर की प्रार्थना में लगे रहो। दृढ़ता से अपने आप

(बुद्धया विशुद्धया युक्तो) अपने मन को संगम (शिर्क) से शुद्ध रखो और ईश्वर की प्रार्थना में लगे रहो। (धृत्यात्मानं नियम्य च) दृढ़ता से अपने आपको धार्मिक नियमों के पालन में स्थित रखो (शब्द-आदीन् विषयान् त्यक्त्वा) मन को आनंद देने वाले वस्तु और काम और ज्यादा बातचीत छोड़ दो। (राग द्वेषौ व्युदस्य च)

को धार्मिक नियमों के पालन में स्थित रखो। मन को आनंद देने वाले वस्तु और काम और ज्यादा बातचीत छोड़ दो। क्रोध और किसी से घृणा करने को एक तरफ रख दो अर्थात छोड दो)।

क्रोध और किसी से नफरत करने को एक तरफ रख दो (छोड दो)।

१८.५२

विविक्त-सेवी लघु-आशी यत वाक काय मानसः।
ध्यान-योगपरः नित्यम् वैराग्यम् समुपाश्रितः ।।५२।।

शांत स्थान पर रहो। कम भोजन करो। वाणी, शरीर, और मन को वश में रखो। ध्यान द्वारा सदैव अपने मन को ईश्वर के सम्पर्क में रखो। ईश्वर की शरण लो। निष्पक्ष रहो (आपके स्वभाव में न्याय हो)।

(विविक्त-सेवी) शांत स्थान पर रहो (लघु-आशी) कम भोजन करो (यत वाक काय मानस:) वाणी, शरीर, और मन को वश में रखो (ध्यान-योगपर: नित्यम्) ध्यान द्वारा सदैव अपने मन को ईश्वर के सम्पर्क में रखो। (समुपाश्रित:) ईश्वर की शरण लो (वैराग्यम्) निष्पक्ष रहो (आपके स्वभाव में न्याय हो)।

१८.५३

अहङ्कारम् बलम् दर्पम् कामम् क्रोधम् परिग्रहम।
विमुच्य निर्ममः शान्तः ब्रह्म-भूयाय कल्पते।।५३।।

जो मनुष्य अहंकार, हिंसा, घमंड, अपनी इच्छाओं को पूरी करना, क्रोध स्वार्थपरता, छोड़

जो मनुष्य (अहक्डारम्) अहंकार (बलम्) हिंसा (दर्पम्) घमंड (कामम्) अपनी इच्छाओं को पूरी करना (क्रोधम्) क्रोध (परिग्रहम्) स्वार्थपरता, खुदगर्जी, (विमुच्य) छोड़ देता है (निर्मम:) (धन-सम्पत्ती के) प्रेम को छोड़ देता है (शान्ता) और शांति प्रेमी है (ब्रह्म) (ऐसा मनुष्य) ईश्वर के

नोट १८.५३ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा की, और यह कि यतीम अनाथ के माल के करीब न जाओ मगर ऐसे तरीक़े से जो सबसे अच्छा हो। यहाँ तक कि वे अपनी जवानी की उम्र को पहुंच जाएँ। और नाप-तौल में पूरा इन्साफ करो। हम हर व्यक्ती पर ज़िम्मेदारी का उतना ही बोझ रखते हैं जितने की उसमें सामर्थ्य है। और जब बात कहो इन्साफ की कहो चाहे मामला अपने नातेदार ही का क्यों न हो। और ईश्वर की (प्रतिज्ञा को (अर्थात ईश्वर से किये गये वचनों/वादों को) पूरा करो। इन बातों का आदेश ईश्वर ने तुम्हें दिया है शायद कि तुम नसीहत कबूल करो। साथ ही उसका आदेश यह है कि यही मेरा सीधा मार्ग है अत: तुम इसी पर चलो और दूसरे मार्गों पर न चलो कि वे उसके मार्ग से हटाकर तुम्हें बिखेर देंगे। यह है वह आदेश जो तुम्हारे ईश्वर ने तुम्हें दिया है, शायद कि तुम पथ-भ्रष्टता से बचो। फिर हमने मूसा को किताब प्रदान की थी जो भलाई की नीति अपनाने वाले इन्सान के लिए नेअ़मत की पूर्णता और हर ज़रुरी चीज़ का विवरण और पूरे तौर पर सत्यमार्ग की सूचना और दयालुता थी। (और इसराईल की सन्तान को इसलिए दी गई थी कि) शायद लोग अपने ईश्वर से मिलने पर ईमान लाएँ। (पवित्र कुरआन१५२-१५४)

देता है। धन-सम्पत्ती के प्रेम को छोड़ देता है, और शांति प्रेमी है, (ऐसा मनुष्य) ईश्वर के विवेक को पहचानने के /realization) योग्य है।

(भूयाय) विवेक को (पहचानने के /realization) (कल्पतै) योग्य हैं।

१८.५४

ब्रह्म-भूत प्रसन्न-आत्मा न शोचति न काङक्षति।
समः सर्वेषु भूतेषु मत् भक्तिम् लभते पराम् ।।५४।।

ईश्वर की प्रार्थना में लगे मनुष्य शांत मन के होते है। न तो वह चिंतित होते है, न तो वह किसी चीज़ की आशा करते हैं। वह सब मनुष्यों से एक जैसा व्यवहार करते हैं। वह केवल मेरी प्रार्थना करते हैं। और स्वर्ग के सबसे श्रेष्ठ स्थान को पा लेते हैं।

(ब्रह्म-भूत) ईश्वर की प्रार्थना में लगे मनुष्य (प्रसन्न आत्मा) शांत मन (के होते हैं) (न) न (तो वह) (शोचति) चिंतीत होते हैं (न) न (तो वह) (काङक्षति) किसी चीज़ की आशा करते हैं। (सर्वेषु) (वह) सब (भूतेषु) मनुष्यों से (समः) एक जैसा व्यवहार करते हैं। (मत्) (वह केवल) मेरी (भक्तिम्) प्रार्थना करते हैं। (पराम्) (और स्वर्ग के) सबसे श्रेष्ठ स्थान को (लभते) पा लेते हैं।

मनुष्य बिना किसी की सहायता के स्वयम ईश्वर तक पहुंच सकता है।

१८.५५

भक्त्या माम् अभिजानाति यावान् यः च अस्मि तत्त्वतः।
ततः माम् तत्त्वतः ज्ञात्वा विशते तत-अनन्तरम् ।।५५।।

वह (भक्त) मेरी सच्चाई को अर्थात मैं जैसा हूँ और (या) जो हूँ मेरी प्रार्थना से ही जान लेता है। और फिर मेरी सच्चाई को जानने वाला वह (भक्त) (मेरे और उसके) बीच में और किसी को लाए बिना (मुझ तक) पहुंचता है।

(तत) वह (भक्त) (तत्त्वतः) मेरी सच्चाई को (अर्थात) (यावान्) मैं जैसा हूँ (च) और (यः) जो (अस्मि) हूँ (भक्त्या) (मेरी) प्रार्थना से ही (अभिजानाति) जान लेता हैं। (माम) (और फिर) मेरी (तत्वतः) सच्चाई (तत्व) को (ज्ञात्वा) जानने वाला (तत) वह (भक्त) (अनन्तरम्) (मेरे और उसके) बीच में और किसी को लाए बिना (विशते) (मुझ तक) पहुंचता है।

सफलता में ईश्वर के कृपादृष्टि का महत्त्व :-

१८.५६

सर्व कर्माणि अपि सदा कुर्वाणः मत व्यपाश्रयः।
मतत्प्रसादात् अवाप्नोति शाश्वतम् पदम् अव्ययम् ।।५६।।

किन्तु सच तो यह है कि सभी सत्कर्मों को मेरे सहारे करने वाला, <u>मेरी कृपादृष्टि से ही</u> स्वर्ग का

(अपि) किन्तु (सच तो यह है कि) (सर्व) सभी (कर्माणि) सत्कर्मों को (मत) मेरे (व्यपाश्रयः) सहारे (कुर्वाण) करने वाला (मत) <u>मेरी (प्रसादत) कृपादृष्टि (से ही)</u> (शाश्वतम्) (स्वर्ग का) सदैव स्थित रहने वाला (अव्ययम्)

सदैव स्थित रहने वाला अविनाशी स्थान पा सकता है।

अविनाशी (पदम्) स्थान (अवाप्नोति) पा सकता है।

अर्जुन और सारी मानवजाति को ईश्वर का आदेश:-

१८.५७

चेतसा सर्व-कर्माणि मयि संन्यस्य मत-पर:।
बुद्धि-योगम् उपाश्रित्य मत्-चित्त: सततम् भव ।।५७।।

पूरी चेतना के साथ अपने सब कर्म केवल मुझे समर्पित करो। मुझे अपने जीवन का लक्ष्य बनाओ। अपनी बुद्धि को मुझसे जोड़े रखो। मेरी शरण लो, मुझमें सदैव लीन रहने वाले बन जाओ।

(चेतसा) पूरी चेतना के साथ (सर्व कर्माणि) अपने सब कर्म (मयि) (केवल) मुझे (संन्यस्य) समर्पित करो (मत-पर:) मुझे अपने जीवन का लक्ष्य बनाओ (बुद्धि-योगम्) अपनी बुद्धि को मुझसे जोड़े रखो (उपाश्रित्य) (मेरी) शरण लो (मत्) मुझमें (सततम्) सदैव (चित्त:) लीन रहने वाले (भव) बन जाओ।

१८.५८

मत् चित्तः सर्व दुर्गाणि मत् प्रसादात् तरिष्यसि।
अथ चेत् त्वम् अहकारात न श्रोष्यसि विनडक्ष्यसि।।५८।।

सदैव मुझमें लीन रहने वाले बनोगे तो सभी रुकावट मेरी कृपा से पार कर जाओगे। किन्तु अगर तुम मेरे आदेश को न सुनते हुए अहंकार में डुबे रहोगे तो बर्बाद हो जाओगे।

(मत) (सदैव) मुझमें (चित्त:) लीन रहने वाले (बनोगे) तो (सर्व) सभी (दुर्गाणि) रुकावट (मत) मेरी (प्रसादात्) कृपा से (तरिष्यसि) पार कर जाओगे (अथ) किन्तु (चेत्) अगर (त्वम्) तुम (न) (मेरे आदेश को) न (श्रोष्यसि) सुनते हुए (अहकारात) अहंकार में डुबे रहोगे तो (विनडक्ष्यसि) बर्बाद हो जाओगे।

१८.५९

यत् अहङ्कारम् आश्रित्य न योत्स्ये इति मन्यसे।
मिथ्या एष व्यवसायः ते प्रकृतिः त्वाम् नियोक्ष्यति।।५९।।

अहंकार के सहारे (के कारण) यदि तुम इस तरह सोच रहे हो कि मैं युद्ध नहीं करुंगा तो तुम्हारी यह प्रतिज्ञा गलत है। ईश्वर का रचा हुआ भाग्य तुम्हें इस युद्ध में झोंक देगा।

(अहङ्कारम्) अहंकार (आश्रित्य) के सहारे (के कारण) (यत) यदि (तुम) (इति) इस तरह (मन्यसे) सोच रहे हो कि (योत्स्ये) (में) युद्ध (न) नहीं (करुंगा) (एष) तो (ते) तुम्हारी (व्यवसाय:) यह प्रतिज्ञा (मिथ्या) गलत है (प्रकृतिः) (ईश्वर का रचा हुआ) भाग्य (त्वाम्) तुम्हें (नियोक्ष्यति) (इस युद्ध में) झोंक देगा।

१८.६०

स्वभाव-जेन कौन्तेय निबद्ध स्वेन कर्मणा।
कर्तुम् न इच्छसि यत् मोहात् करिष्यसि अवशः अपि तत् ।।६०।।

(कौन्तेय) हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) (मोहात्) भ्रम के कारण (यत्) जिन (कर्तुम्) अनिवार्य कर्तव्य को करने के लिए (इच्छसि) (तुम) तैयार (न)

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन)! भ्रम के कारण जिन अनिवार्य कर्तव्य को करने के लिए तुम तैयार नहीं हो। ईश्वर द्वारा रचे गए स्वभाव से मजबूर होकर, नि:संदेह (तुम) स्वत: वह कर्म न चाहते हुए भी करने लगोगे।

नहीं (हो) (जेन) ईश्वर द्वारा रचे गए (स्वभाव) स्वभाव से (निबद्ध) मजबूर होकर (अपि) नि:संदेह (स्वेन) (तुम) स्वत: (तत्) वह (कर्मणा) कर्म (अवश:) न चाहते हुए भी (करिष्यसि) करने लगोगे।

ईश्वर के परीक्षा लेने की पद्धति :-

१८.६१

ईश्वरः सर्व-भूतानाम् हृत-देशे अर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्व-भूतानि यन्त्र आरुढानि मायया।।६१।।

हे अर्जुन! सारे मनुष्यों के हृदय में ईश्वर स्थित है (मौजुद है)। और वह सभी मनुष्यों की परीक्षा लेने के लिए उनको समय के यन्त्र पर सवार करके घुमता रहता है।

(अर्जुन) हे अर्जुन (सर्व) सारे (भूतानाम) मनुष्यों के (हृत) हृदय (देशे) में (ईश्वर:) ईश्वर (तिष्ठति) स्थित है (मौजुद है) (सर्व) (और वह) सभी (भुतानि) मनुष्यों की (मायया) परीक्षा लेने के लिए (यन्त्र) (उनको समय के) यन्त्र पर (आरुढानि) सवार करके (भ्रामयन्) घुमता रहता है।

१८.६२

तम् एव शरणम् गच्छ सर्व-भावेन भारत।
तत प्रसादात् पराम् शान्तिम् स्थानम् प्राप्स्यसि शाश्वतम् ।।६२।।

हे अर्जुन उस (ईश्वर की) शरण में हर प्रकार से आ जाओ। उस ईश्वर की कृपा से तुम्हें सर्वश्रेष्ठ शान्ति वाला स्थान स्वर्ग हमेशा के लिए प्राप्त होगा।

(भारत) हे अर्जुन (तम्) उस (ईश्वर की) (शरणम्) शरण में (सर्व भावेन) हर प्रकार से आ जाओ (तत) उस (ईश्वर की) (प्रसादात्) कृपा से (तुम्हें) (पराम्) सर्वश्रेष्ठ (शान्तिम्) शान्ति वाला (स्थान) स्थान (स्वर्ग) (शाश्वतम्) हमेशा के लिए (प्राप्स्यसि) प्राप्त होगा।

नोट १८.६१ पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा, ''निश्चय ही धरती पर जो कुछ है उसे हमने उसकी शोभा बनाई है, ताकि हम उनकी (मनुष्य की) परीक्षा लें कि कौन उनमें कर्म की दृष्टी से सबसे अच्छा है।'' (सूरह-अल-कहफ-१८, आयत-७)

नोट १८.६२ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, तुम्हारे माल और तुम्हारी औलाद तो एक आज़माइश (परीक्षा) है, और ईश्वर ही है जिसके पास बड़ा बदला है। अत: जहाँ तक तुम्हारे बस में हो ईश्वर से डरते रहो, और सुनो और आज्ञा का पालन करो, और अपने माल खर्च करो, यह तुम्हारे लिए अच्छा है। जो अपने दिल की तंगी से (कंजूसी) सुरक्षित रह गए बस वही सफलता प्राप्त करने वाले हैं। यदि तुम ईश्वर को अच्छा कर्ज दो तो वह तुम्हें कई गुना बढ़ा कर देगा और तुम्हारे कुसूरों को माफ करेगा। ईश्वर बड़ा गुणग्राहक और सहनशील है। प्रत्यक्ष और परोक्ष हर चीज़ को जानता है, प्रभुत्वशाली और तत्त्वदर्शी है। (सूरह-अल-तगाबुन-६४, आयत-१५-१८)

१८.६३

इति ते ज्ञानम् आख्यातम् गुह्यात् गुह्यतरम् मया।
विमृश्य एतत् अशेषेण यथा इच्छसि तथा कुरु।।६३।।

इस तरह मेरे द्वारा तुम्हें अत्यन्त गुप्त ज्ञान कहा गया। इस ज्ञान पर अच्छी तरह से विचार करके जैसा चाहते हो वैसा करो।

(तत) इस तरह (मया) मेरे द्वारा (ते) तुम्हें (गुह्यतरम्) अत्यन्त गुप्त (ज्ञानम्) ज्ञान (आख्यातम्) कहा गया (एतत) इस (ज्ञान पर) (अशेषेण) अच्छी तरह से (विमृश्य) विचार करके (यथा) जैसा (इच्छसि) चाहते हो (तथा) वैसा (कुरु) करो।

१८.६४

सर्व-गुह्य-तमम् भूयः शृणु मे परमम् वचः।
इष्टः असि मे दृढम् इति ततः वक्ष्यामि ते हितम् ।।६४।।

तुम मुझ पर दृढ़ता से श्रद्धा रखने वाले मित्र हो, इसलिए तुम्हारे हित के लिए मेरे द्वारा उन सभी गुप्त आदेश में से उन सबसे श्रेष्ठ आदेश को दोबारा कह रहा हूँ (इन्हें ध्यान से) सुनो।

(मे) (तुम) मुझ पर (दृढम्) दृढ़ता से श्रद्धा रखने वाले (इष्टः) मित्र (असि) हो (इति) इसलिए (ते) तुम्हारे (हितम्) हित के लिए (मे) मेरे द्वारा (तमम्) उन (सर्व) सभी (गुह्य) गुप्त (वचः) आदेश में से (ततः) उन (परमम्) सबसे श्रेष्ठ आदेश को (भूयः) दोबारा (वक्ष्यामि) कह रहा हूँ (शृणु) (इन्हें ध्यान से) सुनो।

अर्जुन और सारे मानवजाति के लिए सुनहरे उपदेश :-

१८.६५

मत-मनाः भव मत भक्तः मत् याजी माम् नमस्कुरु।
माम् एव एष्यसि सत्यम् ते प्रतिजाने प्रियः असि मे।।६५।।

सदैव मेरे बारे में सोचते रहो। केवल मेरी भक्ति करने वाले बनो। हर सत्कर्म को केवल मेरे लिए करो। मुझे ही नमस्कार करो। निःसंदेह इन सारे कामों को करने से तुम मुझे पा लोगे यह मेरा तुम से सच्चा वचन है। क्योंकि तुम) मुझे प्रिय हो।

(मत) (सदैव) मेरे (मनाः) (बारे में) सोचते रहो (मत्) (केवल) मेरी (भक्त) भक्ति करने वाले (भव) बनो (याजी) हर सत्कर्म को (मत्) (केवल) मेरे लिए करो (माम्) मुझे ही (नमस्कुरु) नमस्कार करो (एव) निःसंदेह (माम्) (इन सारे कामों को करने से तुम) मुझे (एष्यसि) पा लोगे (ते) (यह मेरा) तुम से (सत्यम्) सच्चा (प्रतिजाने) वचन है (मे) (क्योंकी तुम) मुझे (प्रियः) प्रिय (असि) हो।

नोट १८.६३ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, ''यदि जो आदमी रसूल के विरोध पर कटिबद्ध हो और ईमान वालों के रास्ते के सिवा किसी और राह पर चले, जबकि उस पर सीधा मार्ग स्पष्ट चुका हो, तो उसको हम उसी ओर चलाएंगे जिधर वह खुद फिर (पलट) गया, और उसे जहन्नम में झोकेंगे जो सबसे बुरा ठिकाना है।'' (अन निसा-४, आयत-११५)

१८.६६

सर्व-धर्मान् परित्यज्य माम् एकम् शरणम् व्रज।
अहम् त्वाम् सर्व पापेभ्यः मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।६६।।

सभी धर्मों को छोड़ कर मुझ एक ईश्वर की शरण में आ जाओ। चिंता ना करो, मैं तुम्हारे सारे पापों को क्षमा कर दूंगा।

(सर्व) सभी (धर्मान्) धर्मों को (परित्यज्य) छोड़ कर (माम्) मुझ (एकम्) एक ईश्वर की (शरणम्) शरण में (व्रज) आ जाओ (शुच) चिंता (मा) ना करो (अहम) मैं (त्वाम) तुम्हारे (सर्व) सारे (पापेभ्य) पापों को (मोक्षयिष्यामि) क्षमा कर दूंगा।

ज्ञान का प्रचार कैसे करें:-

१८.६७

इदम् ते न अतपस्काय न अभक्ताय कदाचन।
न च अशुश्रूषवे वाच्यम् न च माम् यः अभ्यसूयति।।६७।।

जो व्यक्ति अपने आपको वश में नहीं रखता, जो प्रार्थना नहीं करता, और जो ईश्वर का आदेश सुनने की रुचि नहीं रखता, ऐसे लोगों को तुम्हारे द्वारा यह ईश्वर की वाणी कभी भी कही न जाए और जो व्यक्ति मुझ से द्वेष रखता है न ईश्वर की वाणी उनसे कही जाए।

(अतपस्काय) जो व्यक्ती अपने आपको वश में (न) नहीं रखता (अभक्ताय) जो प्रार्थना नही करता (च) और (अशुश्रूषवे) जो (ईश्वर का आदेश) सुनने की रुचि (न) नहीं रखता (ते) (ऐसे लोगों को) तुम्हारे द्वारा (इदम्) यह (ईश्वर की वाणी) (कदाचन) कभी भी (वाच्यम्) कही (न) न (जाए) (च) और (य) जो (व्यक्ति) (माम्) मुझसे (अभ्यसूयति) द्वेष रखता है (न) न (ईश्वर की वाणी उनसे कही जाए)।

नोट १८.६६ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि, शुरु में सब लोग एक ही तरीके (धर्म) पर थे। (फिर यह हालत बाकी न रही और विभेद प्रकट हुए) तब ईश्वर ने पैगम्बर भेजे जो सीधे मार्ग पर चलने पर खुशख़बरी देने वाले और टेढ़ी चाल के परिणामों से डराने वाले थे, और उनके साथ सत्य पर आधारित पुस्तक उतारी ताकि सत्य के विषय में लोगों के बीच जो विभेद उत्पन्न हो गए थे, उनका फैसला करे। (और इन विभेदों को प्रकट होने का कारण यह न था कि शुरुआत में लोगों को सत्य का ज्ञान कराया ही नहीं गया था। नहीं,) विभेद उन लोगों ने किया, जिन्हें सत्य का ज्ञान दिया जा चुका था। उन्होंने स्पष्ट आदेश पा लेने के बाद केवल अपनी हठ (ज़िद) के कारण सत्य को छोड़कर विभिन्न रास्ते निकाले। अंत: जिन लोगों ने पैगम्बरों को माना, उन्हें ईश्वर ने अपनी अनुमति से उस सत्य का रास्ता दिखा दिया, जिसमें लोगों ने विभेद किया था। ईश्वर जिसे चाहता है, सीधा मार्ग दिखा देता है। (सूरे अल बकरा-२, आयत-२१३)

नोट १८.६७ ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा, ''(कुरआन) वह ग्रंथ यही है, जिसमें कोई संदेह नहीं, मार्गदर्शन है (ईश्वर से) डर रखने वालों के लिए।'' (सूरे अल बकरा-२, आयत-२)

अर्थात कुरआन सब पढ़ेंगे किन्तु इससे मार्गदर्शन वही प्राप्त करेंगे जो ईश्वर से डरते हैं।

इसी प्रकार भगवद् गीता के लिए श्लोक नं. १८.६७ में कहा गया कि जिसका उसकी इच्छाओं पर वश नहीं और जो ईश्वर की भक्ति नहीं करता उसे यह ग्रंथ न सुनाई जाए। क्योंकि वह इससे कुछ नहीं सीखेगा। यह समय का नष्ट करना है।

ज्ञान के प्रचारक का महत्त्व-

१८.६८

यः इदम् परमम् गुह्यम् मत् भक्तेषु अभिधास्यति।
भक्तिम् मयि पराम् कृत्वा माम् एवं एष्यति असंशयः।।६८।।

सच तो यह है कि मेरी भक्ति करते हुए, जो प्रचारक मेरे भक्तों को इस सबसे श्रेष्ठ व दिव्य छिपे हुए ज्ञान को समझाता है, नि:सन्देह वह मेरे सबसे श्रेष्ठ व दिव्य (स्वर्ग के) धाम को प्राप्त करता है।

(एरां) सच तो यह है कि (मयि) मेरी (भक्तिम्) भक्ति (कृत्वा) करते हुए, (यः) जो प्रचारक (मत्) मेरे (भक्तेषु) भक्तों को (इदम्) इस (परमम्) सबसे श्रेष्ठ व दिव्य (गुह्यम) छिपे हुए ज्ञान को (अभिधास्यति) समझाता है (असंशय) नि:सन्देह (माम्) वह मेरे (पराम्) सबसे श्रेष्ठ व दिव्य (स्वर्ग के) धाम को (एष्यति) प्राप्त करता है।

१८.६९

न च तस्मात् मनुष्येषु कश्चित् मे प्रिय-कृत-तमः।
भविता न च मे तस्मात् अन्यः प्रिय-तरः भुवि।।६९।।

इस संसार के मनुष्यों में, इस धर्म के प्रचारक की तुलना में कोई और नहीं है, जिसमे मैं प्यार करता हूँ और भविष्य में भी इसकी तुलना में दूसरा कोई मुझे इससे अधिक प्यारा नहीं होगा।

(भुवि) इस संसार के (मनुष्येषु) मनुष्यों में, (तस्मात्) इस धर्म के प्रचारक की तुलना में (कश्चित्) कोई (च) और (न) नहीं है, (मे) जिसमे मैं (प्रिय) प्यार (कृततमेः) करता हूँ (च) और (तस्मात्) (भविष्य में भी) इसकी तुलना में (अन्यः) दूसरा कोई (मे) मुझे (तरः) इससे अधिक (प्रिय) प्यारा (न) नहीं (भविता) होगा।

१८.७०

अध्येष्यते च यः इमम् धर्म्यम् संवादम् आवयोः।
ज्ञान अज्ञेन तेन अहम् इष्टः स्याम् इति मे मतिः।।७०।।

जो मनुष्य इस (ईश्वर के आदेशों व नियमों पर आधारित) धर्म के बारे में किये गए संवाद में सोच-विचार करेगा और धीरे-धीरे इसके टुकड़े टुकड़े को समझेगा, वह ज्ञान के द्वारा ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करेगा और मैं इसकी सारी आशाओं को पूरी करुँगा, इस तरह का यह मेरा निर्णय है।

(यः) जो मनुष्य (धर्म्यम्) इस (ईश्वर के आदेशों व नियमों पर आधारित) धर्म के बारे में किये गए (संवादम्) संवाद में (अध्येष्यते) सोच-विचार करेगा (च) और (आवयोः) धीरे-धीरे इसके टुकड़े टुकड़े को समझेगा, (ज्ञान) वह ज्ञान के द्वारा (अज्ञेन) ईश्वर की प्रसन्नता प्राप्त करेगा (अहम्) और मैं (तेन) इसकी (इष्टः) सारी आशाओं को (स्याम्) पूरी करुँगा (इति) इस तरह का (मे) यह मेरा (मतिः) निर्णय है।

१८.७१

श्रद्धावान् अनसूयः च शृणुयात् अपि यः नरः।
सः अपि मुक्तः शुभान् लोकान् प्राप्नुयात् पुण्य-कर्मणाम् ।।७१।।

निःसन्देह जो मनुष्य एक ईश्वर पर श्रद्धा रखते हुए और ईश्वर से इर्ष्या न रखते हुए, इस ज्ञान को सुनेगा, वह संसार में भय व शोक से मुक्त हो जाएगा और मरने के बाद स्वर्ग में भलाई वाले कर्म करने वालों के पवित्र और अच्छे धाम (स्वर्ग) को भी पाएगा।

(अपि) निःसन्देह (यः) जो (नरः) मनुष्य (श्रद्धावान्) एक ईश्वर पर श्रद्धा रखते हुए (च) और (अनसूयः) ईश्वर से इर्ष्या न रखते हुए, (शृणुयात्) (इस ज्ञान को) सुनेगा, (सः) वह (मुक्तः) (संसार में भय व शोक से) मुक्त हो जाएगा (कर्मणाम्) (और मरने के बाद स्वर्ग में) भलाई वाले कर्म करने वालों के (शुभान्) पवित्र और अच्छे (लोकान्) धाम को (स्वर्ग को) (अपि) भी (प्राप्नुयात्) पाएगा।

१८.७२

कच्चित् एतत् श्रुतम् पार्थ त्वया एक अग्रेण चेतसा।
कच्चित् अज्ञान सम्मोहः प्रणष्टः ते धनन्जय।।७२।।

हे पार्थ (अर्जुन)! क्या तुम्हारे मन को एक ईश्वर में एकाग्र करके, इस ज्ञान को तुमने सुना? हे धनन्जय (अर्जुन)! क्या तुम्हारी अज्ञान पर आधारित उलझन दूर हो गई?

(पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (कच्चित्) क्या (त्वया) तुम्हारे (चेतसा) मन को (एक-अग्रेण) एक ईश्वर में एकाग्र करके, (एतत्) इस ज्ञान को (श्रुतम्) तुमने सुना? (धनन्जय) हे धनन्जय (अर्जुन) (कच्चित्) क्या (ते) तुम्हारी (अज्ञान) अज्ञान पर आधारित (सम्मोहः) उलझन (प्रणष्टः) दूर हो गई?

अर्जुन का युद्ध के लिए मान जाना-

१८.७३

अर्जुन उवाच, नष्टः मोहः स्मृतिः लब्धा त्वत-प्रसादात् मया अच्युत।
स्थितः अस्मि गत सन्देहः करिष्ये वचनम् तव।।७३।।

अर्जुन ने कहा, हे अच्युत (कृष्ण)! मेरी सारी उलझनें दूर हो गई, और तुम्हारी कृपा से मैंने ईश्वर के उपदेशों को याद रखने की शक्ति प्राप्त कर ली है। अब मैं एक ईश्वर की श्रद्धा पर मजबूती से स्थित हो गया हूँ। मेरी सारी शंकाऐं दूर हो गई हैं। हे कृष्ण, अब मैं तुम्हारे द्वारा कहे हुए ईश्वर के आदेशों का पूर्णतया पालन करुँगा।

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (अच्युत) हे अच्युत (कृष्ण)! (मया) मेरी (मोहः) सारी उलझनें (नष्टः) दूर हो गई और (त्वत्) तुम्हारी (प्रसादात्) कृपा से (स्मृतिः) मैंने ईश्वर के उपदेशों को याद रखने की शक्ति (लब्धा) प्राप्त कर ली है। (अस्मि) अब मैं एक ईश्वर की श्रद्धा पर मजबूती से स्थित हो गया हूँ। (सन्देहः) मेरी सारी शंकाऐं (गत) दूर हो गई हैं। (तव) (हे कृष्ण अब मैं) तुम्हारे द्वारा (वचनम्) कहे हुए (ईश्वर के) आदेशों का (करिष्ये) पूर्णतया पालन करुँगा।

संजय के विचार और आचार-

१८.७४

संजय उवाच, इति अहम् वासुदेवस्य पार्थस्य च महा-आत्मनः।
संवादम् इमम् अश्रौषम् अद्भुतम् रोम-हर्षणम् ।।७४।।

संजय ने कहा, ''और इस तरह मैंने ईश्वर, कृष्ण और अर्जुन की अद्भूत और रोंगटे खड़े कर देने वाले इस संवाद या वार्ता को सुना।''

(संजय उवाच) संजय ने कहा, (च) और (इति) इस तरह (अहम्) मैंने (महा-आत्मनः) ईश्वर (वासुदेवस्य) कृष्ण (पार्थ) और अर्जुन की (अद्भुतम्) अद्भूत (रोम-हर्षणम्) और रोंगटे खड़े कर देने वाले (इमम्) इस (संवादम्) संवाद या वार्ता को (अश्रौषम्) सुना।

१८.७५

व्यास-प्रसादात् श्रुतवानम् एतत् गुह्यम् अहम् परम्।
योगम् योग-ईश्वरात् कृष्णात् साक्षात कथयतः स्वयम् ।।७५।।

व्यास की कृपा से, भक्ति की इस सबसे श्रेष्ठ रहस्य की बातों को योगेश्वर कृष्ण को कहते हुए मैंने (साक्षात्) बिल्कुल साफ तौर पर स्वंय सुना है।

(व्यास) व्यास की (प्रसादात्) कृपा से (योगम्) भक्ति की (एतत्) इस (परम्) सबसे श्रेष्ठ (ग्रह्यम्) रहस्य की बातों को (योग-ईश्वरात्) योगेश्वर (कृष्णात) कृष्ण को (कथयतः) कहते हुए (अहम्) मैंने (साक्षात्) बिल्कुल साफ तौर पर (स्वयम्) स्वंय (श्रुतवानम्) सुना है।

१८.७६

राजन् संस्मृत्य संस्मृत्य संवादम् इमम् अद्भुतम्
केशव अर्जुनयोः पुण्यम् हृष्यामि च मुहुः मुहुः ।।७६।।

हे राजा धृतराष्ट्र! कृष्ण और अर्जुन के इस अदभूत और पवित्र संवाद को याद करता हूँ तो बार बार याद करके मैं प्रसन्न होता हूँ।

(राजन्) हे राजा धृतराष्ट्र! (केशव) कृष्ण (च) और (अर्जुनयोः) अर्जुन के (इमम्) इस (अद्भुतम्) अदभूत (पुण्यम्) और पवित्र (संवादम्) संवाद को (संस्मृत्य) याद करता हूँ तो (महुः महुः) बार बार (संस्मृत्य) याद करके (हृष्यामि) मैं प्रसन्न होता हूँ।

१८.७७

तत् च संस्मृत्य संस्मृत्य रुपम् अति अद्भुतम् हरेः।
विस्मयः मे महान राजन हृष्यामि च पुनःपुनः।।७७।।

और हे मेरे महान राजा (धृतराष्ट्र), ईश्वर के द्वारा (दिखाए जाने वाले) उस अत्यधिक अद्भुत और आश्चर्यचकित कर देने वाले दिव्य वस्तुओं को याद करता हूँ, तो बार बार मैं अत्यधिक प्रसन्न होता हूँ।

(च) और (मे) हे मेरे (महान) महान (राजन्) राजा (धृतराष्ट्र) (हरेः) ईश्वर के द्वारा (दिखाए जाने वाले) (तत्) उस (अति) अत्यधिक (अद्भुतम्) अदभुत (च) और (विस्मयः) आश्चर्यचकित कर देने वाले (रुपम्) दिव्य वस्तुओं को (संस्मृत्य) याद करता हूँ तो (पुनः पुनः) बार बार (हृष्यामि) मैं अत्यधिक प्रसन्न होता हूँ।

१८.७८

यत्र योग-ईश्वरः कृष्णः यत्र पार्थः धनुः धरः।
तत्र श्रीः विजयः भूतिः ध्रुवा नीतिः मतिः मम।।७८।।

जहाँ योगेश्वर कृष्ण हैं, और जहाँ धनुष रखने वाले अर्जुन हैं, वहाँ पूर्णतया सुख और शान्ति, विजय, अच्छा भाग्य, सही नीति और धैर्य होगी, ऐसा मेरा मानना है।

(यत्र) जहाँ (योग-ईश्वर:) योगेश्वर (कृष्ण) कृष्ण हैं (यत्र) और जहाँ (धनु:) धनुष (धर:) रखने वाले (पार्थ:) अर्जुन हैं, (तत्र) वहाँ (श्री:) पूर्णतया सुख और शान्ति (विजय:) विजय (भूति) अच्छा भाग्य, (नीति:) सही नीति (च) और (ध्रुवा) धैर्य होगी, (मम) ऐसा मेरा (मति:) मानना है।

N-1. ईश्वर का परिचय

N1.1. ईश्वर कितना महान है?

● प्रकाश की किरणें एक सेकंड में ३ लाख किलोमीटर की यात्रा करती हैं। यानी एक सेकंड में इस धरती के जिस पर हम रहते हैं ७ बार चक्कर लगा सकती हैं।

● हमारा सूर्य धरती से इतना दूर है कि उससे निकली एक प्रकाश की किरण को धरती तक पहुंचने के लिए ८ मिनिट लगते हैं।

● सूर्य पृथ्वी से १३ लाख गुना बड़ा है। मगर सूर्य ही इस ब्रह्माण्ड का सबसे बड़ा तारा नहीं है। बल्कि (Etacarinae) इटाक्रिना नाम का तारा सूर्य से ५० लाख गुना बड़ा है। (Betel Geuse) बेटल ज्यूस नाम का तारा हमारे सूर्य से ३० करोड़ गुना बड़ा है। (V.Y. Canismajoris) वी.वाय. कॅनीस्मेजोरिस नाम का तारा सूर्य से १ अरब गुना बड़ा है। हम जिस आकाशगंगा में हैं इसका नाम मिल्की वे गॅलेक्सी है और इस आकाशगंगा में हमारे सूर्य जैसे ३०० अरब सूर्य हैं।

● हमारी यह आकाशगंगा इतनी व्यापक व बड़ी है कि ३ लाख किलोमीटर प्रति सेकंड की गति से यात्रा करने वाली प्रकाश की एक किरण को इस आकाशगंगा के एक सिरे (किनारे) से दूसरे सिरे तक यात्रा करने के लिए १ लाख वर्ष लगेंगे।

● हमारी इस आकाशगंगा से दुगनी बड़ी आकाशगंगा जो हमसे नजदीक है उसका नाम ॲंड्रोमिडा (Andromeda) है। और जो ६० गुणा बड़ी है उसका नाम M-81 और जो ६००गुणा बड़ी है उसका नाम है IC-1011 है। ऐसे ही बहुत सारी आकाशगंगा मिलकर एक कल्श्टर बनाती हैं। हम जिस कल्श्टर में हैं उसका नाम विरगो कल्श्टर है। इस कल्श्टर में लगभग ४७ हजार आकाशगंगा हैं।

● बहुत से कल्श्टर मिलकर १ सुपर कल्श्टर बनाते हैं। हमारी आकाशगंगा जिस सुपर कल्श्टर में है उसका नाम लोकल सुपर कल्श्टर है। इस लोकल सुपर कल्श्टर में १०० से ज्यादा कल्शटर हैं और हमारे ब्रह्माण्ड में ऐसे १ करोड़ से ज्यादा सुपर कल्श्टर हैं और इस सारे ब्रह्माण्ड को एक ईश्वर ने बनाया है जो इन सबसे बड़ा है?

क्या आप अंदाजा लगा सकते हैं कि ईश्वर कितना महान है और हमारी यह धरती और हम ईश्वर के महान साम्राज्य में कितने छोटे हैं?

हमने जो कुछ कहा वह आप यू-ट्युब की इस लिंक पर देख सकते हैं। https://youtu.be/x7QRVP2JGzM

****

N1.2. जन्म और मृत्यु ईश्वर के लिए क्यो नहीं?

आईनस्टाईन का दूसरा सिद्धांत (Law of Relativity) कहता है कि, जब किसी वस्तु की गति प्रकाश से ज्यादा बढ़ती है, अर्थात ३,००,००० किमी/ सेकंड से ज्यादा बढ़ती है तब उस वस्तु के लिए समय की गति धीरे होने लगती है और असीमित (Infinite) गति पर उसके लिए समय रुक जाता है। इस बात को अच्छी तरह से समझने के लिए हम एक अंतरिक्षयान और उसके अंदर लगी एक दीवार घड़ी के उदाहरण पर विचार करते हैं। मान लो एक अंतरिक्ष यान प्रकाश की गति से अधिक गति में यात्रा करने की क्षमता रखता है और उसके केबिन की दीवार पर एक घड़ी लगी हुई है।

जब अंतरिक्षयान प्रकाश की गति की अपेक्षा कम गति में यात्रा करता है, तो दीवार घड़ी अपनी नियमित गति से कार्य करेगी। जैसे ही अंतरिक्ष यान की गति प्रकाश की गति को पार करती है, दीवार घड़ी धीमी होनी शुरु हो जाती है। जैसे जैसे अंतरिक्ष यान की गति बढ़ेगी, घड़ी और धीमी होती जाएगी। जब यान की गति अनंत (Infinite speed) हो जाएगी तो घड़ी बिल्कुल रुक जाएगी। यान में समय रुक जाऐगा। उस यान में कोई बूढ़ा नहीं होगा और ना ही कोई चीज़ पुरानी होगी। क्योंकि उस यान में समय रुका हुआ है।

प्रारंभ में यह समझा जाता था कि प्रकाश में केवल सात रंगों की किरणें हैं। फिर यह खोज की गई कि दूसरे प्रकार की किरणें भी है, उदाहरण के लिए Infrared and Ultra violet किरणें। फिर दूसरे प्रकार की किरणों की खोज़ की गई, जैसे एक्स-रे और रेडिओ एक्टिव तत्वों का रेडियेशन। खोज़ की प्रक्रिया अभी समाप्त नहीं हुई है और अभी भी अनेक प्रकार की किरणों और लहरों की खोज़ करनी बाकी है। उनमें से कुछ को हम सामान्य रुप से जानते हैं; जैसे आँखों की दृष्टि तथा विचार शक्ति दोनों की गति प्रकाश की गति से भी अधिक है।

• पवित्र कुरआन की एक आयत इस प्रकार हैं, निगाहें (दृष्टी) उस ईश्वर को नहीं पा सकती (देख सकती) किन्तु वह निगाहों को पा लेता है। (वह जानता है कि आपकी दृष्टि किस ओर और कहाँ जा रही है) वह अत्यन्त सूक्ष्म (एवं सूक्ष्मदर्शी), खबर रखने वाला है। (सूरह-अल-अनआम, ६ आयत १०३)

• आप रास्ते से चल रहे हो और एक साइकिल सवार आपके पास से गुजर जाए तो क्या आप उसको देखकर उसकी गति का अनुमान लगा सकते हो?

निस्संदेह, लगा सकते हैं।

यदि आपके पास से तेज़ रफ्तार मोटरकार गुज़र जाए तो क्या आप उसकी गति का अनुमान लगा सकते हो?

नि:संदेह, लगा सकते हैं।

यदि एक बन्दुक की गोली आप के पास से गुज़र जाए तो क्या आप उसकी भी गति का अनुमान लगा सकते हो?

नहीं!

क्योंकि आपके गति और गोली की गति में बहुत अन्तर है। अगर आप किसी ऐसे वाहन पर सवार हो जो बन्दुक की गोली की गति से चलती हो तो फिर आप गोली की गति का भी अनुमान लगा सकते हो।

आकाश में जो तारे नजर आते हैं यह कई अरब प्रकाश वर्ष (light year) दूर हैं। और हमारी नज़र उन तक एक सेकंड से कम समय में पहुँचती है, और ईश्वर हमारी नज़रों को उन तारों तक जाते हुए देखता है। यह तब ही सम्भव है जब ईश्वर के प्रकाश की गति हमारे नज़रों की गति के समान हो या अधिक हो। और निस्संदेह ईश्वर के प्रकाश की गति हमारे नज़रों की गति से अधिक और अनन्त है और इस कारण समय ईश्वर के लिए रुका हुआ है। ईश्वर अजन्मा और अमर है।

Theory of relativity को समझने के लिए निम्नलिखित युट्युब वीडियो देखिए। यह १२ मिनीट का वीडियो हैं। वीडियो का टाईटल है Does time realty exist? Time travel through speed and gravity explained.

Link: https://youtu.be/hA2RVSb-Kdm.

****

१४००करोड वर्ष पूर्व न समय था न अंतरिक्ष और न पदार्थ था।ईश्वर ने तथास्तु या कुन कह कर इन तीनो का निर्माण किया। इन तीनो के निर्माण के समय ईश्वर इन तीनो के अंदर नही था। इस कारण वह तीनो के निर्माण के बाद भी इन तीनो में नही है।

अर्थात न ईश्वर पदार्थ से बना है न वोह अंतरिक्ष में और न किसी स्थान पर उपस्थित है और न समय उस के लिए है।

जब समय ईश्वर के लिए नही है तो आरंभ और अंत भी ईश्वर के लिए नही है

(ईश्वर का तेज सारे ब्रहमाण में है,सभी उस के तेज से जीवित हैं,उस क नियंत्रण सब पर है किन्तु वह इस ब्रहमाण से परे है।)

N1.3. ईश्वर को हर चीज़ का ज्ञान कैसे है?

जब हम बिजली का स्विच ऑन करते हैं, तो बिजली का बल्ब अपनी रोशनी फैलाता है। बल्ब शक्ति का एक छोटा सा स्त्रोत है, इसलिए बल्ब के द्वारा फैलती रोशनी कमजोर होती है। और एक सनग्लास (Sunglass) के द्वारा रोकी भी जा सकती है। एक वेल्डिंग आर्क (Welding Arc) के शक्ति का स्तर उंचा होता है। इसलिए इसकी किरणें सादा सनग्लास के द्वारा नहीं रोकी जा सकती हैं। बल्कि इसकी (Ultraviolet) अल्ट्रावॉयलेट किरणों को रोकने के लिए एक विशेष ग्लास की आवश्यकता होती है।

एक्स-रे उच्चतर स्तर की शक्ति रखती है और वेल्डिंग ग्लास के द्वारा भी नहीं रोकी जा सकती है। यहाँ तक कि मनुष्यों का मांस भी इसे नहीं रोक सकता है। यह हड्डियों की तरह घने पदार्थ के द्वारा ही रोकी जा सकती है।

रेडियो एक्टिव किरणें यूरेनियम इत्यादि से निकलती हैं, जो ऍटोमिक प्लांट्स में प्रयोग की जाती हैं। यह ऐसी उच्च स्तर की शक्ति रखती हैं कि वे मनुष्य की हड्डियों, लकड़ी के पार्टिशन और ईटों की दीवार से भी आर-पार हो जाती हैं। उनको रोकने के लिए वैज्ञानिक शिशे (Lead) के ईंट कि तीन फीट मोटी दीवार बनाते हैं। इसलिए जितनी अधिक उच्च-स्तर की शक्ति का स्त्रोत होगा उससे उतनी शक्तिशाली और पदार्थों के आर-पार होकर गुजरने वाली किरणें निकलती हैं।

मैंने एक व्यक्ति को अपनी आँखों की टकटकी से मेज़ पर सिक्के को चलाते हुए देखा है। कई योगी और ऋषि जो कुंडलिनी जाग्रत करते हैं, वे अपनी आँखो की टकटकी से वस्तुओं को भी हिला सकते हैं। उपर्युक्त दो उदाहरणों से मैं मानता हूँ कि आँखों की दृष्टी भी प्रकाश की किरणों की तरह हैं जिनमें उर्जा और चुंबक की तरह ताकत (Magnetic energy) है। जिसे वैज्ञानिक अभी भी नहीं समझा सके हैं।

● ईश्वर के तेज़ को हम भगवद् गीता के निम्नलिखित श्लोक से समझ सकते हैं।

दिवि सूर्य सहस्त्रस्य भवेत् युगपत् उत्थिता
यदि भा: सद्दशी सा स्यात् भास: तस्य महात्मन: ॥११.१२॥

उसी समय अर्जुन ने ईश्वर के तेज को भी देखा वह ऐसा था कि यदि आकाश में हजारों सूर्य एक साथ निकलें तो भी उनका प्रकाश उस महान ईश्वर के तेज के समान न हो पाए।

पवित्र कुरआन के सूरह-अल-कहफ-१८, आयत नं. ३९ में लिखा है कि ईश्वर के अतिरिक्त किसी में कोई शक्ति नहीं।

अर्थात इस ब्रह्माण्ड में ईश्वर ही शक्ति का मूल स्त्रोत है।

● इस ब्रम्हांड में, महान ईश्वर ही शक्ति का मूल और उच्चतम स्त्रोत है। इसलिए उसका प्रकाश उच्चतम स्थिति अथवा स्तर रखता है और इसलिए उसकी दृष्टि और उसका प्रकाश ब्रम्हांड में प्रत्येक वस्तुओं से गुज़र सकता है। एक किरण जो रेडिओएक्टिव पदार्थ द्वारा निकलती है, वह शिशे की मोटी दीवार द्वारा तो रोकी जा सकती है। लेकिन ईश्वर की दृष्टि को कुछ भी नहीं रोक सकता है। यह संपूर्ण ब्रम्हाँड ईश्वर के सामने पारदर्शी है।

• प्रकाश के किरणों की गति ३००००० Km/ sec. है। इस गति से चलने के बावजूद सूर्य की किरणों को धरती पर पहुँचने के लिए ८ मिनट लगते हैं। लेकिन ईश्वर के प्रकाश की गती इतनी अधिक है कि ब्रम्हांड के सीमा पर भी ईश्वर का प्रकाश या दृष्टि शुन्य (Zero) सेकंड में पहुँचती है। क्योंकि ईश्वर के प्रकाश की गति अनंत (Infinite) है।

• ईश्वर ने कहा है:

• 'जो कुछ भी तुम बताते हो अथवा जो कुछ भी तुम अपने ह्रदय में छिपाते हो, वह उसे जानता है।' (पवित्र कुरआन २:२८४ सारांश)

• ईश्वर ने कहा:

• ''हमने मनुष्य को पैदा किया है और हम जानते हैं जो बातें उसके जी में आती है। और हम उससे उसकी गरदन की रग से भी अधिक निकट है।'' (पवित्र कुरआन ५०:१६ सारांश)

• ईश्वर ने कहा:

• ''क्या वह नहीं जानेगा जिसने पैदा किया? वह सूक्ष्मदर्शी, खबर देने वाला है।'' (पवित्र कुरआन ६७:१४ सारांश)

• क्योंकि उसकी दृष्टि हमसे होकर गुजरती है, इसलिए उससे हमारा कुछ भी छिपा नहीं हैं, सब कुछ वह जानता है। वह हमारे शरीर की प्रत्येक कोशिका, प्रत्येक परमाणु और कण-कण जानता है। यहाँ तक कि हमारे ह्रदय की हर धड़कन, हमारे मन की प्रत्येक बात वह जानता है। निश्चित रुप से वह हमसे हमारे शरीर की रक्तवाहिनियों से भी अधिक नज़दीक है। तथा इस संसार में कहीं भी, किसी भी समय ईश्वर की इच्छानुसार शक्ति और पदार्थ रुप धारण करते हैं। इसलिए हम कह सकते हैं कि वह हर जगह विद्यमान है, सर्वव्यापक (Omnipresent) है।

• पवित्र कुरआन के सूरह ४२ आयत ११ का अर्थ है कि <u>ईश्वर के जैसा कुछ भी नहीं है।</u>

तो हम जो कुछ भी उदाहरण दे रहे हैं यह केवल मेरे अपने और हम सभी के समझने समझाने के लिए दे रहे हैं। वास्तव में ईश्वर के बारे में ईश्वर के अतिरिक्त और कोई नहीं जानता।

****

N1.4. ईश्वर ब्रह्माण्ड को कैसे चलाता है?

इस बात को समझने के लिए कि ईश्वर ब्रह्माण्ड को कैसे चलाता है? निम्नलिखित गीता के श्लोक के अर्थ को याद रखिए।

- **सर्व इन्द्रिय गुण आभासम् सर्व इन्द्रिय विवर्जितम्। असक्तम् सर्वभृत् च एव निर्गुणम् गुण-भोक्तृ च॥१३.१५॥**

(वह ईश्वर) सभी इन्द्रिये (Sensory organ) (और) गणों (को) प्रकाशित करने वाला है, (उनमें जान डालने वाला है)। (किन्तु वह) सभी इन्द्रियों के बिना है और वह सबको पालता है, किन्तु वह किसी पर निर्भर नहीं (किसी की सहायता से जुड़ा नहीं है)। नि:संदेह (वह ईश्वर) (मनुष्यों में) गुणों का रचयिता है, किन्तु वह (स्वयम) निर्गुण है।

- **बहि: अन्त: च भूतानाम् अचरम् चरम् एव च। सूक्ष्मत्वाम् तत् अविज्ञेयम् दूर-स्थम् च अन्तिके च तत्॥१३.१६॥**

नि:संदेह, वह (ईश्वर) जीवित और अजीवित प्राणियों के बाहर और भीतर है। और वह अत्यंत सूक्ष्म होने से जानने में नहीं आता। और (वह ईश्वर) दूर से दूर तथा नजदीक से नज़दीक भी है।

- **अनादित्वात् निर्गुणत्वात् परम आत्मा अयम् अव्यय:। शरीर-स्थ: अपि कौन्तेय न करोति न लिप्यते॥१३.३२॥**

हे कुन्ति पुत्र (अर्जुन)। वह (ईश्वर) आरंभ के बिना है (अजन्म है)। (उसमें मनुष्य जैसे) गुण नहीं, ईश्वर महान है, अमर है, (अविनाशी है)। वह हृदय में स्थित है, (किन्तु) (वह न) कुछ करता है (और) न (ही) किसी से जुड़ा है।

- **यथा आकाश-स्थित: नित्यम् वायु: सर्वत्र-ग: महान् तु सर्वाणि भूतानि मत्-स्थानि इति उपधारय॥९.६॥**

जिस प्रकार वायु हमेशा और हर जगह आकाश में उपस्थित है। और जीवन के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण है। इस तरह इस सत्य को समझो कि) सारे प्राणी मुझ पर निर्भर है। मेरे बिना एक क्षण भी जीवित नहीं रह सकते।

ऊपर वर्णन किए गए श्लोक से हम समझ सकते हैं कि हम और ब्रह्माण्ड की सारी वस्तुएं ईश्वर के तेज के एक अंश से जीवित हैं। इस बात को अच्छी तरह समझने के लिए निम्नलिखित उदारहण और पढ़िए।

- **सोलर घड़ी किस तरह काम करती है?**

सूर्य के प्रकाश से चलने वाली घड़ी को यदि हम अंधेरे में रखें तो वह रुक जाएगी और यदि उसे सूर्य के प्रकाश में रखें तो चलने लगती है।

ऐसा क्यों?

सूर्य पृथ्वी से १३ लाख गुना बड़ा है और उसका १.५ करोड़ डिग्री सेन्ट्रीग्रेड तापमान है। यदि वह पृथ्वी के निकट भी आ जाए तो सोलर घड़ी और पृथ्वी सब कुछ जल जाएगा। जैसे वर्षा में पानी की बुंदे बरसती है। इसी प्रकार सूर्य के प्रकाश से फोटोन बरसते हैं। Photon यह प्रकाश की बूंद या एक अंश है। जब यह सोलर घड़ी के Photo cell पर पड़ते है तो ऊर्जा उत्पन्न होती है और उस ऊर्जा से घड़ी चलने लगती है।

तो हम कह सकते हैं कि सूर्य सोलर घड़ी के चलने का कारण है। किन्तु हम यह भी जानते है कि यदि सूर्य पृथ्वी के निकट भी आ जाए तो सब कुछ जल जाएगा। तो सूर्य सोलर घड़ी के अंदर भी है और बहुत दूर भी है।

इसी प्रकार ईश्वर के तेज के एक अंश से हमारा हृदय धड़कता है और हम जीवित हैं। किन्तु ईश्वर अगर धरती पर प्रगट हो जाए तो सारी धरती जल जाए, जैसे पैगंबर मूसा (अ.) के साथ हुआ था। और जिसका वर्णन पवित्र कुरआन के सूरे नं. ७ आयत नं. १४३ में है।

तो ईश्वर हमारे अंदर भी है और बहुत दूर भी हैं। इसी प्रकार जो कुछ संसार में होता है वह सब ईश्वर के कारण होता है। किन्तु वह संसार में उपस्थित नहीं है और न किसी से जुड़ा है।

इसी सच्चाई को ईश्वर ने पवित्र कुरआन और भगवद् गीता में इस तरह कहा है।

● ईश्वर ही धरती और आकाश का प्रकाश है।(पवित्र कुरआन २४.३१)

भगवद गीता के तीन श्लोक इस प्रकार हैं।

● **यथा प्रकाशयति एक: कृत्स्नम् लोकम् इमम् रवि:।**
क्षेत्रम् क्षेत्री तथा कृत्स्नम् प्रकाशयति भारत॥१३.३४॥

हे अर्जुन जिस प्रकार एक सूर्य इस (संसार को) प्रकाशित (जीवित) करता है। इसी प्रकार इस शरीर को (केवल एक) ईश्वर (ही) प्रकाशित (जीवित) करता है।

● **यत् यत् विभूति मत् सत्त्वम् श्री-मत् उर्जितम् एव वा।**
तत् तत् एव अवगच्छ त्वम् मम तेज: अंश सम्भवम्॥१०.४१॥

(संसार में) जो जो दिव्य रचनाऐं या समृद्धि ऊर्जा (या ज्ञान) या सुख शान्ति (और) मानवता (सच्चाई) मानी जाती है। नि:संदेह उन सबको तुम मेरे तेज के अंश से उत्पन्न हुई है ऐसा समझो।

अथवा बहुना एतेन किम् ज्ञातेन तव अर्जुन।
विष्टभ्य अहम् इदम् कृत्स्नम् एक अंशेन स्थित: जगत्॥१०.४२॥

किन्तु हे अर्जुन तुम्हें इस प्रकार बहुत सी बातें जानने की क्या आवश्यकता है? मैंने इस सम्पूर्ण जगत को अपने केवल एक तेज के अंश से स्थित और फैला रखा है।

● ईश्वर के तेज का अंश जो हम सब प्राणियों के शरीर में हैं इसे हम प्राण या जान कहते है।

हमारा प्रश्न था कि ईश्वर ब्रह्माण्ड को कैसे चलाता है? तो उत्तर है कि यह ब्रह्माण्ड ईश्वर के तेज के एक अंश से उसी प्रकार जीवित और सक्रिय है जैसे सोलर घड़ी सूर्य के प्रकाश से जीवित और सक्रिय रहती है।

****

N1.5. ईश्वर कितने है?

● भगवद् गीता का श्लोक नं. १३.५ इस प्रकार है।

● ऋषिभिः बहुधा गीतम् छन्दोभिः विविधैः पृथक।
ब्रह्म-सूत्र पदैः च एव हेतु-मद्भिः विनिश्चितैः।।५।।

मानवजाति के कल्याण के लक्ष्य से ऋषियों ने बहुत विस्तार से वेदों की ऋचाओं द्वारा (ईश्वर की प्रशंसा की और) बहुत प्रकार से विस्तारपूर्वक कहा है। ब्रह्म सूत्र (के) पदों द्वारा यह बात सबसे निश्चित (स्पष्ट) तरीके से कही गई हैं।

ब्रह्म सूत्र इस प्रकार है;

एकम् ब्रह्म द्वितीये नास्ते, नेह ना नास्ते किंचन।

ईश्वर एक है, दूसरा नही हैं, नही है, नहीं, जरा सा भी नहीं है।

● इस दिव्य ग्रंथ गीता के निम्नलिखित श्लोकों में ईश्वर एक ही है इस की शिक्षा मिलती है।

२.४१, ६.३१, ७.१७, ९.१५, १३.५, १४.२७.

आप स्वयम् इन श्लोकों का इस दिव्य ग्रंथ में अध्ययन कीजिए।

● बहुत सी अन्य धार्मिक ग्रन्थों में भी ईश्वर के एक होने की शिक्षा है। उसमें से कुछ श्लोक निम्नलिखित हैं।

१) एक एवं अद्वितीयम

(वह ईश्वर) एक (है) दूसरे (की साझेदारी के) बिना।
(छान्दोग्य उपनिषद-अध्याय-६, सुक्त-२, मंत्र-१)

२) स एषः एक वृदेक एरा

वह ईश्वर एक (है) वास्तव में केवल वही एक है।
(अथर्ववेद-कान्ड-१३, सुक्त-४, मंत्र-१२)

३) एक सद्विपा बहुधा वदन्त्यग्नि यम मातरिश्वानमाहु।
(ऋग्वेद-कांड-१, सुक्त-१६४, मंत्र-४६)

ज्ञानी एक ईश्वर को विभिन्न नामों से स्मरण करते हैं।

****

N1.6. आकाशवाणी क्या है?

आकाशवाणी को समझने के लिए हम शिव पुराण का अध्ययन करते हैं। शिव पुराण के कुछ श्लोक इस प्रकार हैं।

शंकरजी के जन्म से संबंधित श्लोक इस प्रकार है।

- तपस्यतश्च सृष्ट्यर्थं भ्रुवोर्घ्राणस्य मध्यतः। अविमुक्ताभिधाद्देशात् स्वकीयान्मे विशेषतः।

(शिव पुराण, भाग-१, रूद्रसंहिता, सती खण्ड-१, अध्याय-१५ पेज नं-२४६, श्लोक-५५-५६)

अर्थात जब ब्रह्माजी ईश्वर की याद में ध्यान लगाए बैठे थे, तब शंकरजी उनके माथे से प्रकट हुए।

स्वर्ग लोक में दक्ष ने शंकरजी का घोर अपमान किया था। उसके शब्द इस प्रकार है।

- *एते हि सर्वे च सुराऽसुरा भृशं नमन्ति मां विप्रवरास्तथर्षयः। कथं ह्यसौ दुर्जनवन्महामनास्त्वभूत्तु यः प्रेतपिषाचसंवृतः।१४।*

(शिव पुराण, भाग-१, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-२६, पेज नं-३८७, श्लोक-१४)

इन सभी देवताओं, ऋषियों, ब्राह्मणों तथा राक्षसों ने मुझे आता देखकर प्रणाम किया। परन्तु प्रेत-पिशाचों से युक्त इस महामनस्वी शिव ने मेरे साथ इस प्रकार दुर्जन के समान आचरण कैसे किया।१४।

- *श्मशानवासी निरपत्रपो ह्ययं कथं प्रमाणं न करोति मेऽ धुना। लुप्तक्रियो भूतपिशाचसेवितो मत्तोऽविधो नीतिविदूषकः सदा।१५।*

(शिव पुराण, भाग-१, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-२६, पेज नं-३८७, श्लोक-१५)

शमशानवासी, निर्लज्ज, क्रियाहीन, भूत-पिशाचों से सेवित, उन्मत्त और नीतिपथ को दूषित करने वाले इस शिव ने मुझे प्रणाम क्यों नहीं किया? १५।

- *पाखण्डिनो दुर्जनपापशीला दृष्ट्वा द्विजं प्रोद्धता निन्दकाश्च । बाह्यवां सदासक्तरतिप्रवीणास्तस्मादमुं शप्तुमहं प्रवृत्तः।१६।*

(शिव पुराण, भाग-१, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-२६, पेज नं-३८७, श्लोक-१६)

पाखण्डी, दुर्जन, पापशील, ब्राह्मणों को देखकर उनकी निन्दा करने वाले, उच्छृङ्खल, स्त्री में आसक्त तथा व्यभिचारी, ये शाप के योग्य हैं, इसलिए मैं इस पापी रुद्र को शाप दे रहा हूँ।

- स्वर्ग लोक में सती शंकरजी की पत्नी थी। शंकरजी का अपमान उनसे सहन न हुआ और उन्होंने अपने आपको जला डाला।

इस घटना से क्रोधित होकर आकाशवाणी ने इन शब्दों में दक्ष को शाप दिया और देवताओं को चेतावनी दी।

- जगत्पिता शिवः शक्तिर्जगन्ता च सासती। सत्कृतौ न त्वया मूढ! कथं श्रेयो भविष्यति ।।२५।।

(शिव पुराण, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-३१, पेज नं-४०९, श्लोक-२५)

शिव एवं सती इस जगत् के माता-पिता हैं। हे मूढ़! तुमने उनका सत्कार नहीं किया, अत: किस प्रकार तुम्हारा कल्याण होगा?

।।२५।।

● *यदी देवाः करिष्यन्ति साहाय्यमधुना तव। तदा नाशं समाप्स्यन्ति शलभा इव वह्निना। ।२९।*

यदि इस समय किसी भी देवता ने तुम्हारी सहायता की तो वह अग्नि में शलभ (पतंगे) के समान नष्ट हो जाएगा।

● *ज्वलत्वद्य मुखं ते वै यज्ञध्वंसो भवत्वति। सहायास्तव यावन्तस्ते ज्वलन्त्वद्य सत्वरम् ।३०।*

अवश्य ही सती के इस अपमान से तेरा मुख जल जावे, यज्ञ नष्ट हो जावे तथा ये सभी तुम्हारे सहायक देवता भी शीघ्र जलकर नष्ट हो जावें।३०।

● *निर्गच्छन्त्वमराःवोकमेतदध्वरमण्डपात् । अन्यथा भवतां नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३२।*

देवता लोग शीघ्र ही इस यज्ञमण्डप से बाहर हो जावें अन्यथा इनका अवश्य विनाश हो जायेगा ।३२।

● *निर्गच्छ त्वं हरे शीघ्रमेतध्वरमण्डपात् । अन्यथा भवतो नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३४।*
(शिव पुराण, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-३१, पेज नं-४०९, श्लोक-३४)

हे विष्णो! तुम भी इस यज्ञ मण्डप से बाहर चले जाओ, अन्यथा तुम्हारा भी विनाश हो जाएगा।३४।

● *निर्गच्छ त्वं विधे! शीघ्रमेतदध्वरमण्डपात् । अन्यथा भवतो नाशो भविष्यत्यद्य सर्वथा ।३५।*
(शिव पुराण, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-३१, पेज नं-४०९, श्लोक-३५)

हे विधाता (ब्रह्मा) तुम शीघ्र इस स्थान से बाहर हो जाओ, अन्यथा तुम्हारा सर्वथा नाश हो जाएगा।३५।

● *इत्युक्त्वाऽध्वरशालायामखिलायां सुसंस्थितान् । व्यरमत् सा नभोवाणी सर्वकल्याणकारीणी ।३६।*

इस प्रकार सबका कल्याण करने वाली वह आकाशवाणी यज्ञमण्डप में आये हुए सभी लोगों को सुनाते हुए मौन हो गयी।३६।

● *तच्छ्रुत्वा व्योमवचनं सर्वे हर्यादयः सुरोः। अकार्षुर्विस्मयं तात मुनयश्च तथाऽपरे ।३७।*
(शिव पुराण, भाग-१, रुद्रसंहिता, सती खण्ड-२, अध्याय-३१, पेज नं-४०९, श्लोक-३६-३७)

आकाशवाणी को सुनते ही विष्णुआदि देवगण तथा समस्त मुनिगण आश्चर्य से स्तम्भित हो गये।३७।

● बाईबल (Exodus 3 NIV) में लिखा है कि जब हजरत मूसा 'मदायन' से मिस्र (Egypt) जा रहे थे तो Sinai पहाड़ के ऊपर उन्हें रोशनी (Light) दिखाई दी, तो आप वहां आग लाने गए। मगर जब आप उस रोशनी के पास पहुंचे तो एक आकाशवाणी सुनाई दी, "ऐ मूसा मैं तुम्हारा ईश्वर हूँ। तुम इस समय तवा के पवित्र स्थान पर हो, इसलिए अपने जूते उतार दो। मैं तुम्हें इस्त्राईल समुदाय का पैगंबर (संदेष्टा) नियुक्त करता हूँ।"

● यही बात कुरआन में सुरे नं २० आयत नं ११-१२ में भी लिखी हुई है।

● तो आकाशवाणी यह ईश्वर की आवाज है।

● अपने जन्म के बाद जब ब्रह्मा जी अपने जन्मदाता को जानना चाहा तो इसी

आकाशवाणी ने आपका मार्गदर्शन किया था। और तप करने का आदेश दिया था।

● हजरत आदम, हजरत हव्वा और इब्लीस को जो भी आदेश प्राप्त हुए, वे सब आकाशवाणी के रुप में थे। किसी ने ईश्वर को अपनी आँखो से कभी नहीं देखा।

● तो आकाशवाणी यह ईश्वर की आवाज है। शिव पुराण के श्लोकों को पढ़ कर हम समझ सकते हैं कि शंकरजी, विष्णु जी और ब्रह्माजी इन सबका अस्तित्व है और यह सब दिव्य और आदरणीय है। किन्तु ईश्वर का अपना एक अलग अस्तित्व है और वह सबसे महान है और उसने ही इन सबकी रचना की है।

● भगवद् गीता के श्लोक नं. ८.४ में ईश्वर ने कहा कि मैं ही अधिदैवतम् हूँ अर्थात देवताओं का ईश्वर हूँ।

तो देवता और मनुष्य सबका मालिक एक है।

N1.7. ईश्वर के बारे में विचारधाराऐं

समाज में ईश्वर के अस्तित्व के बारे में दों विचारधाराऐं हैं।

१. द्वैतवाद

२. अद्वैतवाद

जब योगियों ने ईश्वर में ध्यान लगाया और अपना ध्यान ब्रह्माण्ड और स्वर्ग की तरफ केंद्रित किया तो उन्होंने अनुभव किया की ईश्वर स्वर्ग से भी ऊपर स्थित है और यह ब्रह्माण्ड उसकी रचना है, तो उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि ईश्वर और संसार अलग अलग है। इसे द्वेतवाद कहते है। अर्थात दोनों का अलग अस्तित्व है।

कुछ योगियों ने ईश्वर में ध्यान लगाया और अपने अंदर ध्यान को केंद्रित किया तो उन्होंने अपने हृदय में ईश्वर को पाया और इसी तरह सारा ब्रह्माण्ड ईश्वर से जीवित है ऐसा अनुभव किया। तो उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला के ईश्वर हर एक में है और हर वस्तु में है। तो उन्होंने इस दर्शन को अद्वैतवाद का नाम दिया, अर्थात दो नहीं है या ईश्वर और ब्रह्माण्ड अलग अलग नहीं है।

इन दोनों सिद्धांतो को मुस्लिम सूफी वहदातुल शहूद और वहदातुल वजूद कहते हैं। उनकी भी वही विचारधारा है। किन्तू हमने जो ईश्वर के बारे में वर्णन किया उससे आप समझ सकते हैं कि दोनों ५० प्रतिशत सच है। जब दोनों सिद्धान्तों को एक साथ मिलाया जाएगा तभी बात १०० प्रतिशत सच होगी।

****

N1.8. ईश्वर के गुण क्या है?

● ईश्वर का जो वर्णन हमें भगवदगीता में प्राप्त होता है वह निम्नलिखित है,

भगवद्गीता में ईश्वर के ६ मुख्य गुणों का वर्णन है।

१) अजन्मा

२) अदर्शी

३) अविनाशी

४) ईश्वर ही ब्रह्माण्ड का रचयिता है।

५) सबका पालनपोषण ईश्वर ही करता है।

६) सृष्टि का अंत ईश्वर के आदेश से होगा।

इन ६ गुणों से संबंधित श्लोक निम्नलिखित हैं,

अजन्मा (Unborn):-

यः माम् अजम् अनादिम् च वेत्ति लोक महा-ईश्वरम् ।
असम्मूढः सः मर्त्येषु सर्व-पापैः प्रमुच्यते ।।१०-३।।

जो मुझे अजन्मा अनादि (आरंभ के बिना) और ब्रह्माण्ड का महान ईश्वर मानता है वह मूर्ख नहीं है। मृत्यु के बाद (वह) सब पापों से भी मुक्त हो जाएगा।

अदर्शी (Formless):-

अव्यक्तम् व्यक्तिम् आपन्नम् मन्यन्ते माम् अबुद्धयः।
परम् भावम् अजानन्तः मम अव्ययम् अनुत्तमम् ।।७:२४।।

मेरे महान और सबसे श्रेष्ठ अविनाशी भाव को न जानते हुए, बुद्धिहीन मनुष्य, में (जो) अदृश्य (निर्गुण और निराकार हूँ) (मैंने) मनुष्य की तरह शरीर धारण कर लिया है, ऐसा मानते हैं।

अविनाशी (Immortal) :-

● अविनाशि तु तत् विद्धि येन सर्वम् इदम ततम् ।
विनाशम् अव्ययस्य अस्य न कश्चित् कर्तुम् अर्हति।२-१७।

(हे अर्जुन) नि:संदेह तुम्हें जानना चाहिए कि वह (ईश्वर) अविनाशी है। जिसके कारण इस सारे विश्व का अस्तित्व हैं। उस ईश्वर का विनाश कोई नहीं कर सकता है।

ईश्वर ही ब्रह्माण्ड का रचयिता है।

सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिम् यान्ति मामिकाम्।
कल्प-क्षये पुन: तानि कल्प-आदौ विसृजामि अहम्।।९.७।।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) मैंने ब्रह्मांड के आरम्भ में इन सारे (मनुष्यों) को निर्माण किया है और ब्रह्माण्ड के अंत (प्रलय) के समय मेरी इच्छा से ईश्वरीय प्रकृति के द्वारा सारे मनुष्य दुबारा (उठाए) जाऐंगे। (जीवित किए जाएंगे)

स्वयम् एव आत्मना आत्मानम् वेत्थ त्वम् पुरुष-उत्तम।
भूत-भावन भूत-ईश देव-देव जगत्-पते।।१०.१५।।

(अर्जुन ने कहा) नि:संदेह (हे ईश्वर) आप ही अपने आपको स्वयम ही (सबसे अच्छी तरह) जानते हैं। (हे ईश्वर) आप महान व्यक्तित्व वाले हैं। सारे प्राणियों के ईश्वर है, देवताओं के ईश्वर हैं, ब्रह्माण्ड के शासक हैं।

सबका पालनपोषण ईश्वर ही करता है।

मया ततम् इदम् सर्वम् जगत् अव्यक्त-मूर्तिना
मत्-स्थानि सर्व-भूतानि न च अहम् तेषु अवस्थित:।।९.४।।

मेरी न दिखाई देने वाले अस्तित्व के कारण इस संपूर्ण जगत का फैलाव है। सर्व प्राणी मुझसे स्थित हैं (मुझपर निर्भर है), और मैं उनसे स्थित (उनपर निर्भर) नहीं हूँ।

अन्नात भवन्ति भूतानि पर्जन्यात् अन्न सम्भवः।

यज्ञात् भवति पर्जन्यः यज्ञः कर्म समुद्भवः ।।३.१४।।

सम्पूर्ण प्राणियों के शरीर अन्न से उत्पन्न होते हैं (जीवित रहते हैं)। अन्न की उत्पति वर्षा से होती है, वर्षा होती है ईश्वर की आज्ञा और कृपा से। (और ईश्वर की आज्ञा और कृपा मनुष्य के) कर्म (के अनुसार) होते हैं।

सृष्टि का अंत ईश्वर के आदेश से होगा।

पुरुष: स: पर: पार्थ भक्त्या लभ्य: तु अनन्यया।
यस्य अन्त:-स्थानि भूतानि येन सर्वम् इदम् ततम्॥८.२२॥

हे अर्जुन! वह (ईश्वर) मनुष्य (होने से) परे है। नि:संदेह किसी और (प्राणी या देवता) की भक्ति के बिना उसकी भक्ति करने से ही उसे प्राप्त किया जा सकता है। (यह वह ईश्वर है) जिसके द्वारा सारे संसार का यह अस्तित्व है और जिसके द्वारा सारे प्राणियों का अंत (अर्थात प्रलय का) स्थित होना है।

एतत् योनीनि भूतानि सर्वाणि इति उपधारय।
अहम् कृत्स्नस्य जगत: प्रभव: प्रलय: तथा॥६॥

इस प्रकार सभी धरती पर जन्म लेने वाले प्राणियों की (सफलता और असफलता) निर्भर करती है इन (दोनों पर, अर्थात पृथ्वी लोक और अन्य लोक पर)। (तथा) और मैं (ही) इस सृष्टि का आरंभ करने वाला हूँ। (और) सम्पूर्ण जगत का (मैं ही) विनाश करने वाला हूँ।

N1.9 ईश्वर की प्रार्थना कैसे करे?

योगी युञ्जीत सततम् आत्मानम् रहसि स्थित:।
एकाकी यत-चित्त-आत्मा निराशी: अपरिग्रह:॥६.१०॥

ईश्वर की प्रार्थना करने वाले को चाहिए कि ईश्वर की प्रार्थना के लिए सदैव अपने आपको शान्त स्थान पर ले जाए। एकांत में अपने आपको स्थित करके, नम्रता से, इच्छाओं को त्याग कर अपने मन और बुद्धि को ईश्वर के ध्यान में लगाए।

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरम् आसनम् आत्मन:।
न अति उच्छ्रितम् न अति नीचम् चैल-अजिन कुश उत्तरम्॥६.११॥

पवित्र धरती जो न बहुत अधिक ऊंची हो और न बहुत अधिक नीची हो, उस पर घास अथवा पतला मुलायम वस्त्र अथवा मृगछाला बिछाकर अपने आपको मजबूती से स्थित करके बैठ जाए।

तत्र एक-अग्रम् मन: कृत्वा यत-चित्त इन्द्रिय क्रिय:।
उपविश्य आसने युञ्ज्यात् योगम् आत्म विशुद्धये॥६.१२॥

इस आसन पर बैठकर, मन, इच्छाओं और कर्मों को वश में करके, मन में केवल एक सबसे श्रेष्ठ ईश्वर को (रखते हुए), ईश्वर की प्रसन्नता और मन को (बुरे कर्मों से) पवित्र करने के लिए ईश्वर के स्मरण में लीन हो जाओ।

समम् काय शिर: ग्रीवम् धारयन् अचलम् स्थिर:।
सम्प्रेक्ष्य नासिका अग्रम् स्वम् दिश: च अनवलोकयन्॥६.१३॥

शरीर सर और गर्दन को सीधा रखकर मन को किसी (की ओर) न भटकाकर, एक ईश्वर की याद को स्थिर करके, किसी भी दिशा में न देखते हुए, अपनी नाक के अगले भाग की जगह पर देखते हुए।

प्रशान्त आत्मा विगत-भी: ब्रह्मचारि-व्रते स्थित:
मन: संयम्य मत् चित्त: युक्त: आसीत मत् पर:॥६.१४॥

शान्त मन और भय के बिना दृढ़ संकल्प के साथ कि ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करेंगे

अपने विचारों पर संयम रखो और मुझे सबसे महान मानते हुए बैठो, और मुझमें अपने ध्यान को लगाओ।

युञ्जन् एवम् सदा आत्मानम् योगी नियत-मानसः।
शान्तिम् निर्वाण-परमाम् मत्-संस्थाम् अधिगच्छति॥६.१५॥

इस तरह भक्त, सदैव अपने मन को वश में रखकर, नियोजित समय अनुसार भक्ति करते हुए, (संसार में) सच्ची शान्ति (और मरने के बाद) मेरे धाम यानी स्वर्ग के सबसे श्रेष्ठ शान्ति वाले धाम को पाता है।

यत्र उपरमते चित्तम् निरुद्धम् योग-सेवया।
यत्र च एव आत्मना आत्मानम् पश्यन् आत्मनि तुष्यति॥६.२०॥

नि:संदेह, मनुष्य जब (ईश्वर की याद में एकाग्र रहता है) (तो) स्वयम् (वह) ईश्वर के अस्तित्व का एहसास (अनुभव) करता है और संतुष्ट हो जाता है (शान्त हो जाता है) और (यह) अन्दर की शान्ति की स्थिती और मन का ईश्वर से जुड़ा होना बुरे कर्मो से बचने का कारण बनते हैं।

सुखम् आत्यन्तिकम् यत् तत् बुद्धि ग्राह्यम् अतीन्द्रियम्।
वेत्ति यत्र न च एव अयम् स्थित: चलति तत्वत:॥६.२१॥

नि:संदेह, वह भक्त जो समझ बूझकर इच्छाओं से दूर हो जाता है। और सबसे श्रेष्ठ सुख को जान जाता है। तो फिर वह (एकाग्रता के द्वारा) उस ईश्वर की याद को स्थित करने से और सच्चाई से कभी भी नहीं हटता।

यम् लब्ध्वा च अपरम् लाभम् मन्यते न अधिकम् तत:।
यस्मिन् स्थित: न दु:खेन गुरुणा अपि विचाल्यते॥६.२२॥

(ईश्वर की ओर से शान्ति) प्राप्त होने के बाद (वह भक्त) उस ईश्वर के अतिरिक्त किसी और (शक्ति को) अधिक लाभ देने वाला नहीं मानता। उस (शान्त) स्थिति (के बाद वह भक्त) बहुत बड़े कठीन समय में भी डगमगाता नहीं।

स: निश्चयेन योक्तव्य: योग: अनिर्विण्ण-चेतसा।
तम् विद्यात् दु:ख-संयोग वियोगम् योग-संज्ञितम्॥६.२३॥

मनुष्य को जानना चाहिए की एकाग्र होकर की जाने वाली ईश्वर की प्रार्थना कठीन परिस्थितीयों में पड़ने से बचा लेती है। इसलिए उस (ईश्वर की) प्रार्थना को एकाग्र मन और दृढ़ता के साथ करना चाहिए।

ध्यान योग करने की कठिनाईयाँ :-

अर्जुन उवाच
यः अयम् योगः त्वया प्रोक्तः साम्येन मधुसूदन।
एथिस्य अहम् न पश्यामि चञ्चलत्वात स्थितिम् स्थिराम् ।।६.३३।।

अर्जुन ने कहा, हे कृष्ण ईश्वर की प्रार्थना के इस सबसे सही तरीके को जो आपने (मुझसे) कहा। मन के चंचल स्थिती के कारण मैं इस पर स्थिर रहना सम्भव नहीं देखता हूँ।

चञ्चलम् हि मनः कृष्ण प्रमाथि बल-वत् दृढम्।
तस्य अहम् निग्रहम् मन्ये वायोः इव सु-दुष्करम् ।।६.३४।।

हे कृष्ण!, नि:संदेह, मन चंचल, उत्तेजित, बलवान, ज़िद्दी (है)। इसको वश में करना मैं वायु (हवा) (को वश में करने) जैसा बहुत कठिन मानता हूँ।

श्री भगवान उवाच,
असंशयम् महाबाहो मनः दुर्निग्रहम् चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते।।६.३५।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! इसमें कोई संशय नहीं कि चंचल मन (को) वश में करना कठिन है। किन्तु हे अर्जुन, अभ्यास और वैराग्य से इसे वश में किया जा सकता है।

असंयत आत्मना योगः दुष्प्रापः इति मे मतिः।
वश्य आत्मना तु यतत शक्यः अवाप्तुम् उपायतः ।।६.३६।।

बेकाबू (अनियंत्रित) मन (के कारण) ईश्वर में ध्यान लगाना कठिन है। अपनी क्षमता के अनुसार मन को वश में करने का प्रयास (करने से) (ईश्वर में ध्यान लगा) पाना सम्भव है। यह मेरा मत है।

N-2 रुह और आत्मा का परिचय

N2.1 रुह :-

रुह और आत्मा के अंतर को समझना बहुत कठिन है। विश्व में ९९ प्रतिशत लोग इसके अंतर को नहीं जानते हैं।

पहले मैं आपको वह प्रमाण और (सबूत) (साक्ष्य) दूँ कि दोनों अलग-अलग हैं, तो आपको विश्वास होगा, और आप इस अध्याय को रुचि से पढ़ोगे।

१) भगवद् गीता के कुछ श्लोक इस प्रकार हैं।

यः एनम् वेत्ति हन्तारम् यः च एनम् मन्यते हतम् ।
उबौ तौ न विजानीतः न अयम् हन्ति न हन्यते ।।२.१९।।

(य) जो मनुष्य (एवम्) इस (अविनाशी रुह) को (हन्तारम्) मारने वाली (वेत्ति) मानता है (च) और (य) जो मनुष्य (एनम्) इस (रुह को) (हतम्) मरने वाली मानता है (उभौ) यह दोनों (न विजानीत) कुछ नहीं जानते। (एनम्) यह रुह (न) न (हन्ति) किसी का वध करती है। (न) (और) न (हन्यते) मरती है।

जो मनुष्य इस (रुह) को मारने वाली मानता है और जो मनुष्य इस (रुह को) मरने वाली मानता है यह दोनों कुछ नहीं जानते। यह रुह न किसी का वध करती है। (और) न मरती है।

२) न जायते म्रियते वा कदाचित् न अयम् भूत्वा भविता वा न भूयः।
अजः नित्यः शाश्वतः अयम् पुराणः न हन्यते हन्यमाने शरीरे।।२.२०।।

(अयम्) यह (रुह) (न) न (जायते) जन्म लेती है (वा) और (न) न (म्रियते) मरती है (वा) और किसी भी समय (न) न (भूत्वा) इस का अस्तित्व था (भविता) न इसका अस्तित्व है। (न भूयः) न इस का अस्तित्व होगा। (अयम्) यह (रुह) (पुराण) सबसे प्राचीन है। (शरीरे) यह शरीर के (हन्यमाने) मृत्यु के साथ (न हन्यते) नहीं मरती।

यह (रुह) न जन्म लेती है और न मरती है और किसी भी समय न इसका अस्तित्व था न इस का अस्तित्व है। न इसका अस्तित्व होगा। यह (रुह) सबसे प्राचीन है। यह शरीर के मृत्यु के साथ नहीं मरती।

३) अव्यक्तः अयम् अचिन्त्यः अयम् अविकार्यः अयम् उच्यते।
तस्मात् एवम् विदित्वा एनम् न अनशोचितुम अर्हसि ।।२.२५।।

(उच्यते) ईश्वर ने कहा (अयम) यह (रुह) (अव्यकतः) अदृश्य न दिखाई देने वाली (अयम) यह (रुह) (अचिन्त्य) न समझ में आने वाली (अयम) यह (रुह) अविकार्य न बदलने वाली है (तस्मात्) इसलिए (अयम) इस (रुह) को (विदित्या) जानने के बाद (अर्हसि) तुम्हें अवश्य (अनुशोचितुम) चिंता नहीं करनी चाहिए।

ईश्वर ने कहा यह (रुह) अदृश्य न दिखाई देने वाली है, यह (रुह) न समझ में आने वाली है यह (रुह) न बदलने वाली है। इसलिए इस (रुह) को जानने के बाद तुम्हे अवश्य चिंता नहीं करनी चाहिए।

४) उद्धरेत् आत्मना आत्मानम् न आत्मानम् अवसादयेत् ।
आत्मा एवं हि आत्मनः बन्धुः आत्मा एरा रिपुः आत्मनः।।६.५।।

(हि) नि:संदेह (आत्मानम्) मनुष्य को चाहिए कि (आत्मन) अपनी आत्मा को (उद्धाते) ऊपर उठाए (पवित्र करें) (आत्मानम्) मनुष्य को चाहिए कि (अवसादेयते) (अपनी आत्मा को) नीचे की तरफ (न) न ले जाए (अपवित्र न करे)। (आत्मा) आत्मा (आत्मना) मनुष्य की (बन्धु) मित्र है (अत्मना) और आत्मा (ही) (आत्मना) मनुष्य की (रिपु:) शत्रु भी है।

नि:संदेह मनुष्य को चाहिए कि अपनी आत्मा को ऊपर उठाए (पवित्र करें)। मनुष्य को चाहिए कि (अपनी आत्मा को नीचे की तरफ) न ले जाए (अपवित्र न करें)। आत्मा मनुष्य की मित्र है, और आत्मा (ही) मनुष्य की शत्रु भी है।

५) बन्धु आत्मा आत्मन: तस्य येन आत्मा एवं आत्मना जित:।
अनात्मन: तु शत्रुत्वे वर्तेत आत्मा एवं शत्रु-वत् ॥६:६॥

(येन) जिस (आत्मन:) व्यक्ति ने (आत्मा) अपनी आत्मा (को) (जित:) जीत लिया (तस्य) उसके लिए (आत्मा) उसकी आत्मा (बन्धु) मित्र हो जाती है (तु) किन्तु (आत्मा एवं) वही आत्मा (आत्माना) उस व्यक्ति की (अनात्मान:) जिसने उसे वश में नही किया है। (शत्रूत्वे वर्तेत) शत्रु होती है (एव) और नि:संदेह (शत्रु वत्) सदैव शत्रु की तरह व्यवहार करती है।

जिस व्यक्ति ने अपनी आत्मा (को) जीत लिया उसके लिए उसकी आत्मा मित्र हो जाती है। किन्तु वही आत्मा उस व्यक्ति की जिसने उसे वश में नहीं किया है, शत्रु होती है और नि:संदेह सदैव शत्रु की तरह व्यवहार करती है।

● जिस चीज़ का पहले तीन श्लोकों में वर्णन हैं, उसके गुण यह है कि वह;

१. अजन्मा है,
२. अमर है
३. अस्तित्व नहीं था, न है, और न होगा।
४. न यह किसी को हानि पहुँचाती है और न इस की हानि हो सकती है।
५. इसे देखा नहीं जा सकता है।
६. इसे समझा नही जा सकता है।
७. इसमें परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।

● बाद के जो दो श्लोक हैं अर्थात श्लोक नं. ६.५ और ६.६ में जिसका वर्णन है उसे संवारा जा सकता है और खराब और नीचा भी किया जा सकता है।

अब आप सोचो कि यह दोनों चीज़ें एक हो सकती हैं?

नि:संदेह नहीं, इसमें पहली रुह है और दूसरी आत्मा हैं।

रुह का सबसे अधिक वर्णन भगवद् गीता में है। यदि इसके पहले हम अन्य ग्रंन्थों में इसके बारे में क्या लिखा है वह देखते हैं।

बाईबल: -

● बाईबल की एक आयत का अर्थ इस प्रकार है।

The words of God is living and active, sharper than any two-edged award, piercing to the division of Soul and Spirit, of joints and of marrow and discerning the thought and intentions of the heart. (Hebrews 4:12, Biblia.com)

ईश्वर के शब्द जीवित हैं और सक्रीय हैं। यह दो धारी तलवार से तेज हैं। यह आत्मा (Soul) और रुह (Spirit) को अलग अलग कर सकते हैं। यह जोड़ और हड्डी के गुदे तक को अलग अलग कर सकते हैं। (अर्थात कोई जटिल

धार्मिक समस्या हो तो उसका सही उत्तर बता सकते हैं।) यह सोच और उद्देश्य को पहचान सकते हैं।(Hebrews 4:12, Biblia.com)

इस आयत से यह स्पष्ट होता है कि आत्मा (Soul) और रुह (Spirit) यह दो अलग अलग चीज़ हैं।

● कुरआन में रुह का बहुत कम वर्णन है। पवित्र कुरआन की एक आयत इस प्रकार है।

(ईश्वर ने फरिश्तों से कहा) तो जब मैं आदम को पूरा बना चुकूं और उसमें अपनी रुह फूंक दूं तो तुम उसके आगे सजदे में गिर जाना। (पवित्र कुरआन १५:२९)

इस आयत से जो बात स्पष्ट होती है कि रुह को ईश्वर ने अपनी रुह में से मनुष्य के शरीर में फूंका है, तो यह ईश्वर की तरफ से है। और सदैव पवित्र रहेगी। दुसरी बात यह कि इसे फुंका गया है। इसको डाला नहीं गया है या इसका निर्माण नहीं किया गया है। इस कारण इसका अस्तित्व नहीं है।

● इसाई धर्म में १२ बाईबल है। किन्तु ८ बाईबल में पैगंबर ईसा को ईश्वर का पुत्र नहीं कहा गया है इसलिए इसाई समुदाय इन्हें नहीं मानते हैं। ऐसी ही एक बाईबल का नाम Gospel of Barnabas गॉस्पेल ऑफ बरनाबास है।

इसमें लिखा है कि जब ईश्वर ने आदम में रुह फूंका तो आप जीवित हो गए। आदम ने स्वर्ग में कलमा लिखा देखा तो ईश्वर से पूछा की इसका अर्थ क्या है? (Gospel of Barnabas chapter-39)

● बरनाबास की बाईबल की आयत से जो बात हम समझ सकते है वह यह है कि मनुष्य जीवित इसी रुह के कारण है। जब आदमी में रुह फूंकी गई तो वह जीवित हो गए।

आत्मा शरीर में न हो तो भी मनुष्य जीवित रहता है। मनुष्य जब सो जाता है तो उसकी आत्मा शरीर से अलग हो जाती है, यह बात कुरआन में सूरह नं. ३९, आयत नं. ४२ और भगवद् गीता में अध्याय ८ श्लोक नं. १९ में है।

तो मनुष्य के जीवित रहने का एक कारण यह रुह है।

● जो दुसरी बात हमको बरनाबास बाईबल से समझ में आती है वह यह है कि मनुष्य में बुद्धि या विवेक (Conscience) इसी रुह के कारण है। आदम जैसे ही जीवित हुए उन्होंने ईश्वर से उस कलमें के बारे में प्रश्न किया जो उन्होंने स्वर्ग में लिखा देखा था।

ईश्वर ने अपनी रुह में से आदम में रुह फूंका था। ईश्वर स्वयम् अनंत बुद्धि (Infinite Intelligence) है। तो जो ईश्वर ने आदम में फूंका था वह हो सकता है कि अपनी अनंत बुद्धि में से सीमित बुद्धि मनुष्य को दी हो।

● मनुष्य के पहले धरती पर बिल्कुल मनुष्य के समान होमोसेपियन (Homosaptians) नाम के प्राणी रहते थे। वह दो लाख वर्ष से अधिक अवधि तक धरती पर रहे। किन्तु अपने लिए कभी एक झोपडा तक न बनाया। वह जानवरों की तरह ही रहते थे और विलुप्त हो गए। मनुष्य केवल १५ हजार वर्ष से धरती पर है और पूरी धरती को बदल डाला। यह उसकी बुद्धि का कमाल है जो रुह के रुप में ईश्वर ने उसमें फुंका है।

● ईश्वर एक है, और ईश्वर ने अपनी रुह में से मनुष्य में रुह फूंका है, इस कारण सबकी रुह

एक समान है। भगवद् गीता के श्लोक नं. १३.६ से १३.९ में जो मनुष्य में सतगुणों का वर्णन है वह इसी रुह के कारण है।

यह कभी दूषित नहीं होगी। मनुष्य कितना भी पाप कर ले उसकी रुह उसे हमेशा गलत काम करने से रोकती है। इस कारण इसे अन्तरात्मा और विवेक भी कहते हैं।

● सबसे अधिक रुह का वर्णन भगवद् गीता में है। रुह विषय में जो १२ श्लोक हैं वह आप स्वयम् इस पवित्र ग्रंथ भगवद् गीता में पढ़िए जो अध्याय नं. २ में श्लोक नं. १९ से ३० तक है। इनको पढ़ते समय आप एक बात नोट करना कि भगवद् गीता में आत्मा शब्द का उपयोग बहुत बार हुआ है किन्तु इन १२ श्लोकों में रुह का वर्णन करते समय ईश्वर ने कभी एक बार भी इसे आत्मा नहीं कहा।

N2.2 आत्मा का परिचय

२.१ आत्मा

अब हम आत्मा का अध्ययन करते हैं। आत्मा को बाईबल में सोल (Soul) और कुरआन में नफ्स कहा गया है। आत्मा के कारण इच्छाएं मन में उत्पन्न होती हैं, इस कारण आत्मा को सेल्फ (self), मन, इत्यादि भी कहा जाता है। आत्मा के बारे में सबसे अधिक वर्णन पवित्र कुरआन में है। इसलिए आत्मा के अध्ययन में कुरआन की आयतें अधिक पढ़ी जाएंगी।

● हम आत्मा के संदर्भ में निम्नलिखित विषय पर चर्चा करेंगे।

१. आत्मा का अस्तित्व
२. आत्मा का जन्म
३. कम्प्युटर के उदाहरण से आत्मा को समझना।
४. आत्मा के बारे में सत्य और तथ्य और उनके संदर्भ (Reference)

2.2 आत्मा का अस्तित्वः -

पवित्र कुरआन की दो आयतें इस प्रकार हैं,

● (जो ईश्वर के अस्तित्व का इन्कार करते हैं उनसे ईश्वर कहते हैं की,) यदि तुम पर ईश्वर का वश नहीं है तो मरते हुए व्यक्ति की आत्मा को तुम उसके शरीर में रोक क्यों नहीं लेते? (पवित्र कुरआन, ५६:८५/८७)

(इस आयत से यह सिद्ध होता है कि आत्मा का अस्तित्व है और उसे रोका जा सकता है।)

● ईश्वर आत्मा को उनकी (मनुष्य की) मृत्यु के समय पूर्णतः ग्रस्त लेता है। (सूरह-अज-जुमर (३९) आयत-४२ का पहला भाग)

इस आयत से भी सिद्ध होता है कि आत्मा का अस्तित्व है और पकड़ा जा सकता है।

2.3 आत्मा का जन्म : -

● ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि,ऐ पैगम्बर, लोगों को याद दिलाओ वह समय जबकि तुम्हारे ईश्वर ने आदम की पीठों से उनकी नस्ल (सभी मनुष्यों) की आत्माओं को स्वर्ग लोक में निकाला था और उन्हें खुद उनके ऊपर गवाह (साक्षी) बनाते हुए पूछा था, ''क्या मैं तुम्हारा ईश्वर नहीं हूँ? उन्होंने कहा, ''जरुर, आप ही हमारे ईश्वर हैं, हम इस पर गवाही देते हैं।'' (ईश्वर ने कहा कि) यह हमने इसलिए किया कि कहीं तुम कयामत के दिन यह न कह दो कि,''हम तो इस बात से बेखबर थे'', या यह न कहने लगो कि शिर्क (बहुदेववाद) का आरम्भ तो हमारे बाप-दादा ने हमसे पहले किया था और हम उसके पश्चात उनकी नस्ल से पैदा हुए, फिर क्या आप हमें उस अपराध में पकड़ते हैं जो गलतकार (पहले गुजर चूके गुमराह) लोगों ने किया था?'' (पवित्र कुरआन सूरे अल-आराफ७:१७२-१७३)

● और ऐ पैगम्बर (मुहम्मद) याद रखो, उस प्रतिज्ञा को जो हमने सब पैगम्बरों से (स्वर्ग लोक में) ली हैं, तुमसे भी और नूह और इब्राहीम और मूसा और मरयम के बेटे ईसा से भी। सबसे हम दृढ़ वचन ले चुके हैं। (पवित्र कुरआन सूरे अल-अहजाब३३:७)

ऊपर लिखी गई आयतों से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि,

१. ईश्वर ने सभी मनुष्यों की, आत्माओं की

रचना स्वर्ग में मनुष्य (आदम) के साथ या पहले की थी।

२. जन्म के पहले आत्मा इतनी छोटी थी कि सारे मानवजाति की आत्माएं हजरत आदम के पीठ पर समा सकती थीं।

३. ईश्वर ने आरम्भ में ही आत्मा को परिपूर्ण व्यक्तित्व के साथ निर्माण किया था। इसी कारण वह ईश्वर के प्रश्न का उत्तर दे सकी।

जैसे एक अॅटोम (Atom) परमाणु बहुत छोटा होता है। किन्तु उसमें उसके (Substance) पदार्थ के सारे गुण होते हैं। इसी प्रकार आरम्भ में आत्मा बहुत छोटी होती है किन्तु उसमें मनुष्य के सभी गुण होते हैं।

2.4 कम्प्युटर के उदाहरण से आत्मा को समझने का प्रयास करते है।

कम्प्युटर के अंग इस प्रकार हैं

१. कम्प्युटर की बॉडी (Computer body)
२. बिजली की सप्लाई (Electric supply)
३. सी.पी.यु (CPU)
४. हार्ड डिस्क (Hard disk)
५.ॲप्लिकेशन सॉफ्टवेयर (Application software)

१. कम्प्युटर की बॉडी के समान हमारा शरीर है।
२. बिजली की सप्लाई यह हमारे प्राण है। (जो हमें सीधे ईश्वर से मिलते है)
३. सी.पी.यु यह हमारी रुह है। (यह भी हमें ईश्वर से मिलते है)
४. हार्ड डिस्क यह हमारी आत्मा है।
५. ॲप्लिकेशन सॉफ्टवेयर यह हमारी बुद्धि योगम है।

● जैसे जब बिजली की सप्लाई होगी तो कम्प्युटर काम करेगा, इसी प्रकार ईश्वर के तेज के एक अंश से हम और सारा ब्रह्माण्ड जीवित है और हमारे शरीर में प्राण है।

● CPU या Central processing unit, इसी अंग से कम्प्युटर में सोच विचार करने के योग्य होता है। इसे कम्प्युटर इस्तेमाल करने वाला बदल नहीं सकता है। एक मॉडेल के सारे कम्प्युटर में एक समान CPU होते हैं।

हमारी रुह यह CPU के समान है, होमोसेपीयन और मनुष्य में इसी रुह का अंतर था। यह ईश्वर के तरफ से है। सदैव पवित्र रहती है। प्राण और रुह सभी मनुष्य में एक समान है। हम में विवेक इसी रुह के कारण है। और यही हमारी अंतरात्मा है।

● हमारी आत्मा कम्प्युटर के हार्ड डिस्क के समान है। जिस कम्पनी से आप कम्प्युटर लेंगे वह इस हार्ड डिस्क में बहुत सारे, अलग अलग काम के लिए सॉफ्टवेयर लोड करके देते हैं।

● उसी प्रकार ईश्वर हमारी इस आत्मा में सत्वगुण, रजो गुण, तमो गुण, काम भावना, लोभ, क्रोध, इत्यादि सॉफ्टवेयर लोड करके मनुष्य को जन्म देते हैं।

● जैसे हार्ड डिस्क में कभी भी सॉफ्टवेयर बदला जा सकता है। इसी प्रकार हम अपने स्वभाव को भी तमो गुण से रजो या सत्वगुण कर सकते हैं।

● कम्प्युटर पर आप जो भी काम करते हैं आपका सारा डाटा हार्ड डिस्क में जमा रहता

है। किसी कारण हार्ड डिस्क निकाल कर आप सारा कम्प्युटर नष्ट कर दे। और फिर दुसरे कम्प्युटर में हार्ड डिस्क लगा दें तो आपको आपका सारा डाटा मिल जाएगा। और आपका नया कम्प्युटर भी पुराने की तरह हो जाएगा। तो कम्प्युटर में आपके लिए सबसे महत्त्वपूर्ण वस्तु उसकी हार्ड डिस्क है।

इसी प्रकार आपकी आत्मा है। इसी में आपके सारे कर्म और गुण हैं। आप यही आत्मा है। मृत्यु के समय ईश्वर इसे निकाल लेगा। और प्रलय के समय शरीर उत्पन्न करके फिर शरीर में डालेगा तो आप फिर पहले जैसे हो जाओगे।

- ईश्वर ने इसी आत्मा में छह प्रकार की इच्छा रखी है। तो जब आप कहते हैं कि मेरा मन चाहता है तो वह चाह इसी आत्मा की होती है। इसलिए हम इस आत्मा को self, मन, हृदय इत्यादी भी कहते हैं।

- अपनी आत्मा को तप से पवित्र भी किया जा सकता है, और पाप से दोषी भी किया जा सकता है।

2.5 आत्मा का परीचय :-

भगवद् गीता में आत्मा का परिचय निम्नलिखीत श्लोक में है।

- अर्जुन उवाच,

किम् तत् ब्रह्म किम् अध्यात्मम् किम् कर्म पुरुष-उत्तम।
अधि-भूतम् च किम् प्रोक्तम् अधि-दैवम् किम् उच्यते ॥८.१॥

(अर्जुन उवाच) अर्जुन ने कहा (तत) वह (ब्रह्म) ईश्वर (किम) कौन है (अध्यात्मम) आत्मा (किम) क्या है (पुरुष उत्तम) पुरुष उत्तम (ईश्वर के) (कर्म) काम (किम) क्या है (च) और (अधि-भूतम्) सभी प्राणियों का ईश्वर (किम) किसे (प्रोक्तम्) कहते हैं। (अधि-दैवम्) देवताओं का ईश्वर (किम) किसे (उच्यते) कहते हैं।

अर्जुन ने कहा, वह ईश्वर कौन है? आत्मा क्या है? पुरुष उत्तम (ईश्वर के) काम क्या हैं? और सभी प्राणियों का ईश्वर किसे कहते है? देवताओं का ईश्वर किसे कहते हैं?

ईश्वर ने अर्जुन के प्रश्न का उत्तर इस तरह दिया।

- श्री भगवान उवाच,

अक्षरम् ब्रह्म परमम् स्वभाव: अध्यात्मम् उच्यते।
भूत-भाव-उद्भव-कर: विसर्ग: कर्म संज्ञित: ॥८.३॥

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (परमम्) महान (अक्षरम्) अविनाशी ईश्वर (ॐ) को (ब्रह्म) ब्रह्म (उच्यते) कहते है। (स्वभाव) मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तीत्व) है उसे (अध्यात्मम) आत्मा कहते है। (भूत) प्राणियों के (भाव) स्वभाव की (उदभव) रचना करना और (कर:) (उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के) कर्म (उनको) (विसर्ग) प्रदान करना (कर्म) (इसे ईश्वर का) कर्म (संज्ञित:) कहा जाता है।

ईश्वर ने कहा, महान अविनाशी ईश्वर (ॐ) को ब्रह्म कहते हैं। मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तित्व) है उसे आत्मा कहते हैं। प्राणियों के स्वभाव की रचना करना और (उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के) कर्म (उनको) प्रदान करना (इसे ईश्वर के) कर्म कहा जाता है।

2.6 आत्मा को पवित्र या दुषित किया जा सकता है :-

उद्धरेत् आत्मना आत्मानम् न आत्मानम् अवसादयेत्।
आत्मा एव हि आत्मन: बन्धु: आत्मा एव रिपु: आत्मन: ॥६.५॥

(हि) नि:संदेह (आत्मानम्) मनुष्य को चाहिए की (आत्मन) अपनी आत्मा को (उद्धाते) ऊपर उठाए (पवित्र करें) (आत्मानम्) मनुष्य को चाहिए कि (अवसादेयते) (अपनी आत्मा को) नीचे की तरफ (न) न ले जाए (अपवित्र न करे) (आत्मा) आत्मा (आत्मना) मनुष्य की (बन्धु) मित्र है (अत्मना) और आत्मा (ही) (आत्मना) मनुष्य की (रिपु:) शत्रू भी है।

नि:संदेह, मनुष्य को चाहिए कि अपनी आत्मा को ऊपर उठाए (पवित्र करें)। मनुष्य को चाहिए की (अपनी आत्मा को) निचे की तरफ न ले जाए (अपवित्र न करे)। आत्मा मनुष्य की मित्र है, और आत्मा (ही) मनुष्य की शत्रू भी है।

- **बन्धु: आत्मा आत्मन: तस्य येन आत्मा एव आत्मना जित:।
श्रअनात्मन: तु शत्रुत्वे वर्तेत आत्मा एव शत्रु-वत्॥६.६॥**

(येन) जिस (आत्मन:) व्यक्ति ने (आत्मा) अपनी आत्मा (को) (जित:) जीत लिया (तस्य) उसके लिए (आत्मा) उसकी आत्मा (बन्धु) मित्र हो जाती है (तु) किन्तु (आत्मा एवं) वही आत्मा (आत्माना) उस व्यक्ति की (अनात्मान:) जिने उसे वश में नहीं किया है। (शत्रुत्वे वर्तेत) शत्रु होती है (एव) और नि:संदेह (शत्रु वत्) सदैव शत्रु की तरह व्यवहार करती है।

जिस व्यक्ति ने अपनी आत्मा (को) जीत लिया, उसके लिए उसकी आत्मा मित्र हो जाती है। किन्तु वही आत्मा उस व्यक्ति की, जिसने उसे वश में नहीं किया है। शत्रु होती है और नि:संदेह सदैव शत्रु की तरह व्यवहार करती है।

- पवित्र कुरआन में लिखा हैं कि,

''सफल हो गया (वह) जिसने उसे (अपनी आत्मा को) विकसित किया (पवित्र किया)। और असफल हुआ जिसने उसे (अपनी आत्मा को) दबा दिया (दोषित किया)।''

(सूरे शम्श-९१, आयत-९-१०)

ऊपर लिखे श्लोक और आयत से हम समझ सकते हैं की आत्मा रुह की तरह पवित्र नहीं है। और एक ही स्थिती में नहीं रहती। इसे पवित्र करना होता है। और पाप कर्म से यह दूषित हो जाती है।

2.7 गुण शरीर के बदले आत्मा में होते है :-

भगवद् गीता में तीन गुणों का वर्णन है।

१. सतो गुण: यह गुण पुण्य की तरफ ले जाता है। इसे कुरआन में 'मुत्माइन्ना' कहा गया है। (सूरे अल फजर ८९ आयत २७-३०)

२. रजो गुण: यह गुण निरंतर परिश्रम (Passion) की तरफ ले जाता है। इसे कुरआन में 'लव्वामा' कहा गया है। (सूरे कियामा ७५ आयत १-२)

३. तमो गुण: यह गुण अज्ञानता और पाप की तरफ ले जाता है। इसे कुरआन में 'अम्माराह' कहा गया है। (सूरे-युसूफ-१२, आयत-५३)

इन तीनों गुणों का वर्णन भगवद् गीता में अध्याय नं. १४ में विस्तार से है।

पवित्र कुरआन की एक आयत इस प्रकार है।
''हे शान्त आत्मा, लौट चल अपने ईश्वर की ओर, इस तरह कि तू उससे प्रसन्न (ईश्वर कि कृपा से संतुष्ट) और वह (ईश्वर) तुझ से प्रसन्न। (और तू) शामिल हो जा मेरे (पवित्र) बन्दों में। और प्रवेश कर मेरे स्वर्ग में।''

(पवित्र कुरआन, सूरे अल-फजर ८९, आयत २७-३०)

इस आयत में अरबी शब्द है 'नफसे-मुत्मा इन्ना'। 'नफ्स' का अर्थ है आत्मा और 'मुत्माइन्ना' का अर्थ है सतो गुण।

'नफ्से मुत्माइना' का अर्थ हुआ सतो गुण वाली आत्मा। इस आयत से हम यह भी निष्कर्ष निकालते हैं कि गुण आत्मा में ही होते हैं।

2.8 मनुष्य में चेतना या होश हवाश या (Consciousness) आत्मा के कारण होता है।:-

भगवद् गीता के दो श्लोक इस प्रकार हैं।

● अव्यक्तात् व्यक्तय: सर्वा: प्रभवन्ति अह:-आगमे।
शरात्रि-आगमे प्रलीयन्ते तत्र एव अव्यक्त संज्ञके॥८.१८॥

(अह:) दिन के (उगमे) आने पर (अव्यक्तात्) (आत्मा) जो दिखाई नहीं देती है (व्यक्तय:) (वह प्राणियों में) दिखाई देती है। (सर्वा: प्रभवन्ति) (अर्थात जीवन) सारे प्राणियों में दिखाई देता है (एवं) नि:संदेह (इसी तरह) (रात्री आगमे) रात के आने पर (संज्ञके) (आत्मा) जो कि (अव्यक्त) दिखाई नहीं देती (प्रलीयन्ते) (उसकी) मृत्यु हो जाती है।

दिन के आने पर (आत्मा) जो दिखाई नहीं देती है (वह प्राणियों में) दिखाई देती है। (अर्थात जीवन) सारे प्राणियों में दिखाई देता है। नि:संदेह (इसी तरह) रात के आने पर (आत्मा) जो कि दिखाई नहीं देती (उसकी) मृत्यु हो जाती है।

● भूत-ग्राम: स: एव अयम् भूत्वा भूत्वा प्रलीयते।
शरात्रि आगमे अवश: पार्थ प्रभवति अह: आगमे॥८.१९॥

(रात्रि आगमे) रात के आने पर (सारे प्राणी) (अवश:) अपने आप (प्रलीयते) मृत्यु पाते हैं। (अह: आगमे) दिन के आने पर (प्रभवति) (उनमें जीवन) दिखाई देता है। (पार्थ) हे पार्थ (अर्जुन) (भूत-ग्राम) सारे प्राणियों का (एवं) नि:संदेह (अयम्) यह सब (स:) उनका (भूत्वा भूत्वा) (मेरे द्वारा) बार बार निर्माण करना या जिवन देना है।

रात के आने पर (सारे प्राणी) अपने आप मृत्यु पाते है। दिन के आने पर (उनमें जीवन) दिखाई देता है। हे पार्थ (अर्जुन) सारे प्राणियों का नि:संदेह यह सब (मेरे द्वारा) उनका बार बार निर्माण करना या जीवन देना है।

इस बात को ईश्वर ने पवित्र कुरआन में इस तरह कहा है।

● ईश्वर आत्मा को उनकी (मनुष्य की) मृत्यु के समय पूर्णत: ग्रस्त लेता है, (कब्जे में कर लेता है) और जो अभी मृत्यु को प्राप्त नहीं हुआ है, उसे उसके सोने की अवस्था में (ग्रस्त लेता है)। फिर जिसके लिए मृत्यु का फैसला दे चुका होता है उसे रोक लेता है और दूसरों को एक नियुक्त समय तक के लिए छोड़ देता है। निश्चय ही इसमें विचारशील लोगों के लिए बड़ी निशानियाँ हैं। (सूरह अज जुमा-३९, आयत-४२)

● इसका अर्थ है मनुष्य जब सोता है तो फरिश्ते उसकी आत्मा को शरीर से बाहर निकालकर अपने कब्ज़े में कर लेते हैं।

जिनके भाग्य में सोते में ही मृत्यु लिखी होती है उनकी आत्मा फिर शरीर में प्रवेश नहीं करती है? और जिनका मृत्यु का समय नहीं हुआ उनकी आत्मा को जागते समय फरिश्ते शरीर में प्रवेश करा देते हैं। इस तरह हर दिन हमारी

आत्मा शरीर से निकलती और फिर शरीर में समाती है।

● इस आयत से हम यह बात भी समझ सकते हैं कि चेतना या होश हवाश या Consciousness मनुष्य में आत्मा के कारण होता है। और रुह से विवेक, Conscience, बुद्धि, Intelligence होता है।

सोते समय शरीर में प्राण होते हैं। जिससे हमारा हृदय धड़कता रहता है। रुह होती है जिससे हम स्वप्न में भी अच्छी तरह अपनी बुद्धि का प्रयोग कर सकते हैं। केवल आत्मा नहीं होती इस कारण हम होश में नहीं होते हैं।

2.9 आत्मा अमर है :-

भगवद् गीता के दो श्लोक इस प्रकार हैं।

● **उत्तम: पुरुष: तु अन्य परम आत्मा इति उदाहृत:**
शय: लोक त्रयम् आविश्य बिभिर्ति अव्यय: ईश्वर: ॥१५.१७॥

(तु) किन्तु (उदाहृत:) (ईश्वर) कह रहा है कि (इति) वह (ईश्वर) ईश्वर (खुद) (अन्य) दूसरों से (उत्तम:) महानतम (पुरुष) दिव्य व्यक्तित्व है। (आत्मा) (वह) आत्मा (से भी) (परम) महानतम है (अव्यय:) वह अविनाशी है (लोक त्रयम्) तीन लोकों पर (आविश्य) छाया हुआ है (बिभिर्ति) और उनकी रक्षा करता है।

किन्तु (ईश्वर) कह रहा है कि वह ईश्वर (खुद) दूसरों से महानतम दिव्य व्यक्तित्व है। (वह) आत्मा (से भी) महानतम है, वह अविनाशी है, तीनों लोकों पर छाया हुआ है और उनकी रक्षा करता है।

● **यस्मात् क्षरम् अतीत: अहम् अक्षरात् अपि च उत्तम: ।**
पअत: अस्मि लोके वेदे च प्रथित: पुरुष-उत्तम: ॥१५.१८॥

(यस्मात) कारण कि (अहम) मैं (क्षरम्) नाशवान (शरीर से) (अतीत) परे हूँ (च) और (अक्षरात) अविनाशी (आत्मा से) (अपि) भी (उत्तम) महानतम् हूँ (अत:) इसलिए (लोके) इस संसार में (च) और (वेद) वेदों में (उत्तम पुरुष) महानतम दिव्य व्यक्तित्व पुरुषोत्तम (प्रथित:) के (नाम से) प्रसिद्ध हूँ।

कारण कि मैं नाशवान (शरीर से) परे हूँ, और अविनाशी (आत्मा से) भी महानतम् हूँ इसलिए इस संसार में और वेदों में महानतम दिव्य व्यक्तित्व पुरुषोत्तम के (नाम से) प्रसिद्ध हूँ।

● पवित्र कुरआन कि एक आयत इस प्रकार है। ''प्रत्येक आत्मा को मृत्यु का स्वाद चखना है। फिर तुम हमारी ओर वापस लौटोगे।''
(सूरे अल अनकबूत-२९, आयत-५७)

इन श्लोक और आयत से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि आत्मा अमर है किन्तु शरीर को त्यागते समय उसे मृत्यु का अनुभव करना होगा। आत्मा का अंत नहीं होगा केवल वह धरती से पितरलोक की ओर प्रस्थान करेगी।

2.10 आत्मा को पवित्र कैसे करें?

श्लोक नं. १७.३ में कहा गया है की,

सत्व-अनुरुपा सर्वस्य श्रद्धा भवति भारत ।
श्रद्धा मय: अयम् पुरुष: य: यत् श्रद्ध: स: एव स: ॥१७.३॥

हे भारत (अर्जुन)! सारे लोगों में (एक ईश्वर में) श्रद्धा सत्वगुण की तरह ही (जन्म से ही मनुष्य के अंदर) होता है। (उसके बाद) जो मनुष्य जिस प्रकार के श्रद्धा (के साथ) इस संसार में (जीवन व्यतीत करता है) वह नि:संदेह उसी श्रद्धा (के साथ) होता है जब वह (मृत्यु पाता है)।

इस श्लोक के अनुसार बच्चा संसार में ईश्वर पर श्रद्धा के साथ जन्म लेता है किन्तु जैसा

जीवन व्यतीत करता है वैसे ही मृत्यु के समय उसका स्वभाव होता है।

किस प्रकार के जीवन व्यतीत करने पर मनुष्य में किस प्रकार के गुण उत्पन्न होते हैं उसका वर्णन निम्नलिखित है।

रजोगुणः- यदि परिवार की संस्कृति व्यवसायिक है। आधुनिक विश्व के अनुसार जीवन व्यतीत करते हैं जैसे कि,

१. अपना जीवन अपनी इच्छा अनुसार व्यतीत करो।
२. जीवन का भरपूर आनंद लो।
३. धन ही सब कुछ है।
४. अच्छी नींद लो, अच्छा भोजन करो, अच्छे वस्त्र धारण करो।
५. संसार को छोड़कर अपनी चिंता करो। इत्यादी।

यदि इस प्रकार की विचारधारा के साथ बच्चा बड़ा होगा तो उसमें रजो गुण होंगे।

सतोगुणः-

१. यदि परिवार की संस्कृति धार्मिक है।
२. सुबह जल्दी उठते हैं।
३. धार्मिक ग्रंथों का अध्ययन करते हैं।
४. बहुत सवेरे ईश्वर की प्रार्थना करते हैं।
५. कम सोते हैं, मध्यम भोजन करते हैं और कम बाते करते हैं।

यदि इस प्रकार के पारिवारिक संस्कृति के साथ बच्चा बड़ा होगा तो उसका स्वभाव सात्विक होगा।

तमोगुणः- यदि पारिवारीक संस्कृति अपराधिक, सांप्रदायिक, भ्रष्ट मानसिकता वाली है तो बच्चे में भी तमो गुण ही होंगे।

● यदि किसी को इस बात का एहसास हो की उसमें रजो या तमो गुण है। तो बड़े परिश्रम से वह अपने आपमें सत्वगुण उत्पन्न कर सकते हैं।

2.11 सतो गुण उत्पन्न करने के उपाय

आत्मा सदैव सुख से, आराम से, स्वतंत्र रहना चाहती है और निरंतर आनंद लेना चाहती है। यदि मनुष्य सदैव सुख से जीवन व्यतीत करे और आनंद का अनुभव करता रहे तो आत्मा में रजो या तमो गुण उत्पन्न होते हैं। जब हम अपने आत्मा को शरीर द्वारा कष्ट देते हैं और देते रहते हैं तो उसका स्वभाव बदलने लगता है। यदि कष्ट धार्मिक ज्ञान और शिक्षा के अनुसार हो तो आत्मा का स्वभाव धीरे धीरे सात्विक या अतीत हो जाता है।

आत्मा को शरीर द्वारा जिन कर्मो से कष्ट होता है वह निम्नलिखीत है;

१. बहुत सवेरे उठना
२. बहुत सवेरे ईश्वर की प्रार्थना करना।
३. उपवास रखना।
४. दान देना।
५. धार्मिक नियमों के अनुसार अपने शारीरिक अंगो को वश में रखना।
६. भोजन, निंद और व्यवहार को धार्मिक नियमों के अनुसार और संतुलन में रखना।

यदि यह काम हम मन और शरीर को कष्ट देकर करते रहे, तो हमारा स्वभाव सात्विक हो जाएगा।

● आत्मा को पवित्र करने के बारे में जो हमने

कहा उसका संदर्भ इस प्रकार है।

पवित्र कुरआन में ईश्वर ने कहा,

''हे मुहम्मद रात को उठकर नमाज़ में खड़े रहा करो। सिवाय रात के थोडा हिस्सा। आधी रात या उससे कुछ थोड़ा कम कर लो या उससे कुछ अधिक बढ़ा लो। और कुरआन को भली भाँति ठहर-ठहरकर पढ़ों। निश्चय ही हम तुम पर एक भारी बात (जिम्मेदारी) डालने वाले हैं। नि:स्संदेह रात का उठना आत्मा को बहुत कष्ट देता है और उस समय प्रार्थना भी दुरुस्त होती है।'' (सूरह-अल-मुज्जम्मिल-७३, आयत-१-६, अनुवाद फतेह मोहम्मद)

● सभी धर्मों में बहुत सुबह को उठने का बहुत महत्त्व रहा है।

सनातन धर्म में भी सूर्योदय से १ घंटा ३६ मिनट पहले के समय को ब्रह्म मुहुर्त कहते हैं। यह ईश्वर की प्रार्थना और सभी शुभ कर्मों के लिए सबसे उचित समय है और अपने आपमें सात्विक गुण उत्पन्न करने के लिए अनिवार्य है।

लगभग इसी समय को मुसलमान सुबह सादिक कहते हैं। रोज़े (उपवास) इसी समय से आरम्भ होता है। अहले हदीस समुदाय इस समय के १० मिनट बाद अजान देते हैं।

इसलिए जब पहली अज़ान हो तो हर व्यक्ति को उठकर ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिए।

● साधारण मुसलमान को पांच समय की नमाज अनिवार्य है। उसमें से पहले नमाज का समय सुबह सादीक **(ब्रह्म मुहुर्त)** से सूर्योदय तक है। किन्तु पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) पर छह समय की नमाज़ अनिवार्य थी। उनमें पहली नमाज का समय आधी रात से आरंभ होता था और (ब्रह्म मुहुर्त) **सुबह सादिक** तक था और दूसरी नमाज का समय सुबह सादिक से सूर्योदय तक था।

सुबह सादिक (ब्रह्म मुहुर्त) से पहले जो नमाज होती है उसे तहज्जुद कहते हैं। इस नमाज के बिना कोई वली (ऋषी) नहीं हो सकता।

● हमारी आत्मा या हमारा मन, धन, सम्पत्ती को जमा करना चाहता है। जब हम दान देते हैं तो हमारी रजो और तमो गुण वाली आत्मा को कष्ट होता है। यदि हम कष्ट निरंतर देते रहे तो वह स्वयम् बदलने लगती है सात्विक गुण वाली हो जाती है। इस कारण हमेशा दान देना चाहिए।

● हमारी आत्मा चाहती है कि हमेशा हमारा पेट अच्छे-अच्छे भोजन से भरा हो। जब हम उपवास रखते हैं, तो शरीर को कष्ट होता है यही कष्ट आत्मा को सात्विक बनाती है।

रोज़ा (उपवास) रखने का कारण पवित्र कुरआन में ईश्वर ने इस प्रकार कहा है।

''हे इमान लाने वालों! तुम पर रोज़ा फर्ज (अनिवार्य) किया गया, जिस तरह तुमसे पहले के लोगों पर फर्ज किया गया था, ताकि तुम अतीत गुण (मुत्तकी गुण) वाले बन जाओ।'' (पवित्र कुरआन, सूरह अल बकराह-२, आयत-१८३)

(अतीत गुण सतो गुण से भी श्रेष्ठ है) इसका वर्णन अध्याय नं. १४ में है।

तो ईश्वर के आदेश अनुसार जीवन व्यतीत करना चाहिए, चाहे मन को अच्छा न लगे। और तप करना, अर्थात उपवास रखना चाहिए और दान देना चाहिए और ब्रह्म मुहूर्त के समय उठकर ईश्वर की प्रार्थना करनी चाहिए। इससे हमारा स्वभाव सात्विक हो जाता है जो कि स्वर्ग पाने के लिए जरुरी है।

****

N-3 बुद्धी योगम का परिचय

● Stefin Hoking स्टीफन हॉकींग एक महान वैज्ञानिक थे। आपने एक सुप्रसिद्ध पुस्तक "A brief History of time" लिखा है। जिसमें आप ने Big bang theory से लेकर Black hole तक सभी का विस्तार से वर्णन किया है।

आप लिखते हैं कि यह ब्रह्माण्ड एक परफेक्ट मशीन के समान स्थित है, और काम कर रहा है। इस ब्रह्माण्ड में सितारों की गति कुछ सेकंड भी कम या अधिक हो जाए तो पूरा ब्रह्माण्ड नष्ट हो जाएगा।

ऐसा परफेक्ट ब्रह्माण्ड एक महान ईश्वर ही निर्माण करके चला सकता है, इस सच्चाई को जानने के बावजूद स्टीफन हॉकींग नास्तिक थे।

● पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) के पिता की मृत्यु आपके जन्म से पहले हो गई थी। आपको आपके चाचा अबु तालीब ने पाला था। जब पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) जवान हुए और अपने पैगंबरी की घोषणा की तो सारा मक्का शहर आपका दुश्मन हो गया। अबु तालीब अपने कबीले के सरदार थे और सदैव आपकी रक्षा करते थे। किन्तु जब भी पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) अपने चाचा को इस्लाम को स्वीकार करने का आमंत्रण देते, तो अबू तालिब कहते कि मैं जानता हूँ तू सच्चा है, तेरा धर्म सच्चा है, किन्तु मैं अपने पुरखों के धर्म का पालन ही करुंगा। और उसी धर्म पर उनका देहांत हो गया।

● ऐसा क्यों होता है कि एक महान वैज्ञानिक जो अच्छी तरह जानता है कि इतना परफेक्ट ब्रह्माण्ड एक ईश्वर के अतिरिक्त और कोई नहीं बना सकता। फिर भी वह ईश्वर का इन्कार करता है, और नास्तिक रहता है। और ऐसा क्यों होता है कि एक व्यक्ति जानता है कि यह सच्चा पैगंबर है इनका धर्म सच्चा है फिर भी वह उस धर्म को स्वीकार नहीं करता है।

● इस प्रश्न का उत्तर ईश्वर ने कुरआन में इस तरह दिया है।

"हे मुहम्मद तुम जिसे चाहो, (सत्य धर्म के) मार्ग पर नहीं ला सकते हो, परन्तु ईश्वर जिसे चाहता है (सत्य धर्म के) मार्ग पर लाता है। और वह (ईश्वर) सत्य मार्ग पाने वालों को भली भाँति जानता है।" (पवित्र कुरआन, अल-कासस, सूरह-२८, आयत-५६)

अर्थात सत्य धर्म का अनुसरण वही लोग करेंगे जिन्हें ईश्वर चाहेगा। और ईश्वर उन्हीं को अनुसरण की बुद्धि देता है जो मन से ईश्वर से डरते हैं और सत्य मार्ग पर चलना चाहते हैं। भगवद् गीता के दो श्लोक इस प्रकार हैं।

● श्री भगवान उवाच,
तेषाम् सतत-युक्तानाम् भजताम् प्रीति-पूर्वकम्।
दामि बुद्धि-योगम् तम् येन माम् उपयान्ति ते ॥१०॥

"ईश्वर ने कहा,उन (मुनी/पवित्र व्यक्तियों को) जो प्रेमपूर्वक सदैव मेरी प्रार्थना में लगे हुए हैं। उनको (मैं) मुझसे जुड़ी रहने वाली बुद्धि देता हूँ। जिससे वह मुझे पा लेते है।"

तेषाम् एव अनुकम्पा-अर्थम् अहम् अज्ञान-जम् तम:।
नाशयामि आत्म-भाव स्थ: ज्ञान दीपेन भास्वता ॥११॥

नि:संदेह, उन (पवित्र व्यक्तियों) पर अपना विशेष कृपा करने के लिए मैं उनके हृदय के अन्दर ज्ञान का दीप स्थापीत कर देता हूँ। जिसके प्रकाश में जो अंधकार अज्ञानता के कारण हृदय में जन्म लेते हैं वह नष्ट हो जाते हैं।

● बुद्धि योगम या Divine consciousness को मुस्लिम ईमान कहते हैं। जिसे ईश्वर बुद्धि योगम देगा वही सत्य मार्ग पर चलेगा। और यह बुद्धि योगम वह उन्हीं को देता है जो इसकी चाह करते हैं। और जीवन के अंत तक यह उन्हीं के पास रहता है जो ईश्वर से इसके लिए प्रार्थना करते हैं। वेद और कुरआन की कुछ ऐसी ही प्रार्थनाएं निम्नलिखित हैं।

● ऋग्वेद यह धरती पर सबसे प्राचीन ईश्वर वाणी है। ईश्वर ने इसमें मानवजाति को बताया कि कैसे उसकी प्रार्थना करे और कैसे उसकी कृपा मांगे। ऋग्वेद के मंडल नं. ३ सुक्त नं. ६२ कां मंत्र नं. १०० ऐसा ही एक मंत्र है। इसे गायत्री मंत्र भी कहते हैं। ऐसी आस्था है कि विश्वामित्र ने इसे रचा था। किन्तु यह मंत्र ऋग्वेद का मंत्र है और ऋग्वेद ईश्वर वाणी है। विश्वामित्र ने लोगों को इसके महत्त्व का परिचय दिया होगा।

गायत्री मंत्र :-

ऊँ
भूर्भुवः स्वः
तत्सवितुर्वरेन्यं
भर्गो देवस्य धीमहि
धियो यो नः प्रचोदयात् ॥
(ऋग्वेद ३:६२:१०)

ऊँ - प्रार्थना का आरंभ ईश्वर के नाम से करता हूँ।
भू- धरती
भूर्व-अन्य लोक
स्व-स्वर्ग
तत-वह (ईश्वर)
सवितुर-जो सत्य मार्ग दिखाता है
वरेण्यम-जिसके लिए सारी प्रशंसा है
भर्गो-पापों को क्षमा करने वाला
धियो-मन और आत्मा से
धीमहि-ईश्वर की प्रार्थना करते हैं
देवस्य-ईश्वर
यो-जो
नः-हमें
प्रचोदयात-प्रकाशित करें (सत्यमार्ग दिखाए)

(ऊँ) प्रार्थना का आरंभ ईश्वर के नाम से करता हूँ। (यो) जो (भू) धरती (भूर्व) अन्य लोक (स्व) स्वर्ग लोक (का स्वामी है) (तत) वह (ईश्वर) (सवितुर) सत्य मार्ग दिखाता है (वरेण्यम) उसके लिए सारी प्रशंसाएं है (भर्गो) पापों को क्षमा करने वाला है (धियो) मन और आत्मा से (धीमहि) (हम) ईश्वर की प्रार्थना करते है (देवस्य) (हे) ईश्वर (नः) हमें (प्रचोदयात) प्रकाशित करें (सत्यमार्ग दिखाए)

प्रार्थना का आरंभ ईश्वर के नाम से करता हूँ। जो धरती, अन्य लोक, स्वर्ग लोक (का स्वामी है)। वह (ईश्वर) सत्य मार्ग दिखाता है। उसके लिए सारी प्रशंसाएं हैं। पापों को क्षमा करने वाला है। मन और आत्मा से (हम) ईश्वर की प्रार्थना करते हैं। (हे) ईश्वर हमें प्रकाशित करे (सत्यमार्ग दिखाए)।

जो इस मंत्र को हर दिन अर्थ को समझते हुए ईश्वर की प्रार्थना के तौर पर पढ़ेगा, तो उसे ईश्वर अवश्य सत्य मार्ग दिखाएगा, जो स्वर्ग की ओर जाने वाला होगा।

पवित्र कुरआन (सूरह नं. १) :-

● पवित्र कुरआन की पहली सूरह भी इसी

प्रकार ईश्वर की प्रार्थना है, जो हर नमाज में पढ़ी जाती है, वह सूरह निम्नलिखित हैं।

अल्हम्दु लिल्लाहि रब्बिल आलमीन	सब प्रशंसा ईश्वर के लिए है जो सारे संसार का प्रभु है। (१)
अर्रहमानिर्रहीम-	अत्यंत कृपाशील और दयावान है। (२)
मालिकि यौमिद्दीन	प्रलय के दिन का मालिक है। (३)
इय्या-क न बुदु व इय्या-क नस्तीइन	हे ईश्वर हम तेरी ही प्रार्थना करते हैं और तुझी से सहायता मांगते हैं। (४)
इहदिनस्सिरातल्-मुस्तकीम	हे प्रभु हमें सत्य का मार्ग दिखा। (५)
सिरातल्लज़ी-न अनअम्-त अलैहिम	उन लोगों का मार्ग जो तेरे कृपा के योग्य हुए (६)
गैरिल्-मगजूबि अलैहिम् व लज्जॉल्लीन	न उनका मार्ग जिन पर तेरा प्रकोप हुआ और न पथभ्रष्ट का मार्ग। (७) (सूरह हम्द-१ आयत -१-७)

****

N-4. अन्य लोक क्या है?

● भगवद् गीता का श्लोक नं. १५.८ इस प्रकार है-

शरीयम् यत् अवाप्नोति यत् च अपि उत्क्रामति ईश्वरः
गृहीत्वा एतानि संयाति वायु: गन्धान् इव आशयात्॥१५.८॥

मनुष्य जो शरीर मृत्यु के समय छोड़ जाता है, निःसंदेह प्रलय के दिन उसे दोबारा प्राप्त करता है। वह शरीर जिससे आत्मा दूर हो जाती है, ईश्वर उसे लाता है कर्मों का हिसाब लेने के स्थान पर इसी तरह जिस तरह वायु स्थानांतरण करती है सुगंध का।

● अर्थात प्रलय के दिन ईश्वर सबको फिर जीवित करेगा और कर्मों का हिसाब लेगा और पुण्य का फल स्वर्ग और पाप का दण्ड नरक में जीवन व्यतित करना होगा। इस मृत्यु के बाद फिर से जीवित होकर स्वर्ग या नरक में जीवन बिताने को hereafter या आखिरत या अन्य या अन्य लोक कहते हैं।

अन्य लोक से सम्बन्धित भगवद् गीता के श्लोक इस प्रकार हैं।

● अपरा इयम् इतः तु अन्याम् प्रकृतिम् विद्धि मे पराम्।
जीव-भूताम् महा-बाहो यया इदम् धार्यते जगत्॥७.५॥

किन्तु हे अर्जुन इस हीन (पृथ्वी के) अतिरिक्त मेरी श्रेष्ठ रचना अन्य लोक (मृत्यु के बाद के जीवन) को जानने का प्रयास करो जिस पर इस संसार के सारे प्राणियों की (सफलता या असफलता) निर्भर करती है।

● एतत् योनीनि भूतानि सर्वाणि इति उपधारय।
अहम् कृत्स्नस्य जगतः प्रभवः प्रलयः तथा॥७.६॥

इस प्रकार सभी धरती पर जन्म लेने वाले प्राणियों की (सफलता और असफलता) निर्भर करती है इन दोनों पर, अर्थात पृथ्वी लोक और अन्य लोक पर। (तथा) और मैं (ही) इस सृष्टि का आरंभ करने वाला हूँ। और सम्पूर्ण जगत का (मैं ही) विनाश करने वाला हूँ।

● परः तस्मात् तु भावः अन्यः अव्यक्तः अव्यक्तात् सनातनः।
यः सः सर्वेषु नश्यत्सु न विनश्यति॥८.२०॥

किन्तु ईश्वर द्वारा हर दिन निर्माण करने के बाद भी एक और निर्माण है और वह है अन्य लोक। वह लोक जहाँ मनुष्य मृत्यु के बाद फिर जीवित किए जाएंगे और फिर वहाँ अन्त काल तक रहेंगें। जो न दिखाई देने वाली से अधिक न दिखाई देने वाली है। सदा स्थित रहने वाली है। और वह जो सारे प्राणियों के मृत्यु पर भी जिसका विनाश नहीं होगा।

● वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानि गृहणति नरः अपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णानि अन्यानि संयाति नवानि देही॥२.२२॥

जैसे मनुष्य पुराने कपड़े त्याग देता है और दूसरे नये कपड़े धारण करता है। वैसे ही यह रुह पुराना शरीर त्याग कर नया शरीर दूसरे लोक में धारण करती है।

● पार्थ न एव इह न अमुत्र विनाशः तस्य विद्यते।
न हि कल्याण-कृत् कश्चित् दुर्गतिम् तात गच्छति॥६.४०॥

हे अर्जुन, न इस संसार में और न अन्य लोक में (सत्य कर्म करने वाले) व्यक्ति का विनाश होता है। मेरे प्यारे (अर्जुन) लोगों का कल्याण करने वाला व्यक्ति निःसंदेह कभी नरक के स्थान को नहीं पाता।

● यज्ञ-शिष्ट अमृत-भुजः यान्ति ब्रह्म सनातनम्।
न अयम् लोकः अस्ति अयज्ञस्य कुतः अन्यः कुरु-सत्-तम॥४.३१॥

अपनी प्रार्थना के फल स्वरुप (ईश्वर की प्रार्थना करने वाले पाते हैं ईश्वर की सदा रहने वाला

स्वर्ग, और अमर जीवन का आनंद। हे कुरु श्रेष्ठ (अर्जुन) जो ईश्वर की प्रसन्नता के लिए प्रार्थना नहीं करते हैं उन्हें इस संसार में शांति नहीं मिलती है। यदि इस संसार में शान्ति नहीं मिलती है तो) मृत्यु के बाद के जीवन में शान्ति कहाँ से मिलेगी।

- अज्ञः च अश्रद्दधानः च संशय आत्मा विनश्यति।
न अयम् लोकः अस्ति न परः न सुखम् संशय आत्मनः ।।४.४०।।

वह जिसे ईश्वरी ग्रंथ का ज्ञान नहीं और (वह) जिसकी ईश्वर में श्रद्धा नहीं और वह लोग जो ईश्वर और उसके अवतरित ज्ञान में संदेह (शक) करते हैं। उनका विनाश होगा। ऐसे संदेह करने वाले लोगों का न इस लोक (पृथ्वी) में भला होगा। न अन्य लोक में भला होगा और इन्हें न कहीं सुख मिलेगा।

प्रलय के दिन फिर जीवित होने से सम्बन्धित श्लोक इस प्रकार है।

इदम् ज्ञानम् उपाश्रित्य मम साधर्म्यम् आगता:।
सर्गे अपि न उपजायन्ते प्रलये न व्यथन्ति च।।१४.२।।

इस ज्ञान के सहारे जीवन व्यतीत करने से व्यक्ति) मेरी इच्छा के अनुसार स्वभाव को प्राप्त कर लेता है। और फिर न ही इस संसार में और न ही प्रलय के दिन फिर से जीवित किए जाने के बाद भी उसे किसी प्रकार की कठिनाई होगी।

- सर्वभूतानि कौन्तेय प्रकृतिम् यान्ति मामिकाम्।
कल्प-क्षये पुन: तानि कल्प-आदौ विसृजामि अहम्।।९.७।।

हे कुन्ती पुत्र (अर्जुन) मैंने ब्रह्मांड के आरम्भ में इन सारे (मनुष्यों) को निर्माण किया है। और ब्रह्माण्ड के अंत (प्रलय) के समय मेरी इच्छा से ईश्वरीय प्रकृति के द्वारा सारे मनुष्य दुबारा (उठाए) जाऐंगे। (जीवित किए जाएंगे)

- प्रकृतिम् स्वाम् अवष्टभ्य विसृजामि पुन: पुन:।
भूत-ग्रामम् इमम् कृत्स्नम् अवशम् प्रकृते: वशात्।।९.८।।

मेरी अपनी प्रकृति के सहारे प्राणियों के विभिन्न समुदाय का बार-बार निर्माण कर रहा हूँ। इसी प्रकार इन सबका प्रलय के समय दुबारा अवश्य निर्माण करुंगा। कारण कि यह मेरी निर्माण करने वाली प्रकृती के वश में है।

- शरीयम् यत् अवाप्नोति यत् च अपि उत्क्रामति ईश्वर:
गृहीत्वा एतानि संयाति वायु: गन्धान् इव आशयात्।।१५.८।।

मनुष्य जो शरीर मृत्यु के समय छोड़ जाता है, नि:संदेह प्रलय के दिन उसे दोबारा प्राप्त करता है। वह शरीर जिससे आत्मा दूर हो जाती है, ईश्वर उसे लाता है कर्मो का हिसाब लेने के स्थान पर इसी तरह जिस तरह वायु स्थानांतरण करती है सुगंध का।

- श्रोत्रम् चक्षु: स्पर्शनम् च रसनम् घ्राणम् एव च।
अधिष्ठाय मन: च अयम् विषयान् उपसेवते।।१५.९।।

कान, आँख, स्पर्श का एहसास, और जीभ, नाक और मन (बुद्धि)। नि:संदेह यह सब फिर से जीवित हो जाते हैं। इस तरह मनुष्य फिर से मन को अच्छा लगने वाली वस्तुओं का आनंद ले सकता है।

- उत्क्रामन्तम् स्थितम् वा अपि भुञ्जानम् वा गुण-अन्वितम्।
विमूढा: न अनुपश्यन्ति पश्यन्ति ज्ञान-चक्षुष:।।१५.१०।।

मरने के बाद प्रलय के दिन दोबारा स्थित जीवित होना, और वस्तुओं से आनंद लेना या मरे हुए शरीर का सम्बन्ध गुणों से होना, यह सारी बातें मूर्ख और अज्ञानी कभी नहीं समझ सकते। बल्कि इन्हें केवल ज्ञान की आँखे रखने वाले लोग ही देख सकते हैं।

ईश्वर प्रलय के दिन कर्मो का हिसाब लेगा।

- न आदत्ते कस्यचित् पापम् न च एव सु-कृतम् विभु:
अज्ञानेन आवृत्तम् ज्ञानम् तेन मुह्यन्ति जन्तव:।।५.१५।।

अज्ञानता ने मनुष्य के ज्ञान को घेर लिया है। जिसके कारण मनुष्य मोहित हो गया है भ्रम में है

और कल्पना करता है कि वह ईश्वर जो सर्वव्यापी है वह न किसी के अच्छे कर्म स्वीकार करेगा और न पापों का दंड देगा।

पवित्र कुरआन की अन्य लोक से सम्बंधित आयते निम्नलिखित है-

● इसी ज़मीन से हमने तुमको पैदा किया है। इसी में हम तुम्हें वापस ले जाएँगे और इसी से तुमको दुबारा निकालेंगे। (पवित्र कुरआन,सूरे ताहा २० आयत.५५)

● तुम्हारा ईश्वर बस एक ही ईश्वर है। मगर जो लोग आखिरत (अन्य लोक) को नहीं मानते उनके दिलों में इन्कार बसकर रह गया है और वे घमण्ड में पड़ गए हैं। (पवित्र कुरआन,सूरे अन नहल१६. आयत नं.२२)

● (ईश्वर ने पवित्र कुरआन में कहा कि) वास्तव में यह कुरआन वह मार्ग दिखाता है जो सबसे सीधा है और उन मोमिनों को, जो अच्छे कर्म करते है, शुभ सूचना देता है कि उनके लिए बड़ा बदला है। और जो लोग आखिरत (अन्य लोक) को न माने, उन्हें यह सूचना देता है कि उनके लिए हमने दर्दनाक अज़ाब (यातना) तैयार रखा है। (पवित्र कुरआन,सूरे बनी इस्राईल१७.आयत ९-१०)

● और यह दुनिया की ज़िन्दगी कुछ नहीं है मगर एक खेल और दिल का बहलावा। वास्तविक ज़िन्दगी का घर तो आखिरत का घर है। काश! ये लोग जानते। (पवित्र कुरआन,सूरे अनकाबूत २९,आयत६४)

● और यदि तुम ईश्वर और उसके पैगम्बर और (अन्य लोक) आखिरत में घर के इच्छुक हो तो जान लो कि तुममें से जो उत्तमकार हैं ईश्वर ने उनके लिए बड़ा बदला तैयार कर रखा है। (पवित्र कुरआन,सूरे अल-अहजाब३३,आयत२९)

इस प्रकार मृत्यु के बाद एक अनन्त जीवन है। उस जीवन में सफल होने के लिए हमें संघर्ष करना चाहिए।

****

N-5 कर्मफल कि आशा क्यों नहीं करना चाहिए?

● मनुष्य फल की आशा में ही कर्म करता है। किन्तु भगवद् गीता में दर्जनों श्लोक में लिखा है की कर्मफल की आशा न करो। या नि:स्वार्थ कर्म करो। ऐसा क्यों? पुण्य की लालच में मनुष्य सत्कर्म क्यौं न करे?

यह बहुत कठिन प्रश्न हैं। सरलता से इसे समझने के लिए निम्नलिखित कथा पढ़िए।

● यहूदी समुदाय में एक ऋषि थे। उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना की, ''हे ईश्वर, आप मुझे संसार की चिंताओं से मुक्त कर दीजिए, ताकि मैं दिन रात आपकी भक्ति किया करुँ।'' ईश्वर ने उनकी प्रार्थना सुन ली। उनको एक द्वीप पर पहुंचा दिया। द्वीप पर एक झरना जारी कर दिया और एक फल का पेड़ उगा दिया।

वे ऋषि रोज़ फल खाते, झरने का पानी पीते और दिन रात ईश्वर की भक्ति में मग्न रहते।

पाँच सौ वर्ष तक वह ईश्वर की बिना पाप किए भक्ति करते रहे। उनकी मृत्यु के बाद जब फरिश्तों ने उनको ईश्वर के सामने उपस्थित किया तो ईश्वर ने कहा कि, ''मैं अपनी कृपा से तुझे क्षमा करता हूँ और स्वर्ग प्रदान करता हूँ।''

ऋषि को आश्चर्य हुआ। उन्होंने अपने मन में विचार किया कि स्वर्ग तो मुझे मेरी ५०० वर्ष की भक्ति के कारण मिलना चाहिए। ईश्वर के कृपा की क्या आवश्यकता थी।

ईश्वर तो मन के भाव को भी जानता है। उसने फरिश्तों को कहा कि, ''ऋषि को स्वर्ग की ओर ले जाओ किन्तु पैदल।''

(भगवद् गीता के श्लोक नं. ८.१६ का अर्थ है की स्वर्ग के चारों और नरक है। और श्लोक नं. ८.२४ का अर्थ है कि स्वर्ग के मार्ग उज्वलित होंगे।) नरक के उपर स्वर्ग जाने के लिए जो पुल है उसे इस्लामिक ग्रंथों में पुल-सीरात कहा गया है।

ऋषी को नरक के उपर से स्वर्ग में जाना था। जैसे जैसे नरक निकट आती गई, गर्मी बढ़ती गई। गर्मी से ऋषि का गला सुख गया और बहुत जोर से प्यास लगी। तभी एक हाथ प्रकट हुआ जिसने एक ग्लास पानी पकड़ रखा था। उसने पुछा, ''पानी खरीदोगे।'' ऋषि की जान जा रही थी। उसने पुछा कि, ''क्या किमत है?'' आवाज आई, ''५०० सौ वर्ष की भक्ति।''

ऋषि के पास ५०० सौ वर्ष की भक्ति तो थी ही, तुरन्त उसने भक्ति देकर पानी लेकर पी लिया।

जब फरिश्तों ने ऋषि को पुण्य से खाली पाया तो फिर ईश्वर के पास ले आए।

ईश्वर ने कहा, ''तुमने स्वयम् एक ग्लास पानी का मूल्य ५०० सौ वर्ष की भक्ति निश्चित किया है। ५०० वर्ष तक मैं तुम्हें हर दिन पीने के लिए पानी, खाने के लिए फल देता रहा। उसका आभार तुमने कैसे व्यक्त किया इसका हिसाब दो।''

ऋषि सजदे में गिर गए और कहा ''नि:संदेह! हे ईश्वर, जिसे आप अपनी कृपा से स्वर्ग देंगे, केवल वही स्वर्ग प्राप्त कर सकता है।''

● पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने अपने

साथियों से कहा, तुममें से कोई भी अपने सत्कर्म के कारण स्वर्ग में नहीं जाएगा। कुछ साथियों ने पुछा, ''हे पैगम्बर साहब, आप भी?'' पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, ''मैं भी सत्कर्म के कारण स्वर्ग में नहीं जा सकता। मैं ईश्वर की कृपा से ही स्वर्ग में जा सकता हूँ।''

(सही बुखारी-६०९९, सही मुस्लिम-२८१८)

ऐसे पैगम्बर जो जीवन में कभी पाप नहीं करते, जब वह भी अपने पुण्य के सहारे स्वर्ग प्राप्त नहीं कर सकते हैं, तो साधारण व्यक्ति के पास पुण्य होता ही कितना है जो उसे स्वर्ग मिलेगा।

ईश्वर की हम पर इतनी कृपा होती है कि हम उसका पूरी तरह से आभार नहीं व्यक्त कर सकते या मान सकते हैं। हवा, पानी, प्रकाश, और अच्छा स्वास्थ। ईश्वर की यह वह अनमोल उपहार हैं, कृपा हैं जिसका मोल हम प्रार्थना द्वारा या आभार व्यक्त करके कभी नहीं दे सकते। इसलिए हमें स्वर्ग भी ईश्वर की कृपा से ही मिलेगा। इसी कारण जो मुक्ति के लिए सबसे मुख्य वस्तु है वह है ईश्वर की प्रसन्नता और कृपा न की पुण्य।

इसी विषय में कुछ श्लोक इस प्रकार हैं।

म्सर्व कर्माणि अपि सदा कुर्वा ण: मतत्व्यपाश्रय:।
मतत्प्रसादात् अवाप्नोति शाश्वतम् पदम् अव्ययम्॥१८.५६॥

किन्तु (सच तो यह है कि) सभी सत्कर्मों को मेरे सहारे करने वाला, मेरी कृपादृष्टी (से ही) (स्वर्ग का) सदैव स्थित रहने वाला अविनाशी स्थान पा सकता है।

मत्—मना: भव मत् भक्त: मत् याजी माम् नमस्कुरु।
माम् एव एष्यसि युक्त्वा एवम् आत्मानम् मत-परायण: ॥९.३४॥

मुझे अपने मन में रखो। मेरे भक्त बन जाओ। मेरी प्रार्थना करो। मुझे नमस्कार (सजदा) करो। अपने आपको (मेरी प्रार्थना में) व्यस्त रखो। नि:संदेह, इस तरह मेरे सहारे (तुम) मुझे पा लोगे।

मत प्रसादात और मत परायण यही हमारे मुक्ति का रास्ता हैं। पुण्य नहीं। इस कारण पुण्य की लालच ना करते हुए नि:स्वार्थ कर्म करना चाहिए।

****

N-6 धार्मिक ग्रंथों में संगम का अर्थ क्या है?

● नालन्दा विशाल शब्द सागर कोश में पेज नं. १३७३ पर संगम के चार अर्थ लिखे हैं। वह इस प्रकार है।

१. सम्मेलन
२. वह स्थान जहाँ दो नदियाँ मिलती हैं
३. साथ, सोहबत
४. दो या अधिक वस्तुओं का एक साथ मिलना।

● धार्मिक ग्रन्थों में संगम का अर्थ है (शिर्क) ''अर्थात एक ईश्वर की प्रार्थना के साथ किसी और की प्रार्थना भी करना''। भगवद् गीता में इससे १९ बार मना किया गया है। उन श्लोकों के नं. निम्नलिखित हैं।

२.४८, ३.९, ४.२३, ५.१०, ५.११, ८.२२, ९.१५, ९.२२, ९.३०, ११.५५, १२.६, १२.१८, १३.११, १४.२६, १५.३, १५.५, १८.९, १८.२३, १८.२६.

भगवद् गीता का श्लोक नं. २.४८ इस प्रकार है।

● योगस्थ: कुरु कर्माणि सड् म् त्यक्त्वा धनजय।
सिद्धि-असिद्धयो: सम: भुत्वा समत्वम् योग: उच्यते ॥२.४८॥

(उच्यते) ईश्वर ने कहा *(धनंजय)* हे अर्जुन (संगम) संगम (त्यकत्वा) छोड़ दो (कर्माणि) अपने कर्तव्य का पालन करो (योगस्थ) ईश्वर के संपर्क में रहो। (सिद्धि) सफलता और (असिद्धयो) विफलता में (सम:) धैर्य से एक समान (भूत्वा) रहो। (समत्वम-योग) ऐसा करना धैर्य (कर्म) द्वारा ईश्वर की प्रार्थना है।

ईश्वर कहा, हे अर्जुन संगम छोड़ दो। अपने कर्तव्य का पालन करो। ईश्वर के संपर्क में रहो। सफलता और विफलता में धैर्य के साथ एक समान रहो। ऐसा करना धैर्य (कर्म) द्वारा ईश्वर की प्रार्थना है।

● अन्य श्लोक आप स्वयम् इस पवित्र पुस्तक में पढ़ लीजिए।

● ईश्वर ने पवित्र कुरआन में निम्नलिखित शब्दों में 'संगम' की निन्दा की है।

''नि:संदेह ईश्वर इसको क्षमा नहीं करेगा कि उसका सहभागी ठहराया जाए। और उसके सिवा जो कुछ पाप मनुष्य करता है उसे जिसके लिए चाहेगा क्षमा कर देगा और जो कोई ईश्वर का सहभागी ठहराए, उसने बहुत बड़ा पाप किया है।'' (पवित्र कुरआन अन-निसा,४, आयत नं.४८)

सहभागी ठहराना का अर्थ है। किसी और को भी ईश्वर कहना या किसी की ईश्वर की तरह प्रार्थना करना। इसको 'शिर्क' या 'संगम' भी कहते हैं।

****

N-7 योग का अर्थ क्या है?

नालन्दा विशाल शब्द सागर कोश पेज नं. ११४४ में योग शब्द के ३८ अर्थ लिखे है। वह निम्नलिखित हैं :-

संयोग, मिलान, मेल, **दूत**, उपाय, तरकीब, ध्यान, संगति, प्रेम, औषध, धन, लाभ, फायदा, न्यायिक, नाम, कौशल, चतुराई, परिणाम, नतीजा, नियम, कायदा, उपयुक्तता, नाव आदि की सवारी, उपयुक्तता, साम-दाम-दंड और भेद यह चारों उपाय, सम्बन्ध, सूत्र, सद्भाव, धन और सम्पत्ति प्राप्त करना और बढ़ाना, कोई शुभ काल, मेलमिलाप, वैराग्य।
(नालंदा विशाल शब्दसागर पेज नं. ११४४)

स्वामी मुकुन्दानन्द ने श्लोक नं. ४.४१ की व्याख्या में लिखा है कि योग का अर्थ है "To unite with God"
(www.holybhagavad.gita.org)

सरल शब्दों में इसका अर्थ है प्रार्थना या ध्यान द्वारा ईश्वर की याद से जुड़ना।

योग का एक अर्थ 'दूत' भी है। इस कारण 'योगेश्वर' का अर्थ हुआ 'ईश्वर का दूत'। यह शब्द श्लोक नं. १८.७८ में श्री कृष्ण जी के लिए कहा गया है।

****

N-8 काम भावना क्या है?

● स्वामी राम सुखदास जी ने श्लोक नं. ३.३७ की व्याख्या में लिखा है कि "मेरी मन चाही हो" यही काम है। और लिखा है, "यह मुझे मिल जाए"। इस प्रकार की इच्छा काम कहलाती है।

● स्वामी मुकुन्दानन्दजी इसी श्लोक नं. ३.३७ की व्याख्या में लिखते हैं, "वेदों में काम शब्द का उपयोग केवल यौन इच्छा के लिए नहीं उपयोग हुआ है, बल्कि यह शरीर से जुड़े सभी प्रकार के आनंद की इच्छा के लिए हुआ है।

उदाहरण के तौर पर धन की इच्छा, सत्ता की इच्छा, मान सम्मान की इच्छा, इन सभी के लिए काम शब्द का उपयोग हुआ है।
(www.holybhagwad-gita.org)

● मैंने अपनी रिसर्च से पाया कि इसका अर्थ है, "हमारी ऐसी प्रबल इच्छा कि हम उसे पूरा करने में धार्मिक नियमों को भी छोड़ दें।"

जैसे एक धार्मिक व्यक्ति ईश्वर की प्रार्थना में लगा रहता है। ऐसे ही जिसमें काम भावना प्रबल होती है वह अपनी इच्छा पूरी करने में लगा रहता है।

तो जैसे ईश्वर की प्रार्थना को ईश्वर की भक्ति कहते हैं, ऐसे ही धर्म को छोड़कर अपनी इच्छा को पूरा करने को "इच्छा भक्ति" कहते हैं। श्लोक नं. ३.३७ में इसे वैरिणम (महान शत्रु) महापाप्मा (महान पाप) महाअशन (विनाश का कारण) लिखा है।

● पवित्र कुरआन में भी इच्छा भक्ति का इन शब्दों में निषेध है।

"(हे मुहम्मद) क्या तुमने उसे देखा जिसने अपना ईश्वर (पुज्य) अपनी (तुच्छ) इच्छा को बना रखा है? तो क्या तुम उस (को सीधे मार्ग पर लाने) के जिम्मेदार हो सकते हो?

क्या तुम समझते हो कि इनमें अधिकतर सुनते या समझते हैं? ये तो बस चौपायों की तरह है बल्कि ये और बढ़ कर मार्ग से भटके हुए हैं।"
(पवित्र कुरआन, सूरह अल-फ़ूरकान-२५,आयत-४३-४४)

● अर्थात धर्म को भूल कर अपनी इच्छा को पूरा करने में लगे मनुष्य जानवर की तरह होता है। इन्हें सत्य के मार्ग पर पैगम्बर भी नहीं ला सकते।

****

N-9 श्लोक नं. २.१७ का स्पष्टीकरण

● श्लोक नं. २.१७ को समझने के पहले हमको श्री कृष्ण जी के अस्तित्व को समझना चाहिए।

श्री कृष्ण जी को समझने के लिए हम भगवद् गीता के निम्नलिखित श्लोकों का अध्ययन करते हैं।

● अर्जुन उवाच,
किम् तत् ब्रह्म किम् अध्यात्मम् किम् कर्म पुरुष-उत्तम।
अधि-भूतम् च किम् प्रोक्तम् अधि-दैवम् किम् उच्यते॥८.१॥

अर्जुन ने कहा, वह ईश्वर कौन है? आत्मा क्या है? पुरुष उत्तम (ईश्वर के) काम क्या हैं? और सभी प्राणियों का ईश्वर किसे कहते हैं? देवताओं का ईश्वर किसे कहते हैं?

● श्री भगवान उवाच,
अक्षरम् ब्रह्म परमम् स्वभाव: अध्यात्मम् उच्यते।
भूत-भाव-उद्भव-कर: विसर्ग: कर्म संज्ञित:॥८.३॥

ईश्वर ने कहा, महान अविनाशी (ॐ) को ब्रह्म (ईश्वर) कहते हैं। मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तित्व) है उसे आत्मा कहते हैं। प्राणियों के स्वभाव की रचना करना और (उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के) कर्म (उनको) प्रदान करना (इसे ईश्वर का) कर्म कहा जाता है।

इस व्याख्या से जो बात समझ में आती है वह यह है कि भगवद् गीता में निरंकार ईश्वर के होने की स्पष्ट श्रद्धा है।

● भगवद् गीता का एक श्लोक इस प्रकार है,

अधिभूतम् क्षर: भाव: पुरुष: च अधिदैवतम्।
अधियज्ञ: अहम् एव अत्र देहे-भृताम् वर॥८.४॥

हे देहधारियों में श्रेष्ठ (अर्जुन)! (मैं) सारे प्राणियों का ईश्वर हूँ। और मनुष्य नाश होने वाली प्रकृति वाला (नाशवान) है। मैं (ही) देवताओं का ईश्वर हूँ। सारी प्रार्थनाएं केवल मेरे लिए हैं। नि:संदेह उस शरीर पर (मेरा ही राज है)।

अर्थात जब भी अर्जुन ने ईश्वर के विषय में प्रश्न किया तो श्री कृष्ण जी ने ऐसा कभी नहीं कहा कि मैं ही ईश्वर हूँ। बल्की श्री कृष्ण जी ने हमेशा ईश्वर के अनेक गुणों का और महानता का वर्णन किया।

● एवम् एतत् यथा आत्थ त्वम् आत्मानाम् परम-ईश्वर
द्रष्टुम् इच्छामि ते रुपम् ऐश्वरम् पुरुष-उत्तम॥११.३॥

(उत्तम पुरुष) हे महापुरुष (श्री कृष्ण) (यथा) जिस तरह (आत्मानम) स्वयम (त्वम्) आपने (ऐश्वरम) ईश्वर (की) (परम) महानता (का प्रमाण देने) (एतत) इन (ईश्वर की दिव्य सांसारीक निर्माण के) (आत्थ) (बारे में) कहा (एवम्) इसी तरह से आपसे (एश्वरम्) ईश्वर की (रुपम्) आध्यात्मिक रचना को (द्रष्टुम्) देखने का (इच्छामि) इच्छुक हूँ।

हे महापुरुष (श्री कृष्ण) जिस तरह स्वयम आपने ईश्वर (की) महानता (का प्रमाण देने) इन (ईश्वर की दिव्य सांसारीक निर्माण के) (बारे में) कहा इसी तरह मैं आपसे ईश्वर की आध्यात्मिक रचना को देखने का इच्छुक हूँ।

इस श्लोक से हमें यह बात समझ में आती है कि अर्जुन भी ईश्वर को और श्री कृष्ण जी के अस्तित्व को अलग-अलग मानते थे। उन्होंने श्री कृष्ण जी को पुरुष-उत्तम कहा और ईश्वर को परम ईश्वर कहा।

● वृष्णीनाम् वासुदेव: अस्मि पाण्डवानाम् धनञ्जय:।

मुनीनाम् अपि अहम् व्यास: कवीनाम् उशना कवि: ॥१०.३७॥

(ईश्वर ने कहा मैं) वृष्णी की पीढ़ी में वासुदेव यानी कृष्ण हूँ। पाण्डवों में अर्जुन हूँ। मुनि लोगों में व्यास मैं हूँ। कवियों में उशना कवी हूँ।

अर्जुन की विनती पर ईश्वर ने अपनी महान रचनाओं का वर्णन श्लोक नं. १०.२० से १०.३६ में किया। और अंत में कहा कि मैं श्री कृष्ण, अर्जुन और वेद व्यास हूँ। अर्थात यह भी मेरी महान रचनाएँ हैं। इनको देखकर मेरी महानता का एहसास करो।

इस श्लोक से यह बात भी समझ में आती है कि अर्जुन और वेद व्यास जी के समान श्री कृष्ण जी को भी ईश्वर ने ही बनाया है।

● बहुनाम जन्मनाम् अन्ते ज्ञात-वान् माम् प्रपद्यते।
वासुदेव: सर्वम् इति स: महा-आत्मा सु-दुर्लभ:।।१९।।

इस तरह मृत्यु तक सारे कर्मों को (केवल) मेरे सहारे पर करने वाले कृष्ण के जैसा बहुत सारे जन्म लेने वाले ज्ञानियों में अत्यंत दुर्लभ है।

इस श्लोक में ईश्वर ने श्री कृष्ण जी की प्रशंसा की है।

● श्री विष्णु पुराण ५/३३/१२ में श्री कृष्ण ने कहा,

नाह देवो न गन्धर्वो न यक्षो न च दानव:।
अहं वो बान्धवों जाती नैताच्चिन्त्यमितोहन्यथ।
(श्री विष्णु पुराण ५/२३/१२)

(श्री कृष्ण जी ने कहा) मैं न देव हूँ न गन्धर्व हूँ, न यक्ष हूँ और न दानव हूँ। मैं तो आपके बन्धु (दोस्त) स्वरुप से ही उत्पन्न हुआ हूँ। आप लोगों को इस विषय में और कुछ विचार न करना चाहिए।

इस श्लोक में श्री कृष्ण जी ने भी अपने आपको मनुष्य कहा है।

● संजय उवाच,
यत्र योग-ईश्वर: कृष्ण: यत्र पार्थ: धनु: धर:।
तत्र श्री: विजय: भूति: ध्रुवा: नीति: मति: मम।।७८।।

संजय ने कहा, जहाँ ईश्वर से सम्पर्क रखने वाले योगेश्वर कृष्ण हैं और जहाँ धनुष रखने वाले पार्थ (अर्जुन) हैं, वहाँ पूर्णतया सुख और शान्ति विजय अच्छा भाग्य, सही नीति और धैर्य होगा। ऐसा मेरा मानना है।

इस श्लोक में संजय ने श्री कृष्ण जी को योग-ईश्वर कृष्ण कहा, वह ईश्वर कृष्ण भी कह सकते थे। किन्तु वह जानते थे की श्री कृष्ण जी योगेश्वर हैं।

नालन्दा विशाल शब्द कोश में योग के ३८ अर्थ लिखे हैं। जिसमें एक अर्थ है जुड़ना या मिलना है और दुसरा अर्थ दूत है। (पेज नं. ११४४)

इस प्रकार 'योग-ईश्वर' का अर्थ 'ईश्वर का दूत' हुआ। श्लोक नं. ११.९ में भी श्री कृष्ण जी को महा-योग ईश्वर कहा गया है।

संजय उवाच,
एवम् उक्त्वा तत: राजन् महा-योग-ईश्वर हरि:।
दर्शयामास पार्थाय परमम् रुपम् ऐश्वरम् ॥११.९॥

(संजय उवाच) संजय ने कहा (राजन) हे राजन (धृतराष्ट्र) (एवम्) इस तरह (उक्त्वा) कहते हुए (योग-ईश्वर) योग-ईश्वर (महा) महान (हरि:) श्री कृष्ण (आस) के स्थान से (तत) उस (ईश्वर ने) (पार्थाय) पार्थ (अर्जुन को) (ऐश्वरम्) ईश्वर द्वारा निर्माण कि गई। (परमम्) महान (रुपम्) रचनाओं को (दर्शयामास) दिखाया।

संजय ने कहा, हे राजन (धृतराष्ट्र)! इस तरह कहते हुए योग-ईश्वर महान श्री कृष्ण के स्थान से उस (ईश्वर ने) पार्थ (अर्जुन को) ईश्वर द्वारा

निर्माण की गई महान रचनाओं को दिखाया।

इस प्रकार इस श्लोक में भी श्री कृष्ण जी को ईश्वर का दूत कहा गया है।

● पैगंबर मुहम्मद (स.) ने कहा, भारत में ईश्वर के एक दूत हुए हैं जिनका श्याम रंग था और नाम कहान था।

(Taarikh-i-Hamdaan Dailami, Chapter Al-kaaf, P-854 by Malik Abdur Rahaman Khadim)

श्री कृष्ण जी का एक नाम 'कान्हा' है। और आपका रंग सावला था।

भगवद् गीता का परिचय

बायबल में लिखा है प्रोफेट डेविड ने कहा,

"स्थिर रहो, और इस बात को जानो कि मैं ईश्वर हूँ।"(Oremns Bible : Pslam 49.10)

लोग जानते थे कि यह आकाशवाणी है और ईश्वर के शब्द हैं। इसलिए किसी ने प्रोफेट डेविड को ईश्वर नहीं कहा।

इसी प्रकार पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, "नि:संदेह मैं ही ईश्वर हूँ, मेरे अतिरिक्त दूसरा कोई ईश्वर नहीं है, इस कारण केवल मेरी प्रार्थना करो।" (पवित्र कुरआन, सूरे ताहा-२०, आयत नं.१४)

जब पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) ने यह शब्द कहे तो किसी ने नहीं कहा कि पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) ही ईश्वर हैं। सब जानते थे कि यह आकाशवाणी है और ईश्वर के शब्द हैं। पैगंबर मुहम्मद साहब (स.) केवल उसे मानवजाति को अपने मुख से कहकर सुना रहे हैं।

इसी प्रकार यह भगवद् गीता ईश्वर की वाणी है। जिसे श्री कृष्ण जी ने कुरुक्षेत्र की रणभूमि पर अर्जुन से कहा था और महाऋषि वेद व्यास जी ने लिखकर सारे मानवजाती तक पहुंचा दिया।

● गीता का एक श्लोक इस प्रकार है।

य: माम् अजम् अनादिम् च वेत्ति लोक महा-ईश्वरम्।
असम्मूढ: स: मर्त्येषु सर्व-पापै: प्रमुच्यते।।३।।

जो मुझे अजन्मा, अनादि (आरंभ के बिना) और ब्रह्माण्ड का महान ईश्वर मानता है वह मूर्ख नहीं है मृत्यु के बाद (वह) सर्व पापों से भी मुक्त हो जाएगा।

यह शब्द श्री कृष्ण जी ने अपने मुख से कहे थे किन्तु कही गई बात से हम समझ सकते है कि यह ईश्वर की वाणी हैं। क्योंकि श्री कृष्ण जी अजन्मे नहीं है। आपका जन्म वासुदेव जी के घर हुआ था और मृत्यु जारा का गलती से तीर लगने से हुई।

● तो यह भगवद् गीता ईश्वर की वाणी है जिसे ईश्वर ने श्री कृष्ण के द्वारा अर्जुन से कहा था। संस्कृत महापंडीत श्री सुंदरलाल जी ने अपनी पुस्तक "गीता और कुरआन" के पेज नं. १०२ पर लिखा है की ज्ञानियों के अनुसार कुरुक्षेत्र की रणभूमि में ईश्वर ने अर्जुन को श्री कृष्ण के माध्यम से लगभग १०० आदेश दिए थे। जिसे तुरंत नहीं लिखा गया था। युद्ध के बाद वेद व्यास जी ने इसे साधारण लोगों के समझने के लिए १८ अध्याय और ७०० श्लोकों में विस्तार से लिखा है।

● सनातन धर्म में ईश्वर में श्रद्धा के स्पष्ट आदेश हैं और श्री कृष्ण जी स्वयम् योगेश्वर हैं। अर्थात ईश्वर के दूत हैं। इस कारण श्लोक नं. २.१७ में आपने ईश्वर का वर्णन किया।

****

N-9.1 श्लोक नं. २.१२ और ४.५ का अर्थ क्या है?

श्लोक नं. २.१२ और ४.५ इस प्रकार है।

- न तु एव अहम् जातु न आसम् न त्वम् न इमे जन-अधिपाः ।
न च एव न भविष्यामः सर्वे वयम् अतः परम् ।।२.१२।।

(ऐसा कोई) काल न था जब मैं (धर्म का उपदेश देने वाला) ना रहा हूँ, और ऐसा कोई काल न था जब तुम (जैसे धर्म स्थापना करने वाले न रहे हो), और कोई ऐसा काल न था जब मानवजाति पर अत्याचार करने वाले यह राजा लोग ना थे और इसके आगे भविष्य काल में भी ऐसा कोई युग ना होगा जब हम सब न रहेंगे।

- बहूनि मेव्यतीतानि जन्मानि तव च अर्जुन।
तानि अहम् वेद सर्वाणि त्वम् वेत्थ परन्तप।।४.५।।

ईश्वर ने कहा, हे अर्जुन! मैं और तुम इस धरती पर बहुत बार संसार के सम्मुख आ चुके हैं मैं उन सबको जानता हूँ। किन्तु तुम उन सबको नही जानते।

पवित्र वेदों में पुर्नजन्म की शिक्षा नहीं है। पुन: का अर्थ है दोबारा या फिर से। और प्रलय के दिन यह कैसे होगा इसका वर्णन श्लोक नं. १५.८, १५.९, १५.१० और १५.११ में है।

निम्नलिखित वर्णन से हम यह समझ सकते हैं कि २.१२ और ४.५ में पुर्नजन्म की शिक्षा नहीं है।

- महाभारत के युग में दुर्योधन राजकुमार था। उसके कर्म ऐसे न थे कि हर जन्म में उसे बार बार राजकुमार का जीवन मिले। पुर्नजन्म के सिद्धान्त के अनुसार पापियों को अगले जन्म में कीड़े मकोड़े या जानवर का जीवन मिलता है। तो हर युग में दुर्योधन राजकुमार बनकर युद्ध नहीं कर सकता।

- वेद व्यास जी ने लिखा है कि महाभारत के अन्त में सभी पांडव भाईयों को स्वर्ग प्राप्त हुआ था। भगवद् गीता में लिखा है कि एक बार स्वर्ग प्राप्त होने के बाद दोबारा फिर कोई धरती पर नही आता। तो अर्जुन हर युग में धरती पर युद्ध करने क्यों आएंगे।

- श्लोक नं. ४.६ और ४.९ में ईश्वर ने कहा कि मैं अजन्मा हूँ। अर्थात मैं, जन्म नहीं लेता। तो हर युग में ईश्वर भी जन्म नहीं लेंगे।

- श्लोक नं. २.१२ और ४.५ का अर्थ है कि, हर युग में श्री कृष्ण जैसे मानवता की रक्षा करने वाले महापुरुष होंगे। हर युग में अर्जुन की तरह महापुरुषों के साथ अन्याय के विरुद्ध लड़ने वाले योद्धा होंगे।

और हर युग में दुर्योधन की तरह सत्ता पर कब्जा करके साधारण मनुष्यों का शोषण करने वाले और अत्याचार करने वाले लोग होंगे और हर युग में इनका संघर्ष होगा और जैसे अर्जुन कम सेना के पश्चात भी विजयी हुए। इसी प्रकार हर युग में सत्य के लिए और धर्म की स्थापना के लिए युद्ध करने वाले कम संख्या में होने के पश्चात भी विजयी होंगे।

****

N-10 भगवान शब्द का अर्थ

नालन्दा विशाल शब्दसागर कोश पेज नं. १००७ पर भगवान का निम्नलिखित अर्थ लिखा है।

१. धन सम्पत्ति या ऐश्वर्यवाला
२. ईश्वर
३. पूज्य और आदरणीय व्यक्ति
४. शिव
५. विष्णु
६. कार्तिकेय
७. बुद्ध

भगवान शब्द ईश्वर और पूज्य व्यक्ति दोनों के लिए प्रयोग होता है। इसी कारण इस दिव्य पुस्तक में भी यह श्री कृष्ण और ईश्वर दोनों के लिए उपयोग हुआ है।

****

N-11 श्लोक नं. ४.४१ का स्पष्टिकरण

● पवित्र कुरआन की दो आयत इस प्रकार है।

कुछ नहीं, तुम तो (प्रलय के दिन कर्मों का) बदला दिए जाने को झुठलाते हो।

"हालाँकि तुम पर निरीक्षण करने वाले (फरिश्ते) नियुक्त हैं। (फरिश्ते) निष्ठावान हैं (और कर्मों को) लिखते जाते हैं।" (पवित्र कुरआन सूरे अल-इन-फीतार ८२:९-११)

● "उस दिन (प्रलय के दिन) लोग अलग अलग (समूह) में निकलेंगे कि उन्हें उनके कर्म दिखाए जाएं तो जो कणभर भी कोई भलाई करेगा वह उसे देख लेगा। और जो कणभर भी कोई बुराई करेगा वह उसे देख लेगा।" (पवित्र कुरआन, सूरे अल-जिलजाल ९९:६-८)

● पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, "प्रलय के दिन कोई व्यक्ति अपने स्थान से उस समय तक न हिल सकेगा जब तक वह पाँच प्रश्नों के उत्तर ना दे दें। वह पाँच प्रश्न निम्नलिखीत हैं:-

१.जीवन कैसे व्यतीत किया?
२. यौवन का कैसे उपयोग किया?
३. धन कैसे कमाया?
४. धन कहाँ खर्च किया?
५. अपने ज्ञान का क्या किया?

पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, मेरे अनुयायियों में ७०००० ऐसे होंगे जो प्रलय के दिन बिना कर्मों का हिसाब दिए स्वर्ग में जाएंगे। यह वह होंगे जो ईश्वर में दृढ श्रद्धा रखते हैं।

(हदीस: मस्नदे अहमद)

● श्लोक नं. ४.४१ इस प्रकार है।

योग संन्यस्त कर्मणम् ज्ञान सछिन्न संशयम् ।
आत्म-वन्तम् न कर्माणि निबध्नन्ति धनञ्जय।।४१।।

हे अर्जुन जो ईश्वर से जुड़ने वाली प्रार्थना करता हैं। जो अपने सत्कर्मों (के फल को) छोड़ देता है। जो ज्ञान के प्रकाश से अपने शक (संदेह) को दूर करता है। ईश्वर में दृढ़ श्रद्धा वाला ऐसा व्यक्ति कर्मों से बंधा नहीं रहता।

● इस श्लोक का अर्थ कुरआन और हदीस के प्रकाश में ऐसा है कि जिसने ज्ञान से अपने संदेह को दूर किया और ईश्वर में दृढ श्रद्धा रख कर उसकी प्रार्थना की। जिसने जीवन नि:स्वार्थ सेवा करने में व्यतीत किया। प्रलय के दिन उसके कर्म उसे स्वर्ग में जाने से नहीं बाँधेगे या नहीं रोकेंगे। वह बिना कर्मों का हिसाब दिए स्वर्ग में जाएगा।

******

N-12 भाग्य क्या है?

● यदि आप विज्ञान क्षेत्र (Science stream) के विद्यार्थी हैं तो आपने Periodic Table पढ़ा होगा। पिरीओडीक टेबल में पृथ्वी पर पाए जाने वाले सभी Element तत्त्व को एक विशिष्ट प्रकार से रखा है। इस बारे में अधिक जानकारी के लिए Wikipedia पर पिरीओडीक टेबल को समझ लें।

इस टेबल में २०१६ तक कुछ कुछ स्थान अपूर्ण (खाली) थे। और उन Element या तत्त्व का खोज नहीं हुआ थी। खोज के पहले इन तत्त्व को नाम दिया गया Ununseptium और Ununtrium और पेरीवडीक टेबल में जिस स्थान पर उनको लिखा जाना था। उस स्थान के अनुसार हम खोज के पहले ही उन तत्त्वों के बारे में सब कुछ जानते थे, जैसे उनकी Density, Boiling Temperature, Mechanical and Chemical property etc.

हम इन तत्त्वों को उनकी खोज के पहले इतनी अच्छी तरह क्यों जानते थे? क्योंकि पेरीवडीक टेबल में जिस स्थान पर उन्हें लिखा जाना था उस स्थान के तत्त्व में उन गुणों का होना अनिवार्य था। पेरीवडीक टेबल में केवल ११८ स्थान है। किन्तु ईश्वर के पास एक और Periodic Table है। उसमें इस धरती पर जितने मनुष्य जन्म लेंगे उतने स्थान हैं और हर स्थान पर जो होगा उसका जन्म, मृत्यु, और क्या भोजन करेगा? क्या व्यवसाय करेगा? क्या शिक्षा प्राप्त करेगा? इत्यादि सभी पहले से सुनिश्चित है। इसी को भाग्य कहते हैं।

● पंडीत ईश्वरचंद ने अपने संस्कृत हिन्दी शब्द कोश में (पेज नं. ५७७) में प्रकृतिः का अर्थ लिखा है माया, और सृष्टि रचना में परमात्मा की इच्छा। इसे हम दूसरे शब्दों में ऐसा कह सकते हैं कि, सृष्टि में जो कुछ होता है वह ईश्वर की इच्छा से हो रहा है और जो पहले से सुनिश्चित हैं।

इस कारण जो कुछ ईश्वर की इच्छा से पृथ्वी पर होता है उसका कारण हम 'प्रकृति' कहते हैं। और जो कुछ मनुष्य के जीवन में होता है वास्तव में वह भी प्रकृति है मगर हम दूसरे शब्द 'भाग्य' से अधिक परिचित है। तो भाग्य और प्रकृति यह ईश्वर की सुनिश्चित इच्छा हैं।

● **भगवद् गीता में भाग्य विषय में पांच श्लोक इस प्रकार हैं।**

● प्रकृतिम् पुरुषम् च एव विद्धि अनादी उभौ अपि।
विकारान् च गुणान् च एव विद्धि प्रकृति सम्भवान्॥१३.२०॥

निःसंदेह भाग्य और मनुष्य दोनों भी (eternal) अनादि ईश्वर से जानो। मनुष्य के शरीर में जो बदलाव होता है और मनुष्य में जो गुण हैं, निःसंदेह (ईश्वर की) प्राकृतिक शक्ति से उत्पन्न किए जाते हैं ऐसा जानो।

● कार्य कारण कर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिः उच्यते।
पुरुषः सुख दुःखानाम् भोक्तृत्वे हेतुः उच्यते॥१३.२१॥

ईश्वर ने कहा कर्म करने के कारण, कर्मों को करने वाला (यह सब) भाग्य के कारण होते हैं। ईश्वर यह भी कह रहा है कि मनुष्य सुख, दुख का जो अनुभव करता है उसका कारण भी भाग्य है।

● पुरुषः प्रकृतिस्थः हि भुडक्ते प्रकृति-जान् गुणान्।
कारणम् गुण-सड्: अस्य सत् असत् योनि जन्मसु॥१३.२२॥

भाग्य में विश्वास रखने वाला मनुष्य अनुभव करते हैं कि मनुष्य के गुण, और कर्म करने के कारण, भाग्य से ही उत्पन्न होते हैं। (और) मनुष्य वीर्य स्थिति से ही (सत्य) अच्छे और बुरे गुणों के साथ जन्म लेता है।

● उपद्रष्टा अनुमन्ता च भर्ता भोक्ता महा-ईश्वर:।
परम् आत्मा इति च अपि उक्त: देहे अस्मिन् पुरुष: पर:॥१३.२३॥

ईश्वर साक्षी है (अर्थात सृष्टि में आरम्भ से अन्त तक जो हो चुका और होगा वह उसे देख रहा है।) ब्रह्माण्ड में जो कुछ होता है वह उसके आदेश से होता है। और (वह) प्राणियों का पालन पोषण करता है। सारी प्रार्थनाएं उसी ईश्वर के लिए की जाती हैं। वह ईश्वर सबसे महान है। और (ईश्वर) कह रहा है कि, ''नि:संदेह वह इस शरीर वाले मनुष्य होने से परे है (महान है), और आत्मा से भी महान है।''

● य एवम् वेत्ति पुरुषम् प्रकृतिम् च गुणै: सह।
सर्वथा वर्तमान: अपि न स: भूय: अभिजायते॥१३.२४॥

इस तरह जो व्यक्ति, भाग्य को और मनुष्य को गुणों के साथ जान लेता है और हर तरफ जो कुछ हो रहा है (अर्थ जो कुछ हो रहा है वह भाग्य और ईश्वर के आदेश से हो रहा है ऐसा मान लेता है तो) नि:संदेह वह नरक में बार बार जन्म नहीं लेता उसे स्वर्ग प्राप्त होता है।

● पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, ईश्वर ने सबसे पहले कलम (Pen) को निर्माण किया। फिर ईश्वर ने कलम को लिखने का आदेश दिया। कलम ने पूछा क्या लिखूं। ईश्वर ने कहा 'भाग्य लिख।' फिर कलम ने ब्रह्माण्ड के आरम्भ से अन्त तक जो कुछ होगा सब लिख दिया।
(तिरमिजी, मुन्तखब अबवाब, वॉल्युम-१, हदीस-८८)

● ईश्वर ने कुरआन में कहा,

हमने सांसारिक जीवन में इनके बीच इनकी जीविका बाँटी है, और हमने इनमें एक को दूसरे पर दर्जों में उच्चता प्रदान की ताकि इनमें एक दूसरे से काम लेता रहे। (पवित्र कुरआन ४३:३२)

अर्थात समाज में जो मालिक है और जो नौकर है दोनों ईश्वर की आज्ञा के अनुसार हैं।

जब सब कुछ भाग्य से होता है तो हमारे पाप के जिम्मेदार हम क्यों?

भगवद् गीता के दो श्लोक इस प्रकार है;

● ईश्वर: सर्व-भूतानाम् हृत-देशे अर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन् सर्व-भूतानि यन्त्र आरुढानि मायया॥१८.६१॥

हे अर्जुन! सारे मनुष्यों के हृदय में ईश्वर स्थित है (मौजूद है)। (और वह) सभी मनुष्यों का परीक्षा लेने के लिए (उनको समय के) यन्त्र पर सवार करके घूमता रहता है।

● दैवी हि एषा गुण-मयी मम माया दुरत्यया।
माम् एव ये प्रपद्यन्ते मायाम् एताम् तरन्ति ते॥७.१४॥

नि:संदेह मेरे द्वारा (बनाई गई) इन दिव्य गुणों (पर आधारित) मेरे परीक्षा को पार करना बहुत कठिन है। (किन्तु) जो लोग मेरी शरण में आ जाते हैं वह इस परीक्षा को नि:संदेह पार कर जाते हैं।

● इस परीक्षा में मनुष्य अपना लक्ष्य बनाने, इरादा करने, और प्रयास करने में स्वतंत्र है।

और अपने लक्ष्य या इरादे के अनुसार वह जो कुछ कर्म करेगा वह पुण्य या पाप होगा। उस कर्म का परिणाम या नतीजा मनुष्य के कर्म पर नही बल्कि ईश्वर की इच्छा के अनुसार होगा।

● यही बात इस श्लोक में है।

● कर्मणि एव अधिकार: मा पलेषु कदाचन।
मा कर्म-पल हेतु: भू: मा तेसड़: अस्तु अकर्मणि।।२.४७।।

नि:संदेह! अपने कर्तव्य के पालन करने का अधिकार तुम्हे है किन्तु कार्य के परिणाम (पर तुम्हारा) कोई नियंत्रण नहीं है। न तुम अपने कर्मो के परिणाम का अपने आपको कारण या करने वाला समझो और ना तुम ऐसे विचारधारा को अपनाओ जिसमें अपने कर्तव्य को पूरा नहीं किया।

● पैगम्बर मुहम्मद साहब (स.) ने कहा, ''इरादा करना और प्रयास करना यह मनुष्य के वश में है किन्तु परिणाम ईश्वर की इच्छा के अनुसार होंगे।'' (मस्नद अहमद बिन हम्बल)

इसलिए हम जो कुछ कर्म करते हैं उस कर्म के करने के लक्ष्य और प्रयास के अनुसार वह कर्म हमारे लिए पाप या पुण्य लिखा जाएगा।

एक उदाहरण से हम भाग्य को समझने का प्रयास करते है।

दो व्यक्ति एक घर की छत पर लड़ रहे थे। क्रोध में आकर एक ने दूसरे पर गोली चला दी। दूसरे को बचाने के उद्देश्य से तीसरे ने दूसरे को धक्का दे दिया कि गोली उसे ना लगे। और गोली उसे नहीं लगी परंतु दूसरा व्यक्ति धक्के के कारण छत से नीचे गिर गया।

अब दूसरा व्यक्ति छत से गिरकर जीवित बचेगा या मर जाएगा यह उसके भाग्य के अनुसार होगा। यदि वह मर गया तो पहले व्यक्ति को हत्या का पाप मिलेगा। क्योंकि उसका लक्ष्य और प्रयास हत्या का था।

तीसरे व्यक्ति के हाथ से हत्या हुई किन्तु उसे जीवन बचाने का पुण्य मिलेगा। क्योंकि उसका लक्ष्य और प्रयास जीवन बचाना था।

इस प्रकार जो होगा वह भाग्य के अनुसार होगा और मनुष्य को उनके लक्ष्य और प्रयास के अनुसार पाप या पुण्य मिलेगा क्योंकि लक्ष्य और प्रयास में वह स्वतंत्र है। केवल परिणाम उसके वश में नहीं है।

****

N-13 यज्ञ क्या है?

● स्वामी सुखराम दास जी साधक संजीवनी में भगवद् गीता के अध्याय नं. १६ के पहिले श्लोक में 'यज्ञ' का निम्नलिखीत अर्थ लिखते हैं।

● 'यज्ञ' शब्द का अर्थ आहुति देना होता है। अत: अपने वर्णाश्रम के अनुसार होम, बलिवैश्वदेव आदि करना यज्ञ है। इसके सिवाय गीता की दृष्टि से अपने वर्ण, आश्रम, परिस्थिति आदि के अनुसार जिस किसी समय जो कर्तव्य प्राप्त हो जाय, उसको स्वार्थ और अभिमान का त्याग करके दूसरों के हित की भावना से या भगवदत्प्रीत्यर्थ करना यज्ञ है। इसके अतिरिक्त जीविका-सम्बन्धी व्यापार, खेती आदि तथा शरीर-निर्वाह सम्बन्धी खाना पीना, चलना फिरना, सोना-जागना, देना-लेना आदि सभी क्रियाएँ भगवत्प्रीत्यर्थ करना यज्ञ है। ऐसे ही माता-पिता, आचार्य, गुरुजन आदि की आज्ञा का पालन करना, उनकी सेवा करना, उनको मन, वाणी, तन और धन से सुख पहुँचाकर उनकी प्रसन्नता प्राप्त करना, परमात्मा आदि का पूजन करना, ये सभी यज्ञ हैं।

****

N-14 शंकरजी और हजरत आदम (अ.) में समानताएं

● यदि हम शंकर जी के जीवन का अध्ययन करें तो हमें उनसे या उनके जीवन से जुड़े सात तथ्यों का पता चलता है।

शंकरजी के बारे में तथ्य हमें शिवपुराण में मिलते हैं। वह सात घटनाएं या तथ्य निम्नलिखित हैं:-

१) शंकरजी बिना माता पिता के अस्तित्व में आए। जब ब्रह्माजी ईश्वर की याद में ध्यान लगाए बैठे थे तब शंकरजी उनके माथे से प्रकट हुए।

● **तपस्यतश्च सृष्टयर्थं भ्रुवोर्घ्राणस्य मध्यतः।**
अविमुक्ताभिधाद्देशात् स्वकीयान्मे विशेषतः।५५।
(शिव पुराण, भाग-१, रुद्र का प्रकटीकरण, अध्याय-१५, पेज नं.२४८)

२) जब शंकरजी अस्तित्व में आए तो आपका आधा शरीर पुरुष और आधा स्त्री का था।

त्रिमूर्तीना महेशस्य प्रादुरासीद् घृणानिधिः।
अर्ध्दनारीश्वरो भूत्वा पूर्णांशः सकलेश्वरः ।५६।
(शिव पुराण, भाग-१, रुद्र का प्रकटीकरण, अध्याय-१५, श्लोक नं.५६, पेज नं.२४९)

३) दक्ष ने शंकरजी का अपमान किया था।

एते हि सर्वे च सुराऽसुरा भृशं नमन्ति मां विप्रवरास्तथर्षयः।
कथं ह्यसौ दुर्जनवन्महामनास्त्वभूत्तु यः प्रेतपिशाचसंवृतः ।१४।
(शिव पुराण, भाग-१, रुद्र संहिता, सेक्शन-२, सती कथा, अध्याय-२६, श्लोक १४-१६, पेज नं.३९६)

४) इस अपमान के कारण आकाशवाणी (ईश्वर) ने दक्ष को शाप दिया और धिक्कार दिया था।

ज्वलत्वद्य मुखं वै यज्ञध्वंसौ भवत्वति।
सहायास्तव यावन्तस्ते ज्वलन्त्वद्य सत्वरम् ।३०।
(शिव पुराण, भाग-१, रुद्र संहिता सेक्शन-२, सती कथा, अध्याय-३१, श्लोक १-२, पेज नं.४१७)

५) दक्ष ने जो शंकर जी का अपमान किया था, इस अपमान से क्रोधित होकर आपकी पत्नी सती देवी ने अपना शरीर स्वर्ग लोक में त्याग दिया और धरती पर मेना पहाड़ की बेटी अपनी खुशी से बन गई। धरती पर आपका नाम पार्वती था।

समयं प्राप्यं सा देवी सर्वदेवस्तुता पुनः।
सती त्यक्ततनुः प्रीत्या मेनकातनयाऽभवत् ।६।
(शिव पुराण, भाग-२, पार्वती खण्ड, सेक्शन-२, सती खण्ड, अध्याय-१, श्लोक ४४-४५, पेज नं.२७८)

६) इस धरती पर शंकर जी और पार्वती जी का फिर विवाह हुआ और आप दोनों **हरम** के पवित्र धरती पर रहने लगे।

तत्रौद्यनमुप्राप्य देव्या सह महेश्वरः।
हरम रमणीयासु दिव्यान्तःपुरभूमिषु ।२३।
(शिव पुराण, भाग-४, वायव्यीया संहिता, सेक्शन-१, अध्याय-२४, श्लोक-२३, पेज-१८५९)

७) शंकरजी और पार्वती जी के दो पुत्र थे। गणेश और कार्तिकेय। विवाह के वाद विवाद और गणेशजी के कारण कार्तिकेय हमेशा के लिए माता पिता को छोड़कर चले गए।

न स्थातव्यं मया तातौ क्षणमप्यत्र किञ्चन।
यद्येवं कपटं प्रीतिमपहाय कृतं मयि ।२५।
(शिव पुराण, रुद्रसंहिता, कुमार खण्ड-४, अध्याय-२०, पेज नं-७७५, श्लोक-२५)

● यदि हम हजरत आदम (अ.स.) के जीवन का अध्ययन करें तो सात घटनाएं या तथ्य जो

शंकरजी के साथ हुए हैं, हम पाते हैं कि वही सात घटनाएं या तथ्य हजरत आदम के साथ भी हुए हैं।

वह सात घटनाएं निम्नलिखित है:-

१) आप बिना माता पिता के अस्तित्व में आए।(पवित्र कुरआन, सूरे अल-हिजर (१५), आयत-२९)

२) ईश्वर ने हजरत हव्वा को आपके शरीर के बांए (Left) भाग से उत्पन्न किया। (पवित्र कुरआन, सूरे निसा (४), आयत-१)

३) इब्लीस ने आपको आदरयुक्त प्रणाम (सज्दा) नहीं किया।
(पवित्र कुरआन, सूरे अल हिजर (१५), आयत-३२)

४) आपका आदर न करने के कारण ईश्वर ने इब्लीस को धिक्कार दिया और स्वर्ग से निकाल दिया।
(पवित्र कुरआन, सूरे हिजर (१५), आयत-३४)

५) इब्लीस के कारण हजरत आदम और हजरत हव्वा भी स्वर्ग से निकाले गए।
(पवित्र कुरआन, सूरे अल आराफ (७), आयत-२४)

हजरत हव्वा धरती पर मिना में (मक्का के पास एक स्थान) पर उतरीं और हजरत आदम (अ.स.) का आगमन श्रीलंका में हुआ।

६) आप दोनों मक्का के निकट अराफात में मिले और आकर हरम की पवित्र धरती (मक्का) में बस गए। आपने पहली बार काबा का निर्माण किया।
(पवित्र कुरआन, सूरे आले इमरान (३), आयत-९६, हदीस बेहकी)

७) पहले आपके दो पुत्र थे। काबील (cain) और हाबील (Abel)। विवाह के वादविवाद में बड़े बेटे काबील ने छोटे बेटे हाबील का वध कर दिया।
(पवित्र कुरआन, सूरे माईदा (५), आयत २७-३१)

● श्रीलंका में श्री पद नाम का एक पहाड़ है। यहाँ पर मनुष्य के एक बहुत बड़े पैर के निशान है। इस निशान को हिन्दू समुदाय के लोग शंकरजी के पद का निशान कहते हैं। और मुसलमान और इसाई पैगम्बर आदम के पद का निशान कहते हैं।

इससे हम अनुमान लगा सकते हैं कि दोनों एक व्यक्तित्व हो सकते हैं।

(इस पद के निशान को आप युट्युब पर निम्नलिखित लिंक द्वारा देख सकते है।)
https://youtu.be/AZ_9uQflDXI

****

N-15 प्रलय की वास्तविकता

सभी धार्मिक ग्रंथों में प्रलय का वर्णन है। किन्तु यह प्रलय केवल कल्पना है यह वास्तव में होगा? हम विज्ञान के आधार पर इसको समझने का प्रयास करते हैं।

सूर्य में परमाणु संलयन (Atomic Fusion) की प्रक्रिया निरंतर होती रहती है। हेलियम गैस के दो एटम Fusion के द्वारा मिलकर एक By product बनाते है और इस प्रक्रिया में गर्मी और प्रकाश उत्पन्न होता है, जो हमारी सौर मंडल Solar System और हम प्राप्त करते हैं। जिस प्रकार तेल और पेट्रोल पृथ्वी में एक सीमित मात्रा में हैं और एक समय के पश्चात यह खत्म हो जायेंगे। इसी प्रकार सूर्य में हेलियम गैस सीमित है और एक समय के पश्चात खर्च हो जाएगी। वैज्ञानिक अनुमान लगाते हैं कि इसे बहुत ज्यादा समय लगेगा, लेकिन कोई भी यह भविष्यवाणी नहीं कर सकता है कि यह कब होगा?

जब हेलियम गैस खर्च हो जाएगा और Fusion Process रुक जाएगा , तो सूर्य ठंडा होना शुरु हो जायेगा और सूर्य तथा इस सोलर सिस्टम के मरण की प्रक्रिया शुरु हो जायेगी। सूर्य गुलाबी होना और विस्तृत होना (फैलना) शुरु हो जायेगा और बुध, शुक्र, मंगल, पृथ्वी और कुछ अन्य ग्रहों जो पृथ्वी से परे हैं उनको भी अपने घेरे में ले लेगा। वह लंबे समय तक इस दशा में रहेगा, फिर सूर्य सिकुड़ना शुरु करेगा और एक ठोस मांस बन जायेगा या ब्लेक होल बन जाएगा। जब गैस वाला सूर्य पृथ्वी को घेरे में लेगा, तब कोई रात नहीं होगी और लगातार वह एक दिन बहुत लंबे समय का होगा।

पृथ्वी में गुरुत्वाकर्षण शक्ति (Gravitational force) है, जो प्रत्येक वस्तु को पृथ्वी के केंद्र की ओर आकर्षित करती है। जब शक्तिशाली सूर्य का गोला पृथ्वी को अपने घेरे में ले लेगा तो सूर्य की गुरुत्वाकर्षण शक्ति धरती के गुरुत्वाकर्षण शक्ति को बेकार (Neutral) कर देगी और पृथ्वी पर प्रत्येक वस्तु भार रहित (Weightless) महसूस होगी। जिस प्रकार अंतरिक्ष यात्री अंतरिक्ष में महसूस करता है। इसलिए पृथ्वी पर प्रत्येक वस्तु तैरना अथवा उड़ना शुरु कर देगी, जिस प्रकार वस्तुएँ अंतरिक्ष में रॉकेट के कॉकपिट में तैरती हैं अथवा आकाश में बादल उड़ते हैं।

- यह छवि, नासा के हबल स्पेस टेलिस्कोप द्वारा ली गई हैं। इस चित्र में सूर्य की तरह का एक नक्षत्र है। जिसका वैज्ञानिक पद (Designation) एन जीसी २४४० है, इसे मरते हुए दिखाया गया है। इस मरते हुए सुर्य ने अपना गॅस अपने चारों तरफ दूर-दूर तक फैला दिया है। इस गॅस के गोले के केंद्र में जो सफेद बिंदु है वही पहले नक्षत्र (सूर्य) था। इस मरते हुए नक्षत्र (सूर्य) की चमक Ultraviolet light के कारण है और अलग-अलग रंग हेलीयम, ऑक्सिजन, नाइट्रोजन के जलने के कारण हैं।
- छवि (Photograph) और अतिरिक्त

सूचना के लिए देखिए;

http:hubblesite.org.news.2007.09

- [On 13th feb. 2007 NASA released an image (news release number. STScl-2007-09) with title "The colorful demise of a sun like star." (Visit http:/hubblesite.org/news/2007/09. To know more about a dying star NGC 2440 which is similar to our sun.)]

धार्मिक तथ्य :-

पवित्र कुरआन में प्रलय (कयामत) का इस प्रकार वर्णन है।

१. केवल ईश्वर ही जानता है कि फैसले का दिन (प्रलय) कब आयेगा। (पवित्र कुरआन, सूरे अल-आराफ ७:१८७)

२. प्रलय के दिन आकाश गुलाब की तरह गुलाबी हो जायेगा। (पवित्र कुरआन सूरे अल-रहमान ५५, आयत नं.३७)

३. प्रलय के दिन पृथ्वी अपनी गुरुत्वाकर्षण शक्ति खो देगी और पर्वत बादलों और रुई के गोलों की तरह तैरेंगे। (पवित्र कुरआन, सूरे अल-मारिज ७०, आयत नं.९)

४. प्रलय के दिन का समय (कयामत का एक दिन) सोलर कैलेंडर के ५०००० वर्ष के बराबर होगा। (पवित्र कुरआन, सूरे अल-मारिज ७०:८)

५. प्रलय के दिन सूर्य एकदम हमारे सिरों के ऊपर होगा और पृथ्वी ताँबे की तरह लाल और गर्म होगी। (पवित्र कुरआन सूरे अल मारिज ७०: आयत नं.८)

६. प्रलय के दिन ईश्वर प्रत्येक व्यक्ति के कर्मों का लेखा-जोखा जाँचेगा। (पवित्र कुरआन सूरे हम्द १: आयत नं.४)

निष्कर्षः- (Conclusion)

वैज्ञानिक तथ्य धार्मिक विश्वास को प्रमाणित करते हैं, इस कारण धार्मिक विश्वास के प्रलय होगा यह सत्य है।

******

N-16 श्लोक नं. १५.७ का स्पष्टीकरण

- श्लोक नं. १५.७ इस प्रकार है।

**मम एव अंश: जीव-लोके जीवभूत: सनातन:।
मन: षष्ठानि इन्द्रियाणि प्रकृति स्थानि कर्षति॥१५.७॥**

(एवं) नि:संदेह (जीव लोक) प्राणियों के इस जीव लोक के (जीवभूत:) जीवित प्राणी (माम) मेरे (सनातन:) हमेशा एक जैसा कायम रहने वाले (अंश) (तेज के) अंश (से) (स्थानि) स्थित (कायम) हैं। (मन:) (और मनुष्य) आत्मा (षष्ठानि) छ (इन्द्रियाणि) इच्छाऐं (प्रकृति) (और) भाग्य (कर्षति) (के कारण) सारे काम करता है।

नि:संदेह प्राणियों के इस जीव लोक के जीवित प्राणि मेरे हमेशा एक जैसा कायम रहने वाले (तेज के) अंश (से) स्थित (कायम) हैं। (और मनुष्य) आत्मा, छ: इच्छाऐं, (और) भाग्य (के कारण) सारे काम करता है।

इस श्लोक में ४ चीज़ों का वर्णन है।

१. सनातन अंश (तेज अंश)
२. मन
३. छ: इच्छाऐं
४. भाग्य

इनके बारे में अधिक जानकारी निम्नलिखित श्लोक और आयत में है।

तेज अंश :-

भगवद् गीता का श्लोक नं. १०.४१ इस प्रकार है।

**यत् यत् विभूति मत् सत्त्वम् श्री-मत् उर्जितम् एव वा।
तत् तत् एव अवगच्छ त्वम् मम तेज: अंश सम्भवम्॥४१॥**

(यत्-यत्) (संसार में) जो जो (विभूति मत्) दिव्य रचनाऐं या समृद्धि (ऊर्जितम्) ऊर्जा (या ज्ञान) (वा) या (श्री मत्) सुख शान्ति (और) (सत्त्वम्) मानवता (सच्चाई) (मत्) मानी जाती है। (एवं) नि:संदेह (तत् तत्) उन सबको (त्वम्) तुम (मम) मेरे (तेज: अंश) तेज के अंश से (सम्भवम्) उत्पन्न हुई है ऐसा (अवगच्छ) समझो।

संसार में जो जो दिव्य रचनाऐं या समृद्धि, ऊर्जा (या ज्ञान) या सुख शान्ति और मानवता (सच्चाई) मानी जाती है। नि:संदेह उन सबको तुम मेरे तेज के अंश से उत्पन्न हुई है ऐसा समझो।

जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश के सोलर घड़ी चलने लगती है। इसी प्रकार यह ब्रह्माण्ड ईश्वर के तेज के एक अंश से जीवित है। हमारे शरीर में प्राण भी इसी कारण है।

मन (आत्मा) :-

श्लोक नं. ८.३ इस प्रकार है।

**श्री भगवान उवाच,
अक्षरम् ब्रह्म परमम् स्वभाव: अध्यात्मम् उच्यते।
भूत-भाव-उद्भव-कर: विसर्ग: कर्म संज्ञित:॥८.३॥**

(श्री भगवान उवाच) ईश्वर ने कहा, (परमम्) महान (अक्षरम्) अविनाशी (ॐ) को (ब्रह्म) ब्रह्म (ईश्वर) (उच्यते) कहते हैं। (स्वभाव) मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तित्व) है उसे (अध्यात्मम) आत्मा कहते हैं। (भूत) प्राणियों के (भाव) स्वभाव की (उदभव) रचना करना और (कर:) (उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के)

कर्म (उनको) (विसर्ग) प्रदान करना (कर्म) (इसे ईश्वर का) कर्म (संज्ञित:) कहा जाता है।

ईश्वर ने कहा, महान अविनाशी (ॐ) को ब्रह्म (ईश्वर) कहते हैं। मनुष्य का अपना जो स्वभाव (व्यक्तित्व) है उसे आत्मा कहते हैं। प्राणियों के स्वभाव की रचना करना और उन्हें उनके प्राकृतिक जीवन के कर्म उनको प्रदान करना इसे ईश्वर का कर्म कहा जाता है।

यह जो हमारी आत्मा है इसमें ईश्वर ने सत्वगुण, रजो गुण, तमो गुण, कामा, लोभ, क्रोध इत्यादि भावनाएं रखी हैं। जिस कारण मनुष्य निरन्तर काम करता रहता है।

छह इच्छाऐं :-

ईश्वर ने हर मनुष्य के अन्दर छ: इच्छाएं रख दी हैं। जिनके प्राप्त करने का मनुष्य निरन्तर प्रयास करता है। वह छ इच्छाओं का वर्णन पवित्र कुरआन में इस प्रकार है।

''लोगों के लिए उनकी चाह की चीजें, स्त्रियाँ, बेटे, सोना चांदी के ढेर, निशान लगे हुए अच्छी नस्ल के घोड़े, चौपाए और खेती शोभायमान बना दी गई हैं। (इनकी चाह उसके हृदय में बैठा दी गई है) ये सब सांसारिक जीवन की सुख सामग्री हैं और ईश्वर ही के पास अच्छा ठिकाना है।'' (सूरह अल इम्रान-३, आयत-१४)

- आज के युग में यह छ इच्छाएं इस प्रकार होंगी।

१. स्त्रियां २.बेटे ३. बँक बॅलेन्स ४. अच्छी कार ५. व्यवसाय (Business) ६. सम्पत्ती (Property)

इनको पाने के लिए मनुष्य निरंतर प्रयास करता है।

भाग्य: -

कार्य कारण कर्तृत्वे हेतु: प्रकृति: उच्यते।
पुरुष: सुख दु:खानाम् भोक्तृत्वे हेतु: उच्यते॥१३.२१॥

(उच्यते) ईश्वर ने कहा (कर्म) कर्म (कारण) कर्म करने के कारण (कर्तृत्वे) कर्मों को करने वाला (प्रकृति) (यह सब) भाग्य (हेतु) के कारण होते हैं। (उच्यते) ईश्वर यह भी कह रहा है कि, (पुरुषा) मनुष्य (सुख) सुख (दुखानाम्) दुख (भोक्तृत्वे) का जो अनुभव करता है (हेतु:) उसका कारण भी भाग्य है।

ईश्वर ने कहा कर्म करने के कारण, कर्मों को करने वाला यह सब भाग्य के कारण होते हैं। ईश्वर यह भी कह रहा है कि मनुष्य सुख, दु:ख का जो अनुभव करता है उसका कारण भी भाग्य है।

****

N-17. शैतान कौन?

● श्री राम चन्द्र जी के तेत्रा युग में देवताओं के साथ दानव भी धरती पर रहते थे। रावण उन में से एक था। जिससे हम सब परिचित हैं। रावण एक महाज्ञानी दानव था।

● डॉ. वेद प्रकाश उपाध्याय ने कई पुस्तकें लिखी हैं। उनमें से एक है ''वेदों और पुराणों के आधार पर धार्मिक एकता की ज्योति''। इस पुस्तक के प्रस्तावना में आपने लिखा है कि श्री राम, श्री कृष्ण यह मनुष्य नहीं थे। यह सब देवता थे। यह अलौकिक अस्तित्व वाले थे।

इसी प्रकार दानव भी अलौकिक (Super natural entity) थे। वह मनुष्य के समान सामान्य नहीं थे।

सत्य युग ३९ लाख पूर्व आरम्भ हुआ किन्तु द्वापर युग के अंत तक (१२००० BC तक) कोई मनुष्य धरती पर नहीं था।

सारे दानव दुष्ट स्वभाव के न थे। उनमें सज्जन भी थे और ऋषि भी थे।

डॉ. वेद प्रकाश उपाध्याय (वेदों व पुराणों के आधार पर धार्मिक एकता की ज्योति) इस पुस्तक में लिखते हैं कि जब ऋषियों को पता चला कि धरती पर मनुष्य राज करेंगे तो वह पहाड़ों पर चले गए।

वह श्लोक इस प्रकार हैं।

● आर्यदेशा क्षीणवन्तो म्लेच्छवंशा बलान्विता।
भविष्यन्ति भृगुश्रेष्ठ तस्माच्च तुहिनाचलम्।
गत्वा विष्णुं समाराध्य गमिष्यामो हरे: पदम्।
इति शृत्वा द्विजा: सर्वे नैमिषारण्यवासिन:।
अष्टाशीति सहस्राणि गतास्ते तुहिनाचलम्।
(भविष्य पुराण, प्रतिसर्गपर्व चतुर्थ अध्याय-४)

यह ऋषि कौन थे? यदि यह देवता होते तो देवता तो स्वर्ग की ओर जाते हैं। पहाड़ों की ओर क्यो जाएंगे। यह दानव ऋषि थे जो पहाड़ों में चले गए।

इसी प्रकार डॉ. वेद प्रकाश उपाध्याय लिखते हैं कि देवताओं और दानव में युद्ध हुआ था। अन्त में देवता विजयी रहे और उन्होने दानवों को धरती से निकाल दिया।

● पवित्र कुरआन में दानवों को जिन्न कहा गया है और धार्मिक ग्रन्थों में यह भी लिखा है कि फरिश्तों ने जिन्नों को पराजित करके जंगल और पहाड़ों की ओर खदेड़ दिया।

अजाजील नाम का एक ऋषि दानव था। उसने इतनी अधिक ईश्वर की प्रार्थना की थी कि ईश्वर ने उसे फरिश्तों के साथ स्वर्ग में रहने की अनुमति दे दी।

दानव को धरती से भगाने के बाद ईश्वर ने मानवजाति को धरती पर बसाने का निर्णय लिया।

जब ईश्वर पैगम्बर आदम का शरीर मिट्टी से निर्माण कर रहे थे तब यह अज़ाजील दानव ऋषि वहाँ उपस्थित था।

जब ईश्वर पहले मानव (स्वयमभव मनु) आदम का निर्माण किया तो फरिश्तों से कहा कि जब मैं अपनी रुह से आदम में रुह फुंकू और जब वह

जीवित हो जाए तो तुम सब उनका आदरपूर्वक प्रणाम (सजदा) करना।

● जब आदम जीवित हुए तो सबने आदरपूर्वक प्रणाम (सजदा) किया किन्तु अज़ाजील ने नहीं किया।

दानव आग से बनते हैं इस कारण उनमें अहंकार, क्रोध, इर्षा, द्वेष अधिक होता है।

ईश्वर ने जब अज़ाजील से पूछा कि तुने आदम को सज़दा क्यों नहीं किया? तो उसने कहा कि, मैं आग से बना हूँ। आदम मिट्टी से बने हैं। मैं इनसे श्रेष्ठ हूँ तो मैं उनका आदर क्यों करुँ?

ईश्वर को अज़ाजील का अहंकार और घमंड अच्छा नहीं लगा और उसे स्वर्ग से निकल जाने कहा।

इस पर अज़ाजील और विद्रोह पर उतर आया और उसने ईश्वर को चुनौती दी कि जिस मानव के कारण तू मुझे स्वर्ग से निकाल रहा है, यदि तू मुझे प्रलय तक मृत्यु न दे तो मैं कुछ को छोड़कर सारी मानवजाती को सत्य मार्ग से हटा दूँ।

ईश्वर ने उसकी चुनौती को स्वीकार किया और उसे प्रलय तक जीवित रहने का वरदान दे दिया। और साथ में यह भी कहा कि जो तेरी बात मानेगा। उसको और तुझको नरक में भर दूंगा।

● अज़ाजील पर ईश्वर के प्रकोप के कारण उसका नाम इबलीस हो गया, जिसका अर्थ है ''वह जिसके मुक्ति की कोई सम्भावना नहीं है।''

और वह मानवजाति को सत्य मार्ग से हटाता है इस कारण उसे शैतान कहते हैं। यह उसका नाम नहीं है। उसे दी गई उपाधि (Title) है।

तो यह ऋषि दानव अजाजील है जो आज मानवजाति का सबसे बड़ा शत्रु है। और उसका प्रयास है की सारी मानवजाति को सत्य मार्ग से हटा दे।

● पवित्र कुरआन की वह आयत जिसमें इबलीस को जिन्न कह कर सम्बोंधित किया है वह निम्नलिखित हैं।

''याद करो, जब हमने फरिश्तों से कहा कि, आदम को सज्दा करो तो उन्होंने सज्दा किया मगर इब्लीस ने न किया। वह जिन्नों में से था इसलिए अपने रब के आदेश का उल्लंघन किया। (हे मानवजाति) अब क्या तुम मुझे छोड़कर उसको और उसकी संतति को अपना संरक्षक बनाते हो हालाँकि वे तुम्हारा शत्रु है? बड़ा ही बुरा विकल्प है जिसे ज़ालिम लोग अपना रहे हैं।'' (पवित्र कुरआन, सूरे अल-कहेफ १८, आयत नं.५०)

● भगवद् गीता के इनके बारे में छह श्लोक इस प्रकार हैं।

दम्भ: दर्प: अभिमान: च क्रोध: पारुष्यम् एव च
अज्ञानम् च अभिजातस्य पार्थ सम्पदम् आसुरीम् ॥१६.४॥

(ईश्वर ने कहा की,)
हे अर्जुन नि:संदेह यह गुण शैतान के प्रभाव से उत्पन्न होते हैं। धोखा देना, छल करना, अहंकार का होना, घमंड का होना, क्रोध करना, और कठोरता रखना, और ज्ञान और विवेक का न होना।

न माम् दुष्कृतिन: मूढा: प्रपद्यन्ते नर-अधमा: ।
मायया अपहृत ज्ञाना: आसुरम् भावम् आश्रिता: ॥७.१५॥

इस दिव्य ज्ञान पर आधारित परीक्षा से पार कराने वाले दिव्य ज्ञान को असुर (शैतानी/राक्षसी) स्वभाव अपनाने वालों से असूर/शैतान ने अपहरण कर लिया है (भुला दिया है।)

कारण कि यह मूर्ख दुष्कर्म करने वाले, नरक में गिरने वाले, यह मनुष्य मेरी शरण नहीं लेते (मेरी प्रार्थना नहीं करते।)

● मोघ आशा: मोघ-कर्माण: मोघ-ज्ञाना: विचेतस:।
राक्षसीम् आसुरीम् च एव प्रकृतिम् मोहिनीम् श्रिता: ॥९.१२॥

नि:संदेह ईश्वर को मनुष्य के समान शरीर वाला समझना राक्षसी सोच या दृष्टिकोण है। और इस भ्रम के कारण लोगों ने आसुरिक शक्तियों की शरण ली है। इस कारण उनके मृत्यु के बाद के जीवन में सफलता की कोई आशा नहीं है। उनके सब सत्कर्म नष्ट हो गए। और उनका ज्ञान भी व्यर्थ हो गया।

● द्वौ भूत-सर्गो लोके अस्मिन् दैव: आसुर: एव च।
दैव: विस्तरश: प्रोक्त: आसुरम् पार्थ मे शृणु ॥१६.६॥

नि:संदेह, इस पृथ्वी लोक में मनुष्य के अंदर दो प्रकार के गुण होते हैं। दिव्य गुण और आसुरी शैतानी गुण। दिव्य गुणों को हे अर्जुन तुम्हें विस्तार से बता दिया गया। अब आसुरी शैतानी गुणों के बारे में मुझसे सुनो।

● तान् अहम् द्विषत: क्रुरान् संसारेषु नर-अधनाम्।
क्षिपामि अजस्त्रम् अशुभान् आसुरीषु एव योनिषु ॥१६.१९॥

मैं इन घिनौने, निर्दयी, और मनुष्यों में सबसे नीच लोगों को सदा के लिए गंदे नर्क में जहाँ असुरों के वंश रखे जाते है फेंक देता हूँ।

● आसुरीम् योनिम् आपन्ना: मूढा: जन्मनि जन्मनि।
माम् अप्राप्य एव कौन्तेय तत: यान्ति अधमाम् गतिम् ॥१६.२०॥

यह मूर्ख लोग असुरों के वंश में हर मृत्यु के बाद जीवन पाते हैं और नर्क के सबसे निचले भाग तक चले जाते हैं। इस तरह नि:संदेह, हे कुन्ती पुत्र अर्जुन! यह मुझे कभी प्राप्त नहीं कर पाते।

बुद्ध धर्म में इब्लीस को 'मारा' कहा गया है।

****

N-18. पुनर्जन्म की वास्तविकता

पुनर्जन्म की विचारधारा (Concept) इस तरह है।

१) इन्सान मरने के बाद इसी धरती पर फिर से जन्म लेगा। परन्तु उसका दूसरा जन्म उसके पापों के अनुसार होगा। पहले जन्म में जितने अधिक पाप किए होंगे, दूसरे जन्म में उतनी अपमानजनक जीवनशैली उसे मिलेगी।

२) मृत्यु के समय यदि सूर्य दक्षिण की ओर होगा तो एक सज्जन और पवित्र मृतक को भी स्वर्ग का रास्ता नहीं मिलेगा। सूर्य जब उत्तर की ओर होगा तब ही एक सज्जन पुरुष को स्वर्ग का रास्ता मिलेगा।

३) बृहदारनायक उपनिषद में लिखा है कि जो लोक पंचाग्नी विद्या को जानते हैं और वन में रह कर ईश्वर की प्रार्थना करते हैं, केवल वही लोग स्वर्ग प्राप्त कर पाएंगे। बाकी सारे लोग मृत्यु के बाद आवागमन के चक्कर में फंसे रहेंगे।

पुनर्जन्म की और भी बहुत सारी विचारधाराएं हैं, किन्तु इस छोटी सी पुस्तक में उन सबका लिखना सम्भव नहीं है।

पुनर्जन्म का दृष्टिकोण क्यों गलत है?

● पवित्र वेद ही हिन्दू धर्म के सबसे प्रमाणिक (Authentic) ग्रन्थ हैं। और वेदों में आवागमन की बिल्कुल शिक्षा या वर्णन नहीं है। इसके विपरीत आवागमन का वेदों में विरोध किया गया है।

● पुनर्जन्म का वर्णन निम्नलिखित तीन पुस्तकों में मिलता है।

१) महाभारत
२) छांदोग्य उपनिषद
३) बृहदारण्यक उपनिषद

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी यह हिन्दू धर्म के एक ज्ञानी और प्रसिद्ध आचार्य हैं। जब उन्होंने तीनों ग्रन्थों का अध्ययन किया तो पाया की तीनों ग्रंथों में दोनों प्रकार की शिक्षाएं हैं, या पुनर्जन्म का वर्णन है। अर्थात् इन ग्रन्थों में पवित्र वेदों की तरह पुनर्जन्म नहीं होने का उल्लेख भी है। और पुनर्जन्म के होने का भी उल्लेख है।

और पुनर्जन्म होने वाले श्लोकों में बहुत मतभेद है। या अलग-अलग श्लोकों में अलग अलग बात कही गई है।

महाराज विकासानन्द जी कहते हैं कि सत्य स्थिर और एक समान रहता है। और असत्य अस्थिर और बदलता रहता है। आवागमन का दृष्टिकोण या विश्वास या सीख यह असत्य है इसलिए बदलता रहता है। (अलग-अलग ग्रन्थों में अलग-अलग वर्णन है।)

और आवागमन का न होना यह पवित्र वेदों की शिक्षा है और वेद ही सबसे प्रमाणिक है इसलिए वेदों की शिक्षा ही सही मानी जाएगी।

महाराज विकासानन्द जी ने एक पुस्तक लिखी है, जिसका नाम है ''पुनर्जन्म, एक रहस्य''। इस पुस्तक में उन्होंने महाभारत, छान्दोग्य उपनिषद और बृहदारण्यक उपनिषद में बताए गए दोनों तरह की शिक्षा का वर्णन किया है, अर्थात् पुनर्जन्म के न होने के बारे में वेदों के अनुसार

शिक्षा का भी वर्णन है और पुनर्जन्म होने की शिक्षा का भी वर्णन है।

हमने महाराज विकासानन्द की पुस्तक को पढ़कर ही इस पुस्तक में पुनर्जन्म के बारे में लिखा है।

पहले हम महाभारत का अध्ययन करते हैं और देखते हैं इसमें पुनर्जन्म के बारे में क्या लिखा है। मगर इससे पहले हम सूर्य के उत्तर और दक्षिण में होने का मरने वाले व्यक्ति के मुक्ति पर क्या प्रभाव होता है इस बारे में भी कुछ बता दें। इस ज्ञान से आपको भीष्म पितामह के शरशैय्या पर लेटे रहने का कारण समझ में आएगा।

सूर्य के उत्तर में होने का क्या अर्थ है?

● महाभारत के युद्ध के समय सूर्य दक्षिण की ओर था। गम्भीर रुप से घायल होने के बावजूद भीष्म पितामह ने अपने मृत्यु को सूर्य के उत्तर की ओर आने तक टाले रखा। तो इस अध्याय में हम यह समझने का प्रयास करेंगे कि सूर्य के उत्तर में होने का क्या अर्थ है।

● हजारों वर्ष से उत्तरी भारत के लोगों को पृथ्वी के उत्तर भाग के ऋतुओं का पूरा ज्ञान था।

● औरंगाबाद में पवनचक्की के पास एक रुस के वली की मजार (कबर) है। यानी प्राचीन काल में लोग रुस (Russia) से भारत भी आया करते थे। इसलिए भारतीय लोगों को इस बात का ज्ञान था कि जब सूर्य उत्तर की ओर होता है तो पृथ्वी के उत्तरी भाग में दिन बड़े और रातें बहुत छोटी होती हैं। नॉर्थ पोल (North pole) पर ३ महीने दिन २४ घंटे का होता है और रात नहीं होती है।

● हमारे देश में भी उत्तरी भारत के क्षेत्र में गर्मियों के मौसम में जब सूर्य उत्तर की ओर होता है तो दिन बड़े और रातें छोटी होती हैं।

● वर्ष के छ: महीने सूर्य उत्तर की ओर होता है और दिन बड़े और उज्वलित होते हैं। इसलिए समझाने के लिए वेद में यह उदाहरण दिया गया है कि स्वर्ग के रास्ते उज्वलित हैं और वह ऐसे उज्वलित हैं जैसे सूर्य उत्तर की ओर हो।

● तो सूर्य का उत्तर की ओर होना यह उज्वलित होने का केवल उदाहरण है। सूर्य के उत्तर या दक्षिण में होने से स्वर्ग के मार्गों का कोई सम्बन्ध नहीं है।

● ऐसे श्लोक जिनमें स्वर्ग के मार्ग का वर्णन है वह निम्नलिखित हैं:-

● ''हम सब कौन से मार्ग से जायेंगे वह (मार्ग) यमदेव (अर्थात् परलोक का मालिक या ईश्वर) पहले ही दिखा देते हैं। वह मार्ग कभी नष्ट न होने वाला है। जिस मार्ग से पूर्वगण गये हैं, प्रत्येक प्राणी अपने-अपने कर्मों के अनुसार उसी मार्ग से जायेंगे।'' (ऋग्वेद १०-१४-२)

● ''जो लोग ज्ञान रखते हैं, वे दूसरों से पहले जीवन प्रदान करने वाली सांस लेकर इस शरीर से निकल कर आकाश में पहुंचकर अपने समस्त साथियों के साथ रहते हैं। जिन मार्गों से देवताओं ने यात्रा की थी, उनसे गुजरते हुए स्वर्ग पहुंच जाते हैं।'' (अथर्ववेद : २-३४-५)

● "पवित्र करने वालों के द्वारा पवित्र होकर, ऐसे शरीर के साथ जिसमें अस्थियां न होंगी, वे प्रतापवान और प्रज्वलित होकर उजालों के संसार में पहुंचते हैं। उनके उल्लसित शरीरों को आग नहीं जलाती है। स्वर्ग लोक में उनके लिये बड़ा आनन्द है। (अथर्ववेद : ४-३४-२)

● ईश्वर को जानने वाले और उसकी प्रार्थना करने वाले मनुष्य, मरने के बाद ईश्वर की ओर उज्वल मार्ग के द्वारा (इस तरह) जाएंगे कि वहाँ (ऐसा लगेगा जैसे) छह महीने सूर्य उत्तर की ओर चला गया है, (जिसके कारण) दिन है, उजाला है और प्रकाश फैला हुआ है। (भगवद्गीता ८:२४)

● मेरे द्वारा वेदों में भी मरने के बाद इस संसार से जाने के लिए दो मार्ग बताए गए हैं। इन दोनों मार्गों में नि:संदेह एक उज्ज्वल मार्ग है और दूसरा अंधकारमय मार्ग है। एक मार्ग जन्म और मौत की बार-बार वापसी न होने वाले धाम (स्वर्ग) की ओर जाता है, और दूसरा अंधकारमय मार्ग है जो कि बार-बार जन्म और मौत की वापसी वाले (नरक के) धाम की ओर जाता है। (भगवद्गीता ८:२६)

ऊपर बताए गए श्लोकों से आप समझ सकते हैं कि,

१) यमदूत मृतक को स्वर्ग और नर्क का मार्ग पहले ही बता देता।

२) यह स्वर्ग और नर्क के मार्ग उस व्यक्ति के कर्मो के आधार पर होंगे।

३) स्वर्ग के मार्ग उसी तरह उज्वलित हैं जैसे जब सूर्य उत्तर की ओर होता है तो दिन बहुत अधिक उज्वलित रहते हैं।

४) सूर्य के उत्तर और दक्षिणायण में होने से स्वर्ग के मार्ग का कोई सम्बन्ध नहीं है।

● "सूर्य का उत्तर या दक्षिण में होने का स्वर्ग के मार्ग से कोई सम्बन्ध नहीं," इस तथ्य (Fact) को बहुत सारे विद्वान भी मानते हैं। जैसे आचार्य शंकरजी ने अपनी पुस्तक "वेदान्त दर्शन" में लिखा है कि छान्दोग्य उपनिषद में लिखा है कि आत्मा सूर्य की किरणों की सहायता से ऊपर की ओर प्रवास करती है। किन्तु आप अगर कहो कि, रात को सूर्य की किरणें नहीं होती हैं तो ऐसा कहना गलत है। क्योंकि सूर्य की किरणें मनुष्य के नाड़ी की गर्मी से उस समय तक हमेशा जुड़ी रहती हैं जब तक मनुष्य जीवित रहता है।

या मनुष्य जब तक जीवित रहता है उसकी नाड़ी से निकलने वाली ऊर्जा सूर्य की ऊर्जा से हमेशा सम्पर्क में रहती है। इसलिए किसी भी समय मृत्यु हो एक सज्जन मनुष्य को परलोक का उज्वलित मार्ग तलाश करने या पाने में कोई कठिनाई नहीं होती है। इसलिए ऐसा सोचना गलत है कि जब सूर्य उत्तर की ओर होगा तब ही मुक्ति मिलेगी। (पुनर्जन्म एक रहस्य पेज नं- ११)

महाभारत में पुनर्जन्म का उल्लेख

● महाकाव्य महाभारत के लेखक श्री महर्षि वेद व्यास जी ने स्वयम इस महाकाव्य में पुनर्जन्म होता है ऐसा साफ तौर पर कहीं नहीं लिखा है। परन्तु इस महाकाव्य में भीष्म पितामह की मृत्यु पुनर्जन्म की तरफ इशारा करती है। इसलिए हम यह पता करने का प्रयास करते हैं कि भीष्म पितामह की मृत्यु के बारे में जो महाभारत में लिखा है उसमें कितना सत्य है।

● भीष्म पितामह की कहानी संक्षिप्त में इस तरह है-

● महाभारत के युद्ध में आप कौरव के सेनापति थे। युद्ध के आरंभ के दस दिनों में आप बहुत वीरता से लड़े और पांडवों के लाखों सैनिकों का वध कर दिया। लेकिन जब भीष्म पितामह युद्ध में अर्जुन के तीरों से घायल होकर अपने रथ से गिरे तो उनके शरीर में इतने तीर आरपार धंसे हुए थे की उनका शरीर धरती को छुने के बदले तीरों के ऊपर ही रुका रहा था। ऐसा लगता था कि वह तीरों के चारपाई पर सो रहे हैं।

● महाभारत के युद्ध के समय सूर्य दक्षिण की ओर था। अर्थात् दक्षिणायण काल चल रहा था। कथानुसार भीष्म पितामह का ऐसा विश्वास था कि ऐसे समय एक सज्जन पुरुष की भी अगर मृत्यु होती है तो वह भी स्वर्ग का मार्ग नहीं प्राप्त कर सकता है। इस कल्पना के कारण भीष्म पितामह ने अपने पिता से अपने मृत्यु को सूर्य के उत्तर में आने तक अर्थात् उत्तरायण तक आगे बढ़ाने की आज्ञा चाही और आज्ञा मिलने पर वह बहुत दिनों तक शरशैय्या पर लेटे रहे फिर देह त्याग किया।

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी जी के शोध के अनुसार भीष्म पितामह के शरशैय्या पर मृत्यु के सम्बन्ध में जो महाभारत में श्लोक हैं वह प्रक्षिप्त हैं। अर्थात् बाद में जोड़े गए हैं। (पुनर्जन्म एक रहस्य पं.८)

● महाराज के शोध के अनुसार भीष्म पितामह जब गम्भीर रुप से घायल हाकर रथ से गिरे थे उसी समय उनकी मृत्यु हो गई थी।

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी जी के अनुसार यह विश्वास भी गलत है कि जब सूर्य दक्षिण में होता है उस समय मरने वाले को मुक्ति नहीं मिलती।

● महाराज जी ने इन दोनों के गलत होने के जो कारण वेदों और स्वयम् महाभारत जैसे महाकाव्य से बताए हैं वह निम्नलिखित हैं।

● **भीष्म पितामह की मृत्यु का वर्णनः-**

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी जी के अनुसार भीष्म पितामह के पिता शंतनु को इच्छा मृत्यु का वरदान देने का अधिकार न था। क्योंकि शंतनु के दो पुत्र पहले ही मर चुके थे। अगर शंतनु को मृत्यु को आगे बढ़ाने का अधिकार होता तो उनके दोनों पुत्र क्यों मरते?

● महर्षि श्री वेद व्यास जी हिन्दू धर्म के सबसे बड़े विद्वान हैं। महाभारत महाकाव्य यह आपने लिखी है। भगवद्गीता को पुस्तक के रुप में आपने ही लिखा है। चारों वेदों में ऋचा और सुक्त की तरतीब आप ही ने दी है। आपने १७ पुराण लिखे हैं। जिनमें भविष्य पुराण भी एक है।

● वेद व्यास जी ने केवल २४००० श्लोक महाभारत में लिखे थे। आज उनकी संख्या एक लाख से अधिक है। यह ७५००० से अधिक श्लोक बाद में जोड़े गए हैं।

● (पुनर्जन्म एक रहस्य पं. १४)

● महाभारत के अट्ठारह पर्व में से एक पर्व का नाम भीष्म पर्व है। इस पर्व के चार उप-पर्व हैं। जिनके नाम निम्नलिखित हैं:-

१) जम्बुखण्ड विनिर्माण पर्व
२) भूमि पर्व
३) श्रीमदभगवदगीता पर्व
४) भीष्म वध पर्व

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी जी कहते हैं कि गम्भीर रुप से घायल होकर जीवित रहना यह एक अद्‌भुत और महत्त्वपूर्ण घटना है। अगर वास्तविक रुप से ऐसा हुआ होता तो वेद व्यास जी कभी उसे नजर अन्दाज (Neglect) न करते। मगर ऐसा नहीं हुआ था। इसलिए उन्होंने भी उस पर्व का नाम शरशैय्या पर्व न रखा बल्कि भीष्म वध पर्व रखा।

● महाभारत के आरंभ के दो पर्व का नाम पर्व संग्रह है। इन दोनों में 'महाभारत' पुस्तक के अध्यायों और घटनाओं का वर्णन (Details of Topics) है।

● पर्व संग्रह के अनुसार भीष्म पर्व में कुल ११७ अध्याय और ५८८४ श्लोक होने चाहिए थे। मगर इस समय अध्याय की संख्या १२२ और श्लोकों की संख्या ६१०० है। महाराज विकासानन्द जी कहते हैं कि यह इस बात का प्रमाण है कि महाभारत में बाद में श्लोक और अध्याय जोड़े गए हैं। (पुनर्जन्म एक रहस्य पं.६)

● भीष्म पितामह के शरशैय्या पर लेटने की घटना यह बाद में जोड़ी गई है। इसके कुछ प्रमाण निम्नलिखित हैं:-

● भीष्म पर्व के अध्याय १३ और १४ में संजय धृतराष्ट्र को भीष्म पितामह के वध की जानकारी दे रहे हैं। तो होना तो यह चाहिए था कि दोनों अध्याय में केवल भीष्म पितामह के बाणों के बिस्तर पर (शरशैय्या पर) लेटने का वर्णन होता। मगर अध्याय १३ में चार बार और अध्याय १४ में १३ बार भीष्म पितामह के मृत्यु की बात कही गई है। अध्याय १३ के वह चार श्लोक निम्नलिखित हैं:-

१. निहंत भीष्म भरतानां पितामह ११(१३/२)
२. हतो भीष्मः शान्तनवो भरतानां पितामहः ११(१३/३)
३. सशेते निहतो राजन संख्ये भीष्मः शिखण्डिना ११(१३/५)
४. न हतो जाम दग्न्येन स हनोहृदय शिखण्डिना ११ (१३/२)

● इसी तरह पहले पर्व संग्रह के श्लोक नं १८३ और १८४ में भी भीष्म पितामह के मृत्यु का वर्णन है, न कि शरशैय्या पर लेटने का। वह श्लोक निम्नलिखित हैं।

१) स्वयं मृत्यु विहिंत घार्मिकेम।
(महा:आदि पर्व-१/१८३)

२) यथोश्रोवं भीष्ममत्यान्तशूरं हतं पार्थे नाह वेष्ब प्रधृश्यम। (आदि-१/८४)

● महाराज विकासनन्द जी लिखते हैं कि महाभारत के लेखक श्री वेद व्यास जी ने महाभारत महाकाव्य में बहुत सारे महापुरुषों के मृत्यु की घटना का वर्णन किया है। जैसे अभिमन्यु, द्रोणाचार्य, कर्ण इत्यादि। मगर श्री वेद व्यास जी ने स्वर्ग रोहण पर्व, अध्याय ५ मंत्र नं २७-२६ में इन सभी को स्वर्ग प्राप्त हुआ ऐसा लिखा है। जबकि उस समय सूर्य दक्षिण में था। तो भीष्म पितामह को गम्भीर रुप से घायल होने के बाद भी बहुत दिनों तक शरशैय्या पर लेटे रहने का क्या कारण था? कोई कारण नहीं था।

● श्री वेद व्यास जी ने पूरे महाभारत में कहीं पर भी किसी के पुनर्जन्म का वर्णन नहीं किया है। इसलिए महाभारत में भीष्म पितामह के पुनर्जन्म के डर से शरशैय्या पर लेटने की घटना यह बाद में महाभारत में जोड़ी गई है। और यह सही नहीं है।

● ऊपर हमने जो कुछ कहा उसका सार यह है कि हिन्दू धर्म के सबसे महान विद्वान महर्षि श्री वेद व्यास जी पुर्नजन्म में विश्वास नहीं रखते थे। न उन्होंने किसी को इसकी शिक्षा दी और न इसे किसी ग्रंथ में लिखा।

● महाभारत में भीष्म पितामह का अपनी मृत्यु को पुनर्जन्म के डर से आगे बढ़ाने की जो घटना का वर्णन है, वह महाभारत में बाद में जोड़ा गया है। वह वेद व्यास जी की शिक्षा नहीं है।

छांदोग्य उपनिषद में पुनर्जन्म का उल्लेख

● महर्षि वेद व्यास जी के एक शिष्य का नाम ऋषि वैश्यंम्पायन था। और ऋषि वैश्यंम्पायन के शिष्य का नाम ऋषि ताण्ड था। ताण्ड ने सामवेद के एक शाखा पर शोध किया, फिर उसकी व्याख्या की जिसे ताण्ड शाखा कहा जाता था।

● इस ताण्ड शाखा के एक भाग का नाम छांदोग्य उपनिषद है। इस छांदोग्य उपनिषद में दस भाग हैं। जिसमें के ८ भाग को एक पुस्तक का रुप दिया गया है जिसे छांदोग्य उपनिषद कहते हैं।

● छांदोग्य उपनिषद में ६ अध्याय १५२ खण्ड और ६२८ मन्त्र हैं। इस उपनिषद में दो जगह परलोक के रास्ते और पुनर्जन्म का विस्तारपूर्वक वर्णन है।

● अध्याय ५ खण्ड १० के सभी १० मन्त्रों में परलोक के रास्तों की व्याख्या है। अध्याय ८ के खण्ड ६ के पांचवे मन्त्र में भी परलोक के रास्तों का वर्णन है।

● छांदोग्य उपनिषद के अध्याय ५ और खण्ड १० के आठ श्लोकों का वर्णन निम्नलिखित है;

मन्त्र नं-१ " तद्य इत्थं विद्वुर्ये चेमेहरण्ये श्रद्धा तप इरयुपासते ते हर्चिषमभि संमवन्चर्चिपोहरह्न आपूर्यमाण-पक्षमा पूर्यमाण पक्षा धान्श डु दङ् डेति मासांस्तान्।।"

अनुवादः- जो पन्चाग्नि के ज्ञान को प्राप्त करते हैं और जंगल में रहते हुए सच्ची श्रद्धा से प्रार्थना करते हैं वह मरने के बाद तेज प्रकाश की किरणों पर सवारी करते हैं। किरणों से दिन, दिन से शुक्ल पक्ष, फिर शुक्ल पक्ष से उत्तरायण के छः महीनों को पा लेते हैं। (अध्याय ५, खंड १०, श्लोक १)

मन्त्र नं-२ " मासेभ्य संवत्सर संवत्सरा दादित्य मादित्याच्चन्द्रमसं चन्द्रमसो विद्युतं तत्पुरुषों हमानवः स इनान्ब्रह्म गमयत्येश देवयानः पन्था इति।।"

अनुवादः- उत्तरायण के छः महीनों के बाद संवत्सर को पा लेते हैं। संवत्सर से आदित्य, फिर आदित्य से चंद्रमा। फिर चन्द्रमा से विद्युत को पा लेते हैं। वहाँ पर एक पवित्र आत्मा है जो मृतक को परब्रम्हा से मिला देती है। वहीं पर स्वर्ग का रास्ता यानी देवयान है। (श्लोक नं. २)

● मन्त्र नं १ और २ का भावार्थ:- अर्थात् स्वर्ग का रास्ता उन्हीं को ही मिलता है जो जंगल में पंचाग्नि ज्ञान के माध्यम से प्रार्थना करते हैं।

मन्त्र नं-३ "अथ य इमे भ्राम इष्टापूर्ते दन्तमिव्युपासते ते धूममभिसं भवन्ति धूमाद्रत्रिं रात्रेर पर पक्षम परपक्षाद्यान्ष ड्दक्षिणैति मासांस्तान्नैते संवत्सर गभि प्राय्रुवन्ति।।"

अनुवादः- और जो लोग शहरों और गांवों में रहते हैं और जो ईश्वर की प्रार्थना के द्वारा या समाज सेवा के माध्यम से, या दान पुण्य के माध्यम से प्रार्थना करते हैं, वह मरने के बाद धुएं पर सवारी करते हैं। धुएं से रात में, फिर रात से कृष्णपक्ष को पा लेते हैं। इन लोगों को सवंत्सर नहीं मिलता।

मन्त्र नं-४ "मासेभ्यः पितृलोकं पितृलोकादाश माकाशाच्चन्द्रमसमेष सोमो राजा तददेवाना मन्नं तं देवा भक्ष्यन्ति।।"

अनुवादः- कृष्णपक्ष से वह दक्षिणायण को ग्रहण करते हैं। (दक्षिणायण यानि जब सूर्य दक्षिण की ओर होता है।) फिर वह पितृलोक को हासिल करते हैं, फिर पितृलोक से आकाश, फिर आकाश से चंद्रमा को पा लेते हैं। यह चंद्रमा ही राजा सोम है। वह सभी का अन्न है। सभी देवगण उसका भक्षण करते हैं।

मन्त्र नं-५ "तस्मिन्या वत्सं पात भुषित्वा थैत मेवाध्यानं पुनर्निबर्तन्ते यथेतमाकाशा द्वायुं वायुर्भूत्वा घूमो भवति घूमो भूत्वाभ्रं भवति।।"

अनुवादः- जब तक अच्छे कर्म के बदले अच्छे दिन गुजारने का समय होता है, वह चंद्र मण्डल में रहते हैं। फिर उसके बाद बताए हुए रास्ते से लौट आते हैं। पहले वह आकाश पर आते हैं, फिर हवा पर सवार होते हैं। फिर धुँएं पर सवार होते हैं। फिर धुँएं से बादल बन जाते हैं।

मन्त्र नं-६ "अभ्रं भूत्वा मेधो भवति मेधो भूत्वा प्रवर्षति त इह ब्रीहियवा औषधि वनस्पत यस्ति लाभाषा इति जायन्ते हतो वै खलु दुर्निश्रप्रपतरं यो द्यन्नभन्ति यो रेतः सिन्चति तध्दुय एवं भवति।।"

अनुवादः- फिर बादलों से वर्षा के रुप में बरसते हैं। उस समय वह सभी आत्माएं इस दुनिया में चावल, जौ, दवाएं, पेड़, पौधे, उड़द की दाल और तिल वगैरह बनकर प्रकट होते हैं। फिर उन सब चीजों को जो जानदार खाते हैं और जब वह बच्चा देते हैं तो वह सब आत्माएं उन्हीं जानदारों के बच्चों के रुप में जन्म लेते हैं। ऐसे आवागमन से निकलना बहुत मुश्किल होता है।

मन्त्र नं-७ "तद्य इह रमणीयचरणा अभ्याशो ह यन्ते रमणीयां योनिमापघेरन्ब्रह्मणयोनिं वा क्षत्रिययोनि वा वेश्य यौनिं वाथ य इह कपूयचरणा अभ्याशो ह यत्ते कपूयां योनिमापद्येरन् श्रयोनिं वा सूकरयोनिं व चण्डालयानिं वा।।"

अनुवादः- उन सभी आत्माओं में जो अच्छे कर्म वाले होते हैं वह फिर से अच्छा जन्म लेते हैं। जैसे ब्राह्मण, क्षत्रीय, वैश्य आदि। और जो कुकर्म करने वाले होते हैं वह और भी बुरे शक्ल में पैदा होते हैं जैसे सुअर, कुत्ता, चंडाल।

मन्त्र नं-८ "अथतयोः पर्थार्न कतरेण च न तानिमानि क्षुद्राण्यसकृदावर्तीनी भूतानि भवन्त" (छाः-५/१०/८)

अनुवादः- जो आत्माएं इन दोनों मार्गों यानी (अंधेरे और उज्जवलित रास्तों) को नहीं पा पाती हैं। उनको तीसरा रास्ता मिलता है, जिसे तृतीय मार्ग कहते हैं। इस रास्ते को पाने वाले कीड़े मकोड़े की शक्ल में पैदा होते हैं। जिनकी जिंदगी में मरना और जीना यही दो काम होते हैं। इसलिए दुनियादारी से नफरत करना चाहिए, और जंगल की जिंदगी अपनाना चाहिए। (श्लोक नं ८)

● ऊपर वर्णन किए गए श्लोक के अनुवाद को अगर हम फिर से पढ़ें तो तीन बातें समझ में आती हैं।

१. व्यक्ति पन्चाग्नि विद्या को जानने वाला होना चाहिए।

२. व्यक्ति पन्चाग्नि विद्या को जानकर जंगल में रहने वाला हो।

३. व्यक्ति पन्चाग्नि विद्या को जानकर जंगल में रहकर विश्वास के साथ उपासना और भक्ति करने वाला हो। ऐसा व्यक्ति ही मरने के बाद देवयान यानी स्वर्ग के रास्ते को पाएगा।

● विकासानन्द ब्रम्हचारी जी कहते हैं कि, स्वर्ग का रास्ता प्राप्त करने की जो तीन शर्तें हैं वह क्या भीष्म पितामह में थीं? इसलिए या तो भीष्म पितामह को भी स्वर्ग का रास्ता न मिला, और अगर भीष्म पितामह को स्वर्ग का रास्ता मिल गया तो यह तीन शर्तें गलत हैं।

● महाराज जी कहते हैं जो लोग समाज में रहकर ईश्वर की उपासना करते हैं और मानवसेवा का कार्य करते हैं, और दान पुण्य का कार्य करते हैं। उन्होंने क्या गलत कार्य किया जो उन्हें स्वर्ग का रास्ता न मिले। समाज में रहकर पुण्य कार्य करना क्या पाप है?

● अगर इस ब्रह्माण्ड के विधाता (ईश्वर) ने मुक्ति का रास्ता सिर्फ जंगल में रहकर उपासना करने के जरिए रखा होता तो आज मनुष्य पैदा न होते, न हम और आप होते।

● जंगल में रहना वेदों की शिक्षा नहीं है। इसलिए पुराने जमाने के विद्वान गांव और शहरों में रहते थे। और उनके जीवन में भी पत्नी और बच्चों का वर्णन मिलता है। (उदाहरण के तौर पर ऋग्वेद के दूसरे मण्डल के सभी मन्त्रों में इसी का वर्णन है।)

● इसी तरह ऋग्वेद के छठे मण्डल ६, ११,१२,१३,१४,१७,२४ तक सभी सुक्तों के आखिर में लिखा है कि "हम लोग अपने पुत्रों के साथ १०० साल तक सुख का जीवन व्यतीत करें"। यानी पत्नी और बच्चों के साथ सुखद् जीवन गुजारना यह ईश्वर का एक वरदान है जिसके लिए प्रार्थना की जाती है।

● तो वेद सत्य हैं। और जो कुछ वेदों के ज्ञान के विरुद्ध लिखा है वह सत्य नहीं हो सकता। इसलिए जंगल में रहकर उपासना करने पर ही स्वर्ग मिलेगा यह बात सत्य नहीं है।

● छांदोग्य उपनिषद (८:१०:०५) में हमने पढ़ा की देवयान और पितृयान इन दो रास्तों के अलावा एक तीसरा रास्ता है। यह बात भी इस उपनिषद में गलत है क्योंकि वेदों और भगवद्गीता में सिर्फ दो ही रास्तों का वर्णन है। उदाहरण के लिए भगवद्गीता में लिखा है,

● "मेरे द्वारा वेदों में भी (मरने के बाद) इस संसार से (जाने के लिए दो) मार्ग (बताए गए हैं।) इन दोनों मार्गों में नि:संदेह

एक उज्ज्वल (सफलता का) मार्ग है और दूसरा अंधेरा (असफलता का) मार्ग है। एक मार्ग (जन्म और मौत की बार बार) वापसी न होने वाले (स्वर्ग के) धाम की ओर जाता है, और दूसरा (अंधेरा मार्ग है जो कि) बार बार (जन्म और मौत की) वापसी वाले (नरक के) धाम की ओर जाता है। (८:२६)

● जब तीसरे मार्ग का वर्णन किसी वेद में नहीं तो इस उपनिषद में कहां से आ गया।

● छांदोग्य उपनिषद के वह श्लोक जो वेदों की शिक्षा के अनुसार हैं।

● छांदोग्य उपनिषद में अब तक जो हमने पढ़ा उन सब में वेदों के ज्ञान के विरुद्ध वाली बातें थीं। अब हम उसी उपनिषद में परलोक की कुछ और बातें पढ़ते हैं जो वेदों के ज्ञान के अनुसार हैं वह बातें निम्नलिखित हैं:-

● "अथ सत्र एरात् अस्मात भारीरम उत्कामति अथ एतै: एवं रश्मिभि: उर्ध्दम आकमते, स: ओम इति व द्वउत वा मीयते, स यावत क्षिप्यत, मन: तावत् आद्रिव्यम मच्छति। एतत् वै खलू लोक द्वारम विदुषाम प्रपदनम् निरोध: अविदृषाम। (छा.-८/६/५)

● इसी छांदोग्य उपनिषद में अध्याय ८ मंण्डल ६ और मन्त्र पांच में लिखा है कि जब आत्मा शरीर से निकलती है तो प्रकाश के माध्यम से ऊपर की तरफ यात्रा करती है। अगर किसी इन्सान की मृत्यु ईश्वर को याद करते हुए होगी तो जरुर वह ऊपर की तरफ गमन करती है। वह आदित्य नाम के लोक में उतनी ही जल्द पहुंच जाती है जितनी देर में मन एक विचार से दूसरे विचार की तरफ जाता है। (यानी बहुत जल्द)। यह आदित्य लोक ही स्वर्ग का रास्ता है। जिसमें सिर्फ ज्ञानी और तपस्वी ही प्रवेश करेंगे। इसमें अज्ञानी प्रवेश नहीं कर सकते है। (पुनर्जन्म एक रहस्य पेज नं. २२)

● अब छांदोग्य के इस ज्ञान पर ध्यान दें। यह ज्ञान वेदों से मिलता जुलता है। एक ही उपनिषद में दो तरह की शिक्षा कैसे हो सकती है। अभी हमने इस उपनिषद में पढ़ा कि पंचाग्नि के ज्ञान और जंगल में रहकर उपासना के बगैर स्वर्ग नहीं मिलेगा। और मृत्यु के समय अगर सूर्य उत्तर दिशा की तरफ न हुआ तो धरती पर फिर जन्म लेना पड़ेगा। और अब हम पढ़ रहे हैं कि सज्जन मनुष्य अगर ईश्वर का नाम लेते हुए प्राण त्याग दे तो स्वर्ग के द्वार तक पहुंच जाता है। क्या एक ही उपनिषद में दो तरह की शिक्षा से आपको आश्चर्य नहीं होता है। जी हां यह बड़ी आश्चर्यजनक बात है। और यह इसलिए है कि इसमें एक सही और एक गलत है। सही ज्ञान वह है जो वेदों से मिलता जुलता है। यानी मनुष्य की आत्मा मरने के बाद ऊपर की तरफ यात्रा करती है और बहुत जल्द परलोक में पहुंच जाती है। जबकि पुनर्जन्म वाला और सूर्य से सम्बन्ध रखने वाला स्वर्ग के मार्ग की शिक्षा वेद की शिक्षा नहीं है। इसलिए वह सब शिक्षा इस उपनिषद में बाद में शामिल की गई हैं या वह मनगढ़ंत (Fabricated) है।

बृहदारण्यक उपनिषद में पुनर्जन्म का वर्णन

बृहदारण्यक उपनिषद

● बृहदारण्यक उपनिषद को ऋषि याज्ञवल्कय ने लिखा था। ऋषि याज्ञवल्कय ऋषि वैशम्पायक के शिष्य थे। और ऋषि वैशम्पायक ऋषि महर्षि वेद व्यास जी के शिष्य हैं। बृहदारण्यक उपनिषद यजुर्वेद भाग के ब्राह्मण शतपथ के १४ अध्याय को लेकर बना है। इस उपनिषद के कुल ६ अध्याय हैं। इन अध्यायों में कुल ४७ ब्राह्मण हैं। और कुल ४३५ मन्त्र हैं।

● इस उपनिषद में कुल ३ जगहों पर परलोक का वर्णन है।

१. चौथे अध्याय के चौथे ब्राह्मण में

२. ५ वें अध्याय के १० वें ब्राह्मण में

३. छठे अध्याय के दूसरे ब्राह्मण में

चौथे अध्याय के चौथे ब्राह्मण में श्लोक नं. ३ इस प्रकार है;

● जैसे घास पर चलने वाला कीड़ा एक घास के तिनके से दूसरे तिनके पर जाने के लिए अपने शरीर को पहले सिकोड़ता है फिर दूसरे तिनके का सहारा लेने के बाद पहले तिनके को छोड़ देता है। इसी तरह आत्मा पहले शरीर का सहारा छोड़ कर अविद्या का परित्याग करके अपना उपसंहार करते हुए दूसरे नवीन शरीर का आश्रय ग्रहण कर लेती है। (४/४/३)

● चौथा श्लोक इस प्रकार है। जिस प्रकार स्वर्णाकार स्वर्ण लेकर उसे नवीन कल्याणकारी रुप प्रदान करता है, उसी प्रकार यह आत्मा वर्तमान शरीर को चेतना रहित करके, अविद्या से मुक्ति पाकर पितर, गन्धर्व, देव, प्रजापति, ब्रम्ह अथवा अन्य प्राणियों के नवीन स्वरुप को धारण करती है, अथवा नूतन रुपों का निर्माण करती है। (४/४/४)

● महाराज विकासानन्द जी कहते हैं कि बृहदारण्यक उपनिषद में वर्णन किए गए दोनों श्लोकों का ज्ञान वेदों के निम्नलिखित मन्त्रों के ज्ञान से अलग है। वेदों के दोनों मन्त्र इस तरह हैं।

● परलोक में आत्मा को नया शरीर मिलेगा, परलोक में सभी आत्माओं को देवताओं के वंश में रहना होगा। परलोक में आत्माएं स्वतंत्र नहीं होंगी और उन आत्माओं को अपने कर्म का फल भी वहीं भोगना होगा। (ऋग्वेद २:१६:१०)

● आत्माएं किस मार्ग से परलोक जाएंगी वह मार्ग यमदूत पहले ही दिखा देता है। वह मार्ग कभी नष्ट न होने वाले हैं। जिस मार्ग से पहले के लोग गए हैं अपने अपने कर्म के आधार पर प्रत्येक प्राणी इसी मार्ग से जाएंगे। (ऋग्वेद १०:१४:२ रमेशचन्द्र दत्त) (पुनर्जन्म का रहस्या पेज नं २४)

● तो दोनों श्लोक से स्पष्ट होता है कि आत्माएं अपनी मर्जी से किसी भी रुप में फिर जन्म लेने के लिए स्वतंत्र नहीं हैं। और इन दोनों श्लोक से यह बात स्पष्ट हो जाती है कि;

१. पुनर्जन्म नहीं होगा बल्कि मरने वालों को परलोक में एक (देवताओं या फरिश्तों की तरह) नया शरीर मिलेगा।

२. मृतक को किस मार्ग से स्वर्ग या नरक में

जाना है यह यमदूत बताएगा। और कर्म के अनुसार स्वर्ग या नरक का मार्ग मिलेगा।

३. परलोक में ही उसे अपने कर्म का फल भोगना होगा।

● इस उपनिषद के चौथे अध्याय के चौथे ब्राह्मण के छठे श्लोक का अध्याय यह है कि जिन लोगों का दिल इच्छाओं से भरा होता है वह अगर सत्कर्म भी करें तो वह अपने सत्कर्म के अनुसार कुछ दिन परलोक में आराम से रहते हैं, मगर वह आराम के कुछ समय खत्म होने के बाद फिर इसी दुनिया में बार बार जन्म लेने के लिए लौट आते हैं। और जो किसी चीज़ की इच्छा नहीं करते और जो हर कार्य सिर्फ ईश्वर से बदले की उम्मीद से करता है। उसका पुनर्जन्म नहीं होता है। वह तो ब्रम्हा में ही समा जाता है।

● ऊपर वर्णन किए श्लोक के अनुसार सभी इच्छाओं वाले मनुष्य को स्वर्ग नहीं मिलेगा। महाराज विकासानन्द जी कहते हैं कि ऐसा कौन सा मनुष्य है जिसके मन में कोई इच्छा न हो। सिर्फ इच्छा करने से अगर नरक मिलने लगे तो इस तरह कोई मनुष्य सफल हो ही नहीं सकता है।

● तो जो कुछ बृहदारण्यक उपनिषद के तीन श्लोकों में है वह वेदों की शिक्षा के विरुद्ध है। अब हम बृहदारण्यक उपनिषद का एक श्लोक परलोक के बारे में पढ़ते हैं जो वेदों के अनुसार है।

● यदा वै पुरुषो हस्माल्लोकात्प्रैति स वायुमागच्छति तस्मै स तत विजिहीते यथा रथचक्रस्य एरां तेन स उर्ध्व आक्रमते ख आदित्य मा गच्छति तस्मैं स तत विजिहते यथा लम्बरस्य ख तेन स उर्ध्व आक्रमते स चन्द्रमसमागच्छते तस्मै स तत विजिहते यथा दुन्दुभेः खं तेन स उर्ध्व आक्रमते स लोक मागच्छत्य भाकमहिम तस्मिनवसति भाश्वती समा:।।

(बृहदारण्यक उपनिषद ४/१०/१ मन्त्र)

● **अनुवादः-** जब मनुष्य मरने के बाद परलोक की तरफ यात्रा करता है तो वह सबसे पहले वायुलोक में प्रवेश करता है। वहाँ पर वायु अपनी चादर में छेद करके उसे रास्ता देती है। यह छेद रथ के पहिये के रुप का होता है। इस मार्ग से वह ऊपर की तरफ उठता है। वह सूर्य के लोक में प्रवेश करता है। उस लोक में भी लम्बर नाम के हथियार के रुप के छेद की तरह उसका मार्ग होता है। वहाँ से वह ऊपर की तरफ उठता है। और चन्द्रलोक में पहुंच जाता है। वहाँ से उसके लिए दुन्दुभि की शक्ल की तरह छेद का रास्ता दिया जाता है। इस लोक से वह ऊपर उठता है और वह अहिम (जहाँ मानसिक तनाव नहीं) और हम (जहाँ शारीरिक पीड़ा नहीं) ऐसे लोक में पहुंच जाता है, वहाँ चिरकाल के लिए निवास करता है।

● जब एक ही उपनिषद में दो अलग अलग शिक्षा हो तो वह शिक्षा जो वेदों से मिलती जुलती है उसे ही अपनाया जाएगा। चूंकि ऊपर दिए गए श्लोक में मृतक के मार्ग का वर्णन वेद की शिक्षा के अनुसार है। इसलिए इसे अपनाकर पहले के सभी श्लोकों को जिसमें पुनर्जन्म का वर्णन है और मुक्ति मिलने की बहुत सारी कठिनाईयाँ हैं हम उन सबको छोड़ देते हैं।

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी जी कहते हैं, सत्य हमेशा एक जैसा और हमेशा कायम

रहता है। और झूठ बार-बार बदलता रहता है।

● एक ही उपनिषद में इस तरह मरने के बाद और पुनर्जन्म का दो या तीन तरह का वर्णन इस बात का सबूत है कि यह पुनर्जन्म की शिक्षा उपनिषद में बाद में मिलाई गई है। और यह असल वेद के ज्ञान के अनुसार नहीं है और प्रक्षिप्त है।

● इस तरह यह सिद्ध हो गया कि महाभारत, छांदोग्य उपनिषद और बृहदारण्यक उपनिषद में जो पुनर्जन्म की शिक्षा है वह वेदों का ज्ञान नहीं है। बल्कि बाद में प्रक्षिप्त की गईं हैं या मिलाया गया है।

● महाराज विकासानन्द ब्रम्हचारी जी कहते हैं कि, पुनर्जन्म के बारे में सारे लेख पढ़ने के बाद और शोध करने के बाद जो बात समझ में आती है वह इस तरह है, कि महर्षि वेद व्यास जी हिन्दू धर्म के सबसे बड़े आचार्य हैं। आपने महाभारत और १७ पुराण लिखे। भगवद्गीता को भी पुस्तक का रुप आपने ही दिया था। पुर्नजन्म यह एक महत्त्वपूर्ण विश्वास या श्रद्धा है। अगर इसमें कुछ भी सच्चाई और वास्तविकता होती तो आप भी इस पर कुछ न कुछ जरुर लिखते। मगर आपने इस बारे में कुछ नहीं लिखा।

● छान्दोग्य उपनिषद और बृहदारण्यक उपनिषद के लेखक ऋषि ताण्ड और ऋषि याज्ञवल्कय यह महर्षि वेद व्यास जी के शिष्य थे। तो जो शिक्षा और विचार गुरु के होते हैं वही उसके शिष्यों के होते हैं। तो ऋषि ताण्ड और ऋषि याज्ञवल्कय भी पुनर्जन्म पर विश्वास रखने वाले न थे। उनके उपनिषदों में दोनों प्रकार के विचार हैं, और श्लोक हैं। अर्थात् उनके उपनिषदों में वेदों की शिक्षा के अनुसार पुनर्जन्म नहीं होने के भी श्लोक हैं। और वेदों की शिक्षा के विरुद्ध में पुर्नजन्म होने के भी श्लोक हैं। तो जो श्लोक वेदों के अनुसार पुनर्जन्म नहीं होने के श्लोक हैं वही लेखक के विचार हैं। और जो श्लोक पुर्नजन्म होने की शिक्षा देते हैं, वह लेखक के विचार नहीं हैं और वह बाद में उपनिषद में लिखे गए या मिलाए गए हैं। वह प्रक्षिप्त (Fabricated) हैं।

******

भगवद् गीता और कुरआन को समझने के लिए हमने निम्नलिखित भगवद् गीता के अनुवाद, वेबसाईट और APP से सहायता ली है।

भगवदगीता
कुरआन के प्रकाश में
अनुवादक-डॉ.साजिद सिद्दीकी

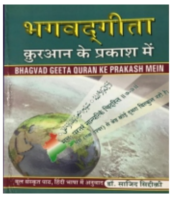

गीता और कुरआन
लेखकः पंडित सुंदरलाल
भम्बरनाथ-विश्ववाणी प्रेस, अलाहाबाद प्रकाशन-१९३६

गीता
और
कुरआन
लेखकः पंडित सुंदरलाल

श्रीमद्भगवदगीता
साधक-संजीवनी
अनुवादक-स्वामी सुखरामदास जी

http://www.swamiramsukhdasji.net/eBooks/eBooks_Hindi/Sadhak-Sanjeevani-Hindi.pdf

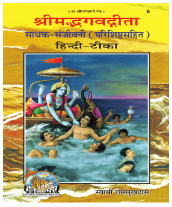

Bhagwad Gita
(The song of God)
Tranlated by :
Swami Mukundanada
https://www.holy-bhagavad-gita.org/

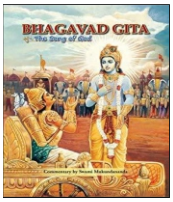

हिंदी कुरआन के अनुवाद को जानने के लिए हमने इस APP का उपयोग किया हैं।

Quran Majeed – القرآن المجيد

कुरआन को विस्तार से समझने के लिए हमने निम्नलिखित वेबसाईट से सहायता ली हैं।

www.quranx.com

श्रीमद् भगवद्

गीता

कुरआन

के प्रकाश में

ईश्वर के आदेश अनुसार भोजन करना और जीवन व्यतीत करना। ईश्वर के आदेश अनुसार प्रयत्न और कर्म करना। ईश्वर के आदेश अनुसार सोना और जागना। (यही ईश्वर की) प्रार्थना है। (और) यही सभी दुःखों से मुक्ति पाने का उपाय है।

(भगवद् गीता अध्याय ६, श्लोक नं.१७)

ISBN 978-81-951129-0-6

Rs. 400/-

Gita Publication
Mumbai-400078. (India)

Website : www.gitaquran.com
E-mail : qsk1961@gmail.com
Tel : +91-22-25965930